DHANVANTRI

1946

G. K. V.
LIB.
HARDWAR

COMPILED

RT-174

Stock Verification-2

COMPILED

RT-174

धन्वन्तरि

भाग २०
अङ्क ९

—सम्पादक—
वैद्य बांकेलाल गुप्त—वैद्य देवीशरण गर्ग।

फरवरी
१९४६

विषय-सूची

आयुर्वेद पताका गायन ५६३
सम्पादकीय ५६४
क्षय रोग का वैज्ञानिक अध्ययन ५६५
विषम आंत्रिक ज्वर ५७०
बाल यकृत रोग ५७४
आयुर्वेद कैसे उन्नत होगा
पचांगुर बूटी
रोग निवारण के लिये सांप
वैद्यों की सम्मतियां
विविध समाचार

गुप्त सिद्ध प्रयोग—

शीघ्र ही छपने वाली है। प्रेस कापी तैयार हो रही है। फोटो के ब्लाक भ बनते जा रहे हैं।

प्रयोगों की परीक्षा करने पर अनेक लेखकों के प्रयोग व्यर्थ होने से निकाल भी दिये ग हैं। इस कारण नये लेखकों के प्रयोग, परिचय और चित्र (फ़ोटो) आने आवश्यक हैं। अतः इ सूचना के अनुसार आपने यदि अपने प्रयोग नहीं भेजे हैं तो कृपया शीघ्र ही परिचय एवं चित्र साथ भेज दें। विलम्ब न करें।

कुछ महोदय ने प्रयोग तो भेजे हैं पर परिचय एवं चित्र नहीं भेजा है, कुछ ने प्रयोग ए परिचय ही भेजा है, चित्र नहीं। कुछ महानुभावों ने प्रयोग एवं चित्र ही भेज दिये हैं परिचय ना भेजा। ऐसे महानुभावों से प्रार्थना है कि वह अपने २ प्रयोग, परिचय और चित्र जो नहीं भेजे शीघ्र भेज दें। अन्यथा वह पड़े ही रह जायंगे।

नोट कर लीजिये—

१—प्रयोग अव्यर्थ कठिन रोग पर या कठिन रोग की किसी अवस्था विशेष पर ही हो।

२—चित्र को फोटो भेजें या ब्लाक भेजें।

३—परिचय में निम्न बातें अवश्य लिखें। आपना नाम, पूरा पता, आयु, जाति, पिताजी क नाम, पढ़ने का स्थान, कौन २ सी परीक्षा दी हैं। इसके अतिरिक्त पदक, प्रशंसापत्र आदि ष्कार आदि २।

वैद्य बांकेलाल गुप्त के प्रबन्ध से धन्वन्तरि प्रेस बिजयगढ़ में मुद्रित।

Approved by Dept. of Public Instructions of Central & Provinces Berar.

MURARI ART AGRA

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

धन्वन्तरि

या ओषधी पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनै नु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

सचित्र
मासिक पत्र

भाग २०

अङ्क ९

आयुर्वेद पताका गायन

प्यारा आयुर्वेद हमारा, जीवन धन ऋषियों का सारा ॥ टेक ॥

ध्वजा विश्व में फहराती है, धन्वन्तरि का गुण गाती है।
अनुपम श्रुत से लहराती है, गुणानुवाद जग गाता सारा ॥१॥
इसके अन्दर अमृत सर है, रोग हरण हित विकट प्रखर है।
ऐलोपैथिक होता नत है, स्वास्थ्य दान देता है न्यारा ॥२॥
अतीसार ज्वर श्वास भगंदर, क्षय हिक्का स्वरभेद अर्श उर।
दाह मदात्यय मूर्छा तृष्णा, रक्तपित्त आमाशय सारा ॥३॥
कर्ण नेत्र शिर रोग कुष्ठ कृमि, मुख नासा व्रण प्रदर क्लीवसम।
उदर प्रमेह यकृत् पाण्डू गल, कास अरुचि विनशावै सारा ॥४॥
रोग समूल यदपि विनसाना, शरण पड़ेगा इसकी आना।
वैद्यों से नवजीवन पाना, सुर नर मुनि का है यह नारा ॥५॥
हैं जितने उपचार विदेशी, सर्वश्रेष्ठ है दवा स्वदेशी।
तत्क्षण गुण दिखलाती अपना, रोग सदा को करे किनारा ॥६॥
उच्च कोटि आदर्श लखा दो, तन मन कर बलिदान दिखादो।
पुनः श्रेष्ठ मणि सम चमका दो, पुनि प्रिय आयुर्वेद सितारा ॥७॥

रचयिता—कुंवर उमरावसिंह कुशवहा वैद्य भूषण C. T. S. माधौगढ़ जिला जालौन (यू० पी०)

सम्पादकीय—

आयुर्वेदीय स्वराज्य

वैसे तो स्वराज्य के बिना देश के कल्याण की आशा नहीं उसके बिना किसी ज्ञान विज्ञान की उन्नति और प्रसार की पूर्ण सम्भावना भी नहीं और वह स्वराज्य प्राप्त का अधिकांश राष्ट्रीय महासभा इण्डियन नेशनल कांग्रेस के साथ है। समस्त भारतीय जनता की आंखें उसकी ओर लगी हुई हैं। उसके संचालकों की तपस्या कष्ट सहन और विवेक ने अपना लिया है। अतएव उसके भक्त होना, उसका कल्याण चाहना उसके उद्देश्यों की पूर्ति में सहायक होना, हम भारतवासी अपना कर्तव्य समझते हैं और उसके लिये कष्ट सहन करना भी अपना धर्म समझते हैं।

परन्तु इन सब बातों के होते हुए भी हम एक आयुर्वेद के सेवक और वैद्य हैं तथा आयुर्वेदीय सिद्धान्त को मानने वाले हैं। यही नहीं उसके द्वारा भारतवासियों की सेवा करना अपना कर्तव्य समझते हैं। हमारा ही विश्वास नहीं बल्कि इतिहास पुराणादि इसका साक्षी है कि आयुर्वेद ने अपने प्रकाश से विश्व के चिकित्सा विज्ञान को प्रकाशित किया है और उसे समुन्नत तथा समर्थ बनाया है।

आज भी आयुर्वेद असहाय होते हुये अधिक से अधिक संख्या में भारतीय जनता के स्वास्थ्य और जीवन की रक्षा कर रहा है। और यदि उसे राजकीय सहायता मिल जाय तो फिर भी विश्व कल्याण करने की शक्ति उसमें विद्यमान है।

आयुर्वेदीय स्वराज्य के बिना राजनैतिक स्वराज्य कभी पूरा नहीं कहा जा सकता। भारतीयत्व खोकर अपना ज्ञान विज्ञान गवांकर अपने वेद मूलक आयुर्वेद को छोड़कर हम किसी प्रकार स्वतंत्र नहीं हो सकते। आयुर्वेद के एक सेवक के नाते आयुर्वेद हमारा एक प्रधान लक्ष्य है। यही नहीं सभी भारतवासियों का वह अभिप्रेत भी है। इस की उन्नति के लिये प्रयत्न करना सभी का कर्तव्य है, इसीलिये हमने घोषित किया है कि देश के मेडिकल डिपार्टमेंट और पब्लिक हेल्थ डिपार्टमेंट की लगाम हमारे हाथ में होनी चाहिये। भारतवर्ष की स्वतन्त्र कामना के अन्तर्गत यह भाव सम्मिलित रहना चाहिये कि आयुर्वेद हमारा है और हम आयुर्वेद के हैं। आयुर्वेदिक स्वराज्य हमारा चरम लक्ष्य है। आयुर्वेद के भक्त उसकी उन्नति की कामना रखने वाले चाहे जो हों सब हमारे प्रिय भाजन हैं। आयुर्वेद की उन्नति में हमें सब की सहायता और सहयोग अपेक्षित है।

इसलिये वैद्य समाज से मेरा अनुरोध है कि आप लोग तन, मन, धन से आयुर्वेदिक स्वराज्य के लिये कांग्रेसी सरकार से प्रार्थना करें। क्योंकि कांग्रेस ही एक ऐसी संस्था है जिसके द्वारा शासन सूत्र संचालित होने पर न केवल आयुर्वेद की अपितु समस्त देशी विज्ञानों की अनुकरणीय उन्नति होगी। आयुर्वेद सदैव अजर अमर रहेगा, विश्वास रखिये जैसे कांग्रेस की विजय सुनिश्चित है, उसी प्रकार आयुर्वेदीय स्वराज्य भी अनिवार्य है। यदि वैद्य समाज ने त्याग और सतत लगन के साथ काम किया तो वह दिन दूर नहीं है। जब आयुर्वेद की विजय वैजयन्ती न केवल भारतवर्ष में अपितु समस्त संसार में अभिमान के साथ फहरायेगी।

—वैद्य बांकेलाल गुप्त।

रोग का वैज्ञानिक अध्ययन

लेखक—कविराज श्री० लेखराज जी वर्मा आयुर्वेदालङ्कार, आयुर्वेदाचार्य,
प्रधान चिकित्सक—श्री० मूलचन्द, खैरातीराम ट्रस्ट धर्मार्थ औषधालय, भावरना (कांगड़ा)

[अङ्क ६ से आगे]

निम्न क्षय रोगी पार्वत्य प्रदेश पर ले जाये जा सकते हैं—

१-मुख का तापमान १०१° फ० से नीचे रहता हो।
२-नाड़ी ९० से नीचे हो।
३-अतिसार तथा श्वास काठिन्य न हो।
४-भूख अच्छी लगती हो।
५-रोगी बहुत कृश न हो।
६-रोग की वृद्धि अधिक उन्नत न हो।
७-रोग की वृद्धि कुछ रुक गई हो।

निम्न क्षय रोगी क्षय रोग हर संस्थाओं में भेजने के अयोग्य होते हैं—

१-वृद्धिङ्गत क्षय रोग से युक्त रोगी।
२-जिनके मुंह से रक्त भी थूक के साथ मिला हुआ आता रहता हो।
३-जिनका रक्त भार अधिक हो तथा हार्दिक नाड़ी संस्थान अधिक क्षीण हो।
४-नाड़ी १०० से अधिक हो तथा तापमान १०१° से ऊपर हो।
५-बहुत कृश तथा दीर्घ रोगी।
६-अति वृद्ध पुरुष (आयु में वृद्ध)
७-हृद्रोग, वृक्क रोग, स्वरयन्त्र दोष तथा अन्य रोग युक्त रोगी।

चिकित्सा के लिये निम्न वस्तु लाभप्रद है-

१—शुद्ध ताज़ी हवा।
—अच्छी जलवायु।
३—शुद्ध भोजन।
४—नियमित तथा बलात् विश्राम।
५—क्रमिक व्यायाम का सुन्दर ढङ्ग।
६—पूर्ण स्वास्थ्यप्रद तथा स्वच्छन्द दशायें।
७—निरन्तर निरीक्षण।
८—उत्तम से उत्तम चिकित्सकों की सम्मति व परामर्श।
९—उत्तम चिकित्सा।
१०—रोगी को उचित शिक्षा दान। ताकि वह समझ सके कि रोग कितना भयङ्कर होता है। जिस से अन्य में संक्रमण न कर सके।

ये सब उपर्युक्त लाभ स्वल्प मूल्य में होते हैं।

सेनोटोरियम में रहने का समय रोग की स्थिति व दशा पर आश्रित है। परन्तु मेरा अन्दाज यह है कि कम से कम ६ माह से लेकर २-३ वर्ष तक रहना पड़ता है।

सेनोटोरियम में रहने से हानियां-

१—निकट सम्बन्धियों व स्वगृह से दीर्घकालीन वियोग जन्य अधिक व्यय का सहन करना।

२—यावत् इच्छाओं का तथा रुचि अनुकूल भोजनों का न मिलते रहना।

३—अन्य क्षयी साथी रोगियों में उत्तरोत्तर अधिक संक्रमण के हो जाने का भयानक भय निरन्तर लगे रहना।

जाङ्गल देशस्थ जलवायु की विशेषतायें निम्न हैं—

१-वायु की शुद्धता तथा पवित्रता (प्राण वायु की प्रचुर विद्यमानता)

२-वायु की शुष्कता।

३-अधिकाधिक सूर्यातप प्राप्ति।

नोट - रात्रि तथा दिन के तापमान में दृश्यमान दीर्घ अंतर इस विशेषता से प्रतिकूल बैठता है।

पर्वत देशीय जलवायु की विशेषतायें—

१-वायु मण्डल का दवाब पहाड़ों पर कम होता है क्योंकि वहां की हवा अपेक्षया हलकी (भार में) होती है। यह हलकापन वायु में प्राण वायु ओषजन की अधिकता के कारण से होती है।

२-शुष्क और शुद्ध पवित्र वायु।

३-सूर्यातप तथा प्रकाश का विविध रूपेण सहज में प्राप्त होते रहना।

४-Great actinic power.

५-तेज और साफ दिन।

परन्तु इसमें निम्न अपवाद होते हैं—

१-पाण्डु रोगी, हृद्रोगी तथा वृक्क रोगी को पर्वत पर नहीं ले जाना चाहिये।

२-पुरातन मधुमेह-श्वास रोग।

३-आन्त्र क्षय।

४-स्वरयन्त्र का भयानक घातक रोग।

५-पुरातन फुफ्फुस-क्षय।

६-वातिक सभी रोगी।

७-क्षय प्रक्रिया की विक्षेपक अवस्था यथा पार्श्वशूल

८-स्वगत न्यूनतम प्रतिरोधक शक्ति।

९-ताजा २ हाल में ही मुंह से रुधिर निकला हो।

पर्वतीय जलवायु तापमान रहित रोगियों तथा पुरातन वृद्धावस्था वाले जीर्ण रोगियों के लिये ही विशेष लाभदायक सिद्ध होता है।

आप्य देशीय जलवायु की विशेषतायें—

१—धूलि व धूम्र से सुरक्षा।

२—प्रचुर मात्रा में आर्द्रता की उपलब्धि।

३—वायु का अत्यधिक भार।

४—अन्तर्देशीय प्रान्तापेक्षया तापमान की अधिकतर एकता का रहना।

५—अधिक Wind तथा प्राण वायु (ozone) की प्राचुर्येण प्राप्ति।

६—प्रकाश तथा सूर्यातप का प्रचुरतम मात्रा में उपलब्धि।

समुद्र प्रान्तीय जलवायु पुरातन रोगियों, आंत्ररोगियों तथा अन्य सब पेचीदे रोगियों के लिये अधिक उपयुक्त होती है।

३-आहार चिकित्सा--

प्रत्येक रोगी को वैयक्तिक शारीरिक निरीक्षण करने के पश्चात् भिन्न २ आहार की योजना ही बनाना समीचीन हुआ करती है। इसके लिये कोई सर्व साधारण नियम नहीं बनाया जा सकता है। अधिक भोजन करना हर हालत में हटाया जाना आवश्य है, कक्योंकि इसमें अजीर्ण, मन्दाग्नि आध्मान और आमाशयिक तथा आन्त्र सम्बन्धी विकार शीघ्र उत्पन्न हो जाते हैं। पोषक आहार रोगी को उसकी भूख से कुछ अधिक मात्रा में इतना ही दिया जाना जरूरी है केवल जिसे उसका शरीर भली भांति पचा सके।

Professor Oslar ने एक स्थल पर भोजन विषय में बड़ा समीचीन वर्णन किया है कि—

"पोषण पर तथा भोजन विषयक योजना पर ही क्षय रोगों के साध्यासाध्य का सब कुछ आधार निर्भर होता है।" दीर्घ कालीन दुग्ध पोषण (समुपयुक्त भोजन तथा दुष्ट चर्वण तथा अजीर्ण के कारण से उत्पन्न) क्षय संक्रमण का ये प्रधान कारण है। परन्तु फिर भी रोग की सामाजिक स्थिति तथा व्यवसाय का भी ध्यान रखना कम महत्व की बात नहीं है। फ्रांसीसी प्रसिद्ध राजनीतिज्ञ मिस्टर John F. Russill ने १९०९ के दिसम्बर मास के Medical Record में ठीक ही लिखा था कि "फुस्फुसीय क्षय का प्रधानतम कारण फाका लगना, व्रत, उपवास, भोजनाभाव ही है। उसने प्रतिपादित किया है कि कच्चा धारोष्ण दुग्ध तथा अम्ल भोजन प्रचुर मात्रा में खाने चाहिये ताकि आमाशय अधिकाधिक क्रियाशील बन सके।

अर्वाचीन अन्वेषणों में भोजनों का जिनमें लवण, प्रोटीन, तथा कार्बोहाइड्रेट न्यून हों, परन्तु प्रचुर वसा तथा खाद्यौज (जीवनीय द्रव्य) पदार्थों से युक्त व भरपूर हों बड़ा महत्व तथा उनकी रोग साधक शक्ति वर्णन किया गया है। मुख्यतया भोजन वसा तथा निशास्ते से युक्त होना बड़ा ही आवश्यक है। भोजन प्रति ३-३ घण्टे पश्चात् स्वल्प मात्रा में ग्रहण करना क्षयी के लिये बड़ा स्वास्थ्यकर, रुचिकर, पोषक तथा रोग नाशन में सहायक व उपयोगी सिद्ध होता है।

भोजन आहार सम्बन्धी सूची व तालिका निम्न प्रकार है—

1-Milk with Plasmon or Casumen.

2-Milk fermented with Lactic acid Basilli.

3-Virol में अस्थिमज्जा तथा Malt का Extract और अण्डे भी सम्मिलित होते हैं।

४-ताजे अण्डे—आधा कच्चा उबाला हुआ अण्डा या कच्चा ही अण्डा। दो अण्डों में प्रारम्भ करके क्रमशः बढ़ाते २ १० से १२ अण्डों तक मात्रा (दैनिक) की जा सकती है।

५-Mircoli ने अनुसन्धान करके सिद्ध किया है कि मद्य के प्रभाव में क्षय जीवाणु नाशार्थ शरीर में प्रतिरोधक शक्ति उत्पन्न हो जाती है। (New York Medical Journal).

६-कच्चे मांस का शोरवा मात्रा ३½ ग्रेन प्रातः और सायं दो समय प्रति दिन।

७-बहुत तड़के प्रातःकाल दूध के साथ ताजी मलाई बकरी का दूध अधिक प्रयुक्त किया जाना चाहिये। क्योंकि इस प्राणी में प्राकृतिक (सहज) रूप में ही क्षय जीवाणु के प्रति प्रतिरोधक शक्ति आजीवन विद्यमान रहती है।

८-Milk Cream Mixture-इसका संगठन निम्न प्रकार है।

दुग्ध	मलाई
Sac Lactas	१ औंस

ध्यान रहे कि मलाई में ३० प्रतिशत (Buttrfat) अवश्य विद्यमान रहनी चाहिये। मात्रा २४ घण्टों में १ पाइण्ट तक।

९-सादा पक्क, यकृत, प्लीहा, वृक्क इत्यादि प्राणी वर्ग के अङ्गों का मांस।

१०-Hoffs' Lig mal—आधी बोतल दिन में दो बार भोजनोपरांत।

११-Ovaltine, Sanatogen—बहुत प्रसिद्ध तथा लाभप्रद है।

१२-प्याज, लशुन, Carrot तथा दालचीनी सब अपनी कच्ची शकल में इस रोगार्थ बड़ी लाभप्रद हैं।

१३-Oatmeal, (Peas) मटर Beans, डबलरोटी (Bread) मक्खन चावल almonds Nuts.

१४-Cod-Liver-oil १ बड़ा चमचा मात्रा।

इसका ठण्डा Beverage बना हुआ मिलता है। इस पर ऊपर टमाटर का रस तैरता रहता है। यह वस्तु तो क्षय के अन्य सम्बन्धी लक्षणों को शान्त तथा साध्य करण को बहुत ही उत्तम सिद्ध होचुकी है। इसमें खाद्योज (Vitamins) भी प्रचुर मात्रा में विद्यमान रहते हैं।

१५-Sups Chicken and Mutton, both thickened with arrowroot or Barley.

१६-ताजी सब्जियां हरी तथा ताजे फल साधारण मात्रा में।

१७-प्रत्येक प्रकार की ताजी मछली।

१८-The Juice of the plantain in T. B.

डा० J. Montelvo of Brazie South America को यह दृढ़ विश्वास है कि Plantain या साधारण पकाया जाने वाला Banana का रस इस रोग के लिये रामवाण है। उसने एक रोगी का वर्णन किया है, जो कि पुरातन वृद्धिङ्गत क्षय से रुग्ण था। उसको देखकर यह कहा जाता था कि वह अब अपनी अन्तिम घड़ियां ही गिन रहा है। परन्तु उसे Plantain का Juice दिया तो लाभ हुआ। इसका विशेष भेद San-Tomhe जिसमें इसका क्रियाशील तत्व सबसे अधिक होता है, व्यवहार में लाया गया था। पौदे का लगभग ५० सैण्टीमीटर लम्बा हिस्सा प्रतिदिन काटा जाता था। Sugar mill में दब कर रस निकाल कर छारण पत्र द्वारा (Filter छानकर बोतलों में भर कर दिन भर लिया जात था। प्रतिदिन शराब का गिलास प्रति २ घण्टे बा भरकर दिन भर दिया जाने लगा। ३ दिन लगातार पीते रहने के बाद रोगी में इतनी शक्ति आगई कि वह चलने फिरने लग गया।

उसका कफ तथा खांसना सब जाता रहा। भूख लगने लग गई। लगातार दो माह तक खिलाते रहने पर रोगी रुधिर रोग की मीमांसा से बाहर होगया। उसी रोग के अन्य भी सदस्य इसी के प्रयोग व सेवन से सर्वथा स्वस्थ होगए।

इसका रस अधिक दिन तक नहीं टिकता क्योंकि शीघ्र ही यह विदग्ध (Ferment) होने लग कर अपनी विशेषताओं को नष्ट कर बैठता है। अतः इसका ताजा रस ही प्रतिदिन निकालकर सेवन कराया जाता है।

क्षयी को गरिष्ठ भोजन, मद्य, निशास्ता और खांड के प्रचुर प्रयोग, डब्बों में बन्द मांस आदि दुष्ट भोजनों से सर्वथा बचा कर रखना चाहिये।

फलों में केला और द्राक्षा अधिक अच्छे होते हैं। दूध, घी मक्खन सर्व श्रेष्ठ माने गए हैं। शीत गुण पौष्टिक लघु भोजन अच्छे हैं। उष्ण गुण भोजन सर्वथा वर्जित हैं। लहसुन गरम होते हुए भी इस रोगार्थ अच्छा होता है।

The process of preparing the Juice-

२ छटांक बकरी का ताजा मांस लेकर उसे एक दम सूक्ष्म टुकड़ों में काट कर कीमा बना कर पत्थर की खरल में डाल दें। उसे इतना घोटें कि वह Pulp गूदा सा बन जाय। २½ तोला ठण्डा

पानी इन पर ऊपर से डालकर फिर इसे कुछ और घोटें। कुछ पत्ते coniander के सुगन्धित करणार्थ डाल दें। तब सब को एक मलमल के टुकड़े में निचोड़ डालें। लाल रङ्ग का रस प्राप्त होते ही रोगी को तुरत पिला दें। प्रति तीन घण्टे बाद ताजा रस उसी समय निकाल कर पिलाते रहें। अन्य मांसापेक्षया हमारी सम्मति में बकरी का मांस ही व्यवहृत होना चाहिये। क्योंकि यह प्राणी नैसर्गिक तौर पर क्षय से अनाक्रान्त होता है। कच्चे मांस का रस आन्त्र क्षय में प्रयोग करना कोई आधुनिक आविष्कार नहीं है, अपितु सहस्र वर्ष पूर्व भी हिन्दू चिकित्सा शास्त्र वेत्ता इसका प्रयोग प्रायः कराया करते थे।

आयुर्वेदीय औषधियां—

छागलादि घृत, जीवंत्यादि घृत, अजापंचक घृत, पाराशर घृत, सुवर्ण के योग यथा—

बसन्त मालती रस, बसन्त कुसुमाकर रस, जयमंगल रस, राजमृगांक रस, पुटपक विषम ज्वरान्तक लौह, हेमगर्भ पोटली रस, चतुर्मुख रस, इत्यादि। calcium के स्थान पर प्रवाल पंचामृतरस उत्तम है। इसके अतिरिक्त च्यवनप्राश भी उत्तम है। वासावलेह, बांसारिष्ट, बांसादि पानक, एलादि गुटी आदि योग काम शान्त्यर्थ उत्तम हैं।

अन्य योग—

द्राक्षारिष्ट, दशमूलारिष्ट, अश्वगन्धारिष्ट आदि उत्तम है। सोमल का प्रयोग आवश्यक होता है। सर्वाङ्गसुन्दर रस, राजमृगांक में भी सोमल अल्प मात्रा में होता है। संखिया पाण्डुता कम कर देता है। शिलाजतु भी रसायन होने से इस रोग में लाभप्रद है। त्रिफलादिक जीवनीय द्रव साधित शिलाजतु अधिक उपयोगी होता है।

वासाखण्ड कूष्माण्ड, सितोपलादि चूर्ण उत्तम कफ नाशक योग है।

जीवनीयद्रव्य—बल्य औषधियों के तौर पर व्यवहृत करना चाहिये।

बाह्य प्रयोगार्थ—

लाक्षादि तैल, चन्दन, बला, महा लाक्षादि तैल उत्तम होते हैं।

लाक्षणिक चिकित्सा—

प्रधान लक्षण निम्न हैं—जिनकी चिकित्सा पर विशेष ध्यान रखना पड़ता है—

१—रात्रिस्वेद, २—शुष्क कास, ३—रक्तष्ठीवन ४—अतिसार, ५—क्षुधा निवृत्ति तथा मन्दाग्नि, ६—पार्श्व शूल, ७—वमन, ८—पार्श्व वात, ९—श्वास काठिन्य, १०—तीव्र (उग्र) स्वर, ११—मुख प्रक्षालन, १२—शिरःशूल, १३—आन्त्रिक रोग, १४—शय्या व्रण, १५—कण्ठ शोथ, १६—स्वरयन्त्र शोथ, १७—भोजन निगरण शैथिल्य।

इनकी चिकित्सा तत्तदुत्पत्तिकाल में करना पड़ता है।

वास्तविक चिकित्सा—

इस चिकित्सा को Tuberculin Treatment कहते हैं। यह अपने आपमें एक बृहत विषय होने से यहां पर अनुल्लेखनीय है।

सर्वाङ्गीण क्षय—

पर्याय—Acute Miliary Tuberculosis

[शेषांश पृष्ठ ६७१ पर देखें]

विषम आंत्रिक ज्वर

लेखक—श्री० वैद्य मोहनलाल जी अग्रवाल, कृष्ण गोपाल औषधालय, कालेड़ा (अजमेर)

आंत्रिक ज्वर के भेद—

इस ज्वर को आंत्रिक ज्वर का ही एक भेद मानते हैं। सामान्यतः इसकी और आंत्रिक ज्वर की चिकित्सा में बहुत कुछ समानता है इसलिये इसके पृथकीकरण पर विशेष ध्यान नहीं दिया गया है। आयुर्वेद में तो इसका प्रथक् अस्तीत्व ही नहीं है परन्तु अब डाक्टरी ग्रन्थों में इसका आंत्रिक ज्वर से प्रथक वर्णन किया जाता है। वैद्यों के लिए चिकित्सा की दृष्टि से इसका महत्व नहीं है, परन्तु रोग निदान की दक्षता और पूर्णता प्राप्त करने के लिये इसका ज्ञान होना आवश्यक है।

यह ज्वर विशेषतः मांस और दूध की (क्रीम) मक्खन द्वारा फैलता है। यह जल से कम फैलता है। इस रोग के कीटाणुओं को बेक्टोरियम पेराटाइफोसम (Bactorium paraty phosum) कहते हैं। इसमें A. B. C. तीन प्रकार हैं। इनमें से A और B कीटाणुओं का संक्रमण आंत्रिक ज्वर के संक्रमण के समान है। किन्तु C को मनोयोग पूर्वक देखें तो भेद हो जाता है। C का संक्रमण सेप्टीमीमिया (सेन्द्रिय विषम सन्निपात) से मिलता है। इस रोग में रक्तवारि की परीक्षा करने पर विभेद निश्चित होता है।

इन तीनों में से B को आंत्रिक ज्वर के कीटाणुओं की श्रेणी के समीप माना जायगा। किन्तु यह उष्ण कटिबन्ध प्रदेश (भारत आदि) में शीतोष्ण कटिबंध की अपेक्षा कम प्रचलित है। A प्रकार यूरोप और अमेरिका में दुर्लभ है। परन्तु भारत में सामान्य है। C प्रकार प्रधानतः समशीतोष्ण कटिबंध (बालकन) और ब्रिटिश गुआना में विरल है, यह उष्ण कटिबंध में प्रतीत होता है।

इन तीनों का आक्रमण अकस्मात शीत कम्प के साथ होता है। किन्तु यह आंत्रिक ज्वर की अपेक्षा कम घातक और कम स्थायी है। एवं आंत्रिक विकृति (व्रण) इतस्ततः होने से कम बाधक होते हैं। कितनेक रोगियों में बृहदान्त्र के भीतर व्रण हो जाते हैं फिर उसी हेतु से मल में आंत्रिक ज्वर की अपेक्षा विशेष कीटाणु मिल जाते हैं। शारीरिक उत्ताप अनियमित रूप से घटता बढ़ता है।

कचित इस रोग में फुफ्फुस संस्थान पर आक्रमण होने से कास या न्यूमोनियां के लक्षण भी साथ में प्रकाशित होते हैं तथा थूक के भीतर इस रोग के कीटाणु मिल जाते हैं।

C प्रकार—इसका प्रारम्भ प्रायः आंत्रिक ज्वर के समान होता है किन्तु इसकी प्रकृति B सदृश हो जाती है। इसे अतिसार, फुफ्फुस विकार और विविध पाकोत्पादक स्थिति में प्रथक किया जाय तो शेष लक्षण आंत्रिक ज्वर से मिल जाते हैं। इस ज्वर में बड़ी आंत आंत्रिक ज्वर की अपेक्षा विशेष प्रभावित हो जाती है। सभी पिटिकायें न होते हुए भी अन्त्र का प्रसेक (catarrh) उपस्थित हो जाता है। इसके लक्षण आंत्रिक ज्वर की अपेक्षा मृदु और बारम्बार B सदृश प्रतीत होते हैं। अन्य रोगों के सेन्द्रिय विष के मिश्रित लक्षण और कष्टप्रद परिणाम दुर्लभ हैं।

आंत्रिक ज्वर के प्रभेद वाले लक्षण-

१-आक्रमण—बार २ और अति शीघ्र।

२-पिटिकाएं—कभी २ अत्यधिक, थोड़े ही प्रदेश में बड़े चिन्ह, बाह्य सीमा अनियमित परन्तु यह आंत्रिक ज्वर से विशेष गहरे रङ्ग की, कभी २ निस्त्राभ।

३-उत्ताप—अति जल्दी से बढ़ना, कुछ दिनों में १०४° से १०५ तक बढ़ना, क्रम अति अनियमित। ताप उतरता भी अति जल्दी है। यह लगभग २ सप्ताह तक रहता है।

४-नाड़ी स्पन्दन—बारम्बार अविमंद।

-प्लीहा वृद्धि—अति स्पष्ट।

६-शीत, कम्प और स्वेद अति सामान्य।

७-सेन्द्रिय विष—विरल। १०४° से अधिक ताप और पिटिकायें अति फैली हुई होने पर भी बार २ विष लक्षण प्रकाशित नहीं होते हैं। रोगी कुछ दिनों में सुधर जाता है।

८-अतिसार और प्रवाहिका के लक्षण रोग के आक्रमण काल में कचित ही उपस्थित होते हैं। यह केवल यत्र तत्र होने वाले रोगियों में प्रतीत होते हैं। यह रोग ऐसे लक्षणों का उद्भव नहीं करता, किन्तु अपचन जनित आम विष का सम्बन्ध होने पर ऐसा हो सकता है।

इस ज्वर में आंत्रिक ज्वर से उपरोक्त अपूर्वता अवस्थित है।

अन्तर्भरण जनित आंत्रिक ज्वर—

कितनेक मनुष्य आंत्रिक ज्वर से बचने के लिये सके विष से अन्तर्भरण (इनोक्युलेशन) कराते हैं। इसमें भी आंत्रिक ज्वर के समान ही लक्षण प्रगट होते हैं; परन्तु आक्रमण मधुर होता है। एवं ज्वर आने पर उत्ताप, स्थिति, क्रम, लक्षण ये सब कम होते हैं। यह ज्वर थोड़े दिन रहता है और अंत्र कम प्रभावित होता है। नाड़ी मंद रहती है, जिह्वा मलमय और उदर साने हुये आटे के समान मुलायम रहता है।

इससे १ प्रतिशत मनुष्यों की मृत्यु हो जाती है।

चिकित्सा-

आंत्रिक ज्वर के समान इसमें भी ताप को बलात्कार से शमन करने वाली औषधी नहीं देना

[पृष्ठ ५६९ का शेषांश]

यह एक प्रकार विसर्पज्वरवत् उच्च तापमान युक्त तथा घातक रूप में होता है। इसमें सारा शरीर भाग लेता है। इस रोग के तीन प्रमुख भेद होते हैं।

१—फुफ्फुसीय सर्वाङ्गीण क्षय

२—मस्तिष्क क्षय ३—सर्व व्यापी क्षय

इसमें ही मन्थर ज्वरवत् लक्षणों वाला होने के कारण (Typhoid fever) यही नाम प्रायः कह दिया करते हैं। इस रोग में, तथा मियादी बुखार में निदान करना मुश्किल हो जाता है। यह तीव्र संक्रामक रोग है।

चिकित्सा-

सर्वाङ्गीण क्षय में उपलब्ध लक्षणों के प्राबल्यानुसार चिकित्सा करनी पड़ती है। चिकित्सा सम्बन्धी उपयुक्त मान डब्बों व औषधियों का नाम परिमाण हम अन्यत्र लेख में पूर्व ही कर आये हैं।

चाहिये। धातु में लीन दोषों को शनैः २ पचन करके उपद्रवों को शमन करने वाली एवं शक्ति बनाई रखने वाली औषधि देना चाहिये। प्रारम्भ में कोष्ठबद्धता न हो इसका ध्यान रखना चाहिये। अगर कोष्ठबद्धता हो तो मृदु विरेचन देकर उदर-शुद्धि करवा लेना चाहिये। विशेषतः इस रोग में पित्त शामक औषधें दी जाती हैं, परन्तु अन्य उपद्रव होने पर उनको भी नाश करने वाली चिकित्सा करनी चाहिये।

दोष पाचन औषधियां—

लक्ष्मीनारायण रस, कस्तूरी भैरव रस, सूतशेखर, संजीवनी, मधुरांतक वटी, अमृताष्टक क्वाथ परुषादि क्वाथ और तगरादि क्वाथ ये सब हितकर औषधियां हैं, इनमें से अनुकूल औषधी देवें। यदि ठण्ड विशेष हो तो कस्तूरी भैरव या लक्ष्मीनारायण रस देते रहने से लाभ हो जाता है।

इस रोग में घासा देने का रिवाज बहुत प्रचलित है। उसमें बहुत से चिकित्सक संजीवनी, लौंग, तुलसी के पत्ते, जायफल आदि पानी से घिस कर देते हैं। यह भी हितकर सिद्ध हुआ है।

शुष्क कास और फेफड़ों की निर्बलता हो तो अभ्रक भस्म, पीपल, गिलोय सत्व भी दिया जा सकता है। लक्ष्मीविलास रस (अभ्रक युक्त) सितोपलादि चूर्ण भी लाभदायक सिद्ध हुए हैं।

सुख पूर्वक दाने निकालने के लिये मधुरांतक वटी, मौक्तिकपिष्टी, शृंग भस्म, ब्राह्मी वटी लाभ दायक है। इनमें से शृङ्ग भस्म अच्छा लाभ करती है। लौंग को घिसकर देने से भी दाने शीघ्र निकल जाते हैं।

दौर्बल्य, प्लीहा यकृत वृद्धि, रक्त क्षय हो लोह भस्म, अभ्रक भस्म भस्म, त्रिफला चूर्ण लाभदायक है।

हृदय रक्षणार्थ—चन्द्रोदय, लक्ष्मीविला (अभ्रक वाला) सूत शेखर लाभदायक है।

इस रोग में लक्ष्मीनारायण, मधुरांतक वटी में प्रवाल मिलाकर दिन में तीन मात्रा शहद के स देते रहने पर रोग बिना उपद्रवों के शमन हो जा है। इनमें से मधुरांतक वटी दोष बाहर निका और दाने सुख पूर्वक निकालने में, लक्ष्मीनाराय ज्वर शमन, दोष पाचन कराने में और प्रव शक्ति बनाये रखने में अति लाभदायक है। इ साथ अगर कोई उपद्रव उत्पन्न हो गये हों कस्तूरी भैरव देने से चमत्कारिक लाभ होता है।

मूत्रावरोध हो तो रबर की मूत्रनलि (Catheta) से मूत्र निकाल लें।

योग्य चिकित्सा न होने से ताप अवधि न गया हो तो सुवर्ण भूपति, सूतशेखर, जयमंग या लक्ष्मीनारायण रस में से एक अमृतारिष्ट साथ दें। इनमे से जयमंगल रस ज्यादा ला दायक सिद्ध हुआ है। इसका कारण यह है इसमें सुवर्ण होते हुये भी वह ऐसी मात्रा में है ताप नहीं बढ़ाता, इसलिये रोगी को ताप पर भी निर्भयता पूर्वक दिया जा सकता है।

अगर कोष्ठबद्धता हो तो भी तीव्र विरे औषधी नहीं देनी चाहिये। इस रोग में आनि ज्वर की अपेक्षा अन्त्र में व्रण नहीं के बराबर होते हैं। परन्तु अन्त्र शक्ति हीन अवश्य हो जा है। इससे तीव्र विरेचक औषधी से अन्त्र में

पहुंचने का भय रहता है। प्रारम्भ में मृदु विरेचन दिया जा सकता है; परन्तु बाद में आवश्यकता हो तो साबुन की बत्ती या ग्लैसरीन सयोजिटरी से दस्त करवा लेना चाहिये।

रोगी को पूर्णतया विश्रांती देनी चाहिये। यहां तक कि मल मूत्र भी शय्या पर ही त्याग करावें। शय्या पर से उसे बारबार उठाना खराब बात है। इससे रोगी की शक्ति कम होती है एवं अन्त्र में हानि पहुंचने का भय रहता है।

रोगी से बार २ बात करना भी भय से खाली नहीं है। रोगी शांति-विश्रांति लेना चाहता है और कुटम्बी-जन उसे बार २ तङ्ग करते हैं, इससे उसके मन पर खराब प्रभाव पड़ता देखा गया है। इसलिये रोगी से अधिक बात नहीं करना चाहिये।

रोगी को शुद्ध वायु वाले स्थान में रखना चाहिये और उसके वस्त्र वगैरह की शुद्धता का पूर्ण खयाल रखना चाहिये। रोगी गृह की वायु शुद्ध बनी रहे इसके लिये धूप वगैरह जलाते रहना चाहिये।

जहां तक इस रोग में पथ्य का सवाल है; रोगी को प्रथम चार दिनों तक सिर्फ पानी पर ही रखना चाहिये। इसके बाद दूध और मौसम्बी का रस दिया जा सकता है। अन्न रोगी को बिलकुल नहीं देना चाहिये। अन्न देते रहने से रोगी का बल क्षय हो जाता है, एवं अन्त्र में हानि पहुंचने और पुनः आक्रमण का भय रहता है।

इसमें प्लीहा वृद्धि बहुत होती है और ताप चले जाने के बहुत समय पर भी बनी ही रहती है, इसके लिये आम्बा हल्दी और काली जीरी का चूर्ण ३ रत्ती की मात्रा में देते रहने से तिल्ली शीघ्र कट जाती है। इसके साथ विरेचक औषधी भी अवश्य देते रहना चाहिये।

ताप चले जाने पर शक्ति वृद्धि के लिये—

सुवर्ण मालती १ रत्ती और चौसठ प्रहरी पीपल २ रत्ती कुछ समय देते रहने से पाचन शक्ति सबल बन कर शक्ति वृद्धि हो जाती है।

डाक्टरी में इस रोग की कोई विशेष औषधी नहीं है। साधारणतया दोष पाचनार्थ और शक्ति संरक्षणार्थ औषधी दी जाती है।

प्रतिष्ठा चाहने वाले वैद्यों से

गुप्त सिद्ध प्रयोग में चित्र मैटर के साथ रहेंगे, पर जो वैद्य २५) कागज के लिये भेज देंगे उनका चित्र प्रथक सुन्दर रूप से छापकर पुस्तक में लगाया जायगा। शेष वैद्यों का मैटर (मज़मून) के साथ ही रहेगा। जो हमारे नेता और ख्याति प्राप्त वैद्य हैं उनके चित्र हम अपने व्यय से भी लगावेंगे। अतः जो सज्जन अपना फोटू सुन्दर रूप से पृथक छपाकर लगाना चाहें, वे कार्यालय में २५) शीघ्रातिशीघ्र भेज दें।

—व्यवस्थापक।

बाल यकृत रोग

लेखक—श्री० पं० रमाकांत झा शास्त्री, गोल्डमेडलिस्ट सह० सम्पादक "धन्वन्तरि"

[अङ्क ७ से आगे]

यह व्याधि विशेषतः नगर निवासियों के बच्चों को होती है। यह रोग १ साल से लेकर ३ साल के बच्चों को विशेषतया होता है। यह प्रारम्भावस्था में ज्वर सहित होता है। इस रोग में यकृत दृढ़, कठिन, वेदना विहीन और अति बढ़ा हुआ प्रतीत होता है।

इस रोग का आविर्भाव बहुधा दांत आने के समय होता है। इसमें घोर पीड़ा होती है। यकृत खूब बढ़ जाता है। किसी २ स्थान पर इस रोग से एक ही माता के अनेक बच्चे मर जाते हैं। किसी २ देश के जलवायु की विचित्रता से इस रोग का अक्रमण विशेषतया होता देखा गया है।

निदान—

इस रोग के वास्तविक कारण का पता नहीं लगता है। फिर भी अनुभव से ज्ञात होता है कि रोगिणी माता या गौ के दुग्ध से इस व्याधि की उत्पत्ति होती है। एक विद्वान का कथन है कि सगर्भावस्था में स्तन्य के उपादान (दूध में रहे हुये विविध तत्व) में विलक्षणता हो जाती है, सगर्भा माता के स्तन पान से बालकों को यह रोग हो जाता है।

लक्षण

इस रोग का आक्रमण शनैः २ होता है। दीर्घ काल तक बोध ही नहीं होता है। प्रारम्भिक अवस्था में शिशु के हाथ पैरों के तल भाग में उष्णता तृषा वृद्धि, कोष्ठ बद्धता, कभी २ उबाक और वमन होना, यकृत का सम्मुख प्रवेश गोल कठिन और बढ़ा हुआ भासना, ज्वर रहना, कभी २ ज्वर बढ़ जाना, कभी २ सीहा की भी साथ २ में वृद्धि हो जाना, जमीन पर सोने में शान्ति प्रतीत होना, स्वभाव से चिड़चिड़ा बन जाना, अरुचि, शिथिलता, और उदासीनता आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। इस रोग में यकृत शनैः २ बढ़ता जाता है। अन्त में नाभि के नीचे जघन तक पहुंच जाता है।

जैसे २ यकृत बढ़ता जाता है। वैसे २ अग्निमांद्य, मलावरोध, और ज्वर में भी वृद्धि होती जाती है। रोगी कृश और बल हीन हो जाता है। यकृत की आगे की किनारी प्रारम्भ में कठिन, गोल, उन्नत और श्लक्ष्ण प्रतीत होती है। फिर धीरे धीरे पतली और धारयुक्त हो जाती है। साथ २ ज्वर रहने लगता है, और सीहा भी बढ़ जाती है। यकृत्सीहा दोनों बढ़ जाते हैं। जिससे उदर ऊंचा उठ जाता है और उदर की शिरायें भी बाहर से प्रतीत होने लगती हैं। प्रारम्भ में मल पीले रङ्ग का, फिर मैले रङ्ग का और अन्त में श्वेत वर्ण का हो जाता है नेत्र निस्तेज और शुष्क बन जाते हैं। तथा प्रस्वेद नहीं आता है।

कभी २ अग्निमांद्य, उदर कठिन हो जाना, कण्ठ शुष्क होजाना आदि लक्षणों के पश्च कामला की उत्पत्ति हो जाती है। तथा हाथ और उदर पर शोथ आकर जलोदर की उत्प हो जाती है। कामला होने पर नेत्रावरण, ने

श्लैष्मिककला और त्वचा का रङ्ग पीला हो ता है। पेशाब का रङ्ग पीला हो जाता है। र यकृत का ह्रास होने लगता है। अन्त में दुर्ब- ा और आक्षेपक वात के झटके आने लगते हैं, न्त में बालक की मृत्यु हो जाती है।

वच्छेद विनिर्णय-

मृत शिशु के शव का छेदन करके परीक्षा रने पर यकृत बहुत बड़ा हुआ, सूक्ष्म २ ग्रन्थि- क पित्त रञ्जित दृढ़ और सौत्रिक तन्तुमय, पित्ता- य संकुचित और शून्य तथा साधारणी पित्त- लिका का छिद्र खुला हुआ दिखाई देता है। डिकान्तराल प्रदेश में सौत्रिक तन्तु की उत्पत्ति यधिक परिमाण में होती है, फिर वह सब ण्डिकाओं में प्रवेश होकर यकृत कोषाणुओं को पृथक् कर देता है। या २-२ ३-३ कोषों के गुच्छ समूहों को परिवेष्टित कर देता है। जितने स्थलों में सौत्रिक तन्तुओं की व्याप्ति होती है। उतने भाग में यकृत का नाश हो जाता है। यह विनाश सौत्रिक तन्तुओं की वृद्धि से ही होती है। और इन सौत्रिक तन्तुओं को फैलाने का काम सूक्ष्म पित्त प्रणालिकायें करती हैं। यकृत कोषाणु जो नष्ट होजाते हैं उनके स्थान पर गुलाबी रङ्ग के कण दिखाई देते हैं।

यकृत कोष के संयोजक तन्तु, न्यूनाधिक अंश में नष्ट हो जाते हैं, फिर संयोजक तन्तु कणमय पदार्थ, रंजक पित्त और सूक्ष्म तैल कोष सब का परिवर्तन हो जाता है। इन स्थलों में अपेक्षाकृत ध्वंस न्यून होता है। इस स्थल के सब यकृत कोषाणु गुलाबी रङ्ग के सूक्ष्म और क्षुद्र द्रव्य से भरे हुये दिखाई देते हैं।

यह बहुधा असाध्य ही होता है। अनेक बालक २ से ६ मास तक दुःख भोग कर मृत्यु को प्राप्त हो जाते हैं।

यकृत की परीक्षा विधि-

इसकी परीक्षा दो मुख्य भागों में विभक्त की जा सकती है।

१—यकृत की परीक्षा और २—पित्ताशय की परीक्षा। इनके भी तीन भाग हो सकते हैं। जैसा कि आयुर्वेद का सिद्धान्त है।

'दर्शन स्पर्शन प्रश्नैः परीक्षेयाच रोगिणाम्।''

अर्थात्—रोगी को देखना, प्रश्न करना, और स्पर्श करना, इस तरह से तीन प्रकार के रोग परीक्षण हैं। तद नुसार रोगी से निम्न लिखित प्रश्न करे। यथा—

१-प्रश्न (रोगी से पूछना)—

भूख कैसी लगती है? मुख का स्वाद कैसा है? प्यास की क्या दशा है? उदर में कोई पीड़ा या वेदना तो नहीं होती? यदि होती है तो भोजन से पूर्व या पहले? वमन होती है; शौच की क्या दशा है? दस्त की रङ्गत क्या है? कभी अतिसार की शिकायत रहती है क्या? मूत्र कितना और कै बार होता है, इत्यादि पूछना चाहिये। यदि रोगी बच्चा (अबोध) हो तो उसकी माता या अभिभावक से पूछे।

२-दर्शन (रोगी को देखना)—

यद्यपि दर्शन से यकृत रोग में विशेष सहायता नहीं मिलती है। फिर भी दो एक बातों का पता लग ही जाता है। यह देखना चाहिये कि यकृत-कोटी अथवा आमाशय प्रदेश में किसी प्रकार

की शोथ तो दिखाई नहीं देती। यदि शोथ दिखाई दे तो देखना चाहिये कि शोथ कहां पर अधिक और कहां पर कम है। रोगी से पूछ कर भी इसका निश्चय हो सकता है। यदि यकृत प्रदेश कुछ उभरा हुआ सा मालूम पड़े तो उसे दबाकर भी देखना चाहिये। यदि यकृत बढ़ा हुआ होगा तो इसका किनारा जो पसलियों की आड़ में छिपा हुआ रहता है, अपनी सीमा से बाहर निकला हुआ होगा। और प्रत्येक श्वास प्रश्वास के साथ हिलता हुआ अर्थात् ऊपर नीचे उठता हुआ दृष्टिगोचर होगा। उभरा हुआ किनारा त्वचा पर एक ऊंची रेखा को प्रगट करेगा।

३—स्पर्श (रोगी का शरीर स्पर्श करना)—

सर्व प्रथम यकृत के निचले किनारे को स्पर्श द्वारा जानना चाहिये। इससे मालूम करे कि वह कहां पर है। इसके लिये अपने हाथ को फैलाकर उदर पर धीरे से रखे। ध्यान रहे हाथ ठण्डा न रहे और परीक्षा स्थान को दबाकर न रखे। रोगी को घुटने के बल खड़े कर लेना चाहिये। हाथ को इस प्रकार फैला कर रखे कि इसका किनारा पसलियों की रेखा के साथ २ उदरच्छादनी पेशी के बाह्य-भाग के पास हो। हाथ के किनारे को जरा धीरे से ऊपर की ओर इस प्रकार दबावे कि त्वचा का थोड़ा सा झोल ऊपर को उठ जावे, अर्थात् ढीली २ त्वचा इकट्ठा होकर हाथ के नीचे से निकल जावे, रोगी को गहरा लम्बा श्वास लेने को कहे, क्योंकि यकृत् का सम्बन्ध ऊपर फेफड़े से रहता है अतः गहरा श्वास लेने से यकृत् नीचे को दबेगा। यदि यकृत् का किनारा स्पर्श किया जासके अथवा अपनी सीमा से कुछ बढ़ा हुआ होगा तो यह हाथ से टकराता अथवा हाथ के किनारे के ऊपर चढ़ा मालूम होगा।

२-पित्ताशय की परीक्षा-

इसकी परीक्षा स्पर्श वा टंकोर से की जाती जब तक यह फैला हुआ न हो स्पर्श नहीं किया सकता। जब पित्त फूल जाता है तो यह नरम न पाती के से आकार का शोथ युक्त मालूम होता यह दांई उदरच्छदा पेशी के बाहर किनारे के स ही स्थित है। नवमें उपपर्शुका के ठीक सामने यह एक ओर से दूसरी ओर को बढ़ी हुई श्वा प्रश्वास में भी हिलता डुलता है। कभी २ इ पित्ताश्मरी भी स्पर्श की जा सकती है उस अश्म का ज्ञान ऐसे होता है जैसे कि थैली में छोटी गुठलियां बन्द कर दी गई हों, इसे अंगुलियों द्वा मसलने से मालूम की जा सकती है। इसको स्प करते समय मृदुता का विशेष ध्यान रखें, ऐसा हो कि आपकी अंगुली का विशेष जोर पड़ने प अश्मरी की थैली पिच जावे, ऐसा होने से रो को यकृत में विशेष दाह एवं वेदना होती है।

इस कठिनता से बचने के लिये रोगी को बैठ कर आगे को थोड़ा सा झुकने को कहें, परीक्षक उसके पीछे दाहिनी ओर खड़े हो जाना चाहि और अपनी अंगुलियों की नोकों को पसलियों नीचे दांई उदरच्छदा पेशी के बाहर की ओर दब और रोगी को गहरा श्वास लेने को कहे। व उदर पेशी के नीचे दबाने से पित्ताशय आकर अं लियों से टकरायेगा, यदि यह असह्य स्पर्श हो तो रोगी शीघ्र ही अपने श्वास को रोक लेगा औ श्वास को निकालने का प्रयत्न करेगा। तथा चीख हुए अपने हाथ यकृत पर लगावेगा। जैसे कि ब

किसी गिरती हुई चीज को सहारा देने लगा हो। फूले हुए पित्ते पर यदि टंकोरा जावे तो मंद आवाज होगी परन्तु यह आवाज यकृत से लेकर नाभि प्रदेश तक मालूम होगी।

यकृत का स्थान नष्ट होना—

यकृत अपने स्थान से कभी नीचे या ऊपर भी हो सकता है। उदर में की कोई रसौली या अर्बुद यकृत को ऊपर की ओर ढकेल सकती है। हृदय के दायें क्षेपक कोष्ठ का मोटा होना उसको नीचे की ओर ढकेलता है। इसके अतिरिक्त फुस्फुमावरण में पीप या तरल भरना, वक्षोदर में मध्यस्थ पेशी में किसी विकृति या अर्बुद अथवा ग्रन्थी पैदा होना भी इसे अलग कर सकता है। स्थान भ्रष्ट यकृत श्वास-प्रश्वास के साथ गति नहीं कर सकता बल्कि वृद्धिगत यकृत कर सकता है।

कभी २ दांये फेफड़े के निचले भाग का ठोस पड़ जाना या दांयें फुस्फुस में तरल का भर जाना यकृत का ऊर्ध्व भ्रंश समझ लिया जाता है।

कभी २ मल संचय हो जाने से अनुप्रस्थ वृहदान्त्र का मोटा हो जाना यकृत का अधःभ्रंश समझ लिया जाता है। परीक्षक को इन सब पर ध्यान रखना चाहिये।

कभी २ ऐसा होता है कि यकृत अपने स्थान पर ही रहता है। किन्तु वायु अवरोध युक्त फेफड़ों के द्वारा आवृत होने से यकृत छोटा सा ज्ञात होता है। क्योंकि वातावरोध से एक गूंजता हुआ शब्द पैदा होता है जो यकृत की सीमा को नहीं ज्ञात होने देता तथा उसके रोग आंतों के बहुत ऊंचे यकृत वा उदर की दीवार के मध्यवर्ती रहने से भी संशय हो सकता है और यह बतलाना कठिन हो जाता है कि यह यकृत ही है या वृहदान्त्र का भाग है। यदि निचले किनारे को टकोरते हुए कई एक स्थानों पर भिन्न २ प्रकार का शब्द सुनाई दे तो वहीं पर वृहदान्त्र की उपस्थित समझनी चाहिये।

'रक्तरोगांक' के—

लेखकों की सेवा में—

'रक्त रोगांक' की विषय सूची जनवरी के अङ्क में प्रकाशित है। विषय सूची को देखकर ही आप ज्ञात कर लिये होंगे कि यह विशेषांक कितना महत्वपूर्ण होगा। इसीलिये धन्वन्तरि के विशेषांक प्रकाशित करने में कुछ समय लग जाता है। इस विलम्ब के कारण ही हमारे बहुत से कृपालु ग्राहक कुछ अप्रसन्न होते रहे हैं। इसलिये हमने इस बार निश्चय कर लिया है कि विशेषांक समय पर ही प्रकाशित कर दिया जाय। अतः लेखकों से प्रार्थना है कि वह अपने अनुभव पूर्ण लेख शीघ्रातिशीघ्र कार्यालय में अवश्य भेज दें। साथ ही जिस विषय पर लेख भेजें, उसकी सूचना हमें दे दें। ताकि उस विषय पर दूसरे विद्वान से नहीं लिखाया जाय। विशेषाङ्क में सर्वोत्तम लेख पर सुवर्ण-पदक दिया जायगा।

नोट—लेख से सम्बन्धित आप कोई चित्र छपाना चाहें तो उसे भी भेज दें ब्लाक हम बनवा लेंगे।

—वैद्य बांकेलाल गुप्त

आयुर्वेद कैसे उन्नत होगा

ले०—श्री पं० जगन्नयन जी बहुगुणा आयुर्वेदाचार्य, प्र०—आयुर्वेद सेवासदन हरबटपुर जि० देहरादून (यू० पी०)

आयुर्वेद के प्रति सुप्रसिद्ध विदेशीय विद्वानों के विचार से भारतीय उच्चतम फिजीशियन और सर्जन थे (इतिहासज्ञ एलफिनस्टन) सुश्रुत संहिता में अनेक ऐसे शल्य कर्म हैं जिनको आधुनिक डाक्टर स्वप्न में भी न जान सकेंगे (एक अमेरिकन डाक्टर) वैद्य सर्जरी में अधिक चतुर थे विश्व इतिहास में उनका नाम अमर रहेगा (प्रो० विल्सन) हिन्दुओं के शल्य कर्म से हम अब भी कुछ शिक्षा ले सकते हैं (मिस्टर वेबर) वैद्यों के तीक्ष्ण धार शस्त्र बड़े बाल को चीर सकते थे (मिसेज गोलंग) हिन्दू सर्जन पूर्व ही से टेढ़े नाक कान ठीक किया करते थे जिनकी नकल अब हम लोग भी करते रहे हैं। (डा० विलियम हंटर)

उस सर्वोत्तम आयुर्विद्या का आज ऐसा अधः पतन क्यों और कैसे? आइये विचार कीजिये।

१-अहिंसा सिद्धांत प्रचारक बौद्धराज्य प्रतिबन्ध ने वैद्य सर्जनों के हाथ में चाकू लेना तक (हिंसा प्रवृत्ति साधन मान) सहसा बन्द करा दिया।

२-गुरुजनों ने आलस्यवश क्रियात्मक (प्रेक्टीकल) शिक्षा छोड़ शिष्यों को श्रीमद्भागवत कथा सम शास्त्र ज्ञान देना प्रारम्भ कर दिया।

३-शताब्दियों से आयुर्वेद को राजकीय सम्मान देने की उपेक्षा होती आ रही है। यह प्रथम तृतीय कारण तो पराश्रित हुये, द्वितीय स्वकीय कारण को लीजिये—चरक + सुश्रुत ग्रन्थों का अध्ययन हो जाने पर भी वैद्य जन वस्ति—शिरावेध जैसे मुख्य कर्मों से अनभिज्ञ रहते हुए प्रजा कष्ट दूर करने के अधिकारी होते जाते हैं, जब कि प्रैक्टीकल ज्ञान बिना चिकित्सा करना शास्त्र ने भारी दोष कहा है

> यस्तु केवल शास्त्रज्ञः कर्मस्वपरिनिष्ठितः
> स मुह्यत्यातुरं प्राप्य प्राप्य भीरुरिवाहवम् ॥

वस्तुतः क्रियात्मक रहित केवल शास्त्र ज्ञान मात्र से जनता सेवा योग्य उत्तम चिकित्सक नहीं हो सकता, पुनः राज्य सम्मान अधिकार की आशा करना कल्पना मात्र होगी। आजकल रोगी शीघ्र लाभ चाहता है और ऐसी सफलता औषध प्रयोग की अपेक्षा विविध शल्य कर्मों से प्राप्त की जा सकती है, अपनी शीघ्र गुणता से अन्य चिकित्साओं में शल्य कर्म ही श्रेष्ठ सिद्ध हुआ है।

> अष्टास्वपि चायुर्वेद तन्त्रेष्वेतदेवाधिकमभिमतम् ।
> आशुक्रिया करणात्यंत्रशस्त्रक्षाराग्नि प्रणिधानात्सर्वतंत्र-
> सामान्याच्च ॥

जैसे सम्पूर्ण चिकित्साओं में शल्य कर्म (सर्जरी) प्रधान होता है वैसे ही सम्पूर्ण चिकित्सकों में भी शल्य सर्जन) चिकित्सक श्रेष्ठ होता है, प्रत्यक्ष भी है, उत्तम विद्वान वैद्य से किसी डाक्टर का साधारण कम्पाउडर जनता में अधिक प्रतिष्ठा पा जाता है, क्योंकि वह गुल्म के रोगी को वैद्य के समान शूल-गज केशरी की शूलघ्न क्रिया में ही विश्वास नहीं करेगा अपितु पूर्व शूलोत्पादक कुपित वात और विकृत मल को वस्ति (एनीमा) यन्त्र से निकालने की कल्पना भी करता है जिसके निश्चित सद्यः लाभ से रोगी ही नहीं समीपस्थ जन तक स्वयं स्वीकार कर लेते हैं कि यही शूल का कारण था। शल्ययन्त्र

में प्रत्येक रोगों पर सर्वत्र ऐसे सद्यः लाभकर कर्म निर्देशित हैं।

रोगी परीक्षा पद्धति देखिये, नाड़ी मात्र परीक्षा से सब कुछ नहीं जाना जा सकता है, मल-मूत्र-थूक रक्त-हृदय, श्वासादिकों की भी परीक्षा करनी चाहिये जैसे कि कहा गया है--

> रोगाक्रान्त शरीरस्य स्थानान्यष्टौ निरीक्षयेत ।
> नाड़ीं मूत्रं मलं जिह्वां शब्दस्पर्शं दृगाकृतिः ॥

जिससे यथार्थ रोग निर्णय होने के साथ रोगी को प्राणाचार्य परिश्रम के प्रति विश्वास हो जाता है। वर्तमान विज्ञानयुग में पुड़िया मात्र की अदृश्य क्रिया पर विश्वास नहीं हो पाता है, यह काल आशु लाभ कर शल्य चिकित्सा प्रधान है इससे अनभिज्ञ रह कर उन्नति करना असम्भव है, वह समय गया कि पके हुए स्वयं फूटने वाले फोड़े पर वैद्य आसुरी शल्य चिकित्सा साध्य कह हाथ तक रखना उचित नहीं समझते थे, जिस भारी भूल से शेष रहे शल्य ज्ञान का लोप, वैद्य समाज का पतन, प्रजा में अविश्वास होता गया और दूसरे लोग ऐसे समय साधारण शल्य ज्ञान का आश्रय ले प्रजा प्रिय बन सर्जरी में उन्नति कर आगे बढ़ते चलते गये। अपनी विद्या भूल कर आयुर्वेद की उत्तमता के गीत गाने से अब काम नहीं चलेगा, परिश्रम से क्रियात्मक शल्य शिक्षा ग्रहण कर कार्य चिकित्सा के साथ २ निरन्तर शल्य कर्म करते रहने का दृढ़ संकल्प करना होगा। कम से कम प्रजा में फैला हुआ यह भ्रम तो दूर कर दिखाइये कि आयुर्वेद में सर्जरी है ही नहीं।

वैद्य चिकित्सकों की उपरोक्त कमियों को दूर करने के उद्देश्य से आयुर्वेद सेवा सदन की स्थापना की गई जिसका प्रथम आयोजन अधिकाधिक संख्या में वैद्यों को आयुर्वेदीय विधान से साधारण ५० शल्य कर्मों की शिक्षा देने का है।

उपरोक्त उन्नत पथ प्रदर्शक यह शुभ योजनायें उच्च लक्ष्य से सेवा सदन द्वारा अत्यधिक त्याग परिश्रम और ४००००) हजार द्रव्य व्यय कर भगवान धन्वन्तरि के नाम पर प्रारम्भ की जा रही हैं, जिनकी सफलता में हमें आयुर्वेद प्रेमी तथा वैद्य समाज का पूर्ण सहयोग होना नितांत आवश्यकीय है।

एतदर्थ प्रार्थना की जाती है कि अपना कार्य जानकर इन योजनाओं का वैद्य समाज में विस्तृत प्रचार कर दें, ग्रामस्थ वैद्य को सूचित किया जाय, प्रत्येक वैद्य स्वयं शिक्षा ग्रहणार्थ उत्सुक हो, नेत्र + अर्श के रोगियों को कैम्प में अधिक संख्या में आप्रेशन हेतु प्रवेश करावें, अपने समीप खोले जाने वाले ट्रैनिङ्ग + आप्रेशन कैम्प की प्रबन्धादि व्यवस्थाओं में हमें सहयोग दें, इन सेवाओं के प्रति सेवा सदन आप लोगों का सर्वदा आभारी रहेगा।

मकरध्वजवटी-प्रमेह रोगों के लिये सर्वोत्तम टौनिक है।
मिलने का पता-धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

वनस्पति विज्ञान—

पचांगुर बूटी

लेखक—कविराज श्री० विश्वनाथ प्रसाद जी भिषगाचार्य, मकबूलगंज लखनऊ।

यह बूटी विशेषकर वाटिकाओं में आम आदि वृक्षों के नीचे तथा वनों में ढाक आदि वृक्षों की साया में प्रायः अधिकता से उत्पन्न होती है।

इसकी पत्तियां द्विपृष्ठीय हरे रङ्ग की रोमश तथा पृथ्वी पर छुप की तरह से चारों तरफ फैली और पृथ्वी से कुछ चिपटी सी रहती हैं। तथा कुकर भांगरे की पत्तियों से बहुत कुछ समानता रखती है और मूली के पत्तों से भी कुछ मिलती जुलती है।

वर्षा ऋतु में पचाङ्गुर और कुकर भांगरे की पत्तियों में इतनी समानता पायी जाती है कि बिना जड़ को देखे यह कहना कठिना होता है कि यह पचाङ्गुर का पेड़ है या कुकर भांगरे का। परन्तु इसके पत्रों पर कभी २ काले मंडल भी दिखाई पड़ते हैं।

ग्रीष्म काल में प्रायः पत्तियां सूख जाती हैं और वर्षा ऋतु में पुनः पनप आती हैं। शरद ऋतु में पत्तियों के बीचो-बीच से एक सींक सी पतली डंडी लगभग १४-१५ इंच की बाली के साथ निकलती है और वह बाली शीष की ओर क्रमशः सघन होती जाती है, इसी बाली के बीच से श्वेत रङ्ग के अत्यन्त सूक्ष्म पुष्प निकलते हैं और वह देखने में प्रायः धूल से लिप्त प्रतीत होते हैं। वृद्ध वैद्यों का कथन है कि इसमें फल नहीं होते।

इसके दो भेद हैं जिसमें एक की पत्तियां अधिक रोमश होती हैं और दूसरे की कुछ चिकनी होती हैं जिसकी पत्ती कुछ चिकनी होती है उसकी जड़ें श्वेत वर्ण की पतली सूत सी एक खास प्रकार के सुगन्ध से युक्त गणना में कई एक कूची की तरह होती हैं। और दूसरे प्रकार वाले की जिसकी पत्तियां रोमश होती हैं। उसकी जड़ें किञ्चित धूमर वर्ण को लिये हुये श्वेत होती हैं शेष आकृति तथा गुण दोनों के सदृश हैं।

यह बूटी विभिन्न प्रान्तों में अनेक नामों से पुकारी जाती है, कहीं इसे आमतारा, रामतारा, तथा कहीं खड्ग की धार और जरपपरा या पचांगुर कहते हैं, बहुधा पचांगुर नाम ही इसका अधिक प्रसिद्ध है।

इस बूटी * का वर्णन प्रायः प्रचलित निघण्टुओं में नहीं प्राप्त होता है अतः वृद्ध वैद्यों से प्राप्त तथा निजानुभव लिखता हूं, पाठक वृन्द लाभ उठाकर गरीब जनता की सेवा करें।

१—बच्चों के मुंह आने पर——

इस बूटी की ताजी जड़ १ तोला लेकर आध पाव ठण्डे पानी में पीसकर दिन में छोटे चम्मच भर करीब ३-४ बार में देने से मुहां शीघ्र दूर होता है।

२—पतली धातु पर—

यदि गर्मी के कारण धातु पतली पड़ गई हो तो १ तोला इसकी ताजी जड़ को लेकर ठण्डाई की तरह पीसकर पीने से पतली धातु गाढ़ी होजाती है।

---

* राजनिघण्टुकार ने इसका नाम रुद्रजटा लिखा है।
—संपादक।

३-रक्तपित्त पर—

इसकी १ तोला ताजी जड़ लेकर ठण्डाई की तरह पीसकर पिलाने से रक्तपित्तशमन होजाता है। तथा रक्तार्श पर भी अनुपम लाभ प्रद है।

४-बालकों के सूखा रोग पर—

इसकी जड़ आध पाव और मिश्री ३ पाव लेकर शर्बत विधि से शर्बत बना लें।

मात्रा--१ माशे से ३ माशे तक।

समय--प्रातः सायं।

बलाबल के अनुसार देने से गर्मी से सूखते हुये बच्चे शीघ्र ही हृष्ट पुष्ट होते है।

५-सूखारोग पर पचांगुर बूटी का तैल—

तिल तैल पाव भर, पचांगुर बूटी का पञ्चाङ्ग आध पाव लेकर ठण्डे पानी में चटनी की तरह पीस कर लुगदी बना लें। और उस लुगदी को फिर तैल विधि से पकाकर छान लें।

प्रातः सायं बच्चों के शरीर पर मलने से सूखा रोग दूर होजाता है।

६-घाव पर—

इसकी ताजी जड़ ले पानी में पीस कर लुगदी की तरह घाव पर बांध देने से घाव शीघ्र भर जाता है। यदि चाहें तो ऊपर से कपड़े की पट्टी भी बांध सकते हैं।

७-पित्त ज्वर तथा पित्त की विकृति पर—

इसकी ताजी जड़ १ तोला लेकर पानी में पीस ३ नग कालीमिर्चे मिला पीने से पित्तज्वर तथा वमन नष्ट होते हैं।

८-बिच्छू तथा सर्पदंश पर—

इसकी जड़ को पानी में ठण्डाई की तरह पीस कर ३ कालीमिर्चे मिलाकर पीने तथा दंश स्थान पर लगाने से दोनों के विष शमन होजाते हैं।

९-उदर शूल और आध्मान पर—

३ कालीमिर्चे के साथ इसकी मूल १ तोला लेकर पानी में ठण्डाई की भांति पीसकर उसमें किंचित् सेंधानमक मिलाकर पिलाने से अत्यन्त लाभ होता है। ग्रामीण जनता इसे पशुओं के उदर विकार तथा अन्य पशु रोगों में बर्तती है।

१०-बतौरी पर—

बतौरी को मांसार्बुद कहते हैं। इस रोग में समान भाग सुंठी के साथ गोमूत्र में पीस कर लेप करने से अति लाभ होता है। तथा नवीन अर्बुद तो अति शीघ्र निर्मूल होजाता है।

११-पित्तातिसार पर—

इसकी जड़ १ तोला लेकर ठण्डाई की तरह पीस आध पाव पानी में घोल छान कर दिन में ४-६ बार इसी भांति पीने से अतिसार दूर होता है।

इस बूटी की भांति अनेक जड़ी-बूटी ऐसी हैं। जिनका वर्णन प्रचलित निघण्टुओं में नहीं मिलता अतः विद्वान वैद्यों को चाहिये कि अपनी अनुभव पूर्ण खोजों के द्वारा इस कमी की पूर्ति करने की दया करें जिससे आयुर्वेद की उन्नति हो।

सूचना—

क्षय-रोगांक अब स्टाक में नहीं रहा, अतः कोई भी महानुभाव लिखने का कष्ट न करें।

—व्यवस्थापक।

परीक्षित प्रयोग—

रोग निवारण के लिये सांप

लेखक-श्री० रामेशवेदी आयुर्वेदालङ्कार, हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, बादामीबाग लाहौर।

पाश्चात्य वैज्ञानिक सांपों की उपयोगिता हाल ही में जानने लगे हैं। परन्तु रेंगने वाले इस जीव की चिकित्सा में उपयोगिता प्राचीन समय के चिकित्सकों को भली भांति मालूम थी। भारतीय, भिश्र निवासी तथा चीनी वैद्य सांप और उसके विष से आश्चर्य जनक इलाज करते थे। सांपों का सब से महत्वपूर्ण उपयोग भारतीय चिकित्सा में होता था। इनका मांस, रुधिर, कैंचुली, हड्डियां और विष त्वचा के रोगों के इलाज के लिये इस्तेमाल होने वाली अनेक दवाओं में डाले जाते थे। आज कल भी वैद्य और हकीम लोग फनियर के विष, मांस, खाल आदि को चिकित्सा में बरतते हैं।

कोढ़ का इलाज—

फनियर को मार कर हाण्डी में बन्द करके जङ्गली उपलों की आग में फूंक लेते हैं। इस तरह बनी सांप की भस्म को बहेड़े के तैल में घोटकर मरहम की तरह बना लेते हैं। सुश्रुत और वाग्भट्ट बताते हैं कि सफेद कोढ़ों में इसका लेप करने से सफेद दाग जल्दी ही मिट जाते हैं। फेरोहा के समय कोढ़ियों को सांप की खुराक पर रखने का रिवाज था। रिचर्ड्स (लैंडमार्क्स आफ स्नेक पांयजन लिटरेचर, पृष्ठ ६५) लिखते हैं कि गैलन ने मण्डली सांपों के मांस की कोढ़ मे बहुत जोर से प्रशंसा की है और इटली तथा फ्रांस के चिकित्सक मण्डली मांस का शोर्बा या जेली इसी प्रयोजन के लिए अपने मरीजों को दिया करते हैं। मालूम होता है कि यह इंग्लैंड में भी दिया जाता रहा है क्योंकि मीड का ख्याल था कि बीमार को प्रायः मण्डली की जेली (वाइपरजेली) खानी चाहिये अथवा पुराने तरीके के अनुसार मण्डलियों को उबाल कर मछली की तरह खाना चाहिये। यदि भोजन हजम न हो तो शराब में सूखे मण्डलियों को छोड़ कर पांच या सात दिन तक जरा गरम जगह पर रखने के बाद बनी शराब का प्रयोग करना चाहिये।

मीड एक प्रसिद्ध चिकित्सक हुआ है जिसने सांपों के बारे में बहुत सी खोजें और परीक्षण किये हैं। १७५४ में यह परलोक सिधारा है। यही विद्वान लिखता है कि मंडली का शराब लंडन फार्माकोपिया में वस्तुतः एक अधिकृत योग था।

क्षय में—

भोपाल रियासत में जङ्गलों के कन्जरवेटर ने एसोशियेटेड प्रेस द्वारा अखबारों में एक सूचना वितरित कराई है। उन्हें सांपों की आवश्यकता है। एक विशेष प्रकार के गन्ने को पैदा करने में इन सांपों का खाद दिया जायगा। कन्जरवेटर महोदय का दावा है कि यह गन्ना क्षय के लिये शर्तिया लाभप्रद होगा। वे इन गन्नों को पिछले ८ साल से बो रहे हैं और वे दावा करते हैं कि इसको सेवन करा के इन्होंने भोपाल रियासत के और रियासत के बाहर के भी हजारों क्षय के रोगियों को राजी कर दिया है। बीमार को इनकी गण्डेरियां एक या दो महीने तक रोज चूसने के लिये दी जाती हैं। इस दवा से वे कहते हैं कि कम से कम पचास प्रतिशतक रोगियों में तो अवश्य सफलता हुई है।

चरक के समय क्षय के रोगियों को सांप का

मांस खिलाया जाता था। जिन रोगियों को इससे सहज घृणा हो उन्हें यह इस तरीके से बनाकर दिया जाता था जैसे कि बर्मी मछली होती है। बङ्गाल में फनियर का मांस क्षीण करने वाली बीमारियों में दिया जाता है। पञ्जाब के कुछ जिलों में सांप की रीढ़ की हड्डियों को एक साल तक खाद में गाड़ रखते हैं। इनकी माला बनाकर उन रोगियों के गले में पहनाई जाती है जिन्हें हजीरों (गले की क्षय ग्रन्थियां) की शिकायत हो। काले सांप की राख को तेल में मिलाकर हजीरों पर लेप करते हैं।

डायनें भाग जाती हैं—

बुखार आदि से पीड़ित रोगियों के कमरे में केंचुली की धूनी दी जाती है। बच्चों के बुखार में वृन्दमाधव सांप की केंचुली, लहसुन, बिल्ली का मल बकरी के बाल और शहद आदि को एक जगह मिलाकर धूनी देते हैं। चक्रपाणि कहते हैं कि नीम के पत्ते, हींग, साँप की केंचुली और सरसों को इकट्ठा कूट कर धूनी देने से डायनें भाग जाती हैं और दिमाग से भूतों का असर दूर निकल जाता है। चार्ल्स द्वितीय के चिकित्सक डाक्टर थोमास शर्लें ने वहम (हाइपोकॉण्डिया) के लिये (बाहसम आफ बैट्स) नाम की जिस दवा की सिफारिश की थी वह मण्डकी सांप, चिमगादड़, सूअर की चरबी, हिरण की मज्जा तथा बैल की जांघ की हड्डी के योग से बनी थी। सांप के मुख और मल के धुंए को चरक मृगी में उपयोग करता रहा है।

वात नाड़ियों के रोगों में—

हांगकांग में चीनी वैद्यों की दुकानों पर बोतलों में भरे सांपों की कतारों से अलमारियां सजी होती हैं, जैसे कि ये किसी म्यूजियम के नमूने हों। धामन आदि अनेक जातियों के सांप इसमें रखे रहते हैं। चीन के होनान प्रांत में सफेद धब्बों वाले एक सांप की खाल को चीनी चिकित्सक शराब में भिगो देते हैं। पक्षाघात के लिए उत्तम औषधि के रूप में इसका प्रयोग किया जाता है। (डुहल्डे लिखित चीन, भाग १, पृष्ठ १०२) एन्सिस्ट्रोडोन ब्लोम्होफि एक छोटा जहरीला सांप है जो जापान और चीन में बहुतायत में मिलता है। वात नाड़ियों के लिये पोषक भोजन के रूप में जापानी इसका भोजन करते हैं।

आमवात की दवा—

ब्राजील के कर्कर सांप (क्रॉटेलस होरिडस) की पेट की चरबी आमवात (रहुमेहिज्म) की मुख्य औषधि समझी जाती है। ब्राजील के कुकुरिडबा यूनेक्टस म्यूरिनस) सांप की चरबी को पिघाल कर आमवातिक वेदनाओं योगों आदि अनेक प्रयोजनों के लिये बरतते हैं। (म्यूजियम ऑफ नेचुरल हिस्ट्री, भाग २, पृष्ठ ५८)

बोर्नियो के उपासक लोग अजगर की चरबी का मरहमों में प्रयोग करते हैं (कार्ल बाक, दि हेड हण्टर्स आफ बोर्नियो, पृष्ठ २५२)। चरबी के लिये वे इस का शिकार करते हैं। अफ्रीका की नमाक जाति का विश्वास है कि ओण्डारा अजगर (सम्भवतः पाइमन नटालेन्सिस) में कुछ औषधीय गुण होते हैं। इस लिये जब उनके हाथ यह लग जाता है तो वे इसके मांस को सावधानी से सुरक्षित रखते हैं। किसी व्यक्ति के बीमार पड़ जाने पर वे इसका या तो बाहर लेप के रूप में प्रयोग करते हैं या काढ़ा बनाकर पिला देते हैं।

(क्रमशः)

वैद्यों की सम्मतियां

सम्मति नं० १४—

भाग २० अङ्क ७ परामर्श २१ पर सम्मति—

महाशय जी विशूचिका के अन्तिम (प्रतिक्रिया अवस्था) में भी कुछ साध्यता होती है, जिन रोगियों का ताप ९० से ९६ डिगरी होता है, वे रोगी डाक्टरों के पानी चढाने तथा आयुर्वेद के निम्न योगों से स्वस्थ हो जाते हैं और जिनका ताप ५० डिगरी तक हो जाता है, वे रोगी कोई युक्ति से स्वस्थ नहीं हो सकते।

यः श्याव दन्तौष्ठ नखोऽल्प संज्ञो,
वम्यर्दितोऽभ्यन्तरजातनेत्रः।
क्षामः स्वरः सर्व विमुक्त सन्धि,
असाध्य एव खलु नो चिकित्स्यः॥

१४९-कागजी नीबू और आद का रस प्रत्येक आध आध सेर छान कर एक साफ बोतल में भर दे, फिर उसमें—

भुनी हीरा हींग १ तोला
सोंचर नोन २॥ तोला
सैंधा नमक वाय विडंग सोंठ
मिर्च छोटी पीपल

—इन सब का चूर्ण ६-६ माशा मिलाकर बोतल का मुख बन्द कर ७ दिन तक रक्खे, बाद छान कर दूसरे बोतल में भर ले।

सेवन विधि—आध २ घण्टे बाद २ माशे से ६ माशे तक।

लाभ—कै, दस्त तथा प्यास को बन्द कर मूत्र को खोलता है और अग्नि को प्रदीप्त कर नाड़ी को ठीक करता है।

१५०-आक की जड़ की साफ छाल का कल्क २॥ तोला, २३ तोला रेक्टीफाइड स्पिरिट (पानी मिली शराब) एक साफ बोतल में भरक मिला दें, फिर बोतल का मुख बन्द कर २४ घण्टे रख बाद छान कर दूसरे बोतल भर ले।

सेवन विधि—आध २ घण्टे पर १-४ बूंद दो रत्त सोंठ के चूर्ण अथवा जल के साथ देवें।

लाभ—कै, दस्त, पेट की उलन, पेशाब का रुकना प्यास का लगना, शरीर का ठण्डा पड़ना आंखों का धसना, कान्ति का बिगड़ना आदि दूर होते हैं। इसकी ३-४ मात्रा ही विशूचिक पर रामबाण का काम करती है।

सम्मति नं० १५—

भाग २० अङ्क ७ परामर्श २४ पर सम्मति—

उक्त रोगी का कफ फेफड़ों में सूख गया है इसलिये कफ स्निग्ध करने के लिये नीचे लिखा योग तैयार कर पिलाइये जिससे कफ ढीला होक गिरने लगे।

१५१-१ तोला साफ अलसी अधकुट कर आध पाव जल में पकाकर आधा रहने पर १ तोला मिश्री पीस कर मिला छान कर तीन चार दि पिलाइये, फिर नीचे लिखा योग बनाकर सेव कराइये।

१५२-कलमी शोरा १ पाव
नौसादर आध पाव
मदार के पत्ता १० सेर
सांभर नमक १ सेर

—इन सब को कुचल कर एक मिट्टी के बर्तन बन्द कर पाताल यन्त्र द्वारा अर्क टपक लीजिये, फिर उस अर्क में असली केशर, का

मिर्च, छोटी पीपल और सोंठ प्रत्येक ६-६ माशा, क्षार ३ माशा पीसकर मिला कर मुख बन्द कर ७ दिन तक धूप में रक्खकर दूसरे बर्तन में छान कर रख लीजिये।

सेवन विधि—प्रथम सप्ताह में एक माशा सौंफ के अर्क से दूसरे सप्ताह में २-२ माशा देवें।

पथ्य—मक्खन, घी, बेसन की रोटी, तेल, खटाई, मिर्चों से परहेज रहे।

सम्मति नं० १५—

भाग २० अङ्क ७ परामर्श २५ पर सम्मति—

उक्त गर्भवती स्त्री को निम्न योगों को तैयार कर सेवन कराइये।

१५३-शुद्ध पारा　शुद्ध हरताल　शुद्ध लोहा
—प्रत्येक १-१ तोला।
अभ्रक　२ तोला
कपूर　बङ्ग　शुद्ध तांबा
जायफल　जायपत्री　गोखरू
शतावर　खरैटी　कंघी की जड़
—प्रत्येक १-१ तोला।

—इन सब को चूर्ण कर जल के साथ घोटकर रत्ती प्रमाण की गोली बांधे।

सेवन विधि-एक २ गोली दोनों समय जल के साथ

१५४ शुद्ध हिंगुल　४ तोला
त्रिकुटा　५ तोला
शुद्ध सोना मक्खी　२॥ तोल
जायफल　लौंग　१-१ तोला।

—लेकर कूट छानकर जल के साथ घोटकर मटर के बराबर गोली बनावे।

सेवन विधि—१-१ गोली दोनों समय जलके साथ।

—वैद्य युधिष्ठरसिंह जी सोमवंशी, स्टेट रीवां।

सम्मति नं० १६—

अङ्क ७ परामर्श नं० २१ पर—

विशूचिका में जब अन्तिम अवस्था आजाती है उस समय में अपने आयुर्वेदोक्त विशूचीविध्वंसन रस देना चाहिये, इससे पूरा फायदा होते देखा है और जब मूत्राघात होजाता है तब ५ तोला चूहें की मींगनी और ५ तोला कलमी शोरा दोनों को उष्ण जल में पीस कर नाभि के नीचे लेप कर दें मूत्र अवश्य खुल जायेगा।

पिपासा रोकने के लिये जायफल नग ४ वा ५ लेकर कूट लें और एक सेर पानी में उबाल लें। और पाव वा डेढ़ पाव पानीजलजावे, तब उतार कर छान लें और मिट्टी के कोरे बर्तन में डाल दें, जब प्यास लगे तब घूंट २ रोगी को पिलाते रहें। इस योग से पिपासा की शान्ति हो जाती है और विशूचिका में भी अच्छा रहता है।

—वैद्य पं० वैजनाथ शर्मा शास्त्री, उदयपुर।

सम्मति नं० १७—

परामर्श नं० २५ के लिये अनुभूत योग—

१५५-कागजी नीबू—ज्वर नहीं रहने पर मिश्री के शरबत के साथ सुबह में।

१५६-मुक्ता २ चावल, प्रवाल ¼ रत्ती, गुरुच सत्व ४ रत्ती, छोटी इलायची का सफूफ १ रत्ती, यह एक मात्रा मधु के साथ चटाकर ऊपर से बीदाना का रस दो तोला ६-६ घंटे पर दे।

१५७-बसन्त मालती, गर्भचिन्तामणि ½ रत्ती, गुरुच के सत्व १ रत्ती और मधु १० बूंद के साथ सुबह शाम।

१५८ विष्णु तैल शिर और कपाल में बहुत धीरे २ दो बार मालिश करें।

[शेषांश अगामी अङ्क में देखें]

—श्री पं० योगेन्द्रनाथ वैद्य मउ बाजिदपुर।

विविध समाचार

नि. भा. आ. विद्यापीठ स्नातक सम्मेलन

मणिपाल (कर्नाटक प्रान्त)

नि०भा०आ० विद्यापीठ स्नातक संघ का तृतीय वार्षिक अधिवेशन ३४ वें आयुर्वेद महा सम्मेलन के साथ २ कर्नाटक प्रान्तीय मणिपाल नगर में श्री पं० एम० वेंकट शास्त्री आयुर्वेदाचार्य, बेजवाड़ा के सभापतित्व में २८-२९-३०-३१ दिसम्बर सन् ४५ ई. को बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ, प्रत्येक प्रान्त के स्नातक अधिक संख्या में उपस्थित थे।

सर्व प्रथम-मङ्गलाचरण-धन्वन्तरि प्रार्थना आयुर्वेद पताका गायन के पश्चात् श्री पं० बालकृष्ण जी शास्त्री कानपुर ने निर्वाचित सभापति श्री पं० एम० वेंकट शास्त्री आयुर्वेदाचार्य बेजवाड़ा का गुण वर्णन करते हुये सभापति का आसन ग्रहण करने के लिये प्रस्ताव उपस्थित किया, इस प्रस्ताव को भिन्न २ प्रान्तीय स्नातकों ने अनुमोदन एवम् समर्थन किया, पश्चात् महामण्डलाध्यक्ष श्री एम. के. मुखर्जी तथा विद्यापीठाध्यक्ष श्रीयुत पुरुषोत्तम जी हिर्लेकर शास्त्री महानुभावों ने उक्त प्रस्ताव का अनुमोदन एवं समर्थन किया।

श्री एम० वेंकट शास्त्री आयुर्वेदाचार्य द्वारा आसन ग्रहण किये जाने के बाद स्वागत मन्त्री महोदय ने सभापति जी के गले में पुष्पमाला समर्पित कर स्वागत गान किया। इसके बाद स्वागताध्यक्ष महोदय ने अपनी प्रान्तीय भाषा में लिखित स्वागत भाषण पढ़ा, ततः स्नातक सम्मेलनाध्यक्ष श्री एम० वेंकट शास्त्री ने संस्कृत भाषा में अपना लिखित भाषण पढ़ा, आपने अपने भाषण में स्नातकों को राज्य मान्यता के लिये कई उपाय बतलाये, और संघ द्वारा स्थाप्यमान आयुर्वेद विश्वविद्यालय के संचालनादि विषयों पर बहुत कुछ प्रकाश डाला, आपने अपने भाषण में यह भी कहा कि संघ द्वारा पत्रिका प्रकाशित होनी चाहिये।

सम्मेलनाध्यक्ष भाषण के पश्चात् शुभ सन्देशों के तार और पत्र भेजने वाले महानुभावों के नाम पढ़कर सुनाये गये। पश्चात् वार्षिक कार्य विवरण पढ़ा गया। जो कि सर्व सम्मति से स्वीकृत किया गया, ततः कई विद्वानों के भाषण होने के पश्चात् कई प्रस्ताव स्वीकृत किये गये, जिसमें से कुछ मुख्य प्रस्ताव निम्नाङ्कित है।

१—यह स्नातक सम्मेलन स्नातक संघ के सदस्य श्री पं० विट्ठलप्रसाद व्यास आयुर्वेदाचार्य प्रधानाध्यापक बम्बई आयुर्वेद विश्वविद्यालय तथा अन्यान्य वैद्यों एवं आयुर्वेद हितैषी महानुभावों के असामयिक निधन पर शोक प्रकट करता है। और उनकी पवित्र आत्मा के सद्गति प्रदान के लिये और दुःखी परिवार को धैर्य प्रदान क लिये ईश्व से प्रार्थना करता है।

२—यह स्नातक सम्मेलन स्नातकों की राज्य मान्यता के लिये प्रान्तीय अधिकारी वर्गों से और वैद्यों तथा आयुर्वेद हितैषी एवं स्नातक महानुभाव से साग्रह निवेदन करता है, कि अधिक से अधि प्रयत्न करें, जिससे कि विद्यापीठ स्नातकों राज्य मान्यता प्राप्त हो।

३—यह स्नातक सम्मेलन विद्यापीठ से प्रार्थ करता है कि विद्यापीठ परीक्षाफल क्रमांक छा नाम सहित एक साथ निकाला जाय।

४—यह स्नातक सम्मेलन विद्यापीठ से अनुरोध करता है, कि विद्यापीठ शिक्षा और परीक्षा सम्बन्धी सब कार्यों के निर्वाह के लिये विद्यापीठ स्नातकों को प्रधानता देकर उनके अधिकार और सन्मान की रक्षा करे।

५—यह स्नातक सम्मेलन महामण्डल से अनुरोध करता है, कि विद्यापीठ स्नातक संघ को अपना एक अङ्ग स्वीकार करे।

६—यह स्नातक सम्मेलन विद्यापीठ से अनुरोध करता है कि स्नातकोत्तर विद्यालय के नियम व पाठ्यक्रमादि शीघ्र निर्माण कर प्रकाशित करे।

७—यह स्नातक सम्मेलन आयुर्वेद महामण्डल विद्यापीठ से प्रार्थना करता है कि आयुर्वेद विश्व विद्यालय की उन्नति के लिये सर्वात्मना सहायता एवं सहयोग प्रदान करे।

८—यह स्नातक सम्मेलन सम्पूर्ण स्नातकों को संघ का कार्य सुविदित हो, और स्नातकों की ज्ञान वृद्धि हो, एतदर्थ संघ द्वारा पत्रिका प्रकाशित होना आवश्यक समझता है। इसलिये संघ के सदस्यों से निवेदन करता है कि अधिक से अधिक धन रूप सहायता प्रदान करें, जिससे कि पत्रिका प्रकाशित हो सके।

९-यह स्नातक सम्मेलन समस्त आयुर्वेद विद्यापीठ स्नातकों से सानुरोध निवेदन करता है कि शीघ्रातिशीघ्र संघ के सदस्य बनकर सर्वात्मना संघ के प्रत्येक कार्य में सहयोग प्रदान करे।

३५ वें आयुर्वेद महा सम्मेलन के लिये श्री० पं० बालकृष्ण जी शास्त्री प्रधान मन्त्री नागरिक वैद्य सभा कानपुर ने (आमन्त्रण सम्बन्धी प्रस्ताव उपस्थित किया) जो कि उपस्थित सभी महानुभावों ने सहर्ष अनुमोदन एवं समर्थन किया अतः ३५ वां आयुर्वेद महासम्मेलन के लिये कानपुर का आमन्त्रण सर्वाभिमत स्वीकृत किया गया। पश्चात् सभी उपस्थित महानुभावों को बहुशः धन्यवाद देकर सम्मेलन के सभी कार्य पूर्ण किये गये।

—ब्रजवल्लभ पाण्डेय प्रधान मन्त्री।

नोट कर लीजिये—

अ० भा० आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रचारक संघ का ६-७-८ फरवरी को होने वाला प्रथम वार्षिकोत्सव एवं हरदोई जिला पंचम वैद्य सम्मेलन इन तारीखों में न होकर अप्रैल के अन्तिम सप्ताह में भगवन्तनगर मल्लावां जिला हरदोई में होगा। इसके साथ ही युक्त प्रान्तीय विद्यापीठ स्नातक सम्मेलन भी होगा।

—प्रधान मन्त्री।

वैद्य ध्यान दें

इण्डियन मैडीसन बोर्ड की सूचना पर भी आधे वैद्यों ने नाम पते भेजे हैं शेष का पता नहीं। अब कलक्टरों द्वारा पूछा गया है। जिन वैद्यों ने अभी तक नाम नहीं भेजे हैं वे ६ सप्ताह के अन्दर नाम पते भेज दें वर्ना रजिस्टर में से नाम कट जांयगे। सब अपने रजिस्टर्ड नं० अवश्य नोट कर रखें व हर पत्र में लिखें।

फिर अपने को देखें —

एक लेख में मैंने आयुर्वेद महामण्डल और विद्यापीठ की उन्नति के लिये कुछ सुझाव दिये थे। अक्टूबर १९४५ की महासम्मेलन पत्रिका में प्रधान सम्पादक ने उसका उत्तर देते हुए मुझ पर खूब कीच उछाला है। मुझ पर जो व्यक्तिगत आक्षेप किये गये हैं उनका संक्षिप्त उत्तर यह है।

'हम इन सांपों को जानते थे' लेख मेरी ८०० पृष्ठों की छप रही पुस्तक का एक अध्याय है। भण्डारकर ओरिएण्टल रिसर्च इन्स्टीट्यूट ने इस की आलोचना में लिखा है—

Ot is very Naluable for students of Indian culture geniral and Indian Biology in porticular.

इस लेख में संस्कृत के नामों का अर्थ करने में मैंने क्या अनर्थ किया है इस पर वै.म. के प्र० सम्पादक अवश्य प्रकाश डालें जिससे पत्रिका के ग्राहकों को भी पता लगे कि उनके प्र० म० वस्तुतः प्रकाण्ड पंडित हैं ?

यह एक मनो वैज्ञानिक सत्य है कि जो गुण किसी व्यक्ति में नहीं होता दूसरे में उस गुण को देखकर ईर्ष्या पैदा होती है। समझदार आदमी उस गुण को अपना लेने की कोशिश करता है परन्तु एतद्रिक्त व्यक्ति ऐसा न करता हुआ भी अपने को उन विशिष्ट गुणों से सम्पन्न दिखाने का प्रयत्न करता है, जैसे कि बहुत से छद्मचर वैद्य झूठी उपाधियां लगाकर जनता को धोखे में रखते हैं और अपना उल्लू सीधा करते हैं।

वै स.के प्र०सम्पा० ने समालोचना करने से पहले अपने आप को भली भांति देख लिया होगा और चिकित्सा के आठों अङ्गों का भी ज्ञान प्राप्त कर लिया होगा।

हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट से अब तक तीन पुस्तकें निकल चुकी हैं जिनमें से एक के दो संस्करण हो गये हैं। सात-आठ सौ पृष्ठों की दर्जनों चित्रों से युक्त एक पुस्तक छप रही है। आठ दस पुस्तकों की पाण्डुलिपियां तैयार हैं। जो कागज और प्रेस की असुविधाओं के कारण रुकी हुई हैं। उच्च कोटि के भारतीय तथा यूरोपियन विद्वानों ने इंस्टिट्यूट के साहित्य की भरपूर प्रशंसा की है। देहरादून की फारेस्ट रिसर्च इंस्टिट्यूट के बांटानिस्ट डाक्टर एन० एल० बोर ने लिखा था—Thie is the best effurt of its kind' यह साहित्य हिन्दी और आयुर्वेद का गौरव है। ऐसी आयुर्वेद महामण्डल तथा विद्यापीठ के प्रधानों तथा मन्त्रियों को और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान की सम्मति हैं। प्र० स० ने एक जिम्मेदार स्थान पर बैठकर अपने अधिकार का अनुचित लाभ उठाया है।

—श्रीरामेशवेदी जी आयुर्वेदालङ्कार लाहौर।

दयानन्दायुर्वेदिक कालेज स्नातक मण्डल—

दयानन्दायुर्वेदिक कालेज के स्नातक मंडल की जो गत आठ वर्षों से किन्हीं कारणों से कार्य नहीं कर रहा था, दयानन्दायुर्वेदिक कालेज के वार्षिकोत्सव के शुभ अवसर पर उसके आचार्य और स्नातकों के परिश्रम से ता० १८ नवम्बर को पुनः स्थापना कर दी गई है। जिसके पदाधिकारी निम्नलिखित निर्वाचित हुए हैं।

प्रधान—कविराज पं० देशराज जी शास्त्री, सरगोधा
उपप्रधान—१—कवि० रामेश्वर सिंह जी कुंवर लाहौर
" २—डा० वी० एस० थापर लाहौर।
प्रधान मन्त्री—कवि० पं० नित्यानन्द शर्मा वैद्य वाचस्पति, लाहौर।
मन्त्री—कवि० ईश्वरदत्त शास्त्री, लाहौर।
प्रचार मन्त्री—कवि० कुन्दनलाल जी वैद्य, मुरीदके
कोषाध्यक्ष—कवि० नरदेव जी वैद्य, लाहौर।
आय व्यय निरीक्षक—कवि० खजानचन्द जी बी. लाहौर।

—प्रधान मन्त्री

वैद्य सभा लाहौर का ३१ वां

वार्षिक महोत्सव

इस वर्ष सभा का ३१ वां वार्षिकोत्सव तथा धन्वन्तरि महोत्सव विशेष समारोह से मनाया गया उत्सव का कार्यक्रम तीन स्थानों पर विभक्त था । १ नवम्बर १९४५ को सायङ्काल नगर की बाहरी आबादी के प्रसिद्ध Y. M. C. A. हाल मालरोड में "क्या आधुनिक जीवन प्रणाली स्वास्थ्य के लिये हितकर है वा प्राचीन" विषय पर शास्त्रार्थ हुआ । जिसके सभापति भूतपूर्व आयुर्वेद राष्ट्रपति पं० शिवशर्मा जी आयुर्वेदाचार्य थे । वैद्य भूषण पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा अमृतधारा, डा०देवराज नारङ्ग L R C. P. (Lond), राजवैद्य दामोदर शास्त्री जी, डा० गुरुबख्श राम, पं० विप्रबन्धु M. A. डा० शङ्करदास M. B- B S. ह० गुलाम मुर्तजा आदि २ वक्ताओं ने भाग लिया ।

दूसरे दिन भगवान धन्वन्तरि जन्मोत्सव के उपलक्ष में स्थानीय रा० ब० लक्ष्मणदास आयु० हस्पताल में मुफ्त रोगी निरीक्षण हुआ जिसमें नगर के अतिरिक्त अमृतसर के श्री दमोदर शास्त्री तथा अमरावती के वैद्य रंगेलाल जी ने भाग लिया इसके अतिरिक्त स्त्री रोगियों के निरीक्षण के लिये वैद्याओं का विशेष प्रबन्ध किया गया था ।

सायंकाल एस० पी० एस० के० हाल में वैद्य विनोद पं० ठाकुरदत्त जी शर्मा अमृतधारा के सभापतित्व में एक व्याख्यानमाला हुई जिसमें "व्यायाम, मनोविज्ञान, हमारा भोजन तथा लम्बी आयु" चार विषय थे ; वक्ताओं में डा० लक्ष्मण स्वरूप जी प्रिंसिपल ओरियेंटल कालेज, डा० कैप्टन जगन्नाथ M. B. B. S. प्रधान वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री, आचार्य नरेन्द्रनाथ आयु० चक्रवर्ती, प्रिंसिपल धर्मानन्द शास्त्री के नाम उल्लेखनीय हैं ।

तत्पश्चात् प्रधान मन्त्री ने सभा के इतिहास तथा वार्षिक कार्यक्रम के विषय में संक्षिप्त भाषण दिया ; अन्त में सभापति तथा बाहर से आये हुए सज्जनों के धन्यवाद के पश्चात् सभा विसर्जन हुई ।

— धर्मदत्त चौधरी आयुर्वेदाचार्य प्र० मन्त्री ।

धन्वन्तरि जयन्ती–

ता० २-११-४५ को वनस्पति रसायनशाला बीसलपुर में श्री पं० नित्यानन्द जी शंखधार वैद्यशास्त्री के सदुद्योग से वैद्यराज पं० चन्द्रसेन जी दीक्षित के सभापतित्व में धन्वन्तरि जयन्ती बड़ी धूमधाम से मनाई गई । —मन्त्री ।

३५ वां वैद्य सम्मेलन–

अखिल भारतवर्षीय ३५ वां आयुर्वेद महासम्मेलन कानपुर में होना निश्चय हुआ है ।

बधाई–

भू० पू० आयुर्वेद राष्ट्रपति श्रीयुत् पं० शिवशर्मा जी लाहौर को गवर्नमेण्ट ने इस वर्ष नवीन वर्षोपलक्ष्य में "वैद्य रत्न" की उपाधि से सन्मानित किया है । अतः धन्वन्तरि परिवार की तरफ से शर्मा जी को बधाई है ।

अ० भा० ३४ वां आयुर्वेद महासम्मेलन मछिपाल (मद्रास) ने—

श्री० पं० सभाकान्त झा आयुर्वेद शास्त्री स० सम्पादक धन्वन्तरि को 'विषम ज्वर' निबन्ध पर सर्व प्रथम पुरस्कार प्रशंसापत्र सहित स्वर्ण पदक प्रदान किया है ।

धन्वन्तरि कार्यालय में श्रीयुत पन्त जी–

ता० २७-१-४६ को धन्वन्तरि कार्यालय में

भू० पू० प्राइम मिनिष्टर श्रीयुत् पं० गोविन्द वल्लभ जी पन्त पधारे। आपको कार्यालय की तरफ से मान पत्र तथा २५०) भेंट किये गये। इसके बाद विजयगढ़मण्डलकांग्रसकमेटी की तरफ से १०३५) की थैली भेंट की गई।

राजपु० प्रान्तीय ८ वां वैद्य सम्मेलन–

ता० २४-२५-२६ फरवरी को श्रीमान् स्वामी जयरामदास जी प्रोफेसर महाराजा संस्कृत कालेज जयपुर के सभापतित्व में राजपूताना प्रांतीय अष्टम वैद्य सम्मेलन बीकानेर में होगा।

उसी अवसर पर वाद विवाद की प्रतियोगिता के लिये श्री धन्वन्तरि भगवान का रजतमय चित्र चल रूप में रखा गया है। प्रत्येक विद्यालय के छात्रगण इसमें भाग ले सकते हैं। विषय है—

"आयुर्वेदोन्नति के लिये विशुद्ध आयुर्वेदीय पाठ्यक्रम ही उपयुक्त है"

—वैद्य विद्याधर शर्मा।

शोक समाचार–

गत २ जनवरी को लगभग ३ बजे दोपहर को पं० सत्यव्रत प्रेमी की पुत्री गार्गी देवी का स्वर्गवास होगया।

—नरदेव शर्मा मेरठ।

आज की यह सभा श्रीयुत पं० बद्रीदत्त झा ए० एम० एम० प्रोफेसर बुन्देलखण्ड आयुर्वेदिक कालेज के ता० २८-१०-४५ को असामयिक निधन पर शोक प्रकट करती है और ईश्वर से प्रार्थना करती है कि उनके कुटम्ब को उनके विरह वेदना सहन की शक्ति प्रदान करे। एवं दिवंगत आत्मा को शान्ति दे।

—एम० एन० राजपूत।

आवश्यकता है–

नर्स व मिडवाइफ चाहिये, सीखने वालियों को वजीफा भी दिया जायगा। पत्र व्यवहार निम्न पते पर करें।

—संचालिका एस० एम० ह.म ज्वालापुर, हरद्वार।

फकीरी गुप्त रहस्य–

यह पुस्तक अनुभूत प्रयोगों का भण्डार है, स्त्री पुरुषों के गुप्त रोगों की चिकित्सा विधि, जिसे सर्व साधारण आदमी गुप्त रोगों का इलाज करके हजारों रुपया कमा सकता है। प्रयोग सभी तत्कालीन प्रभावशाली और शतशः अनुभूत है। इस पुस्तक में वही प्रयोग लिखे गये हैं, जो अनेक बार कसौटी पर परखे जाचुके हैं। इस पुस्तक के पास रहने से किसी वैद्य की आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि यह स्वयं ही घर का वैद्य है, जिस औषधालय में यह पुस्तक नहीं है उसका औषधालय अधूरा ही है, इसमें फकीरों के खास प्रयोग है। लेखक ने सागर को गागर में बन्द कर दिया है। इतने बड़े उपयोगी ग्रन्थ का मूल्य केवल ३॥-)॥ डाक व्यय पैकिंग ॥)॥

पेटेन्ट औषधियां–

इस पुस्तक में सब प्रकार के धड़ाधड़ बिकने वाली पेटेन्ट औषधियों के सच्चे प्रयोग लिखे गये हैं, जिन्हें बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीखकर साधारण पूंजी में तैयार कीजिए, इस पुस्तक द्वारा सैकड़ों रुपये मासिक की स्थायी आमदनी पैदा कर सकते हैं। मूल्य ६७६ प्रयोग ४) डाक व्यय ।≡)

पता—जीवन बन्धु कार्यालय, संगरिया (बीकानेर)

बहुत बड़े अभाव की पूर्ति

आयुर्वेद संसार को अभूत पूर्व दान

सचित्र शरीर क्रिया विज्ञान

प्रकाशित हो गया।

आयुर्वेद की उन्नति की उत्कट अभिलाषा के कारण ही इस दुर्लभ ग्रन्थ का प्रकाशन युद्ध की इस संकट-घड़ी में किया गया है, जबकि एक-एक सीट कागज के लिये कितनी कठिनाई उठानी पड़ रही है, यह सर्व विदित है।

आयुर्वेद में यह प्रथम स्तुत्य प्रयास हुआ है। इससे आयुर्वेद के एक प्रधान अङ्ग की पूर्ति हुई है। वैद्यों पर डाक्टरों का यह आक्षेप रहा है कि वे शारीरिक ज्ञान से हीन चिकित्सक होते हैं। इस ग्रन्थ ने उन्हें मुंहतोड़ उत्तर दिया है।

अभी तक शरीर क्रिया के बारे में आयुर्वेद में जो कुछ लिखा गया था वह अंग्रेजी ग्रन्थों का अनुवाद मात्र था। जिसका असर आयुर्वेद के छात्रों पर यह होता था कि वे आयुर्वेद को हीन मानने लगते थे।

इस ग्रन्थ के उदीयमान लेखक आयुर्वेदालंकार श्री रंजीतराव ने आयुर्वेद सिद्धान्त के आधार पर इसे मौलिक रूप में लिखा है। जो आयुर्वेद की श्रेष्ठता का द्योतक है। जिन्हें अंग्रेजी के फिजियालोजी का ज्ञान है वे यदि इस ग्रन्थ को पढ़ेंगे तो देखेंगे कि विदेशी विज्ञान आयुर्वेद से बड़ा नहीं है। इस ग्रन्थ में इस विषय का व्योराबद्ध वर्णन है कि शरीर का कौन सा अङ्ग क्या काम करता है? चिकित्सक के लिये यह जानना अत्यावश्यक है।

अंग्रेजी में तो इस प्रकार के ग्रन्थों का मूल्य पन्द्रह-बीस रुपये से कम होता ही नहीं है। हिन्दी और संस्कृत में भी अनुवाद ग्रन्थ का ही काफी मूल्य है। लेकिन हमने आयुर्वेद की सेवा के ख्याल से इसका मूल्य बहुत कम रक्खा है। ५२ अध्याय, डिमाई ⅛ साइज के ६०० पृष्ठ जिनमें ५३ चित्र हैं, का मूल्य सिर्फ ६) रु० रखा गया है। डाक व्यय ।।।≡) है। पेशगी के साथ आर्डर भेजकर शीघ्र ग्रन्थ मंगवा लें, नहीं तो दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करनी होगी।

अस्थायी हेड आफिस—
कदम कूआं पटना।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन,
कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

नोट—आयुर्वेद के छात्र ५) रु० में ही यह ग्रन्थ पा सकते हैं, यदि वे अपने अध्यापक के पत्र के साथ पूरा मूल्य अग्रिम भेज देंगे। उन्हें डाक व्यय नहीं लगेगा।

AYURVEDIC INJECTIONS

PREPARED AT INDIA'S PIONEER
AYURVEDIC LABORATORY
(Established in A. D. 1914)
THE APOLLO PHARMACY
MANUFACTURING CHEMISTS
P. O. JHARIA, E. I. Rly.

BRANCHES & AGENCIES

Ahmedabad, Ajmer. Anjar Cutch, Bangalore City, Baroda, Bavla, Belgaum. Bhavnagar, Bombay, Botad, Broach, Cairo (Egypt), Cawnpore Chhindwara, Chuda, Davangere, Devpur, Dhandhuka, Dhrol Ilkal, Jammu, Jamnagar, Jodia, Kapadwanj, Karachi, Kosamba, Lahore, Lakhtar Latur, Limbdi, Marwar-Mundwa, Mehsana, Morvi, Nadiad, Nairobi (East Africa) Nasik City, Palitana, Patan, Patna, Patiala, Rajkot Raver, Srinagar-Kashmir, Secundrabad, Shiroda, Sihore, Surat, Visnagar, Wadrhwan Camp and City

Apollo injections are being used by many leading physicians and surgeons of India, who are interested in the Indian system of medicine. This is the only Indian laboratory well known for its high standard of accuracy and purity. Some leaders of Ayurvedic Congress have praised our products with open hearts.

Our products are available from your city agent at our fixed rates. They are highly beneficial and used with success by millions of people throughout India and abroad.

Medical practitioners get reasonable commission. For further details see our agent or write to the Pharmacye. We are to appoint more agents in non represented areas

आयुर्वेदिक इन्जेक्शन्स

दि अपोलो फार्मेसी, झरिया ई० आई० आर०

अपोलो आयुर्वेदिक इन्जेक्शन्स लाखों रोगियों पर परीक्षित किये गये हैं। अल्प मूल्य होने पर भी अधिक गुणकारी है। भारतवर्ष के आयुर्वेद के महान् नेताओं ने उनकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। आप अपने शहर के हमारे एजेन्ट से खरीद कर थोड़े व्यय में ही आरोग्यता प्राप्त कीजिये। आपके यहां न मिलने पर फार्मेसी से मंगवालें, विशेष विवरण हमारे एजेन्ट द्वारा ज्ञात करें।

WAR--TIME BRANCH---OFFICE
THE APOLLO PHARMACY
P. O. BOX NO. 93, BARODA.

यदि आपको आयुर्वैदिक इञ्जेक्शनों का—

हजारों बार का परीक्षित

अदभुत चमत्कार

अपूर्व उत्कृष्ट आविष्कार

देखना हो तो निम्न पते से ही प्रत्येक रोगों का इंजेक्शन मंगाकर धनव यश के भागी बनें।

आयुर्वैदिक कुनैन इञ्जेक्शन

केवल १ इंजेक्शन में मलेरिया लापता हो जाता है। एलोपैथी कुनैन से विशेष लाभदायक है। इसे बड़े २ वैद्य डाक्टरों ने आजमाकर मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। परीक्षा प्रार्थनीय है।

दी आयुर्वैदिक इञ्जेक्शन सप्लाई एजेन्सी, मंगलगढ़ (दरभंगा)

वैद्य, हकीमों, और डाक्टरों की सुविधा के लिये नई ईजाद

टेबलेट (टिकियां) बनाने की मशीनें

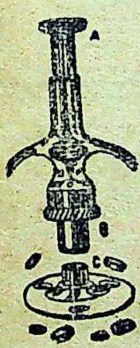

यह पीतल की विलायती मशीनें बहुत ही मजबूत बनी हुई हैं। चांदी की भांति चमकदार है। वर्षों काम देती हैं। एक घण्टे में ५०० से भी अधिक सूखी तथा गीली वस्तुओं की टेबलेट (टिकियां) एस्प्रो, कुनैन के मानिन्द बनाती हैं। सरल इतनी हैं कि छोटे २ बच्चे भी आसानी से चला सकते हैं। जरा सी देर में डाई घटाई बढ़ाई जा सकती है। हर बात की गारन्टी की जाती है। मूल्य १ डाई वाली मशीन का १०)। दो डाई वाली का १२)। डाकखर्च ।।।) अलग।

व्यापर में धोके और नकल से बचने के लिये भारत सरकार से

रजिस्टर्ड तथा पेटेन्ट-

कराना है तो आप हमारे द्वारा कराइये। हम तमाम खर्चा सहित १५।।) पहिले नाम का तथा अन्य अगले नामों का २) रु० प्रति नाम के हिसाब से लेते हैं। रजिस्ट्री हर वस्तु या संस्था के नाम की होती है, अर्थात ट्रेडमार्क, लेबिल, जायदाद, कम्पनी, फार्मेसी, औषधालय, दूकान, किताब, दवा इत्यादि। 'रजिस्ट्री नियम' मुफ्त मंगाइये। धोखेबाज और लूटेरों से सावधान रहें।

मैनेजर—भारत कं० (रजिस्टर्ड), रेलवे स्टेशन, शिकोहाबाद यू. पी.

दवा के सच्चे मोती।

वैद्यो ! **हकीमो !!** **तथा फार्मेसी वालो !!!**

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा, जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारतवर्ष के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं, निहायत किफायत से मिलते हैं। धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने की कृपा करें।

पता-नगीनदास वीरचन्द जेवरी, ४४-४६, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३।

सार्प विज्ञानीय

यह अपूर्व ग्रन्थ हिन्दी भाषा में प्राण रक्षक है। इसमें स्थावर जंगम सब प्रकार के विष और विषैले जीवों के चरक, सुश्रुत, यूनानी, डाक्टरी के अनुसार और अपने ५० वर्ष के अनुभव एवं बड़े २ उस्तादों के चमत्कारी सैकड़ों प्रयोग हैं। सर्पों की १०० जातियों की पहिचान और विष का प्रभाव, मन्त्र से विष का उतारना और सर्प से ही विष खिचवाना इत्यादि है। नि० भा० वैद्य सम्मेलन बीकानेर ने इस पर प्रमाण पत्र दिया है। मूल्य १।) लागत मात्र। पोस्टव्यय ।।)

मिलने का पता - पं० कृपाशंकर शर्मा वैद्य शेखसराय बुलन्दशहर।

विगत वर्षों की भांति "धन्वन्तरि त्रयोदशी व दीपावली" के शुभ अवसर पर हमने इस वर्ष भी विशेष उपहार देना स्वीकृत किया है. जिसकी अवधि दिवाली से होली तक सीमित है।

मोती चूरा-

के ग्राहक इस विशेष अवसर से अवश्य लाभ उठावें। उपहार का विवरण इस प्रकार है।

१० तोला मोती चूरा नं० १ के ग्राहक को १ मशीन रस निचोड़ने की जो १ घण्टे में करीब १ मन रस निचोड़ सकती है।

१० तोला मोती चूरा नं० २ के ग्राहक को १ मशीन टिकिया (टेब्लेट) बनाने की जो १ घण्टे में करीब २०० टिकियां अति सुन्दर बना सकती है।

१० तोला मोती चूरा नं० ३ के ग्राहक को १ वर्ष तक धन्वन्तरि-पत्रिका निःशुल्क भेजी जावेगी।

ध्यान रखिये ?

मोती चूरा बहुमूल्य मोतियों का छीलन होने के कारण बाजारू साधारण मोतियों से श्रेष्ठ होता है।

भाव निम्न प्रकार है—

मोती चूरा नं० १-२-३ का क्रमशः १०) रु०, ८) रु० व ६) रु० प्रति तोला है।

रघुवरदयाल वैद्य, दयालु आयु० फार्मेसी, चन्दवारगेट, फिरोजाबाद, यू. पी.

आयुर्वेद शास्त्र का अपूर्व ग्रन्थ

भारत भैषज्य रत्नाकर

इस ग्रन्थ में रस, भस्म, गुटिका, आसव, उपभस्में, चूर्ण, क्वाथ, तैल, घृत आदि समस्त प्रकार के लगभग दस हजार प्रयोगों का चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट, भावप्रकाश, शार्ङ्गधर, रसराजसुन्दर, रसतरंगिणी आदि प्राचीन और अर्वाचीन ग्रन्थों से संग्रह किया है। इसको पास रखने से अन्य किसी ग्रन्थ को पास रखने की आवश्यकता नहीं है। इस ग्रन्थ के पीछे चिकित्सा पथ प्रदर्शनी भी दी है। जिससे मालूम होजाय कि किस २ रोग में कौन २ सी दवाइयां प्रयोग करना श्रेय है। यह शीघ्र मालूम हो सके। यह ग्रन्थ वैद्यों, विद्यार्थी, औषधालय, फार्मेसी आदि सबको अत्यन्त उपयोगी है।

प्रथम भाग परिशिष्ट सहित ७) रुपया। द्वितीय भाग ६।।) रुपया।
तृतीय भाग ४) रुपया। चतुर्थ भाग ४) रुपया। पंचम भाग ६।।) रुपया।

पांचों भाग एक साथ खरीदने पर
वैद्यक-शब्द-निधि भेंट की जाती है।

(आर्डर के साथ ५) अवश्य भेजें)

पता—ऊंझा फार्मेसी लि० ऊंझा (उ० गुजरात)

आप भी लखपती बन जाइये

सुगन्धित तैलों के नुस्खे— ले० वैद्यभूषण श्री मोहनलाल कोठारी. लेखक ने हजारों रुपये व्यय करके देश की सभी प्रसिद्ध २ तैलों के नुस्खे प्राप्त किये हैं और अपने बीस साल के अनुभव को हृदय खोलकर जनता के सामने रख दिया है। नुस्खे इस पुस्तक में सैकड़ों तैलों के दिये गये हैं, जिनमें कुछ के नाम ये हैं--हिमसागर तैल, केशराज तैल, बुद्धिवर्द्धक तैल, मनमोहनी तैल, कलकत्ते के डा० नगेन्द्रनाथ सेन को करोड़पती बनाने वाला केशरंजन तैल, हिमकल्याण तैल, पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री को लखपती बनाने वाला ब्राह्मी-जाम तैल, मालती तैल आदि तैलों के साफ करने और खुशबुओं को देने का भी विधान समझा दिया गया है। मूल्य सिर्फ २) डा० मह० ॥)

शर्बतों का रोजगार--(लेखक बा० प्रीतमलाल जी एम० एस० सी० एल० एल० बी० एडवोकेट, गर्मियों में पीने वाले बहारदार शर्बतों और सोडा-वाटर बनाने का विधान और अनेकों नुस्खे दिये गये हैं। मूल्य २) डा० म० ॥)

सामुद्रिक विद्या-- (लेखक पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री) मुख आदि अङ्गों की देख कर ही चोर, ठग, नेक, बद, धनी, निर्धन, बांझ, विधवा, जिन्दगी और मौत की बात आप बता सकते हैं। हाथ देखने की विद्या का भी पूरा वर्णन है। हाथों के लगभग ५० चित्र २५० पृष्ठ के मूल्य सिर्फ ३) डाक महसूल ।।)

पते चाहिये

विशेषतया वैद्यों, हकीमों डाक्टरों, अत्तारों, पंसारियों तथा व्यापारियों, बजाजों आदि के २५ पते भेजने वाले सज्जनों को हम ।।) के टिकिट भेंट करेंगे। अथवा हमारे यहां की कोई भी पुस्तक खरीदने पर हम ।।) की रियायत देंगे।

फन पेन्ट्री—इस पुस्तक को पढ़कर साइनबोर्ड बनाना सीखकर १०)-१५) रोज पैदा कीजिये। मूल्य १) रु० डाक मह० ।।)

मंगाने का पता--पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री, ब्राह्मी औषधालय अलीगढ़।

भारत की जड़ी बूटियों द्वारा वैज्ञानिक ढंग पर निर्मित विशुद्ध

" अवध "

आयुर्वेदिक-इंजैक्शन

[रजिस्टर्ड]

अवध आयुर्वेदिक इंजैक्शन आम जनता पर जैसे पोस्ट, रेलवे, जेल, बैंक और गांधी समिति के धर्मार्थ औषधालयों के रोगियों आदि पर हमारे इंजैक्शन्स पूर्ण लाभप्रद प्रमाणित हुये हैं। आशा है वैद्य, डाक्टर और हकीम गण हमारे इंजैक्शन्स काम में लाकर धर्म और यश कमायेंगे।

पता—डा० बी० एस० वर्मा, अवध आयुर्वेदिक इन्जैक्शन फार्मेसी,
सहिजाबाद रोड, हैदराबाद (सिन्ध)

"इन्जैक्शन्स"

हमारी फार्मेसी के अपने निजी अनुभव से तैयार किये हुये शतप्रतिशत फलप्रद इन्जैक्शन्स से सैकड़ों मरीजों ने शर्तिया लाभ उठाया है।

उदार शर्तों से एजेन्सी के लिये लिखें। एजेन्सी के नियम व प्राइस लिस्ट (सूचीपत्र) मुफ्त मंगावें।

पता—मैनेजिंग डाइरेक्टर—

पाराशरी फार्मेसी, चनस्मा, जी. बी. एस. रेलवे।

हर तरह के कठिन और असाध्य रोगों से थोड़े समय और मामूली खर्चा में छुटकारा पाने के लिये

"डूग"

आयुर्वेदिक वानस्पतिक एवं होमियोपैथिक इंजैक्शन का प्रयोग कीजिये
सूचीपत्र मुफ्त मंगाइये—एजेन्टों की जरूरत है
(अंग्रेजी या हिंदी सूचीपत्र के लिये आवश्यकतानुसार लिखें।)

आविष्कारक—

डूग मैन्यूफैक्चरिंग कम्पनी, ६८/२६ लोकमन मुहाल, कानपुर।

वैद्य या डाक्टर बनिये।

घर बैठे कम समय और थोड़े खर्चा में वैद्यक या डाक्टरी उपाधि (डिप्लोमा) प्राप्त करने के लिये 'नियमावली' मुफ्त मंगाइये पता—भारत कं० (रजि०) शिकोहाबाद यू० पी०

हर प्रकार की आयुर्वेदीय औषधियां तथा पुस्तकें हमारे यहां से मंगावें।

मिलने का पता-धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

वैद्यों के लिये उत्तमोत्तम नवीन पुस्तकें-

हमारा भोजन—सचमुच भोजन ही जीवन और भोजन ही मृत्यु भी है, जीवनदायक भोजन क्या है? कैसे किया जाय? रोग निवारक शक्ति कैसे बढ़े? आदि प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक में पढ़िये। मू० ४)

दूध चिकित्सा—दूध सम्बन्धी सभी जानकारी की बातें सरल भाषा में दी गई हैं। दूध के विषय में आयुर्वेदीय और वैज्ञानिकों के द्वारा आजतक जितनी खोज हुई हैं उन सब का वर्णन इसमें है। मूल्य ४)

तपेदिक (राजयक्ष्मा)—तपेदिक से होने वाली सभी बातों का वर्णन सरल भाषा में किया गया है। इस भयङ्कर संक्रामक रोग से बचने के लिये इसकी १-१ प्रति प्रत्येक घर में रहना चाहिये। मू० ४)

रुग्ण परिचर्या—इस पुस्तकमें रोगियों के रोग परीक्षणार्थ जैसे मूत्र परीक्षा, रक्त परीक्षा, फुफ्फुस परीक्षा आदि २ परीक्षाओं की प्रक्रिया का सचित्र वर्णन है। इस पुस्तक की सहायता से वैद्य बड़ी सुविधा पूर्वक रोगी की परीक्षा द्वारा निदान कर चिकित्सा करने में सफल हो सकते हैं। हिन्दी में आज तक ऐसी कोई भी पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। मूल्य ३॥)

वैद्य सहचर—(तृतीय संस्करण) यथा नाम तथा गुणः। वास्तव में यह पुस्तक वैद्यों के लिये सहचर रूप में ही प्रमाणित हुई है। मूल्य अजिल्द २॥) सजिल्द ३॥)

त्रिदोषालोक—आयुर्वेद की भित्ति त्रिदोष सिद्धांत पर होने वाले सभी आक्षेपों का मुंह तोड़ उत्तर दिया गया है। मूल्य २॥)

फलाहार चिकित्सा—फलों द्वारा किस प्रकार चिकित्सा होती है, इनमें कौन २ गुण हैं आदि बातों पर पूर्ण अनुभव के साथ प्रकाश डाला गया है। मू० २।)

आंख का अचूक इलाज—चश्मा छोड़ने की अनुभूत विधि बतलाने वाली आपकी आंख में कोई रोग हो हरहालत में यह पुस्तक आपकी सहायता करेगी। मूल्य २)

स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियां—शाक तरकारी के विषयमें आयुर्वेदीय और वैज्ञानिकतथा प्राकृतिक चिकित्सा के अनुभव के आधार पर लिखी गई पुस्तक। मूल्य १॥)

जुकाम—इसमें जुकाम, ब्रोंकाइटिस, दमा, खांसी, निमोनियां, इन्फ्लुएञ्जा आदि रोगों का अनुभूत चिकित्सा वर्णित हैं। मूल्य १॥)

मठा उसके गुण तथा उपयोग (तृतीय संस्करण)—मठे से सभी तरह का बिगड़ा स्वास्थ्य कैसे बनता है। इसका सविस्तार वर्णन इसमें पढ़िये। मूल्य ॥=)

पता-धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

—धन्वन्तरि वर्ष २१ का अभूतपूर्व विशेषांक—

रक्त-रोगांक

इसमें भारत के मान्य वैद्यों के रक्त रोग और कुष्ठ पर विवेचनात्मक और चिकित्सा युक्त लेख रहेंगे। दर्जनों रङ्गीन तथा सादे चित्र होंगे। अभी से तैयारियां आरम्भ कर दी गई हैं। जून जौलाई मास में ग्राहकों की सेवा में भेज दिया जायगा, यह विशेषांक धन्वन्तरि के ग्राहकों को मुफ्त मिलेगा। अतः ५≡) भेजकर अभी से धन्वन्तरि के ग्राहक बन जांय।

IF NOT DELIVERED PLEASE RETURN TO—

DHANWANTARI KARYALAYA, BIJAIGARH (ALIGARH)

श्रीमान्—

2203 श्री पुस्तकालयाध्यक्ष
गुरुकुल विश्वविद्यालय
गुरुकुल कांगड़ी [illegible]

-धन्वन्तरि वर्ष २१ का अभूतपूर्व विशेषांक-

धन्वन्तरि

भाग २०
अङ्क १०

मार्च
१९४६

—सम्पादक—

वैद्य बांकेलाल गुप्त—वैद्य देवीशरण गर्ग।

विषय-सूची

१–कविता ५९९
२–सम्पादकीय ६००
३–आयुर्वेदज्ञों के लिये क्रांतिकारी विचार ६०१
४–शिलाजीत का चमत्कार ६०४
५–गल ग्रन्थि रोग ६०९
६–इन्द्रायण
७–परीक्षित प्रयोग
८–परामर्श
९–समालोचना
१०–विविध समाचार

दिसम्बर १९४६ के बुलन्दशहर में होनेवाले युक्तप्रान्तीय वैद्य-सम्मेलन के १७वें वार्षिक अधिवेशन पर

५००) पांच सौ रुपये का–

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक–

सर्वोत्तम आयुर्वेदीय पुस्तक लेखक को भेंट किया जायगा।

नियमावली निम्न पते से मंगाकर देखें।

व्यवस्थापक –

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक समिति कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

धन्वन्तरि स्वर्ण-पदक

प्रति वर्ष की भांति इस वर्ष धन्वन्तरि का विशेषांक 'रक्त रोगाङ्क' प्रकाशित होगा, उसके सर्वोत्तम लेख के लेखक को स्वर्ण-पदक दिया जायगा। और वह भी युक्त प्रान्तीय वैद्य-सम्मेलन बुलन्दशहर के १७वें वार्षिक अधिवेशन पर दिया जायगा।

व्यवस्थापक "धन्वन्तरि"।

Approved by Dept. of Public Instructions of Central & Provinces Berar.

MULVARIART AGRA

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

धन्वन्तरि

या औषधी पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगंपुरा।
मनैनुबभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

सचित्र
मासिक पत्र

भाग २०

अङ्क १०

स्वास्थ्यपदार्थविमर्शः

आनन्द मन्दर महोन्मथनोप लब्धेः,
संसार सागर समुत्तरणैक सेतोः।
धन्वन्तरे श्चरण चारु सरोजजातं,
नित्यंपुनातिभुवनत्रितयं रजस्तत् ॥१॥

मिथ्याभिमान परिभूत सदाशयानां,
मायाममत्वमद मन्मथ मन्थितानाम्।
आत्मप्रसादन समीहितसंस्थितना—
मासंसृतेस्तवपदाब्जरजः शरण्यम्॥२॥

स्वस्थो मुनिर्भवति भूषणमस्य शीलः,
प्राधान्यमात्मन इह स्वपदेन लभ्यम्।
मुक्तिःस्थितास्थितिवशात्खलुतत्रतस्य,
स्वास्थ्यंसतांविमलभूमिरतिप्रतीतिः॥३॥

धन्वन्तरे जयतु भावुक भवनास,
पादरविन्द ममलंकिल मानसम्भम्।
येनास्य संसृतिगता स्मृतिरस्तुशान्ता,
शांतिर्भवेभवतु मुक्तिरियञ्चकांता ॥४॥

स्वास्थ्यंयतः स्वास्थ्य पदावगम्यं,
तेन त्वमेवासि विशुद्ध सत्वम्।
तस्मात्सतां भूषण मेतदत्र,
स्वास्थ्यं प्रसिद्धं मयिधेहि तत्वम् ॥५॥

रचियता-काव्यतीर्थ; कविरत्न; साहित्यभूषण; आयुर्वेदाचार्य पं० गिरिजादत्त पाठक वैद्यशास्त्री।

सम्पादकीय-

सादर निवेदन-

यह लिखते हुये परम हर्ष होता है कि धन्वन्तरि के पाठकों ने हमारे इस वर्ष के विशेषांक 'क्षयरोगांक' का दिल खोलकर स्वागत किया। हम अपने उन कृपालु ग्राहकों एवं धन्वन्तरि प्रेमियों को सादर धन्यवाद देते हैं, जिन्होंने हमारी सेवा से प्रसन्न होकर धन्वन्तरि के ग्राहकों की संख्या बढ़ाकर हमें उत्साहित किया है। हमारे पास सिवाय धन्यवाद के और रखा ही क्या? जिसे हम अपने कृपालु ग्राहकों को उनकी निःस्वार्थ सेवा के बदले भेंट कर सकें।

परन्तु मैं आपको इतना विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मैं भी अपनी प्रतिज्ञानुसार धन्वन्तरि की उत्तरोत्तर उन्नति करने के लिये सतत प्रयत्न करता रहूंगा। आयुर्वेद के लब्ध प्रतिष्ठित धुरंधर विद्वान जो किसी अन्य पत्र के लिये कभी भी अपनी लेखनी को नहीं उठाते, उनसे आग्रह करने पर भी यह कहकर टाल देते हैं कि हमें समय नहीं है, अतः आपकी आज्ञा पालन करने में असमर्थ हैं, ऐसे २ विद्वान आपके धन्वन्तरि के लिये अनुभव पूर्ण लेख सहर्ष देते हैं। अतएव हमारे कृपालु विद्वान लेखक भी धन्यवाद के पात्र हैं। मुझे आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि धन्वन्तरि के २१ वें वर्ष का अभूतपूर्व विशेषांक—

रक्तरोगांक-

के लिये जिन विद्वान लेखकों का लेख अभी तक कार्यालय में नहीं आया है, वे लोग शीघ्रातिशीघ्र ही लेख भेज कर अनुगृहीत करेंगे। क्योंकि मैंने निश्चय कर लिया है कि इस वर्ष ठीक समय पर ही विशेषांक निकाला जाय। मैंने विशेषांक के लिये प्रायः बहुत सामान इकट्ठा भी कर लिया है, कुछ मात्र ही बकाया रह गया है, वह भी शीघ्र ही पूर्ण हो जायगा। लेख भी बहुत से विद्वानों के आगये हैं, और बराबर आ रहे हैं। हमारे पास विशेषांक का मैटर जितनी जल्दी जो भेज देंगे, उन्हें हम उतने ही अच्छे स्थान पर रख सकेंगे। अतः लेखकों से प्रार्थना है कि यदि आप अपने लेख को विशेषांक में उत्तम स्थान पर प्रकाशित कराना चाहते हैं तो शीघ्रातिशीघ्र अनुभव पूर्ण लेख भेज कर-

धन्वन्तरि स्वर्ण-पदक प्रतियोगिता-

में भी भाग लें। विशेषांक में सर्वोत्तम लेख पर कार्यालय की तरफ से एक स्वर्णपदक प्रदान किया जायगा। जैसा कि क्षयरोगांक के सर्वोत्तम लेख पर गत वर्ष दिया गया है।

पुनः निवेदन-

जो वैद्य एक बार धन्वन्तरि का साधारण अङ्क या विशेषांक देख लेता है, वह तुरन्त ही ग्राहक बन जाता है, अतः प्रेमी पाठकों को इसके ग्राहक बनाने में कठिनता अनुभव नहीं होती है। और इस रक्तरोगांक में तो दर्जनों रङ्गीन तथा सादे चित्र तथा अच्छे २ विद्वानों के अनुभव पूर्ण लेख रहेंगे। ऐसे महत्वपूर्ण विशेषांक के लिये १-२ नवीन ग्राहक बना देना कोई बड़ी बात नहीं है, जो किसी कारणवश नवीन ग्राहक बना धन्वन्तरि के प्रति अपनी कृपा एवं प्रेम का परिचय नहीं दे सके हैं। वह १-२ ग्राहक शीघ्र ही बनादेंगे। इसके लिये धन्वन्तरि सदा आभारी रहेगा। आशा है आप हमारी प्रार्थना अवश्य स्वीकार करेंगे।

—वैद्य बांकेलाल गुप्त।

आयुर्वेदज्ञों के लिये, क्रांतिकारि विचार।

लेखक—श्री० विद्यावारिधि ऋषिमित्र जी शास्त्री, साहित्य रत्न, बम्बई।

जो आयुर्वेद के परोपकारी कार्य में संलग्न हैं, वे तो इस बात को जानते ही हैं कि अनेकों ऐसे रोगों में आयुर्वेद के आधार पर इतनी शीघ्रता से सफलता मिली है जिसे देखकर आश्चर्य होने लगता है। इसके साथ ही आज भी अनेकों ऐसी व्याधियां हैं जिनकी समुचित चिकित्सा पाश्चात्य चिकित्सक नहीं कर सकते पर आयुर्वेद के आधार पर उनकी साध्यता कठिन नहीं है। इन बातों का परिचय उन्हें भी है, जो आयुर्वेद के क्षेत्रों से कुछ भी परिचित हैं या सम्पर्क रखते हैं।

यदि इस प्रकार की घटनाओं का संग्रह किया जाय तो अतिरिक्त राज्याश्रय के और दूसरा कोई भी गुण पाश्चात्य चिकित्सा में नहीं दिखाई पड़ेगा। साथ ही इस संग्रह से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि भारतीय आयुर्वेद ही संसार का सर्वोत्तम चिकित्सा शास्त्र है। आयुर्वेद की महान् सत्यता होने पर भी इससे चिकित्सा का कार्य करने वाले आज अनेकों वैद्य अप्रामाणिक श्रेणी में जनता के द्वारा भी गिने जा रहे हैं। उनके कार्य कौशल की भी सराहना की जाती है किन्तु सरकार से प्रमाणित न होने के कारण उन सब पर पानी पड़ जाता है।

अन्य शास्त्रों में इसकी स्थिति–

इस स्थिति के विचारों को लेकर अन्य भारतीय शास्त्र के क्षेत्रों की ओर दृष्टि डालने पर उनकी स्थिति आयुर्वेद से मान्यतर दीखती है। क्या—साहित्य, क्या इतिहास और पुरातत्व और क्या अन्य शास्त्र? सभी आज भारतीय दृष्टि कोणों से पाश्चात्य मस्तिष्क वाले भारतीयों में भी अपना विशिष्ट महत्व रखते हैं, किन्तु आयुर्वेद का कार्य सूर्य के समान सत्य होने पर भी उसी प्रकार आज भी उपेक्षा का पात्र जनता और अपनी सरकार की दृष्टियों में बना पड़ा है। यद्यपि सरकार का अनुमोदन और आश्रय प्राप्त करके इसके मूल को कोई विशेष लाभ पहिले नहीं दीखेगा, किन्तु भविष्य में आयुर्वेद के शास्त्रीय विचारकों और आविष्कारकों को अन्य शास्त्रीय क्षेत्रों के समान पुरस्कृत होने को अवसर तो रहेगा? इससे इसके भी अनेक अङ्गों का विकास अवश्य ही होगा। इसके अतिरिक्त आयुर्वेद के प्रत्येक क्षेत्र और अधिक परिमार्जित हो जायेंगे जिनसे इसकी अद्वितीय सफलता अन्य चिकित्साओं को पराजित कर देगी; वह स्थिति भारतीय सभ्यता प्रेमियों और भारत के लिये गौरव की बात होगी।

आयुर्वेद में किस प्रकार?

कहने का यह तात्पर्य नहीं है कि सरकार से आयुर्वेद को भी स्वीकृत कराकर उसके आधीन इसके शिक्षण को भी दे दिया जाय; अपितु आयुर्वेद के महत्व का स्वीकार कराना चाहिये। साथ ही जिस प्रकार आयुर्वेद के क्षेत्रों मे औषधि, निदान और अन्य इसके क्षेत्रों की पुस्तकें प्रकाशित की जाती हैं उसी प्रकार पाश्चात्य चिकित्सा की दोषपूर्ण प्रणाली की आलोचना करने वाले भी ग्रन्थ होने चाहिये। यदि इस सम्बन्ध में लेखनी उठायी जाय तो आरम्भ में कुछ श्रम अवश्य पड़ेगा किन्तु उसका फल आयुर्वेद के लिये बहुत ही हितकर होगा,

यह बड़े दुःख के साथ कहना पड़ता है कि इस देश की भूमि में उत्पन्न होकर भी बहुत से महानुभाव आयुर्वेद से घृणा करके पाश्चात्य चिकित्सा को ही अङ्गीकार करते हैं। इसका एक कारण इस प्रकार के साहित्य का न होना भी है। आयुर्वेद के पत्र पत्रिकाओं में भारतीय चिकित्सा के सिद्धान्तों से समन्वय दिखाने वाले लेख तो रहते हैं पर उसकी अवैज्ञानिक अनेकों सरणियों की आलोचना पर एक भी लेख नहीं मिलेगा। ऐसा होने से ही पाश्चात्य चिकित्सा की प्रतिष्ठा भारतीय मस्तिष्कों में भी उच्च बनी हुई है।

इस प्रकार का साहित्य शीघ्र ही वैद्यों की गति विधि में क्रान्तिकारी परिवर्तन प्रस्तुत करेगा। अर्थात् प्रतिस्पर्द्धा के विचार से वैद्य भी शीघ्र ही शल्य चिकित्सा और शरीरविज्ञान आदि की क्रियात्मक प्रणाली का उपयोग करने लग जायेंगे। क्योंकि होड़ एक ऐसी वस्तु है जो अकर्मण्य को भी महाकर्मठ बनाने की क्षमता रखता है। बिना संघर्ष के जीवन भी कम उपयोगी रहता है। आज जब सभी क्षेत्रों में राष्ट्रीयता और भारतीयता का विचार ही प्रतिष्ठा प्राप्त कर रहा है; कोई कारण नहीं है कि आयुर्वेद उसमें अपने अनुकूल कार्य करने के लिये भाग न ले। यदि इस प्रकार के विचार अभी नहीं उत्पन्न होंगे तो भविष्य में वैज्ञानिक और हितकारी होते हुये भी पाश्चात्य चिकित्सा के सम्मुख आयुर्वेद की प्रतिष्ठा भारतीयों में नहीं रह जायेगी, परिणाम यह होगा कि इसी चिकित्सा की विधियां और औषधियां दूसरी वेष भूषा और भिन्न नामों से सम्मुख आकर हमें विदेश-भक्त बनने के लिये बाधित करेंगी।

आयुर्वेद की उपेक्षा के लिये—

शायद इस बात पर कम लोगों ने ध्यान दिया होगा कि युरोप और भारत के जलवायु में महान अन्तर होने के कारण वहां की औषधियां यहां के लिये हितकर बहुत कम थीं; अब औषधि के बहुत से तत्वों को कच्चे माल के रूप में यहीं से ले जाकर हमारे लिये एक नवीन रूप में प्रस्तुत करके पाश्चात्य चिकित्सा की रक्षा की जा रही है। और उसी की रक्षा के लिये भारत में भी उनकी शाखायें खोलकर औषधियों की अधिकाधिक मांगों को पूर्ण किया जा रहा है। क्या यह राष्ट्रीय दृष्टि से नैतिक अपराध नहीं है? क्या इससे भारत का शोषण नहीं किया जा रहा है? वस्तुतः यही शोषण का सब से सस्ता उपाय है। खेद है कि हमारे आयुर्वेदज्ञ इधर फूटी आंखों से भी देखना नहीं चाहते। किन्तु इस बीसवीं शताब्दी में जहां कर्मठता की विजय है; उसके साथ ही उससे भी शीघ्र प्रचार की विजय इस काल में होती है।

भगवान धन्वन्तरि को अमृतहस्त मानकर उन्हीं के द्वारा देव और मनुष्य मात्र तक के हित को होते हुये आज भी देखकर उनकी जो गुणावली वैद्य जन गाते हैं, वह केवल नाम स्मरण से अधिक नहीं है। भगवान धन्वन्तरि के गुण उनके साथ थे, आज हम उन्हीं के अनुगामी क्या रहे हैं, इस पर भी कभी विचारा गया है? आज हम तो उस महापुरुष की गुणावली को गाकर व्यर्थ आत्म प्रवंचना कर लेते हैं। जब कि उन गुणों के रक्षा की शक्ति भी हम में नहीं है। उस समय उनके द्वारा स्थापित आयुर्वेद के तत्वों की चोरी करते हुये भी पाश्चात्य चिकित्सा उसी को अवैज्ञा-

निक और उपेक्षित बनाने जा रही है। हमें "नहि सुप्तस्य सिंहस्य प्रविशन्ति मुखे मृगाः" का भी ज्ञान है किन्तु हमारी गति सर्वथा इसके विरुद्ध पक्ष में है।

यह कोई कठिन नहीं–

यदि सुधी वैद्यजन चाहें तो वे इस आक्रमण को और आलोचना को बड़े आदर्श रूप में जनता के सम्मुख रख सकते हैं। क्योंकि आज वैद्य यह नहीं कह सकते कि उनके पास समय नहीं होता, अपितु वैद्य लोगों के पास इतना समय रहता है कि यदि किसी भी राष्ट्री के अन्य क्षेत्र पर दृष्टि डाली जाय तो उसमें वैद्यों का उच्चतम स्थान मिलता है; अर्थात् वे वैद्यक का कार्य करते हुये भी राजनीति साहित्य, इतिहास, पुरातत्व और विज्ञान एवं ज्योतिष आदि में भी लब्ध प्रतिष्ठ होते हैं। यदि कुछ वैद्य इस क्षेत्र की ओर भी दृष्टि डालें तो आयुर्वेद का भी राष्ट्रीय और वैज्ञानिक महत्व जनता को ज्ञात होने लग जायगा।

एक बात और–

इसके साथ ही एक बात और यह भी ध्यान देने की है कि आयुर्वेद विभाग में उसके महत्व और उसकी वैज्ञानिक आवश्यकताओं और विशेषताओं पर ग्रन्थ नहीं लिखे जाते हैं, जन साधारण आयुर्वेद को भी जादू टोने वाले विचित्र जगत का पड़ौसी समझता है। यह स्थिति अवांछनीय है। यही कारण है कि वैद्यों के हाथ में उड़ते पड़ते हुये कोई फंस गया, या जो फंस जाते हैं वे आयुर्वेद के महत्व को स्वीकार करने लगते हैं। यदि उक्त प्रकार के साहित्य होते तो आवश्यकता होने पर आयुर्वेद पथ के चिकित्सक को ही सर्व प्रथम बुलाया जाता, आज वह युग प्रस्तुत है कि यदि जनता की आंखों के सम्मुख किसी का यश प्रथित नहीं है तो उसकी हजारों, लाखों रुपये की मौलिकता कौड़ी की भी नहीं है। इसीलिये इसे विज्ञापन युग कहा जाता है। उस युग में वैद्यों को भी प्रवेश करना ही पड़ेगा अन्यथा अब आयुर्वेद के साथ ही इन्हें भी उपेक्षा का पात्र बनना पड़ेगा।

जीर्ण-ज्वर से पीड़ित,

रोगियों के लिये हमारी स्वर्ण मालती बसन्त नं० १ व्यवहार कराइये। इसके निर्माण में हम शुद्ध हिंगुल के स्थान पर सिद्ध मकरध्वज नं० १ और स्वर्ण वर्क के स्थान पर स्वर्ण भस्म डालते हैं। आजकल ७५ प्रतिशत ज्वर रोगी वीर्य विकार से भी पीड़ित होते हैं, उनके लिये मालती में सिद्ध मकरध्वज का मिश्रण अमृत के समान उपयोगी सिद्ध होता है। एक ही औषधि ज्वर और वीर्य-विकार दोनों को नष्ट करती है। सैकड़ों वैद्य डाक्टर इसे सफलता पूर्वक अपने रोगियों पर व्यवहार कर रहे हैं। मू. नं.१, १ तो० २०), न.२, १ तो. ११).

निर्माता धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

शिलाजीत का चमत्कार

लेखक राजवैद्य पं० नित्यानन्द शंखधार बनस्पति रसायनशाला बीसलपुर (पीलीभीत)

शिलाजात की उत्पत्ति-

"जाते विशेषं सविधिं तस्य वक्ष्याम्यतः परम् ।
हेमाद्यासूर्य संतप्ताः स्रवन्ति गिरिधातवः ॥
जत्वाभं मृदुमृत्स्नाभं यन्मलं तच्छिलाजतु ।
चरक ।

श्री भगवान् भास्कर के तीव्र ताप से सुवर्णादिक धातु तप कर पर्वतों से झरती हुई लाख के रङ्ग मृदु मिट्टी की शक्ल के समान जो मैला निकलता है, उसका नाम वैद्योंने शिलाजीत रखा है।

शिलाजीत के नाम-

शिलाजत्वद्रि जतुश्च शैलनिर्यास इत्यपि ।
गैरेय मश्मजश्चापि गिरिजं शैल धातुजं ॥

शिलाजतु, अद्रिजतु, शैलनिर्यास, गैरेय, अश्मज, गिरिज, शैल धातुज यह सात नाम कहे हैं। परन्तु इसके अतिरिक्त और भी हैं, जैसे कि अगज, शैलेय शीत पुष्पक, शिला व्याधि, अश्मोत्थ, अश्मजन्तुक जत्वश्मक शैलादि।

अन्य भाषाओं में नाम-

सं -शिलाजतु, हिं०-शिलाजीत, बं०-शिलाजतु, म०- शलाजतु, अं०-आसफेट, लै०-विटुमेन।

शिलाजीत के सामान्य लक्षण-

शिलाजीत जिन २ धातुओं से उत्पन्न होता है, उन २ धातुओं के गुण शिलाजीत में निश्चय करके रहते हैं। **सुवर्णज**, रौप्यज, ताम्रज, लौहज इस प्रकार चार जातियां भावप्रकाश ने मानी है।

सुवर्णज शिलाजीत

मधुरश्च सतिक्तश्च जपापुष्पनिभश्च यः ।
कटुर्विपाके शीतश्च स सुवर्णस्य निस्रवः ॥

सुवर्ण से उत्पन्न हुआ शिलाजीत मधुर, कडुवा, भारी, जपापुष्प के समान लालरङ्ग वाला, पाक समय में चरपरा, शीतवीर्य और वातपित्त नाशक है।

रौप्यज शिलाजीत-

रौप्यस्य कटुकः श्वेतः शीतो मधु विपच्यतें ।

चांदी से उत्पन्न हुआ शिलाजीत स्वाद में चरपरा, भारी, श्वेत रङ्ग वाला, शीत वीर्य, पाक समय में मधुर और कफ पित्त नाशक है।

ताम्रज शिलाजीत—

ताम्रस्यबर्हि कण्ठाभस्तिक्तोष्णः कटुविपच्यते ।

ताम्र से उत्पन्न हुआ शिलाजीत मयूर कण्ठ के सदृश रङ्ग वाला होता है, स्वाद में कडुवा, तीक्ष्ण उष्ण वीर्य, पाक समय में चरपरा और कफ कुष्ठ नाशक है।

लौहज शिलाजीत-

लौहंजटायुपक्षाभं तिक्तकं लवणं भवेत् ।
विपाके कटुकं शीतं सर्वश्रेष्ठ मुदाहृतम् ॥

लौह से उत्पन्न हुआ शिलाजीत गिद्ध पक्षी के पंखों के समान रङ्ग वाला होता है। स्वाद में कडुवा, पाक समय में चरपरा, शीत वीर्य, कुछ भारी और सब में श्रेष्ठ महारसायन है। यद्यपि शिलाजीत को भावप्रकाश ने चार प्रकार कहा है,

परन्तु इसके मुख्य दो ही भेद हैं। वास्तव में अधिकतर आजकल दो ही प्रकार का शिलाजीत मिलता है। यथा—

> शिलाजतु द्विधाप्रोक्तो गोमूत्राद्यो रसायनः ।
> कर्पूरापूर्वकश्चान्यस्तत्राऽऽद्यो द्विधापुनः ॥
> ससत्वश्चैव निस्सत्वस्तयोः पूर्वो गुणाधिकः ।
>
> रस र० समु० ।

शिलाजीत दो प्रकार का होता है। उनमें से एक में गोमूत्र के सदृश गन्ध आती है। द्वितीय वह है कि जिस में कपूर के समान गन्ध आता है। प्रथम गोमूत्र गन्धवाला शिलाजीत महा रसायन है और जरा को दूर करने में जादू का काम करता है। प्रथम शिलाजीत के दो भेद हैं, ससत्व और निःसत्व, इसमें प्रथम ससत्व शिलाजीत गुणों में श्रेष्ठ कहा है। यथा—

> गोमूत्रगन्धिवत्कृष्णं स्निग्धंमृदु तथा गुरुः ।
> तिक्तं कषायं च तथा सर्वं श्रेष्ठं तदायसं ॥
>
> बृ० नि० रत्नाकर ।

जो शिलाजीत गोमूत्र गन्ध वाला श्याम वर्ण चिकना मृदु भारी स्वाद में कडुवा चरपरा पाक समय में तीखा शीत वीर्य होता है, वह सबमें श्रेष्ठ लौह से उत्पन्न हुआ शिलाजीत वैज्ञानिकों ने कहा है।

शिलाजीत के गुण -

> यथाक्रमं पित्तश्लेष्मा पित्तेकफेत्रिषु ।
> विशेषतःप्रशस्यन्ते मलहेमादिधातुजाः ॥
>
> चरक ।

सुवर्णज शिलाजीत वात पित्त को, रौप्यज कफ पित्त को, ताम्रज कुष्ठ को और लौहज शिलाजीत सन्निपात को अवश्यमेव नाश करता है।

> नूनंसज्वर पाण्डु दोष शमनं मेदोग्निमान्द्यापहं ।
> मेदश्छेदकरंच यक्ष्म शमनं शूलामदोषोमलम् ॥
> गुल्मप्लीह विनाशनं जठर हृच्छूलघ्नमामापहम् ।
> सर्वत्वागद नाशनं किमपरं देहे च लोहे हितम् ॥
>
> रस० र० समु० ।

शिलाजीत ज्वर, पाण्डु, प्रमेह, सूजन, अग्निमांद्य नाशक, छेदक, राजयक्ष्मा, शूल, गुल्म, प्लीहोदर हृदयशूल और आमांश नाशक है। तथा सर्व प्रकार के चर्मरोगों को नाश करता है। शरीर को लोहे के समान कर देता है। इसके मुकाबिले में बलवान बनाने वाली दूसरी औषधि नहीं है।

> शिलाजतुरमृतं तिक्तं कटूष्णं कटुपाकि च ।
> रसायनं योगवाहि श्लेष्म मेहाश्म शर्कराः ॥
>
> मूत्रकृच्छं क्षयं श्वासं शोथ मर्शोविपाण्डुताम् ।
> वातरक्तं तथा कुष्ठ मपस्मारोदरौहरेत ॥

शिलाजीत कडुवी, उष्ण, पाक समय में चरपरी, आयु वर्धक, द्वितीय औषधियों के साथ मिलाने से उनके गुणों को बढ़ाने वाली, कफ, प्रमेह, पथरी, शर्करा, मूत्रकृच्छ्र, क्षय, श्वास, शोथ, बवासीर, पाण्डु, वातरक्त, कुष्ठ, अपस्मार तथा सकल उदर रोगों को दूर करने में आश्चर्य काम करता है।

जिस जीर्ण मधुमेह रोगी को हकीम डाक्टरादि महानुभाव असाध्य चिकित्सा के अयोग्य समझकर त्याग देवे, उस रोगी की चिकित्सा शिलाजीत से करना चाहिये। शुद्ध कोष्ठ कराके शिलाजीत को शालसारादि के क्वाथ से भावना देकर शालसारादि के क्वाथ के साथ में बलानुसार उचित मात्रा में नित्य प्रति सेवन करावे। इस प्रकार ४०० तोला तक पुरुष सेवन करे तो निश्चय करके मधुमेह, शर्करा, अश्मरी रोग नाश हो जाते हैं।

सुन्दर रूप तेज बल वीर्य सम्पन्न होकर १०० वर्ष पर्यन्त जीते हैं तथा बुढ़ापे से रहित हो जाते हैं ।

विशेष गुण—

शतं शतं तुलायांतु सहस्र दश तौलिकम् ।
चरक ।

४००० तोला सेवन करने से १००० वर्ष की आयु होती है ।

शिलाजीत की मात्रा—

निर्दिष्टः त्रिविधस्तस्य परो मध्यो वरस्तथा
मलमर्द्धं पलं कर्षो मात्रातस्य त्रिधामताः ॥ चरक

शिलाजीत की तीन मात्रायें इस प्रकार कही है, उत्तम मध्यम और निकृष्ट । जैसे कि १ पल की उत्तम आधे पल की मध्यम और एक तोला की निकृष्ट मात्रा कही है ।

सर्व रोगघ्न शिलाजीत—

नसोऽस्ति रोगो भुवि साध्यरूप,
शिलाह्वयं यन्न जयेत प्रसह्य ।

तत्काल योगैर्विधिभिः प्रयुक्तं,
स्वस्थस्य भोगी विपुलं ददाति ॥ चरक ॥

संसार में पृथ्वी पर ऐसा लाइलाज रोग नहीं है जो शिलाजीत से अच्छा न हो सके । समयानुसार विधिपूर्वक भक्षण करने से पुरुष स्वस्थता बल, वीर्य को प्राप्त कर सकता है ।

सर्व श्रेष्ठ शिलाजीत होने का प्रमाण

रसोपरस सूतेन्द्र रत्न लोहेषु ये गुणाः ।
वसन्तिते शिला धातौ जरामृत्यु जिगीषवः ॥
रस० र० समु० ।

रस, उपरस, पारद, रत्न, लोहादिक धातुओं में जो गुण हैं वह कुल गुण जरा काल को जीतने के लिये शिलाजीत में इकट्ठे हुए हैं ।

शिलाजीत सेवन करते समय पथ्या पथ्य विनिर्णय·

शिलाजतु प्रयोगेषु विदाहीनिगुरूणि च ।
वर्जयेत सर्व कालन्तु कुलत्थान् परिवर्जयेत ॥

तेह्यत्यन्त विरुद्धत्वा दश्मनो भेदनाः परम् ।
लोके दृष्टास्ततस्तेषां प्रयोगः प्रतिषिध्यते ॥

शिलाजीत सेवन करने वाले रोगी को विदाही और गरिष्ठ पदार्थों को त्याग दे, कुलथी तो सर्वथा ही वर्जित कर देना चाहिये, क्योंकि कुलथी शिलाजीत के विरुद्ध है और यह पत्थर को भेदन करने वाली है यह बात संसार में प्रसिद्ध है । इसी कारण से कुलथी का प्रयोग करना वर्जित किया है । दुग (गाय, भैंस, बकरी) का, शुष्क मांस रस, मांस यूष, जल गोमूत्र तथा [illegible] कषायों में किसी कषाय के साथ रोगानुसार शिलाजीत प्रयोग किया जा सकता है। परन्तु कबूतर के मांस रस, कुलथी और कामिनी वर्जित अवश्यमेव कर देना चाहिये, जबतक शिलाजीत सेवन किया जाय उस समय तक व्यायाम, मन में खेद भोग विलास, तैल, लाल गुड़, सुर्ख मिर्च, खटाई शराबादिक वर्जित कर देवे। शिलाजीत सेवन करने वाले रोगियों को दुग्ध, मलाई, मक्खन, घी, मिश्र अंगूर, अनार, सेब, नासपाती, अमरूद आदि फल तथा मुरब्बा आदि हितकर पदार्थ बलानुसा जितना सेवन करेंगे उतना ही अधिकाधिक आश्चर्य जनक लाभ प्राप्त होगा ।

शिलाजीत परीक्षा—

श्रेष्ठं शिलाजतु ज्ञेयं यत्तु क्षिप्तं न शीर्यते ।
तोय पूर्णे यथापात्रे प्रतानेव विहृष्यते ॥ भै० ॥

जल से भरे हुये पात्र में शिलाजीत डालने

अगर वह विशीर्ण न होवे परन्तु तन्तुओं को छोड़े तो वह शिलाजीत ग्रहण करने योग्य है ।

इससे विरुद्ध लक्षणों वाला शिलाजीत ग्रहण करना योग्य नहीं है ।

भाद्रक्यं कीर्तितं येषां विरुद्धत्वं न कीर्तितम् ।
तेषां तद्विपरीतत्वाद् विरुद्धत्वञ्च लक्षयेत ॥

अतः चिकित्सक बन्धुओं तथान्य महानुभावो विदित हो कि सर्वथा शुद्ध और उत्तम शिलाजीत प्रयोग करना हितकर है ।

शिलाजीत शोधन विधि—

गोदुग्धे त्रिफला क्वाथे भृंगराजैश्चमर्दयेत ।
आतपे दिनमेकैकं तच्छुष्कं शुद्धतां व्रजेत ॥शा० सं० ॥

शिलाजीत को गोदुग्ध में, त्रिफला क्वाथ में, भृङ्गराज रस में पृथक २ एक २ दिवस खरल कर धूप में धर कर सुखा लेवें, तो शिलाजीत शुद्ध हो जाता है ।

शिलाजीत प्राप्ति स्थान -

वास्तव में नैनीताल अल्मोड़ा के पर्वतों में उत्पन्न हुआ शिलाजीत सर्व श्रेष्ठ मिलता है जो कि अपने गुण कार्य क्षमता में विशेष लाभ करता है । भूटान तिब्बत के पर्वतों का उत्पन्न हुआ गुणों में उत्तम नहीं है, क्योंकि उन स्थानों पर बहुत समय से शिलाजीत उत्पन्न होरहा है, जिससे पहिले के समान अब गुण नहीं रहे हैं अतः वैद्य बन्धुओं नैनीताल, अल्मोड़ा का उत्पन्न हुआ ही शिलाजीत रोगियों पर व्यवहार करें ।

चिकित्सा और अनुभूत प्रयोग-

५५९-शुद्ध शिलाजीत ४ तोला
शुद्ध अफीम ६ माशा
केशर मोगरा फौलाद लोह भस्म
सत लोबान स्वर्ण बङ्ग अकरकरा
—प्रत्येक ३-३ माशा ।
मुश्क १॥ माशा
वर्क सोना २५ अदद

—सब औषधियां पानके रस में घोटकर मटर बराबर गोली बना लेवे, और दुग्ध आदि के साथ सेवनकरे । यह गोलियां रक्त, शक्ति वर्धक और स्तम्भन कारक है । वात सम्बन्धी सभी रोगों को अनुपान भेद से अत्यन्त लाभप्रद है ।

५६०-शुद्ध शिलाजीत २॥ तोला
सत बिरोजा माजूफल सोरा कलमी
मूली क्षार १-१ तोला ।
पिपरिया कत्था ६ माशा
इत्र सन्दल ३ माशा
वंशलोचन ९ माशा
इलायची दाना सफेद ६ माशा

—इन कुल औषधियों को गो स्वरस के शीत कषाय में घोटकर मटर बराबर गोलियां बना लेवे । धारोष्ण दुग्ध के साथ सेवन करे तो जीर्ण से जीर्ण उष्णवात (सूजाक) नाश हो जाती है ।

पथ्य—दूध, भात या खीर सेवन करे ।

५६१-शिलाजीत छोटी हर्र २-२ तोला
असगन्ध नागौरी बिदारीकन्द
शतावरी लोध १-१ तोला
मिश्री ४ तोला

—समस्त औषधियों को कूट कपड़ छानकर बला के स्वरस की भावना देकर ४ माशे की गोलियां बना लेवे, इसे दुग्धादिक के साथ सेवन करने

से धातु क्षीणता, धातु स्राव, स्वप्नादिक धातु सम्बन्धी विकार नष्ट हो जाते हैं।

५६२–शुद्ध शिलाजीत अशोकघन सत्व
रसौतघन सत्व गिलोय सत्व
गोंद बबूल गेरू कच्चा सेलखड़ी
लाख पीपल प्रत्येक १–१ तोला

—इन कुल औषधियों को कूट कपड़ छन कर, शिलाजीत मिला चार २ माशे की मात्रा से सुबह शाम को साठी चावल के धोवन से सेवन करे तो श्वेत, रक्त, पीला, नीला प्रदर रोग अवश्यमेव नष्ट हो जाता है।

५६३–शिलाजीत गाजवां मिर्च स्याह
लौंग कत्था मुलहठी
मुनक्का —प्रत्येक १–१ तोला।
बड़ी एला ६ माशा

—इन समस्त औषधियों को कूटकर कंटकारी, अडूसापुष्प या पत्तों के स्वरस में घोटकर गोली बना लेवे, मुख में डालकर रस चूसने से प्रतिश्याय, नजला समस्त श्वास रोग नष्ट हो जाते हैं।

५६४–शिलाजीत १ तोला
शुद्ध कपूर बेलगूदा इन्द्रयव
नागर मोथा —प्रत्येक ६–६ माशा
अफीम ३ माशा

—समस्त औषधियों को भांग के स्वरस तथा सौंफ के स्वरस में घोटकर तीन २ रत्ती की गोलियां बना लेवे। अनुपान भेद से बलानुसार देवे, तो अतिसार, आमातिसार, प्रवाहिका आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

५६५–शिलाजीत को मंजिष्ठादि अर्क के साथ मिलाकर सेवन करने से कुष्ठ रोग नाश हो जाता

५६६–शिलाजीत मुलहठी त्रिकुटा
स्वर्ण माक्षिक भस्म शहद लोह भस्म
—प्रत्येक सम भाग,

—इन औषधियों को अजा दुग्ध में, अडूसा पुष्प स्वरस में ३ दिवस घोटकर १–१ रत्ती की गोलियां बना लेवे और अजादुग्ध से ही सेवन करे, तो क्षय रोग नाश हो जाता है।

५६७–गणयारी के स्वरस या क्वाथ में शिलाजीत सेवन करने से स्थूलता नष्ट होती है।

५६८–शिलाजीत अभ्रक भस्म लोह भस्म
शुद्ध गुग्गुल सुहागा का फूला

—यह द्रव्य समभाग लेकर भृङ्गराज के स्वरस दो दिवस तक घोटकर तीन २ रत्ती की गोलियां बना लेवे। बला मूल के स्वरस या भंगरा के क्वाथ के साथ सेवन करे तो जीर्ण स जीर्ण मधुमेह, शुक्रमेहादिक रोग नष्ट हो जाते

शिलाजतु वटिका –

५६९–शुद्ध पारा शु० गन्धक १–१ तोला

—की कज्जली को लाल कमल के पत्तों के स्वरस तथा कुटज की छाल के क्वाथ में दो दिन घोटे बाद को—

शुद्ध शिलाजीत मिश्री ३२-३२ तोला
वंशलोचन पीपर छोटी आमला
काकड़ासिंघी कंटकारी की जड़
कंटकारी के फल दालचीनी तेजपात
इलायची दाना सफेद शहद
—प्रत्येक ४–४ तोला

[शेषांश पृष्ठ ६१० पर देखें]

गल ग्रन्थि रोग

ले०-कवि० श्री० पं० युगलकिशोर जी, द्वारिकाप्रसाद आयुर्वेद शास्त्री,
दधिमथ आयुर्वेद भवन, पो० राजगांगपुर, स्टेट (सिंहभूम)

इस प्रकरण में हम जिन व्याधियों का वर्णन करने जा रहे हैं। वह साधारणतया बच्चों की व्याधियां हैं। बाल्यकाल में ५ से १० वर्ष की अवस्था के बालकों में ये बहुधा देखी जाती हैं। आज हमारे कृत्रिम और गन्दे नागरिक जीवन ने समय के पुराने नियम को तोड़ दिया है। बच्चा लड़का और जवान सभी इसकी समान रूप से शिकायत कर रहा है। रोग और रोगियों की बाढ़ के साथ यह व्याधि भी अब उपद्रव न रह कर स्वतन्त्र ही बन गई है। और इसके अनेक भेद भी होते जा रहे हैं। आयुर्वेद में श्लैष्मिक वैषम्य से अन्य रोग के उपद्रव स्वरूप में इसका यत्किंचित् आभास मिलता है। किन्तु आज नगर विशेषतः स्कूल और कालेजों में बहुत कम विद्यार्थी ऐसे मिलेंगे जिन्हें आये दिन मुंह फैलाकर Throat paint न करवाना पड़ता हो। इन गल ग्रन्थि के रोगों में हम प्रधानतः दो ही वर्णन करेंगे। वह ये हैं—

एडिनाइड्स (Adenoids) और गल ग्रन्थि-शोथ, इनमें परस्पर बहुत कम अन्तर हैं। अस्तु, इनका विवेचन भी साथ २ होने में विशेष अड़चन की आशङ्का नहीं। टांसिल्स और एडिनाइड्स ये लसीका तन्तुओं का समूह है। लसीका तन्तु बहुत से सैलों से बने हैं; इनका काम लसीकाणु या एक प्रकार के श्वेत रक्ताणुओं का पहुंचाना है। जवानों की अपेक्षा बच्चों में इसका आधिक्य रहता है। कदाचित बालकों में इस व्याधि के आधिक्य का यही कारण हो, अस्तु, बालक और नवयुवकों के टांसिल्स में यदि शारीरिक अनुपात से कुछ बढ़ाई हो तो हम उसे व्याधि मानने के लिये प्रस्तुत नहीं। मुंह खोलने पर टांसिल्स कौआ के दोनों ओर दिखाई देंगे। जब ये इतना बढ़ जाते हैं कि इनके बीच में बहुत कम स्थान रह जाता है अथवा परस्पर मिल जाते हैं तो अवस्था अवश्य चिन्ता जनक बन जाती है। इस अवस्था में साथ ही एडिनाइड्स भी प्रायः होता है। यही टांसिल्स का बढ़ना है।

नाक के पीछे गले की छत में लसीका ग्रन्थियों का फूल जाना ही एडिनाइड्स है। प्रायः ये कभी फूलकर लोबिया और कभी बादाम के समान हो जाती है। डाक्टर कारमाइकल तो इनकी एक अवस्था का वर्णन करते हुए लिखते हैं—

"They all are clustered together and between them are entangled mucus and bacilli. This can also be seen on the surface of the enlarged tonsils."

इस अवस्था मे रोगी बड़ी बेचैनी का अनुभव करते और मुंह से दुर्गन्ध निकलती है।

कारण—

इन व्याधियों का कोई एक कारण बतलाना कठिन है। यह रोग शुष्क और मरतूब गर्म और ठण्डी सभी प्रकार की जलवायु में सामान रूप में पाया जाता है। यह व्याधि ग्रामीणों की अपेक्षा नागरिकों का ही अधिक दामन थामती है। गर्द,

गुवार, धुआं, धक्कड़ शुद्ध वायु का अभाव, कोष्ठबद्धता और दूषित वायु मण्डल ही इसका कारण है। जिन्हें बार २ जुकाम, रोमान्तिक, रोहिणी आदि की बीमारियां हुआ करती हैं, खांसी भी जिनका पीछा नहीं छोड़ती, उनमें एक बार टांसिल्स बढ़ने पर फिर बराबर बढ़ा ही करते हैं।

लक्षण--

इसका पहिला प्रभाव बच्चे पर यह पड़ता है कि वह नाक से सांस नहीं ले सकता, होठ खुले रहते हैं, नथने संकुचित और नाक किंचित नुकीली हो जाती है। मुंह और कण्ठ से सांस लेने के कारण लसीका ग्रन्थियां और फूलती तथा मुख पाक भी हो जाता है। नाक बैठ जाती शारीरिक और मानसिक विकास ठीक नहीं होता। यदि लापरवाही की गई तो कालीखांसी, न्यूमोनियां, रोहिणी आदि व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। टांसिल्स बढ़ने से कर्णरोग, उपांत्र शोथ, गण्डमाला आदि के उपद्रव खड़े हो जाते हैं, जो इडिनाइड्स द्वारा अब तक अनुभव में नहीं आये। बढ़े हुए टांसिल बच्चे के स्वास्थ्य का काल है। डाक्टर पंचानन वसु लिखते हैं—

"The tonsils are the gateway through which the tubercle bacilli enters"

प्रभाव--

मुख द्वारा सांस लेने से नाना प्रकार के उपद्रव खड़े हो जातते हैं।

१—मसूढ़े स्पंजी बन जाते हैं, उनके किनारों में शोथ होकर रक्त आना शुरू हो जता है। दान्त और मसूढ़ों के बीच में पीप पड़कर पूयमेह पैदा हो जाता है।

२—वायु में विद्यमान रहने वाली गर्द और कीटाणु टांसिल्स के इर्द गिर्द इकट्ठा होते, शोथ पैदा करते और गले की बीमारी पैदा हो जाती है।

३—छाती का विकास भद्दा हो जाताहै, छाती की हड्डी और उसके आस पास की अस्थियां दब और पिचक सी जाती हैं।

४—मध्यवर्ती कान और गले का सम्बन्ध एक (Eustchian) द्वारा है। इडिनाइड्स में उसके किनारे पर शोथ होता है, अस्तु कान के खराब होने का भी कम भय नहीं रहता।

उपचार--

१—आरम्भ में बच्चे को ढीली पोशाक पहनाकर

[पृष्ठ ५०८ का शेषांश]

—लेकर कूट कपड़ छानकर पानी में घोटकर उड़द के बराबर गोलियां बना लेवे। रोग बलानुसार सेवन करने से अधोलिखित रोगों में आश्चर्य जनक जादू का काम करती है। प्रमेह, रक्तपित्त, ज्वर, रक्तस्राव, श्वास, कास, रक्तविकार, पांडु रोग, प्लीहा, कुष्ठादिक रोग नष्ट होजाते हैं

कोष्ठ शुद्ध कारक अनुभूत प्रयोग—

५७०—सौंफ सनाय हर्र की बकली
फूल गुलाब मुनक्का प्रत्येक ६-६ माशा
निसोथ ४ माशा
इन्द्रायन की जड़ ४ माशा
मिश्री १ तोला

—इन कुल औषधियों का क्वाथ कर सुबह शाम सेवन करने से कोष्ठ की शुद्धि होजाती है, कोष्ठ का शोधन और शास्त्रीय औषधियों से भी किया जा सकता है।

नाक, मुंह अच्छी तरह साफ कर खुली जगह में पंजों के बल कमर पर दोनों हाथ रखकर खड़ा कीजिये। उससे कहिये कि अपने पेट को फुलावे, ऐसा करने पर फेफड़े वायु से भर जावेंगे, फिर उसे बैठने को कहिये और सांस को नाक द्वारा खींचने और निकालने का आदेश दे दीजिये! अगर बचपन से बच्चों को नाक से सांस लेने का अभ्यास कराया जाये तो ये रोग होवे ही नहीं। इस रोग की सर्व प्रथम और अत्यन्त आवश्यक चीज है नाक से सांस लेना। कैप्टन काटलिन ने इस बात का बालकों के अभिभावकों पर जोर देते हुये कहा है—

"Shut your mouth and save your life."

२—पिन्ट खौलाकर ठण्डे किये हुये जल में एक ड्राम साधारण नमक या सोडाबाई कार्ब मिला कर नाक साफ करावें।

३—नाक में षट्बिन्दु तैल की बून्दें २-३ टपकावें और २ प्रतिशत से ४ प्रतिशत तक गले में काष्टिक लगावे।

द्राक्षासव २ भाग, लोहासव एक भाग, मृत संजीवनी सुरा ५ बून्द परस्पर मिलाकर लड़के को पिलावें।

५—ग्लैसरिन को गर्म कर इसमें टेनिक एसिड मिला कर लेप तैयार कर टांसिल्स पर रुई के फाहे से अनेक बार लगाते रहो।

५७१—गिरी कमल गट्टा	१ माशा
नीम की पत्ती का स्वरस	६ माशा
तैल अलसी	२ तोला

—दोनों औषधियों को तैल मे डालकर खूब पकाओ और छानकर फाए से टांसिल पर लगाओ लाभदायक है।

५७२—नमक पिसा १ माशा लेकर उसमें १ तोला गोबर की राख मिलाकर पोटली बांधकर गर्दन के ऊपर से टांसिल पर दबावें।

विशेष सूचना—प्रयोग नं० ४ केवल एडीनाइड्स के और ६-७ केवल टांसिल्स के लिये हैं। शेष का व्यवहार दोनों में हो सकता है।

पथ्य—चाय, कहवा आदि बिल्कुल न दें। गेहूं की दलिया आदि हलके और सुपाच्य आहार एवं मधुर फलों की व्यवस्था उत्तम है।

ये रोग ज्यों ही बच्चों को घेरे उन्हें नाक से सांस लेने और मुंह बन्द कर दौड़ने का आदेश दें।

बच्चों को मोटा, ताजा, सुन्दर बनाने वाली मीठी और गुणप्रद
कुमार कल्याण घुटी
मूल्य——१ शीशी ।–)
पता—धन्वन्तरि कार्यालय बिजयगढ़ (अलीगढ़)

इन्द्रायण

लेखक—श्री० पं० सभाकान्त जी झा शास्त्री गोल्डमेडलिस्ट, सह० संपादक "धन्वन्तरि"

वैसे तो आयुर्वदीय वनस्पतियों में प्रायः अधिकतर औषधियां संदिग्ध में ही पड़ी हुई हैं, जो असन्दिग्ध हैं वे भी आज हमारी अज्ञानता से सन्दिग्ध होती चली जा रही हैं। इसका कारण और कुछ न होकर सिर्फ यही हो सकता है कि हम आज वनस्पतियों से अनभिज्ञ हैं तथा हम अपने शास्त्रों का अध्ययन न कर सिर्फ अपने अनुभव एवं प्रांतीय भाषाओं के नाम पर ही उसे निर्णय करने के लिये तैयार हो जाते हैं। जिसका परिणाम कभी कभी बड़ा भयावह हो जाता है।

यह प्रकृति सिद्ध बात है कि सब उपयोगी जड़ी बूटियां इस जगह उत्पन्न नहीं होती हैं तथा कोई २ जड़ी बूटियां ऐसी भी हैं कि जो एक प्रान्त की भाषा में किसी नाम से प्रचलित हैं तो एक प्रान्त में किसी नाम से और एक प्रान्त में उसका कोई नाम ही नहीं जानता। ऐसी स्थिति को स्पष्ट करने के लिये ही शास्त्रकारों ने निघण्टुओं एवं अनेक कोष आदि की रचना की हैं। अब यह हमारी इच्छा पर निर्भर है कि हम उसका आश्रय लें या न लें।

परन्तु जब हम किसी संदिग्धासंदिग्ध विषयको निर्णय करने के लिये बैठते हैं तो उस समय हमें इन तीन बातों की सहायता लेना आवश्यक हो-जाता है। यथा—

१–शास्त्रानुमोदित लक्षण, गुण, धर्म आदि।
२–स्वानुभव।
३–प्रान्तीय (प्रसिध्य) भाषा।

यदि इन तीनों की सहायता लेकर निर्णय करने लगें तथा अपना दुराग्रह पृथक रख दें तो हम बहुत जल्दी सफल हो सकते हैं। अस्तु,

आज हम जिस विषय पर कुछ लिखना चाह
हैं यह भी उपरोक्त परिस्थति के अन्तर्गत की वस्तु

हमारे एक मित्र सी० पी० प्रान्तीय महोदय
'बन्य अनार' के नाम से एक फल भेजा है। जिस
सी० पी० प्रान्त की भाषा में 'केन्हर' कहा जा
है और आपने यह भी लिखा है कि इसका बी
विशेषतया कामला रोग के लिये अधि
उपयोगी है।

परन्तु यह फल वास्तव में 'लाल इन्द्रायण' है
निघण्टुओं में इन्द्रवारुणी तथा महेन्द्र वारु
नाम से दो प्रकार का वर्णन मिलता है। यहां दो
का उल्लेख करेंगे। यथा—

ऐन्द्रीन्द्र वारुणी चित्रा गवाक्षी च गवादनी।
वारुणी च पराग्रक्षा सा विशाला महाफला॥
श्वेतपुष्पा मृगाक्षीच मृगैर्वारुर्मृगादनी।

गुण—

गवादनी द्वयं तिक्तं पाके कटुरस लघुः।
वीर्योष्णं कामला पित्त कफ प्लीहोदरापहम्॥
(भा० नि

ऐन्द्रीन्द्र वारुण्यरुणा मृगादनी।
गवादनी क्षुद्र सहेन्द्र चिर्भिटा॥
सुर्य्या विषघ्नी गुणा कर्णिकामरा।
माता सुवर्णा सुफला च तारका॥
वृषभाक्षी गवाक्षीच पीतपुष्पीन्द्र वल्लरी।
हेम पुष्पी क्षुद्रफला वारुणी बालक प्रिया।
रक्तेर्वारुर्विषलता शक्रवल्ली विषापहा।

गुण—

इन्द्रवारुणिका तिक्ता कटु शीताच रेचनी।
गुल्म पित्तोदर श्लेष्म कृमि कुष्ठ ज्वरापहा॥

महेन्द्र वारुणी रम्या चित्रवल्ली महाफला ।
सा माहेन्द्री चित्रफला त्रपुसी त्रपुसाच सा ॥
आत्मरक्षा विशालाच दीर्घवल्ली बृहत्फला ॥

(रा० नि०)

इसका गुण वर्णन करते हुये लिखते हैं कि यह भी गुण में इन्द्रवारुणी जैसा ही है । सिर्फ रस, वीर्य, विपाक में कुछ गुण दोष विशेष हैं ।

इन्द्रवारुणिका चित्रा विशाला गज चिर्भिटा ।
मृगेर्वारुः क्षुद्रसहा चित्रफलैश्च वारुणी ॥

गुण—

लघ्वीन्द्रवारुणी प्रोक्ता पाकेकट्वीचतिक्तका ।
शीत सारोष्णवीर्य्याच लघ्वी चैव प्रकीर्तिता ॥
गुल्मपित्तोदर कफ कृमिकुष्ठ ज्वर प्रणान् ।
श्वास कास ग्रन्थिमेह मूढगर्भक कामला ॥
प्लीहानंशुष्कगर्भं च गलगंड विषं तथा ।
आनाहं वातमपित्त चामं दुष्टोदरस्तथा ॥
सर्वोदराणिपाण्डुं च नाशयेदिति कीर्तिताः ॥

(नि० र०)

महेन्द्रवारुणी काया विशालाच महाफला ।
आत्मरक्षा चित्रफला तुंबसी त्रपुषीच सा ॥

गुण—

अप्येन्द्र वारुणी कफ रुजंच क्षीपदंतथा ।
नाशयेदिति संप्रोक्तो गुणाश्चान्येतु पूर्ववत ॥
रसे वीर्ये च पाकेचाधिका प्रोक्ता गुणैरियम् ।

(नि० र०)

ऐन्द्रीतिवान्द्री सुरेन्द्रा ह्वा गवाक्षीच सुखारुणी ।
ऐन्द्रैर्वारुः क्षुद्रफला वृषभाक्षी वृषादनी ॥
मृगभक्षा मृगैर्वारु विशालावैन्द्र वारुणी ।
आत्मरक्षा चित्रफला चित्रदेवी महाफला ॥
स्थाणुकर्णी धनुःश्रेणी त्रपुसी गज चिर्भटी ॥

गुण—

ऐन्द्रीतिक्ता कटुर्लघ्वी कटुपाका विरेचनी ।
उष्णवीर्य्या हरेत्पित्तं कफ मेह व्रण कृमीन् ॥

श्वास कासापची कुष्ठ कृमि प्लीह गलोदरम् ।
कामला मूढगर्भाम ग्रन्थिगण्डामये विषम ॥

(कै० नि०)

निघण्टुओं के देखने से ज्ञात होता है कि इसकी दो जातियां होती हैं । इसी तरह इसके रङ्ग भी दो होते हैं । पीला और लाल, जो पीला फल वाला होता है उसके फूल भी पीले होते हैं और जो लाल फल वाला होता है उसके फूल सफेद होते हैं । ध्यान रहे ये दोनों फल प्रथम हरे और पकने पर पीले और लाल हो जाते हैं ।

अनेक भाषाओं के नाम—

हिन्दी—इन्दायण, फरफेन्दु, बड़ी इन्द्रायण, बड़ी इन्द्रफल ।

बं०—राखालशशा, राखालनाडु, कुन्दुरूकी, महामाकाल ।

म०—लघुइन्द्रावण, कांवडल, थोर कांवडल ।

गु०—इन्दरवाणीयूं, गावसुकण, ।

रा०—तरुतुम्बो, गड़तुम्बो ।

फा०—खुर्जजातलख ।

क०—हामेके, हिरियाहामेको ।

तै०—एतिपुच्छा ।

इङ्गलिस—कोलोसिंथ ।

लैटिन—सिट्रलसकोलोसिंथिस् , क्युक्युमिस् स्युडोकोलोसिंथिस् ।

अर्बी—हंजल ।

वनौषधि चन्द्रोदयकार लिखते हैं—

इन्द्रायन के सम्बन्ध में वैद्य लोगों में तथा प्राचीन ग्रन्थों में कुछ मतान्तर दिखाई पड़ता है । कई लोग क्युक्युमिस ट्रिगोनस नामक वनस्पति

को जिसे हिन्दी में विषलोम्बी या जङ्गली इन्द्रायण कहते हैं, उसी को बड़ी इन्द्रायण समझ कर काम में लेते हैं। परन्तु वास्तव में इन्द्रायण की बेल उससे लम्बी होती है और उसमें तरबूजे के पत्तों के समान पत्ते लगते हैं। इस बेल पर नर और मादा दो प्रकार के फूल लगते हैं। इसके फल गोलाई में २ से ३ इंच तक व्यास में होते हैं। और उनका रङ्ग पहले हरा फिर पीला तथा सफेद रङ्ग की धारियों वाला होता है। इसके बीज भूरे, चिकने, लम्बे, गोल और चपते होते हैं। इस बेल का पंचाङ्ग ही कड़वा होता है।

नोट - यह फरफेंदुआ है, जो यू० पी० प्रान्त में अधिक काम में आता है। —ले०।

गुण दोष प्रभाव–

आयुर्वेदिक मत—

आयुर्वेदिक मत से इन्द्रायण कड़वी, चरपरी, शीतल, रेचक तथा गुल्म, पित्त, उदर रोग, कफ, कृमि, कोढ़ और ज्वर को हरने वाली है। यह अर्बुद, सांघातिक फोड़ा, जलोदर, कफ, धवलरोग, व्रण, श्वास, खांसी, मूत्र सम्बन्धी व्याधियां, कामला (पीलिया) तिल्ली, क्षय राग जन्य कण्ठ-माला, मन्दाग्नि, कब्जियत, रक्ताल्पता और श्लीपद में लाभप्रद है। चक्षुरोग और गर्भाशय के रोगों में भी लाभ पहुंचाता है।

यूनानी मत—

यूनानी मतानुसार यह तीसरे दर्जे में गर्म और दूसरे दर्जे में रूक्ष है। इसके बीज और छिलका नहीं ग्रहण करना चाहिये। क्योंकि ये अत्यन्त मरोड़ी पैदा करके मृत्यु के कारण होते हैं। अधिक मात्रा में यह आमाशय को हानि पहुंचाने वाला तथा मरोड़ और पेचिश उत्पन्न करने वाला इसके पत्ते आंतों को हानिकारक हैं। इस दर्पघ्न बबूल का गोंद है। मात्रा १॥ माशे से माशे तक।

इन्द्रायण का गूदा सूजन को उतारने वा और स्नायु मण्डल सम्बन्धी बीमारियों में जै लकवा फालिज, आधाशीशी, मृगी आदि रो के लिये उपयोगी है। यह मस्तिष्क के विकारों शुद्ध करता है। इससे सिद्ध किया हुआ तैल का में टपकाने से कर्णशूल नष्ट होता है।

कर्नल चोपरा का इस औषधि के सम्बन्ध कथन है कि—

यह आयुर्वेद में पुरानी औषधि है। इसके फल विरेचक गुणवाला बतलाया गया है। गा पित्त, कब्जियत, ज्वर और अन्तड़ियों के कीड़ों में लाभकारी है। इसकी जड़ जलोदर, पीलिया, मूत्र की बीमारी और आमवात में उपयोगी है। यूनानी हकीम इसको जलोदर, पीलिया, नष्टार्तव और गर्भाशय की तकलीफ में ज्यादा उपयोग में लेते हैं।

रासायनिक विश्लेषण–

भारत और यूरोप की दोनों वनस्पतियों रासायनिक तत्वों में कुछ भी अन्तर नहीं पाया जाता है। इन दोनों में अलकलाइड (उपक्षार और कोलोसिन्थिन नामक कटु पदार्थ पाये जाते हैं, और वे शुद्ध हालत में अलग निकाले भी नहीं जा सकते। ट्रापिकल मेडिसिन स्कूल कलकत्ता के रासायनिक विभागों में भारत के अन्दर पैदा हुई इन्द्रायण की जांच की गई, और परिणाम इस प्रका

प्राप्त हुआ। पेट्रोलियम ईथर एक्सट्रेक्ट इसके गूदा में ६१ प्रतिशत और सारे सूखे हुये फल में १.३६ पाया गया, सलूफ्यूरिक एक्सट्रेक्ट गूदा में ३.१७ प्रतिशत और सारे सूखे हुये फल में २.०५ प्रतिशत पाया गया और एलकोहेलिक एक्सट्रेक्ट गूदा में १०.६० प्रतिशत और सारे सूखे फल में १२.१५ पाये गये।

यह औषधि तेज विरेचक रूप में काम में ली जाती है। और बहुत सी विरेचक गोलियां इसके संयोग से बनाई जाती हैं।

के० एल० दे के मतानुसार इसमें पाये जाने वाला प्रधान तत्व कोलोसिंथिन नामक ग्लूकोसाइड है। इसका स्वाद कड़वा है, थोड़ी मात्रा में यह कटु पौष्टिक है। साधारण मात्रा में यह अन्तड़ियों की ग्रन्थियों को उत्तेजना देता है। और पतले दस्त लाता है। अधिक मात्रा में यह तेज विरेचक का काम करता है और आंतों में दर्द पैदा करता है। गर्भवती स्त्री को यदि दिया जाय तो गर्भपात का डर रहता है।

मेटेरिया मेडिका आफ वेस्टर्न इण्डियन के लेखक डा० डायमाक का कथन है कि स्नायु मण्डल की कमजोरी से होने वाली कब्जियत, जलोदर, पीलिया, कृमि, उदरशूल व श्लीपद में इस औषधि का उपयोग होता है। मखजन के लेखक ने इसके प्रयोग करने की एक विचित्र विधि बतलाई है। वह इस प्रकार है। इन्द्रायन का एक फल लेकर एक तरफ से उसकी डिग्री निकाल कर उसमें काली मिर्च भरकर बन्द करके कपड़ मिट्टी कर कुछ दिनों तक चूल्हे के पास गरम राख में पड़ा रहने दें, बाद में उन मिर्चों को निकाल कर सुखाकर चूर्ण कर देने से दीपन, पाचन और रेचन होता है।

ब्रिटिश मेटेरिया मेडिका के अनुसार इन्द्रायण अतिशय रेचक, प्रवाही, मल लाने वाली तथा शीघ्र जुलाब है। अतः हमेशा रहने वाली सख्त कब्जियत में, बुखार में, जलोदर में, ऋतु स्राव और गर्भस्राव के दर्द में तथा पेट और कामले की बीमारी में बहुत उत्तम लाभदायक है।

इस औषधि का विरेचन उन मनुष्यों के लिये अधिक उपयोगी है जिनकी प्रकृति सुदृढ़ और सबल हो और जिनका शरीर स्थूल हो, गर्भवती स्त्रियों, कमजोर मनुष्यों, बालकों तथा अतिसार और प्रवाहिका के रोगियों को इसका प्रयोग नहीं करना चाहिये। इसके सिवाय इस औषधि का अकेली भी सेवन नहीं करना चाहिये। बल्कि बबूल के गोंद, कतीरा इत्यादि इसके दर्प को नाश करने वाली औषधियों के साथ सेवन करना चाहिये। इसका बहुत महीन चूर्ण बनाकर उपयोग करना चाहिये। चूर्ण दरदरा रहने से यह मरोड़ और पेचिश पैदा कर आंतों को काट डालता है।

मेटेरिया मेडिका आफ थेरोप्युटिक्स के लेखक डा० विलियम ह्विटला लिखते हैं कि कोलोसिंथ (इन्द्रायण) एक तेज विरेचन और पतले दस्त लाने वाली औषधि है। परन्तु इससे मरोड़ पैदा होती है। अतः इसका व्यवहार अकेले नहीं करना चाहिये। बल्कि एलुआ और पारे के साथ मिश्रित कर देने से यकृत की विकृति और पुरानी कब्जियत में बहुत लाभ होता है। इससे पानी की तरह दस्त आते हैं। इसलिये कभी २ जलोदर, उदरशोथ और मस्तिष्क के अन्दर रक्त संचय होने की बीमारी में इसका प्रयोग किया जाता है। मगर इन बीमारियों में (Seammany) और (elaterium) इसकी अपेक्षा अधिक प्रभावशाली औषधियां हैं। खुरा-

सानी अजवायन का सत्व और बेलेडोना कोलोसिंथ के द्वारा उत्पन्न मरोड़ी और शूल को बिना उसके विरेचक गुण को हानि पहुंचाये शांत करता है। अतः पुरानी कब्जियत में आवश्यकता पड़ने पर इन तीनों औषधियों की सम्मिलित गोली (eampound Pill) देने से निरुपद्रव विरेचन होता है।

इन्द्रायन छोटी-

यह इन्द्रायन की एक छोटी जाति होती है। जिसको लैटिन में क्यूक्यूमिसट्रिगोनस, हिन्दी में बिसलोम्बा तथा जङ्गली इन्द्रायन और संस्कृत में बहुफल, चित्रफल आदि नाम हैं।

इसका हरा फल कड़वा और कुछ तूरा होता है यह अग्नि प्रवर्धक है और स्वाद को सुधारने वाला तथा कफ, पित्त को ठीक करने वाला है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार यह सर्प दंश मे उपयोगी है। इसमें कोलोसिंथ से मिलते जुलते कटुतत्व रहते हैं।

केस और महेस्कर के मतानुसार इसके पत्ते और इसकी जड़ सर्प दंश में निरुपयोगी है।

लाल इन्द्रायण

नाम—सं० श्वेत पुष्पी, मृगाक्षी, महाकाल इत्यादि, हिन्दी लाल इन्द्रायण, इन्द्रायण, महाकाल, गु० लाल इन्द्रवारुणी, बं० माकाल, ते० अब दून, ता० कोटई. अरबी हंजले अहमर, फारसी—हज़ले सुर्ख, उर्दू—इन्द्रायन, लेटिन—ट्रिकोसेंथस पेलमेटा।

विवरण—

लाल इन्द्रायण की बेल बहुत लम्बी बढ़ती हैं। ये बड़े ऊंचे २ झाड़ों पर चढ़ती हैं। इनके पत्ते २ से ६ इञ्च व्यास के और त्रिकोण से सप्तकोण तक होते हैं। इसके फूल सफेद रङ्ग के तथा नर और मादा दो तरह के होते हैं। इसके फल गोल नारंगी के समान होते हैं। और पकने पर लाल हो जाते हैं, इसका गूदा काला होता है और उसमें बहुत से बीज होते हैं। इसकी जड़ जमीन में बहुत गहरी बैठती है।

गुण दोष और प्रभाव

आयुर्वैदिक मत—

आयुर्वेदिक मत से इसका फल श्वास, कर्णरोग और पीनस में उपयोगी है। यह कंठ रोग, अपच, श्वास, काम, प्लीहा, उदर रोग और मूढ़गर्भ को निवारण करने वाला और कुष्ठ तथा दुष्ट व्रण को जीतने वाला है।

यूनानी मत—

से इसका फल कड़वा, पेट के अफारे को दूर करने वाला, विरेचक और गर्भ स्रावक है। आधाशीशी, मस्तिष्क की गर्मी, नेत्र रोग, कुष्ठ रोग, मृगी और आमवात में भी यह मुफीद है। इसके कुल्ले करने से दांत की पीड़ा में लाभ होता है। इसके बीज वमन कारक और विरेचक है।

बम्बई में इसके फल का धुआं श्वास के रोगियों को पिलाया जाता है। इसकी जड़ और बड़ी इन्द्रायण की जड़ को बराबर की मात्रा में लेकर एक लेप तैयार किया जाता है, जो सांघातिक फोड़ों पर लगाने के काम में आता है। त्रिफला और हल्दी के साथ तैयार किया हुआ इसका क्वाथ सुजाक के लिये उत्तम है।

कोमान के मतानुसार इस वनस्पति का फल बहुत तेज रेचक है। इसको नारियल के तेल के साथ उबाल कर एक तैल तैयार किया जाता है। यह तेल आधाशीशी, पीनस, कर्णशूल और अर्धाङ्ग शूल में लाभ करता है।

कर्नल चोपरा के मतानुसार यह औषधि श्वास और फुफ्फुस के रोगों में लाभप्रद है। इसमें ट्रीकोसेन्थीन नामक एक कटु तत्व पाया जाता है। जो "कोलोसिंथ" के तुल्य ही होता है।

इण्डियन प्लांट्स एण्ड ड्रग्स के रचयिता का कथन है कि इसके फलों के रस या जड़ की छाल के काढ़े के साथ तेल को छानकर उपयोग में लेने से आधाशीशी और शिरःशूल के प्राचीन रोग नष्ट होते हैं। कान में इसकी बूंदें टपकाने से कर्ण स्राव भी बन्द होता है।

प्लेग के ऊपर भी इसकी जड़ के नीचे निकलने वाली गांठ बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है, इसका उपयोग इस तरह है—

इसकी जड़ के नीचे एक के नीचे एक ऐसी कई गांठ निकलती हैं, इन गांठो में सब से नीचे वाला या सातवें नम्बर की गांठ को लाकर उसे ठण्डे जल से घिसकर प्लेग की गांठ पर दिन में दो चार बार लगाना चाहिये और डेढ़ माशे से तीन माशे तक की मात्रा में पिलाना भी चाहिये। इस प्रयोग से गांठें बैठ जाती हैं, बुखार कम हो जाता है तथा दस्त होकर रोग का जहर भी निकल जाता है।

जङ्गली जड़ी बूटी के रचयिता—शामलदास जी वैद्य शास्त्री लिखते हैं एक परिचित सद्गृहस्थ जो इस रोग के पीछे हजारों रुपये डाक्टरों को देकर भी असफल हो गये थे। उन्हें एक जङ्गली मनुष्य ने इस दुष्ट रोग के पंजे से मुक्त किया।

एक अभूतपूर्व नवीन आविष्कार

विरेचनीय सुरमा

इस सुरमा को आंजने से नाक, आंख, आदि से दूषित मल निकल जाता है। यह रुके हुए जुकाम को साफ कर देता है। पुराना-नया सिर दर्द और प्रतिश्याय के लिये रामबाण है। मूल्य—१ तोला ५) रुपये। नमूना परीक्षार्थ -)॥ की टिकट पोस्ट व्यय के लिये आने से मुफ्त भेजा जाता है।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

परीक्षित प्रयोग—

रोग निवारण के लिये सांप

लेखक—श्री० रामेशवेदी आयुर्वेदालङ्कार. हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट, बादामी बाग लाहौर।

[गतांक से आगे]

फीलपांव और जख्मों का इलाज—

भारत में जिस तरह फनियर सांप को दवाओं के लिये चुनने में वैद्यों और हकीमों का अधिक पक्षपात होता है, वैसे ही कुछ समय पहले तक यूरोप के बहुत से भागों में चिकित्सा प्रयोजन के लिये मण्डली सांपों का विशेष स्थान रहा है। मिश्र में मण्डली मांपों के मांस और शोर्वे को फीलपांव में दिया जाता था। फीलपांव को अंग्रेजी में "एलिफेण्टाइसिस" कहते हैं, इसमें रोगी के अङ्ग हाथी के अङ्गों के समान आकार प्रकार धारण कर लेते हैं। प्लीनी और गैलन दोनों ही ने जख्मों में, फीलपांव में और शरीर की दूसरी रुग्ण अवस्थाओं में मण्डली मांस की प्रशंसा की है (एन्साइक्लोपीडिया आफ नेचुरल हिस्ट्री भाग ३, पृष्ठ १२१०)।

मछली की तरह ही उबाल कर यह बीमारों को सेवन कराया जाता था, लेकिन चूर्ण रूपमें था और किसी सूखी अवस्था मे देने से यह अधिक प्रभावकारी समझा जाता था। रक्त वाहिनी के कट जाने से खून बहुत बह रहा हो तो उसे बन्द करने के लिये सांप की केंचुली का चूर्ण घाव के मुख पर रख कर पट्टी बांध दी जाती थी।

बवासीर के मस्से—

बवासीर के मस्सों पर फनियर की चरबी लगाने से और सांप की केंचुली की धूनी देने से आराम हो जाता है।

(चरक, चि० अ० १४, ४९-५०)

राघव का अनुभव है कि बवासीर में सांप केंचुली, मनुष्य के बाल, भांगरा और आक फूल आदि से मस्सों को धूनी देने से मस्से सू जाते हैं। (राघवानुभव अ० ३, २

सांप के काटे को चिकित्सा—

स्यामी चिकित्सक सांप के काटे को इस नुस से ठीक करते हैं। जङ्गली सूअर के जबड़े की हड्डी, पालतू सूअर के जबड़े की हड्डी, बत्तख की हड् मोर की हड्डी, मछली की पूंछ और विषैले सांप सिर (यंग, दि किंगडम आफ दि मेलो रोम पृ० १२

कुछ लोग सर्प विष को मुख द्वारा थोड़ी थोड़ी मात्रा में इस उद्देश्य से लेते हैं कि इससे वे विषों और रोगों के प्रभावों से बचे रहेंगे। विषों की चिकित्सा में चरक सांप के सिर का धूआं देता है

(चि० अ० २३, ९८)

स्त्रियां भी सुन्दर बन सकती हैं—

सूतिकागार के कपड़ों को सांप की केंचुली की धूनी देकर रोग कृमियों से शून्य किया जाता था (चरक, शा०, अ० ८, ६३)। कड़वी तुम्बी का फल, सांप की केंचुली, तोरई और सरसों के दानों को कड़वे तेल के साथ मिलाकर योनि में धुआं देने से प्रसव शीघ्र होता है।

सांप की केंचुली को हांडी के अन्दर बन्द कर इस तरह जलायें कि धुआं बाहर न निकलने पाये। बच्चा मां के पेट में ही मर जाय तो इस जली हुई राख को शहद के साथ घोटकर आंखों में आंजने

से बिना किसी कष्ट के बच्चा बाहर निकल आता है।
(चक्रदत्त, स्त्री रोग चि०)

प्रसव के बाद चरक गर्भाशय को संकुचित करने के लिये सांप की केंचुली की योनि में धूनी देते थे। पहिले यह भी विश्वास रहा है कि सांप का मांस खाने से स्त्रियों का सौन्दर्य आच्छुरण रहता है। यह भी वर्णन मिलता है कि सर केनेलस डिग्बी की रूपवती पत्नी उन खस्सी मुर्गों पर पाली गई थी जिन्हें मण्डली सांप का मांस खिला २ कर मोटा बनाया गया था।

अन्धों को दीखने लगता है -

आंख के रोगों में फनियर को प्रयोग की बहुत ख्याति रही है। काले सुरमे को एक महीने तक मरे हुए काले फनियर के मुख में रखने के बाद निकाल कर सुरमे में आधी चमेली की सूखी कलियां और नमक मिलाकर घोटे हुए सुरमे को चरक आंखों के रोगों में आंजा करते थे। वाग्भट इस सुरमे को बनाते हुए फनियर के मुख में अंजन को रख कर कुशा से लपेट देना अच्छा समझते थे और वे उपर्युक्त तीनों द्रव्यों को दूध के साथ पिसाई कराते थे। फनियर की चरबी शहद और आंवले के रस को एक जगह घोट लें, यह सब प्रकार के नेत्र रोगों में लाभकारी दवा मानी जाती थी। इससे आंखों में नींद आनी बन्द हो जाती है आंखों के सब रोगों को दूर करने के लिये चरक ने यह नुस्खा लिखा है—

५७१-फनियर की चरबी पिप्पली
ढाक के फूल का रस सेंधा नमक
दस साल का पुराना घी
—सबको एक जगह घोट लें।

शार्ङ्गधर बताते हैं कि काले सांप की चरबी, शंखनाभि और निर्मली के बीज को खरल करके आंजने से अन्धों को भी सब कुछ दीखने लगता है सांप के सब हिस्से दवाओं में काम आते हैं—

कैरन लोग अजगर के पित्ते को औषधीय प्रयोजन के लिये बरतते हैं। वे मांस को तो खा जाते हैं और वास्तव में यह सफेद और लुभाने वाला दीखता है। (रिचर्डसन; कैंटे लोग औफ स्नेक्स औफ ब्रिटिश बर्मा, पृ० ३६)।

भारत के नल्लामल्ली पर्वतों की एक जाति की ओर संकेत करते हुए मेर्विन स्मिथ (स्पोर्ट एण्ड एण्ड वेंचर इन दि इण्डियन जंगल, पृ० २५) लिखते हैं कि गोली के मारे दो शेषनागों की खाल को उतार कर जहरीले दाँत, विष की पोटलियां, तालू और पित्ताशय को उन्होंने औषधि उपयोग के लिए बहुत सम्हाल कर रख लिया था।

आवश्यक-निवेदन।

कई बार प्रार्थना करने पर भी बहुत से सज्जन पत्र व्यवहार करते समय अपना ग्राहक नम्बर एवं पूरा पता साफ नहीं लिखते, इससे उत्तर देने में एवं अङ्कादि भेजने में अनावश्यक बिलम्ब होजाता है। अतः कृपया अपना ग्राहक नम्बर एवं पता खुशखत में अवश्य लिखें। -सं०।

वैद्यों से परामर्श

परामर्श नं० २६—

एक रोगी की आयु २२ वर्ष की है, यह बचपन में कुसंगत में पड़कर हस्तमैथुन द्वारा अपनी जिन्दगी बर्बाद कर लिया है। इसे दस्त की बराबर कब्जियत रहती है, विशेष जोर लगाने पर रक्त मिश्रित कड़ा दस्त जरा सा हो जाता है। पेशाब अस्वच्छ होती है। रोगी देखने में हृष्ट-पुष्ट है, इसके लिये कोई उत्तम औषधि लिखने की कृपा करें।

ग्राहक नम्बर ६३५२।

परामर्श नं० २७-

एक भगन्दर रोगी की आयु २० वर्ष की है। उसे ३ वर्ष से भगन्दर है, और पार्श्व में तथा पेट में भी ३-४ छिद्र हो गये हैं, जिससे दशा बहुत खराब हो गई है। कृपया इस के खाने व लगाने की दवा लिखें।

—वैद्य पं० बैजनाथ शर्मा शास्त्री उदयपुर।

परामर्श नं० २८—

आयु क्या है? शरीर और जीवन का संयोग ही जीवन है, इसका क्या प्रमाण है?

—ग्राहक २२१८।

परामर्श नं० २९—

मुझे १ प्रति बालरोगांक तथा १ प्रति नारी-रोगांक की आवश्यकता है। अगर धन्वन्तरि के किसी ग्राहक के पास विक्रयार्थ यह विशेषांक हो तो निम्न पते से सूचित करें।

करतारसिंह हेडमास्टर डी० बी० स्कूल
मु० पो० भुच्चूकलां (फिरोजपुर)

परामर्श नं० ३०—

हमारे मित्र के दायें हाथ की मध्यमांगुली के बीच में १ इंच की जगह में छोटी २ लाल फुंसियां होकर फटने लगती हैं, यह कार्तिक से शुरू हो फालगुन तक होती है। सर्दी में दर्द ज्यादा होता कृपया इसके लिये कोई अनुभूत दवा बतावें। सा ही गलगंड के लिये भी कोई उत्तम योग लिखें। बिना आप्रेशन ठीक हो जाय।

ग्राहक २४५६

परामर्श नं० ३१—

एक २५ वर्षीय पुरुष के मुंह पर नासिका दोनों तरफ १-१ इंच भर काला दाग है इसके लि अनुभूत योग लिखें।

ग्राहक ५६५१

परामर्श नं० ३२—

एक २० वर्षीय लड़का को प्रथम सुजाक हुआ जो दवा करने से ठीक हो गया, बाद में इन्द्री मुंह पर करीब २० दाने सफेद हो गये जो न गो फूटते हैं न खुजली होती है। पेशाब करने से पूर्व धातु श्राव भी हो जाता है। इसके लिये को अनुभूत दवा लिखने की कृपा करें।

ग्राहक ५८२

परामर्श नं० ३३—

क्या टान्सिल और गलौघ एक ही रोग टान्सिल की अनुभूत चिकित्सा भी लिखें।

एक ग्राहक

परामर्श नं० ३४—

एक ५५ वर्षीय हेडमास्टर साहब को १५ जू १९४२ की एक रात में बांये हाथ पैर में दर्द शु हुआ, जो चिकित्सा से ठीक हो गया, दुबारा ए अप्रैल १९४५ को पुनः आक्रमण हुआ, जिस आवाज बैठ गई, बोल नहीं पाते, मिन २ आवा निकलती है। कण्ठ में कफ से भारीपन रहता है

भूख कम लगती है और कोई शिकायत नहीं है। वैद्य महानुभावा से प्रार्थना है कि ऐसी कोई दवा बतलावें जिससे आवाज साफ हो जाय।

पं० शिवदत्त मिश्र, सीतापुर।

परामर्श नं० ३५--

एक रोगी की आयु ३२ साल की है। इसे करीब १ साल से अण्डकोष तथा शिश्नेन्द्रिय में सूजन रहता है, इससे कोई कष्ट नहीं है, रोगारम्भ में अण्डकोष के चमड़े मोटे होगये और खुजली होती रही। कुछ दिनों के बाद जांघ के कक्ष में गांठ निकल आयी, इससे सूजन इतनी बढ़ी कि नाभि तक फूल गया। लंगोट कसने से सूजन ऊपर नाभि के पास आ जाती है। कृपया इसके लिये कोई उत्तम योग वैद्यमहानुभाव बतलावें।

—ग्राहक नं० ५३०६।

परामर्श नं० ३६—

एक अर्श रोगी ७ वर्ष से दुःख पारहा है। पहले खून भी आता था। परन्तु अब मस्से बाहर निकल आये हैं। और अब खून बन्द है बादी होगया है। है, जिससे रोगी बहुत बेचैन रहता है। वैद्यमहानुभाव इसके लिये कोई अनुभूत योग लिखने की कृपा करें।

—वैद्य हरिनारायण शास्त्री बम्बई।

(ग्राहक नं० ६३८० का भी उपरोक्त प्रश्न से ही मिलते-जुलते हैं, अतः इस प्रश्न के उत्तर को ही अपना उत्तर समझेंगे।) —संपादक।

परामर्श नं० ३७--

गुदभ्रंश रोग की अनुभूत चिकित्सा लिखने की कृपा करें।

--ग्रा० नं० २७३५।

परामर्श नं० ३८—

एक ३५ वर्षीय पुरुष के शिर को आभ्यन्तरीय शिरा पर शोथ हो जाने से आंख सूज गयी थी, जो चिकित्सा करने पर शोथ तो नष्ट हो गया। परन्तु सिर में थोड़ा दर्द और खुजली अभी तक बनी हुई है। जो किसी तरह नहीं जारही है। इसके लिये वैद्यबन्धु अनुभूत योग लिखने की कृपा करें।

—ग्रा० नं० ६२०९।

परामर्श नं० ३९—

१-२ साल के बच्चेको करीब ६ माह पहले आंख आ गई. जो अच्छी हो गई। किन्तु बच्चा अभी तक रोशनी (दिया, लालटेन) के सामने देख नहीं पाता पलकें भी कुछ सिकुड़ी हुई हैं। वैद्यबन्धु इसके लिये कोई लेप या अंजन आदि लिखने की कृपा करें।

--ग्रा० नं० २०२३।

परामर्श नं० ४०—

एक ४ मास की सगर्भा स्त्री जिसकी आयु २२ वर्ष की है। यह स्त्री हिष्टीरिया रोग से पीड़ित है। दिन भर में ३-४ बार दौड़ा होता है। शरीर अत्यन्त दुर्बल है। ज्वर भी रहता है, कोष्ठबद्धता भी है। कृपया इस रोग की उत्तम चिकित्सा लिखें।

—ग्रा० नं० २४६६।

परामर्श नं० ४१—

एक अपस्मार (मृगी) रोगी जिसकी आयु २० वर्ष की है। इसे प्रथम दौरा के समय शरीर में सनसनाहट और आंखों के आगे अन्धेरा हो जाता है। दौरा शान्त होने पर सिर में दर्द, प्यास, शैत्यता, रोमांच आदि होता है। कृपया इसकी उत्तम चिकित्सा वैद्यबन्धु लिखने की कृपा करें।

—रामभरोसे द्विवेदी ग्वालियर।

साहित्य समालोचना

भोजन विधि (रोग और पथ्यापथ्य)

लेखक—श्री पं० केदारनाथ पाठक रासायनिक
प्रकाशक—श्यामसुन्दर रसायनशाला काशी ।
२० × ३० १६ पेजी पृष्ठ संख्या २७२ मूल्य २)

प्रस्तुत पुस्तक में करीब १०० रोगों के पथ्यापथ्य का उल्लेख है, जो प्राचीन आयुर्वेदीय पुस्तकों द्वारा संग्रह किया गया है, संग्रह वैद्योपयोगी है, क्योंकि पथ्यापथ्य पर ही मनुष्य जीवन निर्भर है । प्रत्येक को इसका अध्ययन करना चाहिये ।

टोटका विज्ञान–

इसके भी लेखक व प्रकाशक उपरोक्त ही हैं । मूल्य ।=)

यद्यपि टोटका भी चिकित्सा का एक अङ्ग ही है, यह हमारे प्राचीन ग्रन्थों को देखने से ज्ञात होता है । परन्तु इस चिकित्सा का कई कारणों से लोप होगया है । इस पुस्तक में उन्हीं ग्रन्थों के और कुछ ग्रामीण भी संगृहीत हैं । टोटका पर विश्वास करने वाले इस पुस्तक को अवश्य देखें ।

ग्राम्य चिकित्सा–

यह पुस्तक भी उक्त प्रकाशक द्वारा ही प्रकाशित है । मूल्य ॥=)

इसमें सुलभतया देहातों में प्राप्त होने
जड़ी बूटियों द्वारा रोगों की चिकित्सा का
वर्णित है । देहातों में अक्सर प्रायः समय पर
का मिलना असम्भव हो जाता है, उस
यह पुस्तक वैद्य का प्रतिनिधित्व कर सकती
अतः प्रत्येक को इसे देखना चाहिये ।

मलेरिया (विषम ज्वर)–

लेखक—आचार्य उमाशंकर वैद्य, प्रकाशक
साहित्य समिति सरदार शहर । मूल्य ।–)

इस पुस्तिका में मलेरिया (विषम ज्वर)
संक्षिप्ततः पौर्वात्य तथा पाश्चात्य मतानुसार
विवेचन करते हुये चिकित्सा का वर्णन किया
है ! पुस्तक छोटी है परन्तु वैद्योपयोगी है ।

आयुर्वेदिक प्रश्नोत्तरावली (दो भाग

लेखक तथा प्रकाशक—साहित्यायुर्वेदा
प्रोफेसर पं० सोमदेव शर्मा शास्त्री, ए० एम०
वाईस प्रिंसीपल ललितहरि आयुर्वेदिक
पीलीभीत (यू० पी०) मूल्य दोनों भाग का ४)

भिषक् विशारद आयुर्वेदाचार्य परीक्षा
के लिये यह पुस्तक परमोपयोगी है । इस
के सहारे थोड़ा भी परिश्रम करने वाला
अनायास ही परीक्षा में सफलता प्राप्त
सकता है ।

वैद्य सम्मेलन स्थगित–

राजपूताना प्रान्तीय वैद्य-सम्मेलन फरवरी में उदयपुर में होने वाला था, किन्तु
खाद्य पदार्थों की कमी के कारण अनिश्चित काल के लिये स्थगित कर दिया गया है । मन्त्री

विविध समाचार

नि० भा० ३४ वें आयुर्वेद महासम्मेलन में सर्व सम्मति से स्वीकृत प्रस्ताव—

१—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन निम्न लिखित वैद्य महानुभावों की असामयिक मृत्यु पर शोक प्रकट करता है तथा दिवंगत आत्माओं को सद्गति के लिए परमात्मा से प्रार्थना करता है, आयुर्वेद विद्वान् श्रीयुत विक्लिगिरि आयंगर (मैसूर) श्रीयुत वैद्य एम० आर० हिरेमठ (बागलकोट), श्रीयुत वैद्य बो० जी० वामनाचार्य (गोलक), श्रीयुत कन्नुर बिट्टप्पा भण्डारी (मंगलौर), श्रीयुत रामचन्द्र जोशी वैद्य (शाहपुर), श्रीयुत जेठालाल देवशंकर वैद्य (अहमदाबाद), श्रीयुत वैद्य सेवाराम चतुर्भुज ओझा (करांची), श्रीयुत वैद्य छोटेलाल वि० पण्डित (करांची) (सभापति द्वारा)

२—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन आजाद हिन्द फौज के सात अवसरों पर चलाये गये अभियोग को शीघ्र वापस ले लेने के लिये सरकार से अनुरोध करता है तथा मुक्ति के लिये प्रार्थना करता है, क्योंकि उनका कार्य भारतवर्ष को स्वतन्त्र कराने के लिये था। (सभापति द्वारा)

३—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन भारतवर्ष के कलकत्ता. लाहौर, लखनऊ आदि अनेक स्थानों पर छात्रों द्वारा किये गये शांत और अहिंसात्मक प्रदर्शनों पर पुलिस द्वारा किये गये लाठी चार्ज और गोली चार्ज आदि की घोर निन्दा करता है तथा इस प्रकार मृत्यु प्राप्त छात्रों के परिवारों एवं छात्र संघों के साथ समवेदना प्रकट करता है।

(सभापति द्वारा)

४—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन आवश्यक समझता है कि आयुर्वेद पर व्याख्यानमाला प्रदान करने के लिये विश्वविद्यालयों की ओर से प्राप्त निमन्त्रणों को स्वीकार किया जाय।

(सभापति द्वारा)

५—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन निश्चय करता है कि देशी भाषा में प्लानिंग कमेटी का नाम 'योजना व रचना समिति' रखे।

६—विभिन्न स्थानों से आयुर्वेदिक डाइरेक्टरी के लिये प्राप्त प्रस्तावों को ध्यान में रखते हुए यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन निश्चय करता है कि ऐसी डाइरेक्टरी नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन द्वारा शीघ्र ही प्रकाशित की जाय।

७—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन निश्चय करता है कि मलाया की दुखी और पीड़ित जनता को चिकित्सा सम्बन्धी सहायता प्रदान करने के उद्देश्य से एक आयुर्वेदीय चिकित्सा सेवा दल (Ayurvedic Medical Mission) शीघ्र ही मलाया भेजा जावे और उसके लिये सब प्रकार की आवश्यक व्यवस्था महासम्मेलन करे। (इस प्रस्ताव पर विचार करने के लिये विषय निर्वाचनी समिति में विशेष रूप से आज्ञा लेनी पड़ी थी।)

८—(क) नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन निश्चय करता है कि आगामी चुनावों में मतदाता लोग, जिनमें से ९० प्रतिशत आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति से लाभ उठाते हैं, केवल उन्हीं उम्मीदवारों का समर्थन करें जो धारासभाओं में स्पष्ट रूप से आयुर्वेद का समर्थन करें।

(ख) यह नि० भा० आयुर्वेद महा सम्मेलन निश्चय करता है कि प्रान्तीय तथा अखिल भारतीय पार्लमेंटरी बोर्डों से प्रार्थना की जाय कि वे धारासभाओं के निर्वाचन के लिये योग्य आयुर्वेदीय वैद्यों को ही यथेष्ट संख्या में उम्मीदवार चुनें।

९—यह नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन अनुभव करता है कि भारतवर्ष की निर्धनता और रोग निष्पीड़न का प्रधान कारण देश में राष्ट्रीय सरकार का न होना है। अतः यह सम्मेलन अन्यों के साथ इस विषय में सहमत है कि केन्द्र तथा प्रान्तों में शीघ्र ही राष्ट्रीय सरकार की स्थापना की जाय।

१०—संस्कृत भाषैव भारतस्य राष्ट्र भाषा भवितुमर्हतीति वैद्यैः परस्परं व्यवहारे संस्कृत भाषैव व्यवहार्येति च महासम्मेलनमिदं श्रद्धया साग्रह सविश्वासं घोषयति।

११—संस्कृतभाषानिबद्धानां निबन्धानां विषयाणां च प्राधान्यार्थम् आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिकाया अधिकतरो भागः संस्कृत भाषायामेव प्रकटनीय इति महासम्मेलनमिदं निश्चिनोति ।

१२—आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका में संस्कृत को अधिक महत्व दिये जाने वाले प्रस्ताव की भावना के प्रति निष्ठा प्रदर्शित करते हुए, यह सम्मेलन निश्चय करता है कि आयुर्वेद तथा महासम्मेलन के अधिक व्यापक विचार के लिये यह आवश्यक है कि ज्यों ही धन सम्बन्धी सुविधा प्राप्त हो त्यों ही पत्रिका का एक अंग्रेजी संस्करण भी प्रकाशित करना आरम्भ कर दिया जाय ।

१३—इस सम्मेलन का विचार है कि आयुर्वेद भारतवर्ष की सर्वोच्च संस्कृतियों में से एक है तथा वह देश की चिकित्सा सम्बन्धी आवश्यकताओं के कारण होने वाले आर्थिक शोषण से भी भारतवर्ष को बचाता है, अतः प्रत्येक भारतीय को आयुर्वेद का कम से कम साधारण ज्ञान अवश्य प्राप्त करना चाहिये । इसी बात को ध्यान में रखते हुये, यह सम्मेलन निश्चित करता है कि बच्चों को आयुर्वेदीय सिद्धांतों एवं कर्माभ्यास का आरम्भिक ज्ञान प्राप्त कराने के लिये समुचित कार्यवाही की जाय ।

१४—यह सम्मेलन भारतवर्ष की प्रांतीय सरकारों तथा विश्वविद्यालय के अधिकारियों से निवेदन करता है कि वे स्कूलों में पढ़ाई जाने वाली स्वास्थ्य विज्ञान (हाईजीन) की पुस्तकों में आयुर्वेदीय सिद्धांतों का समावेश करें तथा उन्हें विश्वास दिलाता है कि यदि ऐसी पुस्तकों की मांग की गई तो यह आयुर्वेद महासम्मेलन सहर्ष ऐसी उपयोगी पुस्तकें तैयार करदेगा ।

क्रमशः ।

हर प्रकार के कठिन और असाध्य रोगों से थोड़े समय और
मामूली खर्च में छुटकारा पाने के लिये
"मिश्रा"
आयुर्वेदिक-इंजेक्शन
प्रयोग कीजिये
यहां इन्जेक्शन लगाने की शिक्षा भी दी जाती है ।
एजेन्टों की आवश्यकता है –
नियमादि मुफ्त मंगावें ।
सचित्र आयुर्वेदिक इन्जेक्शन विज्ञान पुस्तक मूल्य ५) पो० व्यय ।।)
जी० ए० मिश्रा, आयुर्वेदिक फार्मेसी (रजि०) झांसी
मौडर्न एडवर टाइज़र झांसी द्वारा प्रचारित ।

दवा के सच्चे मोती ।

वैद्यो !　　　　हकीमो !!　　　　तथा फार्मेसी वालो !!!

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा, जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारतवर्ष के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं, निहायत किफायत से मिलते है ! धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने का कृपा करें ।

पता- नगीनदास वीरचन्द जेवरी, ४४-४६, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३ ।

सार्प विज्ञानीय

यह अपूर्वग्रन्थ जो पहिले नहीं था हिन्दीभाषामें प्रकाशक है, इसमें स्थावर जंगम सब प्रकार के विष और विषैले जीवों के चरक, सुश्रुत, यूनानी डाक्टरी के अनुसार और अपने ५० वर्ष के अनुभव एवं बड़े २ उस्तादों के चमत्कारी सैकड़ों प्रयोग हैं। सर्पों की १०० जातियों की पहिचान और विष का प्रभाव, मन्त्र से विष का उतारना और सर्प से ही विष खिचवाना इत्यादि है। नि० भा० वैद्य सम्मेलन बीकानेर ने इस पर प्रमाण पत्र दिया है। मूल्य २) लागत मात्र। पोस्टव्यय ।।)

मिलने का पता—पं० कृपाशंकर शर्मा वैद्य शेखसराय बुलन्दशहर ।

विगत वर्षों की भांति "धन्वन्तरि त्रयोदशी व दीपावली" के शुभ अवसर पर हमने इस वर्ष भी विशेष उपहार देना स्वीकृत किया है, जिसकी अवधि दिवाली से होली तक सीमित है ।

मोती चूरा-

के ग्राहक इस विशेष अवसर से अवश्य लाभ उठावें। उपहार का विवरण इस प्रकार है ।

१० तोला मोती चूरा नं० १ के ग्राहक को १ मशीन रस निचोड़ने की जो १ घण्टे में करीब १ मन रस निचोड़ सकती है ।

१० तोला मोती चूरा नं० २ के ग्राहक को १ मशीन टिकिया (टेब्लेट) बनाने की जो १ घण्टे में करीब २०० टिकियां अति सुन्दर बना सकती है ।

१० तोला मोती चूरा नं० ३ के ग्राहक को १ वर्ष तक धन्वन्तरि-पत्रिका निःशुल्क भेजी जावेगी ।

ध्यान रखिये ?

मोती चूरा बहुमूल्य मोतियों का छीलन होने के कारण बाजारू साधारण मोतियों से श्रेष्ठ होता है। भाव निम्न प्रकार है—

मोती चूरा नं० १-२-३ का क्रमशः १०) रु०, ८) रु० व ६) रु० प्रति तोला है ।

रघुवरदयाल वैद्य, दयालु आयु० फार्मेसी, चन्दवारगेट, फिरोजाबाद, यू. पी.

AYURVEDIC INJECTIONS

PREPARED AT INDIA'S PIONEER
AYURVEDIC LABORATORY
(Established in A. D. 1914)
THE APOLLO PHARMACY
MANUFACTURING CHEMISTS
P. O. JHARIA, E. I. Rly.

BRANCHES & AGENCIES

Ahmedabad, Ajmer. Anjar Cutch, Bangalore City, Baroda, Bavla, Belgaum. Bhavnagar, Bombay, Botad, Broach, Cairo (Egypt), Cawnpore, Chhindwara, Chuda, Davangere, Devpur, Dhandhuka, Dhrol Ilkal, Jammu, Jamnagar, Jodia, Kapadwanj, Karachi, Kosamba, Lahore, Lakhtar Latur, Limbdi, Marwar-Mundwa, Mehsana, Morvi, Nadiad, Nairobi (East Africa) Nasik City, Palitana, Patan, Patna, Patiala, Rajkot, Raver, Srinagar-Kashmir, Secundrabad, Shiroda, Sihore. Surat, Visnagar, Wadrhwan Camp and City

Apollo injections are being used by many leading physicians and surgeons of India, who are interested in the Indian system of medicine. This is the only Indian laboratory well known for its high standard of accuracy and purity. Some leaders of Ayurvedic Congress have praised our products with open hearts.

Our products are available from your city agent at our fixed rates. They are highly beneficial and used with success by millions of people throughout India and abroad.

Medical practitioners get reasonable commission. For further details see our agent or write to the Pharmacy. We are to appoint more agents in non represented areas

आयुर्वेदिक इन्जेक्शन्स

दि अपोलो फार्मेसी, झरिया ई० आई० आर०

अपोलो आयुर्वेदिक इन्जेक्शन्स लाखों रोगियों पर परीक्षित किये गये हैं। अल्प मूल्य होने पर भी अधिक गुणकारी है। भारतवर्ष के आयुर्वेद के महान् नेताओं ने उनकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। आप अपने शहर के हमारे एजेन्ट से खरीद कर थोड़े व्यय में ही आरोग्यता प्राप्त कीजिये। आपके यहां न मिलने पर फार्मेसी से मंगवालें, विशेष विवरण हमारे एजेन्ट द्वारा ज्ञात करें।

WAR-- TIME BRANCH---OFFICE
THE APOLLO PHARMACY
P. O. BOX NO. 93, BARODA.

बहुत बड़े अभाव की पूर्ति

आयुर्वेद संसार को अभूतपूर्व दान

सचित्र शरीर क्रिया विज्ञान

प्रकाशित हो गया।

आयुर्वेद की उन्नति की उत्कट अभिलाषा के कारण ही इस दुर्लभ ग्रन्थ का प्रकाशन युद्ध की इस संकट-घड़ी में किया गया है, जबकि एक-एक सीट कागज के लिये कितनी कठिनाई उठानी पड़ रही है, यह सर्व विदित है।

आयुर्वेद में यह प्रथम स्तुत्य प्रयास हुआ है। इससे आयुर्वेद के एक प्रधान अङ्ग की पूर्ति हुई है। वैद्यों पर डाक्टरों का यह आक्षेप रहा है कि वे शारीरिक ज्ञान से हीन चिकित्सक होते हैं। इस ग्रन्थ ने उन्हें मुंहतोड़ उत्तर दिया है।

अभी तक शरीर क्रिया के बारे में आयुर्वेद में जो कुछ लिखा गया था वह अंग्रेजी ग्रन्थों का अनुवाद मात्र था। जिसका असर आयुर्वेद के छात्रों पर यह होता था कि वे आयुर्वेद को हीन मानने लगते थे।

इस ग्रन्थ के उदीयमान लेखक आयुर्वेदालंकार श्री रंजीतराय ने आयुर्वेद सिद्धान्त के आधार पर इसे मौलिक रूप में लिखा है। जो आयुर्वेद की श्रेष्ठता का द्योतक है। जिन्हें अंग्रेजी के फिजियालोजी का ज्ञान है वे यदि इस ग्रन्थ को पढ़ेंगे तो देखेंगे कि विदेशी विज्ञान आयुर्वेद से बड़ा नहीं है। इस ग्रन्थ में इस विषय का व्योरावद्ध वर्णन है कि शरीर का कौन सा अङ्ग क्या काम करता है? चिकित्सक के लिये यह जानना अत्यावश्यक है।

अंग्रेजी में तो इस प्रकार के ग्रन्थों का मूल्य पन्द्रह-बीस रुपये से कम होता ही नहीं है। हिन्दी और संस्कृत में भी अनुवाद ग्रन्थ का ही काफी मूल्य है। लेकिन हमने आयुर्वेद की सेवा के ख्याल से इसका मूल्य बहुत कम रक्खा है। ५२ अध्याय, डिमाई १/८ साइज के ६०० पृष्ठ जिनमें ५३ चित्र हैं, का मूल्य सिर्फ ६) रु० रखा गया है। डाक व्यय ।।।≡) हैं। पेशगी के साथ आर्डर भेजकर शीघ्र ग्रन्थ मंगवा लें, नहीं तो दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करनी होगी।

अस्थायी हेड आफिस—
कदम कूआं पटना।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन,
कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

नोट—आयुर्वेद के छात्र ५) रु० में ही यह ग्रन्थ पा सकते हैं, यदि वे अपने अध्यापक के पत्र के साथ पूरा मूल्य अग्रिम भेज देंगे। उन्हें डाक व्यय नहीं लगेगा।

आयुर्वेद शास्त्र का अपूर्व ग्रन्थ

भारत भैषज्य रत्नाकर

इस ग्रन्थ में रस, भस्म, गुटिका, आसव, उपभस्में, चूर्ण, क्वाथ, तैल, घृत आदि समस्त प्रकार के लगभग दस हजार प्रयोगों का चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट, भावप्रकाश, शार्ङ्गधर, रसराजसुन्दर, रसतरंगिणी आदि प्राचीन और अर्वाचीन ग्रन्थों से संग्रह किया गया है। इसको पास रखने से अन्य किसी ग्रन्थ को पास रखने की आवश्यकता नहीं है। इस ग्रन्थ के पीछे चिकित्सा पथ प्रदर्शनी भी दी है। जिससे मालूम होजाय कि किस २ रोग में कौन २ सी दवाइयां प्रयोग करना श्रेय है। यह शीघ्र मालूम हो सके। यह ग्रन्थ वैद्यों, विद्यार्थी, औषधालय, फार्मेसी आदि सबको अत्यन्त उपयोगी है।

प्रथम भाग परिशिष्ट सहित १०) रुपया। द्वितीय भाग ८) रुपया।
तृतीय भाग १०) रुपया। चतुर्थ भाग १०) रुपया। पंचम भाग ८) रुपया।

पांचों भाग एक साथ खरीदने पर ४०) रु० होगा और

वैद्यक-शब्द-सिंधि भेंट की जाती है।

(आर्डर के साथ १०) अवश्य भेजें)

पता—उंझा फार्मेसी लि० उंझा (उ० गुजरात)

आप भी लखपती बन जाइये

सुगन्धित तैलों के नुस्खे— ले० वैद्यभूषण श्री मोहनलाल कोठारी लेखक ने हजारों रुपये व्यय करके देश की सभी प्रसिद्ध २ तैलों के नुस्खे प्राप्त किये हैं और अपने बीस साल के अनुभव को हृदय खोलकर जनता के सामने रख दिया है। नुस्खे इस पुस्तक में सैकड़ों तैलों के दिये गये हैं, जिसमें कुछ के नाम ये हैं—हिममागर तैल, केशराज तैल, बुद्धिवर्द्धक तैल, मनमोहनी तैल, कलकत्ते के डा० नगेन्द्रनाथ सेन को करोड़पती बनाने वाला केशरंजन तैल, हिमकल्याण तैल, पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री को लखपती बनाने वाला ब्राह्मी-विलास तैल, मालती तैल आदि तैलों के साफ करने और खुशबुओं को देने का भी विधान समझा दिया गया है। मूल्य सिर्फ २) डा० मह० ॥)

शर्बतों का रोजगार—(लेखक बा० पीतमलाल जी एम० एस० सी० एल० एल० बी० एडवोकेट, गर्मियों में पीने वाले बहारदार शर्बतों और सोडा-वाटर बनाने का विधान और अनेकों नुस्खे दिये गये हैं। मूल्य २) डा० म० ॥)

सामुद्रिक विद्या- (लेखक पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री) मुख आदि अङ्गों की देख कर ही चोर, ठग, नेक, बद, धनी, निर्धन, बांझ, विधवा, जिन्दगी और मौत की बात आप बता सकते हैं। हाथ देखने की विद्या का भी पूरा वर्णन है। लिंयो के लगभग ५० चित्र २५० पृष्ठ के मूल्य सिर्फ ३) डाक महसूल ॥)

पते चाहिये

विशेषतया वैद्यों, हकीमों डाक्टरों, अत्तारों, पंसारियों तथा व्यापारियों, बजाजों आदि के २५ पते भेजने वाले सज्जनों को हम ॥) के टिकिट भेंट करेंगे। अथवा हमारे यहां की कोई भी पुस्तक खरीदने पर हम ॥) की रियायत देंगे।

फन पेन्ट्री—इस पुस्तक को पढ़कर साइनबोर्ड बनाना सीखकर १०)-१५) रोज पैदा कीजिये। मूल्य १) रु० डाक मह० ॥)

मंगाने का पता—पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री, ब्राह्मी औषधालय, अलीगढ़।

भारत की जड़ी बूटियों द्वारा वैज्ञानिक ढंग पर निर्मित विशुद्ध

"अवध"

आयुर्वेदिक-इंजैक्शन

[रजिस्टर्ड]

अवध आयुर्वेदिक इंजैक्शन आम जनता पर जैसे पोस्ट, रेलवे, जेल, बैंक और गांधी समिति के धर्मार्थ औषधालयों के रोगियों आदि पर हमारे इंजैक्शन्स पूर्ण लाभप्रद प्रमाणित हुये हैं। आशा है वैद्य, डाक्टर और हकीम गण हमारे इंजैक्शन्स काम में लाकर धर्म और यश कमायेंगे।

पता—डा० बी० एस० शर्मा, अवध आयुर्वेदिक इन्जैक्शन फार्मेसी,
सहिजाबाद रोड, हैदराबाद (सिन्ध)

"इन्जैक्शन्स"

हमारी फार्मेसी के अपने निज अनुभव से तयार किये हुये शतप्रतिशत फलप्रद इन्जैक्शन्स से सैकड़ों मरीजों ने शर्तिया लाभ उठाया है।

उदार शर्तों से एजेन्सी के लिये लिखें। एजेन्सी के नियम व प्राइस-लिस्ट (सूचीपत्र) मुफ्त मंगावें।

पता—मैनेजिंग डाइरेक्टर—

पाराशरी फार्मेसी, चनस्मा, जी. बी. एस. रेलवे।

फकीरी गुप्त रहस्य–

यह पुस्तक अनुभूत प्रयोगों का भण्डार है, स्त्री पुरुषों के गुप्त रोगों की चिकित्सा विधि, जिसे सर्व साधारण आदमी गुप्त रोगों का इलाज करके हजारों रुपया कमा सकता है। प्रयोग सभी तत्कालीन प्रभावशाली और शतशः अनुभूत है। इस पुस्तक में वही प्रयोग लिखे गये हैं, जो अनेक बार कसौटी पर परखे जाचुके हैं। इस पुस्तक के पास रहने से किसी वैद्य की आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि यह स्वयं ही घर का वैद्य है, जिस औषधालय में यह पुस्तक नहीं है उसका औषधालय अधूरा ही है, इसमें फकीरों के खास प्रयोग है। लेखक ने सागर को गागर में बन्द कर दिया है। इतने बड़े उपयोगी ग्रन्थ का मूल्य केवल ३॥-)॥ डाक व्यय पैकिंग॥)॥

पेटेन्ट औषधियां–

इस पुस्तक में सब प्रकार के धड़ाधड़ बिकने वाली पेटेन्ट औषधियों के सच्चे प्रयोग लिखे गये हैं, जिन्हें बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीखकर साधारण पूंजी में तैयार कीजिए, इस पुस्तक द्वारा सैकड़ों रुपये मासिक की स्थायी आमदनी पैदा कर सकते हैं। मूल्य ६७६ प्रयोग ४) डाक व्यय ।≡)

पता—जीवन बन्धु कार्यालय, संगरिया (बीकानेर)

आश्चर्य जनक आविष्कार **कालाजार** हजारों बार का परीक्षित !!

आयुर्वेदिक- **इञ्जेक्शन से-**

केवल ४-६ इन्जेक्शनों में कालाजार ज्वर, तीहा व यकृत एकदम निर्मूल हो जाता है। फायदा न हो तो दाम वापिस। यहां से स्वल्प खर्च में इन्जेक्शन देना सीख कर डिप्लोमा भी प्राप्त कर सकते हैं।

शर्तिया आराम

स्टोकिस्ट-दि नेशनल आयुर्वेदिक कालेज (रजिस्टर्ड) गोल बाजार,
समस्तीपुर O. T. Ry.

यदि आपको आयुर्वेदिक इञ्जेक्शनों का—

हजारों बार का परीक्षित **अद्भुत चमत्कार** अपूर्व उत्कृष्ट आविष्कार

देखना है तो निम्न पते से ही प्रत्येक रोगों का इंजेक्शन मंगाकर धन व यश के भागी बनें

आयुर्वेदिक कुनैन इञ्जेक्शन

केवल १ इंजेक्शन में मलेरिया लापता हो जाता है। एलोपैथी कुनैन से विशेष लाभदायक है। इसे बड़े २ वैद्य डाक्टरों ने आजमाकर मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। परीक्षा प्रार्थनीय है।

दी आयुर्वेदिक इञ्जेक्शन सप्लाई एजेन्सी, मंगलगढ़ (दरभंगा)

हिन्दी में अपने ढङ्ग की एक ही मासिक पत्रिका

जननी

❀ गृहस्थों और महिलाओं के लिये ❀

१—विशुद्ध सांस्कृतिक, धार्मिक और सामाजिक साहित्य प्रदान करती है।
२—महिलाओं को सदाचार और नीति की शिक्षा देती है।
३—घरेलू धन्धे, बच्चों का पालन, माता-पिता, सास-ससुर और पति-सेवा का पाठ पढ़ाती है।
४—पति पत्नी के कर्तव्यों को बतलाती है।
५—हर प्रकार से घर को स्वर्ग और गृहिणी को गृहलक्ष्मी बनाने का उद्योग करती है।
६—बहू, बेटियां निःसंकोच भाव से इसे बड़े चाव से पढ़ती हैं।

यदि आप आर्य-संस्कृति और आर्य महिलाओं को सुरक्षित और उन्नतिशील बनाना चाहते हैं तो हमारी प्रार्थना है,

——जननी को अवश्य अपनाइये——

वार्षिक मूल्य ४॥)

प्रत्येक हिन्दू परिवार को जननी का ग्राहक बनना चाहिये !

पता—जननी कार्यालय इलाहाबाद।

वैद्यों के लिए उत्तमोत्तम नवीन पुस्तकें-

हमारा भोजन—सचमुच भोजन ही जीवन और भोजन ही मृत्यु भी है, जीवनदायक भोजन क्या है ? कैसे किया जाय ? रोग निवारक शक्ति कैसे बढ़े ? आदि प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक में पढ़िये। मूल्य ४)

दूध चिकित्सा—दूध सम्बन्धी सभी जानकारी की बातें सरल भाषा में दी गई हैं। दूध के विषय में आयुर्वेदीय और वैज्ञानिकों के द्वारा आजतक जितनी खोज हुई है उन सबका वर्णन इसमें है। मूल्य ४)

तपेदिक (राजयक्ष्मा)—तपेदिक से होने वाली सभी बातों का वर्णन सरल भाषा में किया गया है। इस भयङ्कर संक्रामक रोग से बचने के लिये इसकी १-१ प्रति प्रत्येक घर में रहना चाहिये। मूल्य ४)

रुग्ण परिचर्या—इस पुस्तक में रोगियों के रोग परीक्षणार्थ जैसे मूत्र परीक्षा, रक्त परीक्षा फुफ्फुस परीक्षा आदि २ परीक्षाओं की प्रक्रिया का सचित्र वर्णन है। इस पुस्तक की सहायता से वैद्य बड़ी सुविधि पूर्वक रोगी की परीक्षा द्वारा निदान कर चिकित्सा करने में सफल हो सकते हैं। हिन्दी में आज तक ऐसी कोई भी पुस्तक प्रकाशित नहीं हुई है। मूल्य ३।।)

वैद्य सहचर—(तृतीय संस्करण) यथा नाम तथा गुणः। वास्तव में यह पुस्तक वैद्यों के लिये सहचर रूप में ही प्रमाणित हुई है। मूल्य अजिल्द २।।) सजिल्द ३।।)

त्रिदोषालोक—आयुर्वेद की भित्ति त्रिदोष सिद्धांत पर होने वाले सभी आक्षेपों का मुंह तोड़ उत्तर दिया गया है। मूल्य २।।)

फलाहार चिकित्सा—फलों द्वारा किस प्रकार चिकित्सा होती है, इनमें कौन २ गुण हैं आदि बातों पर पूर्ण अनुभव के साथ प्रकाश डाला गया है। मू० २।)

आंख का अचूक इलाज—चश्मा छोड़ने की अनुभूत विधि बतलाने वाली आपकी आंख में कोई रोग हो हर हालत में यह पुस्तक आपकी सहायता करेगी। मूल्य २)

स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियां—शाक तरकारी के विषय में आयुर्वेदीय और वैज्ञानिक तथा प्राकृतिक चिकित्सा के अनुभव के आधार पर लिखी गई पुस्तक। मूल्य १।।)

जुकाम—इसमें जुकाम, ब्रोंकाइटिस, दमा, खांसी, निमोनियां, इन्फ्लुएञ्जा आदि रोगों का अनुभूत चिकित्सा वर्णित हैं। मूल्य १।।)

मठा उसके गुण तथा उपयोग (तृतीय संस्करण)—मठे से सभी तरह स्वास्थ्य कैसे बनता है। इसका सविस्तार वर्णन इसमें पढ़िये। मूल्य ।।=)

पता--धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (

–धन्वन्तरि वर्ष २१ का अभूतपूर्व विशेषांक–

रक्त-रोगांक

इसमें भारत के मान्य वैद्यों के रक्त रोग और कुष्ठ पर विवेचनात्मक और चिकित्सा युक्त लेख रहेंगे। दर्जनों रङ्गीन तथा सादे चित्र होंगे। अभी से तैयारियां आरम्भ कर दी गई हैं। जून जौलाई मास में ग्राहकों की सेवा में भेज दिया जायगा, यह विशेषांक धन्वन्तरि के ग्राहकों को मुफ्त मिलेगा। अतः ५≡) भेजकर अभी से धन्वन्तरि के ग्राहक बन जांय।

IF NOT DELIVERED PLEASE RETURN TO—

DHANWANTARI KARYALAYA, BIJAIGARH (ALIGARH)

श्रीमान्—

२८०३

श्री० पुस्तक
गुरुकुल वि
रुकुल कांगड़ी (

पता—जननी

A. 285.

—धन्वन्तरि वर्ष २१ का अभूतपूर्व विशेषांक—

धन्वन्तरि

भाग २०
अङ्क ११

—सम्पादक—
वैद्य बांकेलाल गुप्त—वैद्य देवीशरण गर्ग।

अप्रैल
१९४६

विषय-सूची

१-कविता ६३३
२-सम्पादकीय ६३४
३-वैद्य बनाम वैद्य सर्जन ६३५
४-प्रलापक ज्वर ६३८
५-मधुमेह चिकित्सा ६४३
६-यकृद्दाल्युदर
७-मदनफल
८-वैद्यों से परामर्श
९-विविध समाचार

युक्त प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन द्वारा आयोजित

५००) पांच सौ रुपये का

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक

उन व्यक्ति को, यु० प्रा० वैद्य सम्मेलन के सत्रहवें वार्षिक अधिवेशन के शुभावसर पर प्रदान किया जायगा, जिसकी लिखित आयुर्वेद विषयक पुस्तक सर्वोत्तम मानी जायगी। इसके लिये हिन्दी या संस्कृत में सन् १९३५ तक की प्रकाशित पुस्तकों की पांच २ प्रतियां कार्यालय में ३१ जौलाई सन् १९४६ तक आजानी चाहिये।

नोट—पुस्तकें रेल द्वारा "रती का नगला B. B, & C I. Ry. पर या सासनी E. I. Ry" पर पेड बिल्टी द्वारा भेजनी चाहिये।

पत्र व्यवहार और नियमावली मंगाने का पता—

व्यवस्थापक—

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक समिति कार्यालय,
विजयगढ़ (अलीगढ़) यू० पी०

Printed and Published by B. L. Gupta at the Dhanwantari Press, Bijaigarh.

३२, ३३, और ३४ वें
अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन
के
लगातार तीन बार चुने गये

सभापति

श्री० राजवैद्य, कविराज मणीन्द्रकुमार मुखर्जी बी. ए.
आयुर्वेद शास्त्री, कविशेखर, प्राणाचार्य, वैद्यवाचस्पति
कलकत्ता।

Approved by Dept. of Public Instructions of Central & Provinces Berar.

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

MURARIHAR AGRA

धन्वन्तरि

या ओषधी पूर्वा जाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनैनु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

भाग २०

सचित्र
मासिक पत्र

अङ्क ११

उद्बोधन

प्राणाचार्य ! निवारो, जगती तल के आर्त-जनों की पीर ।
बाधायें हैं बहुत मार्ग भी विकट किन्तु होना न अधीर ।
आयुर्वेद-पताका लहराये जग में फैले सु प्रकाश ।
होकर 'चरक' समान चिकित्सक 'धन्वन्तरि' की पूरो आश ।

× × × ×

जीतो रोग, हरो मृत्यू-भय, दो वसुधा को, जीवन दान ।
शल्य-चिकित्सा 'सुश्रुत' की, भूलो न, करो 'आरोग्य' प्रदान ।
क्या ? 'महर्षि वाग्भट' के भूले, वैद्यराज ! सुन्दर उपदेश ।
भोले, भूले, वैद्य ! न भूलो, जगती को दो नव सन्देश ।

रचयिता—रायबहादुर 'पाण्डेय' विजयगढ़ (अलीगढ़)

सम्पादकीय-

अपनी बात-

वर्तमान कालीन महायुद्धजन्यविकट परिस्थिति के कारण जब प्रायः सभी चीजों के दाम तिगुने चौगुने हो गये हैं, तब इधर पत्र प्रकाशन के काम में आने वाली चीजों की तेजी में तो हद ही हो गई है। यदि इतना ही होता तो भी गनीमत थी किन्तु उस तेज भाव में भी चीजों का यथेष्ट रूप में मिलना असम्भव हो गया है।

इस विकटता के कारण अनेकों पत्र अपना अस्तित्व भविष्य को भेंट कर चुके हैं। परन्तु हम ने इन कठिन भीषण परिस्थितियों का दृढ़ता से सामना करते हुये अपार धनराशि खर्च करके धन्वन्तरि को सिर्फ बचाया ही नहीं अपितु आयुर्वेदीय सत्ता का भी रक्षा करने का भरसक प्रयत्न किया है। यही कारण है कि आज आयुर्वेदीय पत्रों का तो कहना ही क्या, हिन्दी के भी मासिक पत्रों में दो ही एक पत्र ऐसे होंगे जो धन्वन्तरि का मुकाबला कर सकें। मैं अपने पाठकों को विश्वास दिलाना चाहता हूं कि मैं जो नई स्कीम बनाने जा रहा हूं यदि उसमें हमें कुछ भी सफलता मिल गई तो समस्त विश्व भर में धन्वन्तरि द्वारा आयुर्वेद का झण्डा लहराता हुआ दिखाई देगा।

सम्प्रति किन २ कठिनाइयों का हमें सामना करना पड़ता है। यहां लिखकर व्यर्थ में हम अपने पाठकों के दिल दुखाना नहीं चाहते। मैं आप लोगों से सिर्फ यही निवेदन कर देना चाहता हूं कि—

धन्वन्तरि का २० वां वर्ष—

अगले १२ वें अङ्क (मई) में यह वर्ष समाप्त होजायगा और २१ वें वर्ष प्रारम्भ होजायगा। इस वर्ष का विशेषाङ्क "रक्तरोगाङ्क" अभूतपूर्व होगा, इस में दर्जनों रङ्गीन तथा सादे चित्र होंगे, "रक्तरोग और कुष्ठ रोग का विशद विवेचन इस अङ्क में रहेगा। भारतवर्ष के जितने लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान वैद्य हैं, प्रायः सबों ने इस विशेषांक में सहर्ष भाग लिया है। बहुतों के लेख भी आ गये हैं और बराबर आ रहे हैं। समागत लेखों से ज्ञात होता है कि यह विशेषाङ्क अभूतपूर्व होगा।

"रक्तरोगाङ्क" में आपको अनेकों चित्र देखने को मिलेंगे, साथ ही मैं अभी से इसके लिये प्रयत्न कर रहा हूं कि "रक्तरोगाङ्क" ठीक समय पर ही पाठकों को मिले।

आवश्यकीय सूचना

मैं धन्वन्तरि के समस्त ग्राहकों के प्रति निवेदन कर देना चाहता हूं कि वे अगले (२१ वें) वर्ष का चन्दा जून के अन्तिम सप्ताह तक भेज दें, हम प्रत्येक को रसीद तुरन्त ही भेज देंगे। यदि १५ दिन तक आपको रसीद न मिले तो आप मनियार्डर रसीद भेजकर अपनी रसीद कार्यालय से मंगा लें, अन्यथा हम उत्तरदायी नहीं होंगे। मनियार्डर रसीद के बिना हम भी इनकारी करने में असमर्थ होंगे और न उत्तर ही दे सकेंगे।

"रक्तरोगाङ्क" सम्भवतः जौलाई के अन्त में भेजना प्रारम्भ हो जायगा और प्रथम रजिष्ट्री द्वारा उनको ही भेजा जायगा जिनका मनिआर्डर आजावेगा, यदि बचेगा तो वी० पी० की जायगी। कागज की कमी से उतना ही छपेगा लाचारी है, अतः पुनः प्रार्थना है कि अपना मनिआर्डर शीघ्र भेजदें, अन्यथा 'क्षयरोगाङ्क' की तरह ही आप फिर रह जावेंगे।

—वैद्य बांकेलाल गुप्त।

वैद्य बनाम वैद्य सर्जन

लेखक—श्री० पं० ताराशङ्कर जी मिश्र वैद्य, काशी।

सरकार की दूषित नीति, राष्ट्र के कर्णधारों की उपेक्षा एवं वैद्य की उदासीनता ये ऐसी कठिन समस्याएं हैं जो आयुर्वेद की सत्ता को मिटाने के लिए पर्याप्त हैं। कष्ट की बात यह है कि ये समस्याएं सुलझ भी नहीं पायी थीं कि इन्हीं के परिणाम स्वरूप एक और भयंकर समस्या मुंह बाकर सामने आ खड़ी हो गयी है। वह है वैद्य सार्जनों की समस्या! वैद्य सर्जनों शब्द का अभिप्राय उन्हीं (वैद्य सर्जनों) की जबानी सरकार द्वारा प्रोत्साहित एलोपैथी मिश्रित आयुर्वेद की शिक्षा देने वाले विद्यालयों के स्नातकों से है। अतः ऐसे स्नातकों की संख्या अत्यन्त अल्प है एवं इनमें अधिकांश अपने को डाक्टर, आचार्य, वैद्य और कविराज लिखते हैं अतः जन साधारण में इस शब्द का प्रचार अभी तक नहीं हो पाया और न इसकी व्यापक समीक्षा ही मेरे सामने आ पायी। मैं नहीं जानता कि यह शब्द किस ग्रन्थ से उद्भूत हुआ एवं यह आर्ष है या अनार्ष? संस्कृत साहित्य के जिस व्यापक व्याकरण से मियां, मौला और मौलान सिद्ध होता है उसी व्याकरण से इसकी सिद्ध भी अभीष्ट अर्थ में की जा सकती है। यह भी सम्भव है कि सरकार द्वारा आदर प्राप्त आंग्ल भाषा के व्यापक सर्जन (चीर फाड़ करने वाला) शब्द के दृष्टिकोण से यह किसी मस्तिष्क की नयी उपज हो क्योंकि इन स्नातकों को कुछ वैद्यक एवं कुछ सर्जरी दोनों की शिक्षा साथ ही मिलती है। यद्यपि सर्जरी के सर्व श्रेष्ठ ग्रन्थ सुश्रुत संहिता में वैद्य शब्द में ही सर्जरी करने वाले का अभिप्राय निहित है अतः वैद्य और सर्जन दोनों शब्दों का मेल ठीक नहीं प्रतीत होता, तथापि वैद्यों के चीर फाड़ छोड़ देने के कारण वैद्येतर बनकर जनता के सामने आने एवं अलग से अपने अधिकारों की मांग करने के लिये यह संज्ञा अनुचित नहीं कही जा सकती।

अलग इसलिए कि ये अपने को वैद्यों से एक दम भिन्न समझते हैं और इसी दृष्टिकोण से अपनी मांगें उपस्थित करते हैं। प्रान्तीय सरकार द्वारा प्रदत्त सभी सहायताएं एवं सुविधाएं उसी संस्था या औषधालय को मिलेगी जो अपने यहां वैद्य सर्जनों को रखे। यह सरकार का आदेश है जिसके परिणाम स्वरूप लोकल बोर्डों और ग्राम सुधार स्कीम के औषधालयों एवं अन्यान्य सरकारी सहायता प्राप्त औषधालयों में वैद्यों का प्रवेश प्राप्त न हो सकेगा। अभी एक आर्डिनेन्स के द्वारा वैद्य सर्जन उत्पन्न करने वाले विद्यालयों के अतिरिक्त अन्यान्य आयुर्वेदीय संस्थाओं (गुरुकुल कांगड़ी, अखिल भारतीय वैद्य सम्मेलन, अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन आदि) के स्नातकों तथा पुरातन प्रणाली के विद्वान वैद्यों की रजिस्ट्री बन्द कर दी गई। यह सब वैद्य सर्जनों की मांग एवं उनके सहयोगियों द्वारा सरकार की दिये गये सुझावों का ही फल है। ऐसा प्रचार वैद्यों एवं जन साधारण में फैल गया है। यतः सरकार की उक्त कारवाइयों से केवल वैद्य सर्जनों की स्वार्थ सिद्ध होती है एवं अखिल भारतीय वैद्य-संसार के विरोध करने पर भी वैद्य सर्जनों की ओर से इसका जरा भी विरोध नहीं किया, गया प्रत्युत एतन्निमित्त हर्ष प्रकाशित कर सरकार को बधाइयां दी गयीं। अतः उक्त प्रकार के प्रचार को

निर्मूल नहीं कहा जा सकता। सरकार के उपर्युक्त कुकृत्यों में वैद्य सर्जनों के सहयोग का एक प्रबल प्रमाण उस समय उपस्थित होता है जब युक्तप्रान्तीय वैद्य सम्मेलन के अधिवेशन के अवसर पर वैद्य सर्जनों की संस्था के उत्सव में एक प्रस्ताव स्वीकृत कर वैद्यों के चिकित्सा व्यवसाय को भी बन्द करा देने की उपहासास्पद प्रार्थना सरकार से की गयी। कितनी लज्जास्पद आयुर्वेद विघातक मनोवृत्ति है ? आश्चर्य की बात तो यह है कि वैद्य सर्जनों के आयुर्वेद प्रेमी अध्यापक उनकी उद्दण्डता से परेशान होने के भय से उनके कुकृत्यों का विरोध नहीं करते और यदि कुछ विरोध भी करते हैं तो एलोपैथ गुरुओं के फेर में पड़े हुए वैद्य सर्जन उनकी ओर ध्यान भी नहीं देते। तमाशा तो यह है कि वस्तुतः जिन अधिकारों के लिए इन्हें लड़ना चाहिये वहां ये मौन हो जाते हैं। इन्हें सरकारी अस्पतालों और मेडीकल विभागों पर कब्जा करना चाहिये। लोकल बोर्डों एवं असेम्बलियों में वैद्य नाम से उम्मेदवार होना चाहिये। बीमा कम्पनियों में डाक्टरों की जगह पर भाग लेना चाहिये क्योंकि इनकी शिक्षा इस योग्य है कि उक्त प्रकार के कार्यों का निर्वाह येन केन प्रकारेण कर सकते हैं एवं तन्निमित्त आन्दोलन की क्षमता भी इनमें है। उक्त स्थानों में एलोपैथ जम कर आयुर्वेद को भीषण हानि पहुंचाते हैं। अतः वैद्य सर्जनों को उचित है कि वे अपनी शक्ति को वैद्यों के अधिकारों की ओर से मोड़कर दूसरी ओर लगावें।

हाल में ही हिन्दू विश्वविद्यालय के मेडिकल अफसर के पद पर एक एलोपैथ को सुशोभित किया गया है और वहां के स्वास्थ्य विभाग की अधिकां व्यवस्था एलोपैथ के हाथ में है। हम यह जान चाहते हैं कि इस विषय में वहां के आयुर्वेद विद्या लय के अधिकारियों तथा वैद्य सर्जनों ने क्या किया है। वहां के वैद्य अध्यापक, जो बाहर के वैद्यों संघटित होकर लड़ने का उपदेश देते हैं, इस विष में क्यों मौन हैं ?

इस प्रकार उनके अधिकांश कृत्यों तथा आचरणों से विदित होता है कि उनका अधिक झुकाव एलोपैथी की ओर है और वे आयुर्वेद के होकर उसको एलोपैथी के हाथ बेच देना चाहते हैं।

और वैद्य ? ये शिथिल हैं। अपने समय को ये इधर रत्तीमात्र भी नहीं देना चाहते। आयुर्वेद के विरोध का विरोध करने के लिये इनके पास न तो पैसे हैं और न संघटन शक्ति ही। आयुर्वेदविरोधी अपने अधिकार के लिये लड़ते हैं, झगड़ते हैं और अनेक चालें चलते हैं पर ये झगड़े से दूर रहकर साधु बने रहना चाहते हैं। रोज ही तो आयुर्वेद की छाती पर अपने और पराये ताण्डव नृत्य करते पर ये आयुर्वेद की रोटी खाकर तमाशा देखते हैं। अभी भी वैद्य अपने प्रभाव एवं स्वार्थ का चतुर्थांश आयुर्वेद विरोधियों को जवाब देने तथा आयुर्वेद की उन्नति में लगा दें तो बहुत अधिक कार्य हो।

अन्त में हम वैद्य सर्जनों से अनुरोध करते हैं कि आप आयुर्वेदीय गृह के दीपक होकर उसमें आग न लगायें। आपकी वास्तविक लड़ाई एलोपैथी से है, वैद्यों से नहीं। आप वैद्यों के अधिकारों में से हिस्सा लें, पर सम्पूर्ण हड़पने की चेष्टा न करें। आपके कृत्यों से आयुर्वेदीय विद्यालयों में

तो एलोपैथी का प्रवेश अथच प्रभुत्व हो गया, आप एलोपैथी के विद्यालयों में आयुर्वेद का प्रवेश भी न करा सके। इस प्रकार आपकी आयुर्वेद सुधार की नीति से तो आयुर्वेद को धक्का लग रहा है, लाभ की कल्पना तो दूर है। आप पहिले अपने विद्यालयों में से एलोपैथों को निकाल बाहर करें, क्योंकि उनसे आयुर्वेद को प्रोत्साहन नहीं मिल रहा है। जिस प्रकार उन्होंने आपको आयुर्वेद से दूर कर दिया, उसी प्रकार वे आयुर्वेद के भावी कर्णधारों को बरगलाकर उनका मस्तिष्क आयुर्वेद विरोधी दिशा में फेर रहे हैं। यदि एलोपैथी साइन्स में कुछ सीखना आवश्यक है, तो उसे भी सिखाने का कार्य आयुर्वेदाभिमानी वैद्य सर्जनों को ही करना चाहिये। हिन्दू विश्वविद्यालयों में आयुर्वेद विद्यालय के रहते हुए वहां के स्वास्थ्य विभाग में एलोपैथों का कुछ भी हाथ न होना चाहिये। हां एक बात और! जिस प्रकार आयुर्वेदाचार्य के आगे दो अंग्रेजी अक्षर लगाने के लिये आपने प्रबल आन्दोलन किया था, उसी प्रकार ऐसा आन्दोलन कीजिये कि हिन्दू विश्वविद्यालय के भावी मेडिकल कालेज का निर्माण न हो सके।

इन कार्यों को पूर्ण करने के पश्चात् समस्त भारत एवं विश्व के एलोपैथों पर आपका आक्रमण कर आयुर्वेद के वास्तविक प्रभाव एवं स्वरूप को विश्व के सम्मुख रखना होगा।

और वैद्यों से भी प्रार्थना है कि वे यह सोचें कि औषधालय के बाहर भी दुनिया में आयुर्वेद को ठोकरें मारने का प्रयत्न किया जाता है। अतः उन्हें औषधालयों के बाहर भी आना चाहिये और अपने समय तथा पैसों को आयुर्वेद के निमित्त भी व्यय करना चाहिये।

हम चाहते हैं कि वैद्य और वैद्य सर्जन अपने अपने मार्ग को बदलें और एक दूसरे के अधिकारों की हत्या न कर वास्तविक शुभ कामना से प्रेरित होकर आयुर्वेद के अधिकारों की मांग के लिये प्रबल आन्दोलन करें।

एक अभूतपूर्व नवीन आविष्कार

विरेचनीय सुरमा

इस सुरमा को आंजने से नाक, आंख, आदि से दूषित मल निकल जाता है। यह रुके हुए जुकाम को साफ कर देता है। पुराना-नया सिर दर्द और प्रतिश्याय के लिये रामबाण है। मूल्य—१ तोला ५) रुपये। नमूना परीक्षार्थ –)॥ की टिकट पोस्ट व्यय के लिये आने से मुफ्त भेजा जाता है।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

प्रलापक ज्वर

लेखक—श्री० वैद्य सोहनलाल जी अग्रवाल, कृष्णगोपाल औषधालय, कालेडा (अजमेर)

यह तीव्र आशुकारी और भयङ्कर संक्रामक चौदह दिन का मुद्दती ताप है। इसके लक्षण आंत्रिक ज्वर से बहुत कुछ सामान्यता रखते हैं, इसलिये निदान में अक्सर भूल हो जाती है। क्योंकि इसमें सन्निपात के बहुत से लक्षण विद्यमान रहते हैं, इसलिये लक्षणों के अनुसार चिकित्सा करने में सफलता मिल जाती है परन्तु उचित रोग का निदान न होने से कभी २ चिकित्सक को निराश होना पड़ता है।

यह ज्वर सर्दी वाले गन्दे स्थानों में रहने वाले निर्धन मनुष्यों को होता है। आयुर्वेद में वर्णित सन्निपात ज्वर के प्रकार प्रलापक ज्वर से इसके लक्षण मिलते हैं। पाश्चात्य चिकित्सा शास्त्रों में इसका विशद विस्तृत विवेचन किया गया है। प्रलापक ज्वर समूह के अनेक उपविभाग किये हैं। इस रोग की सम्प्राप्ति कीटाणु विष (बिरम रिकेट्सिया) से होती है। यह रोग छोटे बड़े सबको होता है किन्तु युवा और वृद्ध इसके वशीभूत सरलता से हो जाते हैं। इस रोग में विशेषतः मलावरोध रहता है। अतिसार क्वचित ही होता है, मुंह मलिन सा भासता है, होठ और दांतों पर मल जम जाता है, इस रोग में पिटिकायें निकलती हैं जिनकी जड़ अन्तर त्वचा में होती है। इससे मृत्यु होने पर भी इसके धब्बे रह जाते हैं।

कल्पित वर्गीकरण—

इस रोग का वर्गीकरण शास्त्र पद्धति के अनुसार करना कठिन है। इस रोग के उत्पादक कीटाणुओं के जो वाहक जन्तु हैं वे रिकेट्सिया वर्ग की अन्य जातियों के कीटाणुओं का भी शरीर में प्रवेश कराते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य निश्चयात्मक प्रकार और जाति के रोगों का अस्तित्व भी जो रिकेट्सिया से पैदा होते हैं ज्ञान प्राप्त हुआ है। वर्तमान में इस रोग का वर्गीकरण डाक्टर मेगों के मतानुसार किया जाता है। इसके मुख्य दो विभाग हैं। प्रथम जनपद व्यापी और द्वितीय स्थानिक या मूषक जनित।

१—जनपद व्यापी तारिवक या पिडिकामय प्रलापक—

*यह रोग जुंए द्वारा एक से दूसरे मनुष्यों को प्राप्त होता है। यह जनपद का व्यापी मुख्य प्रकार है। इसके कीटाणुओं को "रिकेट्सिया प्रोवाजेकी" कहते हैं। यह "विलफेलिश" की प्रतिक्रिया से मालूम होता है।

२—स्थानिक या मूषक जनित—

यह मूल भूत विकार कनिष्ठ श्रेणी के पशुओं का है। इसकी सम्प्राप्ति मनुष्यों को विशेषतः मूषक आदि तीक्ष्ण दांतों वाले जीवों के दंश द्वारा होती है। इन जीवों में मुख्य तीन भेद हैं।

---

* जुओं द्वारा परिखा ज्वर १९१४ ई० से १९१८ ई० तक बहुत फैला था, विशेषतः सैनिक वर्ग में। कुछ शहर वासी भी इससे पीड़ित हुए थे। इस ज्वर के कीटाणु अभी तक विदित नहीं हुये हैं। उसे अणुवीक्षणातीत माना है। सम्भवतः रिकेट्सिया वर्ग का ही कीटाणु होना चाहिये। इसका विष मूत्र और थूक में उपस्थित होता या मल में नहीं। तारिवक प्रलापक और परिखा ज्वर दोनों के कीटाणुओं के वाहन जुए हैं।

(अ) चिचड़ी (आ) कीटी (इ) पिस्सू

यह कभी मनुष्य से मनुष्य को प्राप्त नहीं होता है। यह स्थानिक और विदित है कभी जनपद व्यापी नहीं बनता। अतः इन सब को कृत्रिम प्रलापक माना है।

(अ) चिचड़ी जन्य गौ आदि की देह पर रहने वाली चिचड़ियों से उत्पन्न प्रलापक ज्वर के ३ उपविभाग हैं।

(i) पार्वतीय ज्वर—यह ज्वर शिलामय पहाड़ों पर होता है। तीक्ष्ण दांत वाले जीवों के विष से इसकी उत्पत्ति होती है।

(ii) बूटोनिज ज्वर—यह प्रकार दक्षिण यूरोप और अफ्रीका में उत्पन्न होता है।

(iii) दक्षिण अमरीकन और अन्य प्रकार—इसका वाहन कुत्ता है। विष और विलफेलिक्स की प्रतिक्रिया विविध स्थानों में भिन्न २ प्रकार की होती है।

(आ) कीटी जन्य—यह अनेक प्रकार के छोटे कीड़ों से उत्पन्न होता है। इसके वाहन बड़े और छोटे चूहे हैं। इस प्रकार में जापान का नदी ज्वर और अफ्रीका का स्कुल ज्वर सम्मिलित है। इसके कीटाणुओं को रिकेट्सिया ओरीएण्टलिज कहते हैं।

(इ) पिस्सू जन्य—इस प्रकार में मृदु प्रलापक ज्वर ब्रिल का रोग, अफ्रीका में उत्पन्न अर्वत ज्वर है। इसके कीटाणुओं का वाहन चूहे हैं। कीटाणुओं को रिकेट्सिया प्रोवाभेकी कहते हैं। इन्हीं कीटाणुओं से जनपद व्यापी रोग होता है; परन्तु जनपद व्यापी विष और अजनपद व्यापी विष का प्रभेद नहीं होता।

इस रोग का उत्पादक कीटाणु रिकेट्सिया वनस्पति कीटाणु बेक्टोरिया की अपेक्षा बहुत छोटा है। इसका व्यास १/५०००० इंच से भी कम है। ये कीटाणु कितने कीटों को महास्रोत के कोषाणुओं के भीतर से मिलते हैं। मेनसन ट्रोपीकल डिज़ीजिज ग्रन्थ में इस रोग के १० प्रकार दर्शाये हैं। इनमें २ संसार व्यापी और १ कुमायूं पहाड़ पर होने वाला, ये तीन भारत में होते हैं। अतः इन तीनों का वर्णन यहां किया जायगा।

तात्विक प्रलापक ज्वर-

यह आशुकारी महासंक्रामक रोग है, यह जुओं द्वारा फैलता है। इसका आक्रमण अकस्मात् होता है, इसमें वातनाड़ी विकृति और विष प्रकोष जनित लक्षण, चर्म पर धब्बे, शारीरिक उत्ताप और लगभग १४ वें दिन आकस्मिक पेशाब हो ये मुख्य लक्षण होते हैं। मोतीझरा और प्रलापक ज्वर का भेद १९ वीं शताब्दी तक विदित नहीं हुआ था।

यह विशाल विस्तार में फैलने वाला जनपद व्यापी रोग है। यह रूस और बालकन प्रदेशों में विशेष उग्रता धारण करता है। आयर्लेण्ड के निवासी भी इससे विशेष पीड़ित होते हैं। अमरीका में मेक्सिको और पूर्वीय प्रान्तों में भी अपना पराक्रम दर्शाता है। यह मुख्यतः शीतोष्ण कटिबंध में फैलता है।

निदान-

युद्ध, दुष्काल, दरिद्रता और मलिनता के हेतु से इसकी उत्पत्ति होती है। यह रोग अन्य जनपद व्यापी रोगों से भी शीघ्रता से फैलता है। परिचारकों में भी मृत्यु संख्या अधिक है। जेलखाना,

जहाज, सेना और शीलदार मकान इसके फैलने के उपयुक्त स्थान हैं।

विकृत शारीरिक चिन्ह—

आशुकारी ज्वर की विद्यमानता में सामान्य परिवर्तन, मस्तिष्क व त्वचा आदि में पिटिकायें सूक्ष्मतर रक्त प्रणालियों की दीवारों में कोथ तथा धमनियों की बाह्य दीवार में लसीकाणु और रक्तवारि कोषाणुओं की प्राप्ति होती है। मृत्यु के बाद त्वचा पर धब्बे रह जाते हैं।

रक्त गाढ़े रङ्ग का होता है और नहीं जमता। यकृत और वृक्क स्थान कुछ शोथमय भासते हैं। बहुधा प्लीहा वृद्धि होती है। श्वास नलिका प्रसेक और फुफ्फुस में भी रक्त संग्रह विशेषतः उपस्थित होता है। पेयर की और अन्त्रबंधिनी की ग्रन्थियां प्रभावित नहीं होतीं।

आक्रमण प्रकार—

यह जल या वायु में उत्पन्न कीटाणुओं द्वारा कभी नहीं फैलता है। कीटाणु विष लोम कूप और चर्म रन्ध्र में से छनकर भीतर प्रवेशित हो सकता है। यह पूर्व जुओं की देह के भीतर रक्तवारि में विशेषतः रक्त चक्रिकाओं के भीतर ५-७ दिन तक वर्तमान रह जाता है। जुओं के रोगी का रक्त पीने के चौथे से सातवें दिन के भीतर संक्रामक बनता है। इन जुओं के थूक या अन्त्र से निकले हुये मल को नम या तीक्ष्ण पदार्थ से त्वचा पर खुजा देने से इस रोग की सम्प्राप्ति होती है। कुछ विद्वानों का मत है कि जुओं के काटने से भी इस की सम्प्राप्ति हो जाती है। इनके अंडों द्वारा भी रोग विष संचारित होता रहता है। इस जनपद व्यापी रोग का नियन्त्रण जुओं के विरुद्ध साक्षात उपाय की योजना द्वारा हो सकता है।

चयकाल—५ से २५ दिन। सामान्यतः १२ से
दिन। कभी ३ सप्ताह।

पूर्वरूप—१-२ दिन पहिले से कुछ बेचैनी, हड़फू
शिरःशूल, उबाक, चक्कर।

रोगावस्था— इस रोग की ४ अवस्था हैं। १-आ
मणावस्था-१ से ५ दिन तक। २-उत्तेजन
बस्था (पिटिकावस्था) ५ से १० दिन तक
३-शक्तिपातावस्था-१० से १४ दिन तक औ
अन्तिम ४-आकस्मिक उपराम।

१-आक्रमणावस्था—

अकस्मात् आक्रमण, सामान्य वेदना सहशी २४ घण्टे तक बार २ लगना। पीठ और पैर मे विशेषतः संधियों में वेदना, शिरःशूल उबाक, वम निद्रानाश, आरम्भ से ही बल का ह्रास, प्रारम्भ मे मुखमण्डल पर तेजी, शारीरिक उत्ताप आक्रमण काल से ही अधिक रहना, ५ वें दिन अत्यधिक हो जाना, नाड़ी द्रुत, जिह्वा कांटेदार, मलावरोध और श्वास नलिका प्रसेक आदि लक्षण होते हैं।

२-उत्तेजनावस्था और पिटिकावस्था—

इस अवस्था में पिटिका निकलती है। व्याकुलता बढ़ती है और प्रलाप उपस्थित होता है। पिटिका सामान्यतः ४ से या ५ वें दिन निकलती है। प्रारम्भ में कांख और मणिबन्ध पर फिर उदर पर पश्चात, छाती के अन्तिम भाग तक फैलती है। क्वचित मुंह और कण्ठ पर निकलती है इसे डाक्टरी में Mulbovry rash कहते हैं। इसका उपक्रम बहुधा दो प्रकार से होता है।

पहिले प्रकार में त्वचा के नीचे चित्र विचित्र, प्रसादित, अनियमित और मलिन रङ्ग की; दूसरे में क्षुद्र पिटिकायें जो कद और आकार में अति

अनियमित, अनिश्चित, वाह्य सीमा युक्त, किंचित उन्नत गुलाबी या श्याम रङ्ग की होती है। वे प्रथमावस्था में दबाने पर अदृश्य होजाती हैं और उत्तरा अवस्था में पिस्सू काटने के समान रक्तमय भासती हैं। संख्या में सामान्यतः अत्यधिक होती है। २-३ दिन तक प्रतीत होती हैं। बालकों में सामान्यतः रोमांतिका के सदृश भासती है। पिटिकाओ की उत्पत्ति श्वास नलिका प्रदाह और मस्तिष्क की निश्चेष्टता का सूचक है। उस समय से ही रोग प्रलापावस्था से अभिभूत माना जाता है। इस अवस्था में रोगी देह में से एक प्रकार की दुर्गन्ध आती है जो अल्मारी में जूते बन्द करने पर उत्पन्न गन्ध से या चूहे की गन्ध से मिलती हुई होती है।

इस अवस्था में प्रथम सप्ताह के अन्त में शिर दर्द के स्थान पर मन्द २ प्रलाप उपस्थित होता है। यह विशेषतः रात्रि को होता है। रोगी बारम्बार व्याकुलता, चंचलता और अति उद्दण्डता दर्शाता है। अन्य रोगियों में तन्द्रा आती है, बल का ह्रास जिह्वा फटी सी भासती है। उत्ताप १०५ तक और नाड़ी द्रुत होजाती है। पेशाब की उत्पत्ति बन्द हो जाती है या आना कम हो जाती है।

शक्तिपातावस्था—

शक्ति १० से १४ वें दिन तक बहुत कम होजाती है। चित्त न लगना, तन्द्रा, बेहोश और मूर्च्छा, मांस पेशियों में कम्प और निन्द्रा नाश सह अचेतना आदि लक्षण भासते हैं। इस अवस्था में पिटिकाएं विशेष गहरे रङ्ग की होती है, और पिस्सू काटने के समान केन्द्र में व्रणमय बनती है। पीटिका का समय सामान्यतः ८से१० दिन तक है। बार-बार हृदय निर्वलता, नाड़ी तेज और मृदु एवं जिह्वा शुष्क और आकुंचित होती है। बधिरता और दांत व ओष्ठ पर मैल संग्रहीत हो जाता है।

कितनेक रोगियों की कनिनिका छिद्र अति छोटी सुई के छिद्र जितना तथा नेत्र अध खुले होते हैं। किसी में कामुकता उत्पन्न होती है, किसी को गम्भीर हिक्का होती है।

गम्भीरावस्था—

(१) निद्रा नाश सह बेहोशी, नेत्र खुले रहना, कनीनिका प्रसारित, और बुद्धि का बिलकुल लोप हो जाना ये अरिष्ट लक्षण भासते हैं। (२) फुफ्फुसों में रक्त संग्रह। (३) सर्वाङ्गिक अत्यन्त क्लान्ति और हृदयावरोध।

आकस्मिक उपशमावस्था—

इस रोग में अक्सर १४ वें दिन उपशम होता है। रोगी निद्राधीन हो जाता है। फिर जाग्रत होने पर अत्यन्त निर्बलता, किन्तु मन में प्रसन्नता रहती है। उत्ताप कुछ घण्टों में गिर जाती है। आरोग्यावस्था सत्वर बढ़ती है। क्वचित उपशम क्रमशः भी होता है।

विशेष लक्षण-

उत्ताप-१ से ५ वें दिन तक दृढ़ता से बढ़ते रहना, प्रातः काल कुछ उपशम होता है। पिटिका निकलने पर भी उपशम नहीं होता। ५ वे दिन १०३° से १०६° हो जाता है। १२ से १४ घण्टे में अन्तिम दिन पतन हो जाता है। असाध्य प्रकार में १०८° से १०९° तक बढ़ जाता है।

फुफ्फुस-प्रथमावस्था में श्वास नलिका प्रसेक फिर रक्त संग्रह। फुफ्फुस प्रकोप से मृत्यु संख्या अधिक होती है।

हृदय-नाड़ी द्रुत और निर्बल, आकुंचन ध्वनि सामान्य, कभी २ प्रसारण और पतन।

मूत्र-मूत्र में शुभ्र ग्रथित जाती है। कभी २ वृक्क प्रदाह होता है।

रक्त-लसीकाणु सामान्य १२००० से १५००० तक।

प्लीहा-कभी कुछ समय के लिये वृद्धि।

रोग का भविष्य-

मृदु प्रकार में रोग मुक्ति १० दिन में होती है, विशेषतः बालकों में रक्त संक्रामक होता है। घातक प्रकारों में २ या ३ दिन में अशुभ परिणाम आता है।

उपद्रव और भावीक्षति—

कपोल प्रदाह, कोथमय मुखपाक ये बार २ उपस्थित होते हैं। श्वास प्रणालिका प्रदाह, गम्भीरावस्था में फुफ्फुस-शोथ, कभी वृक्क प्रदाह, विद्रधी, शोथ, पक्षवध और कचित कुछ काल के लिये उन्माद। यदि इस रोग की प्राप्ति सगर्भा को होती है तो गर्भपात हो जाता है। इस रोग में अनेकों को शय्याव्रण भी हो जाते हैं।

मृत्यु—

बहुधा १२ से २० प्रतिशत। किन्तु सेवा, चिकित्सा, आयु, जनपद व्यापकता और चारों ओर की दशा से विभिन्नता हो जाती है। बालकों के बनिस्पत ४० वर्ष की अवस्था वाले रोगी ४५ प्रतिशत अधिक मरते हैं। मृत्यु विशेषतः दूसरे सप्ताह में सेन्द्रिय विष-प्रकोपज त्रिदोष और तीसरे सप्ताह में फुफ्फुस विकृति से होती है।

रोग विनिर्णय-

जनपद व्यापी का निर्णय सामन्य है। पिटिका निकलने के पहले कुछ दिनों तक निश्चय करने कठिनता रहती है। इस रोग के बहुत से लक्ष आन्त्रिक ज्वर, रोमान्तिका और पुनरावर्तक ज्व से मिलते हैं। अतः इनसे प्रभेद करने की आव श्यकता रहती है।

१-आंत्रिक ज्वर—

प्रलाप का आक्रमण के साथ आरम्भ, शीत कम्प, निर्बलता, मस्तिष्क विकृति आदि लक्षण प्रलापक ज्वर में विद्यमान रहते हैं। अतिसार, उद की मृदुता और प्लीहा वृद्धि नहीं होते। उदासीनता रहती है और पिटिकाओं से अन्तर मालूम हो जाता है। फिर भी रोग विनिर्णय करने में अनेक बार कठिन हो जाता है।

२-रोमान्तिका—

इसमें प्रसेकज लक्षण होते हैं। कोपालिक भी लक्षण भासते हैं। पिटिकाएं तेजस्वी होती हैं। किनारा अधिक स्पष्ट होता, मुखमण्डल पर चिह होते हैं। ये सब लक्षण प्रलापक ज्वर में नहीं होते हैं।

३-पुनरावर्तक ज्वर—

रक्त परीक्षा से निश्चित होता है।

(क्रमशः)

मकरध्वज बटी-प्रमेह रोगों के लिये सर्वोत्तम टौनिक है।
मिलने का पता-धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

मधुमेह चिकित्सा

लेखक—श्री० कविराज हरिकृष्ण जी सहगल, मोरीगेट लाहौर।

गरीबों के गाढ़े पसीने की कमाई हजम करके मोटे होने वाले व्यक्ति अधिकतर प्रकृति की ओर से दंड स्वरूप मधुमेह रोग को पाते हैं। बढ़िया भोजन करना, आराम से रहना, अधिक दिमाग पर बोझ डालना ज्यादातर मधुमेह रोग को कर देता है। जिस व्यक्ति का पेट कुछ बढ़ा हुआ हो, चक्षु पलक भारी हों, रक्त की हीनता दिखाई दे, चाल हंस की चलता हो, दांई नाड़ी यक्ष्मा रोग की तरह नीचे धीमा स्पर्श करती चले तथा बांई नाड़ी जिसकी मध्य की (दूसरी) अंगुली को उठाती हुई दवाव के साथ चले, समझ लीजिये कि इस व्यक्ति को मधुमेह रोग है।

मधुमेह रोगी के मूत्र में शर्करा होती है, इसलिये इस रोग का नाम मधुमेह है। शर्करा यकृत बनाता है। शर्करा जो हम खाते हैं वह आंत से पचकर यकृत में पहुंचती है। और फिर यकृत में पहुंचकर एक प्रकार का रस शर्करा से तैयार होता है जिसे ग्लाइकोजन कहते हैं। यकृत की कोठरियों में रहकर यह रस फिर शक्कर का रूप धारण कर लेता है और यकृत की शिरा द्वारा रक्त में जा मिलता है, इसी प्रकार यकृत सम्पूर्ण शरीर के लिये शर्करा इकट्ठी करने का कोष हैं। रक्त में शर्करा ०.६ विशेष मात्रा में रहा करती है। ५०० छटांक रक्त में आधी छटांक से अधिक नहीं मिलती, यदि मात्रा बढ़ जावे तो मूत्र के साथ निकलने लग जाती है।

जब शर्करा अधिक मात्रा में खाई जाती है तो यकृत में वह अधिक पहुंचती है और जब यकृत उसे संभाल नहीं सकता तो वह रक्त में अधिकमात्रा में इसे छोड़ देता है, और वृक्क इस अधिक मात्रा को मूत्र में छोड़ना आरम्भ कर देता है, तथा मनुष्य को मधुमेह रोग हो जाता है। यह उपरोक्त प्रकार का मधुमेह साधारण है जब तीव्र हो तो क्लोम भी रोग प्रसित हो जाता है तथा प्रमेह पिड़िकायें भी निकल आती हैं और आजकल एक मधुमेह का रोगी मेरी चिकित्सा में है उसे आध्मान तथा ब्लडप्रेसर भी है।

मधुमेह रोग में क्लोम का रस विकृत हो जाता है व कम मात्रा में बनता है। क्लोम रस के दो कार्य हैं। (१) यह आवश्यकता से अधिक मात्रा में शर्करा यकृत से रक्त में नहीं जाने देता। (२) रक्त में गई हुई शर्करा को वह ठीक प्रकार से व्यय कर देता है। और यदि रक्त में अधिक आगई हो तो उसे मांस पेशियों में ग्लाईकोजन के रूप में फिर जमा कर देता है। यह काम क्लोम रस की कमी होने पर नहीं हो सकते। क्लोम रस में तीन पदार्थ हैं। (१) ट्रेप्सिन (२) अमाइलोप्सिन (३) स्ट्रीयाप्सिन।

ट्रेप्सिन का प्रभाव भोजन की प्रोटीन पर होता है। अमाइलोप्सिन का प्रभाव श्वेतसार पर और स्ट्रीयाप्सिन का प्रभाव वसा पर होता है।

मधुमेह रोग होने पर भूख व प्यास बहुत लगती है। और रोगी शनैः २ दुर्बल होता जाता है। मूत्र कई बार दिन तथा रात्रि में त्यागता है, जिसका रङ्ग श्वेत होता है। और गन्ध कुछ मीठी सी तथा मात्रा चार सेर से पांच सेर तक हो जाती है। मूत्र में कुछ सफेद पपड़ी सी जम जाती है। त्वचा में

शुष्कता, मसूड़ों का फूलना, कोष्ठ बद्धता, श्वासोच्छ्वास में दुर्गन्धि, जिह्वा का फटना आदि लक्षण इस रोग में पाये जाते हैं।

बहुत लोग इस रोग में बसन्त कुसमाकर रस देते हैं। परन्तु रोगी कहते हैं कि महीनों बसन्त कुसमाकर रस खाने से भी उनके मूत्र में से शर्करा नहीं गई चाहे शक्ति कुछ अनुभव होती रही है। अब देखना है कि बसन्त कुसमाकर के प्रयोग से ऐसा क्यों होता है ?

बसन्त कुसमाकर रस में स्वर्ण, कपूर, बङ्ग, कान्तलोह, अभ्रक, मूङ्गा और मोती पड़ते हैं, स्वर्ण मस्तिष्क व हृदय को शक्ति देता है। रक्त शोधन करता है कुछ यकृत की शर्करा पर क्रिया को यह प्रभावित करता है, वृक्कों की शक्ति भी इससे बढ़ती है।

कपूर आयुर्वेदिक मतानुसार वीर्य-वर्द्धक है किन्तु यूनानी मतानुसार नपुंसकता करता है ! मधुमेही की प्यास को कम करता है, और कुछ यूरिक ऐसिड की मात्रा में भी कमी करता है। परन्तु यकृत के बाकी कार्यों पर इसका अधिक प्रभाव नहीं होता।

बङ्ग यकृत पर सीधा कोई प्रभाव नहीं डालती, शर्करा को कम करना, उसकी उत्पत्ति को रोकना व क्लोम रसको बढ़ाना इस पर इसका कोई प्रभाव नहीं, हां यह प्रमेह की अचूक औषधि है। इस लिये मधुमेह पर इसका कुछ प्रभाव होना मान लेना भी कुछ बुरा नहीं होगा।

कान्त लोह का सीधा प्रभाव यकृत क्रियाओं पर पड़ता है, और जितना कुछ लाभ होता है उसका अधिक श्रेय इसी को मिलना चाहिये।

अभ्रक यद्यपि यकृत क्लोम तथा वीर्योत्पादक अङ्गों पर एकसा प्रभाव डालता है, इसलिये बसंत कुसमाकर सेवन करने से रात्री में मूत्रों की मात्रा कम हो जाती है, और कुछ स्वास्थ्य लाभ होता है। मूङ्गा तथा मोती भी कुछ २ यकृत यूरिकाम्ल आदि पर प्रभाव डालते हैं।

परन्तु एक आश्चर्य की बात है कि बसन्तकुसमाकर रस तो प्रमेह अधिकार की औषधि ही नहीं है, यह तो रसायन वाजीकरण अधिकार की औषधि है, अगर यह मधुमेह के लिये होती तो वृहत बङ्गेश्वर रस की तरह यह प्रमेह अधिकार में अवश्य लिखी होती। हां मधुमेह पर इसका लङ्गड़ा प्रभाव है और इस से भी आश्चर्य की बात यह है कि कुछ औषधियां इसके साथ मिलाकर देने से इसका यह लङ्गड़ापन दूर हो जाता है और यही बसन्त कुसमाकर रस मधुमेह में पूरा लाभ करता है।

आप प्रातः सायं एक गोली बसन्त कुसमाकर रस ३-३ रत्ती जड़ गुड़मार चूर्ण के साथ मिलाकर उन्नाब की पत्ती की चाय से दीजिये, शर्करा दूर होगी मधुमेह जायगा।

मधुमेह में पेट में वायु अधिक बढ़ती है, रक्त दबाव भी बढ़ जाता है, हृदय की निर्बलता भी दृष्टि गोचर होती है। उन्नाब की पत्ति उदर की समस्त वायु को दूर करती है, रक्त के दबाव को हटाती है, यकृत की क्रियाओं को शक्ति प्रदान करती है इसी कारण से यह बसन्त कुसमाकर की शक्ति को बढ़ाती है।

अब बसन्त कुसमाकर रस की शक्ति बढ़ाने की दूसरी विधि भी लिखता हूं—

५७२-गुड़मार २५ तोला
गिलोय १२ तोला
जामुन की गुठली १० तोला
शिलाजीत २ तोला
सौंठ गुठली आम आम्र पत्र
तीनों ५—५ तोला
फौलाद भस्म वङ्ग भस्म १-१ तोला

मात्रा—२ से ५ माशे तक दूध से दें।

उपरोक्त चूर्ण में एक गोली वसन्त कुसमाकर रस १ चावल भर अहिफेन मिलाकर देने से बहुत लाभ होता है।

मधुमेह रोग के लिये एक बहुत बढ़िया योग निम्नलिखित आपकी भेंट किया जाता है।

५७३-स्वर्ण भस्म वङ्ग भस्म सालब मिश्री
प्रत्येक १-१ तोला
बोहड़ (बरगद) का दूध १० तोला
मुलहठी ७ माशे
अकीकभस्म केशर ६-६ माशे
कस्तूरी ५ माशे
अफयून कच्ची ४ माशे
कुचला शुद्ध ३ माशे

विधि—सबको कूट पीस छान कर, बोहड़ के दूध से खरल करके चना के प्रमाण गोली बनावें। प्रातः सायं १-१ गोली थोड़े गरम दूध से दें। और १० तोले माखन प्रति दिन खिलावें।

अपथ्य—तेल खटाई बन्दी।

परन्तु इस योग में पड़ने वाली भस्मों को बनाने की विशेष विधि है। यथा—

स्वर्ण बुरादा १ तोला लेकर ५ तोला गुलाब फूल के स्वरस में खरल करके टिकिया बनावें और १२ सेर कण्डों की आग दें। ऐसी सात अग्नि दें, भस्म हो जायगी। जो आवश्यकता समझें तो एक बार फिर ऐसी ही अग्नि दे दें।

अकीक एक पाव, केला के पानी २ सेर में एक वर्तन में रखें परन्तु टुकड़े अलग २ रखें और १¼ मन की आग दें। दोबारा केले के रस में खरल करके केला के गूदा में टिकिया बना कर १¼ मन की आग दें।

वङ्ग शुद्ध करके पत्र बनवा कर कराची के प्याज में डुबो दें। और प्याज पर एक सेर पुराना कपड़ा लपेट कर आग दें।

कुचला को दस दिन अदरक के पानी में भिगो रखें और फिर छील कर पित्ता निकाल कर कूट लें।

नोट—यह योग स्वामी कृष्णानन्द जी का वर्षों का अनुभूत है। अब आपके सामने मधुमेह आसव का योग रखा जाता है।

५७४-उशबा, नागरमोथा, लोधपठानी
बड़ की छाल, पीपल की छाल, कचूर
पदमाख, पाठा, बला, आंवला,
खस, गिलोय हरी, बूरा चन्दन सफेद,
बूरा चन्दन लाल अजवायन
प्रत्येक ३२-३२ तोला
अनन्तमूल ६४ तोला
कुटकी ५४ तोला
तज ऐलाबीज बड़ी ऐला
कुठ कड़वी छिलका हरड़ उन्नाब
चोबचीनी —प्रत्येक ३२-३२ तोला
सनाय ६४ तोला
निसोथ १६ तोला

गुड़	२० सेर
गुलधावा	१ सेर
मुनक्का	४ सेर
जल	६० सेर
मधु	१० सेर

मात्रा—५ तोले प्रातः सायं भोजनोपरांत।

गुण—मधुमेह तथा प्रमेह पिड़िका दोनों दूर होते हैं, कोष्ठ बद्धता मिटती है। यह योग भी स्वामी कृष्णानन्द जी का अनुभूत है।

मधुमेही की पिपासा कम करने के-
लिये

५७५-बीज खुरफा	६ माशा
गिरी बादाम	आधा दाना
बिल्व पत्री, गिरी जामुन	-५·५ तो०

—घोटकर ठण्डाई बनाकर पिलावें।

५७६-जमुर्द भस्म १ तोला

गिरी जामुन ५ तो० अफयून ५ माशे

—जल से घोटकर ५४ गोली बना लें। १ गोली प्रातः और १ गोली सायं, खट्टी लस्सी के निथरे पानी से मधुमेह में दें।

५७६-गुड़मार बुटी का रस २० तोला और चूना का पानी बराबर भाग लेकर शीशी में भर लें, उसमें इलायची दाना का चूर्ण ३ माशा और भीमसेनी कपूर २ माशा घोटकर मिला लें। शीशी का मुंह बन्द करके काग लगा कर रखें।

मात्रा—१ से ३ तोला तक प्रातः सायं भोजन के बाद दें।

प्रमेह पिडिका-

५७७-लाल चन्दन हरड़ का छिलका

सनाय का चूर्ण

—सब को कूट पीस कर मिला लें।

मात्रा—३ माशा शीत जल से दें। गुल्म, कोष्ठबद्धता, फोड़ा फुंसी, प्रमेह पिडिका आदि दूर होती है।

इस लेख में स्वामी कृष्णानन्द जी के अनुभवों का बहुत भाग प्रयोग किया गया है। अगर यह लेख उनकी दृष्टि से निकले तो प्रार्थना है कि वह क्षमा करेंगे।

* * *

-पायरिया मंजन-

आपने पायरिया के लिये अनेकों औषधियों का नाम एवं विज्ञापन देखा होगा। परन्तु आपने उनसे शतप्रतिशत लाभ न पाया होगा। हम आपको इस मंजन द्वारा शतप्रतिशत लाभ होने का दावा करते हैं। आप इसे नित्य प्रयोग कर सकते हैं, किसी भी प्रकार से बाज़ारू मंजनों की तरह हानिप्रद नहीं है।

—मूल्य—।।) प्रति शीशी

पता-धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

यकृद्दाल्युदर (सीरोसिस आफ दी लीवर)

लेखक-श्री० पं० सभाकांत झा शास्त्री, गोल्डमेडलिस्ट सह० सम्पादक "धन्वन्तरि"

रोग परिचय-

यह आमाशय और अन्त्र का प्रदाह, शीर्णता, कामला और जलोदर आदि लक्षण यकृत विकार हैं। इस रोग में यकृत के मध्यवर्त्ती संयाजक तन्तु के चिरकारी प्रदाह के हेतु से सौत्रिक तन्तु निर्माण होने पर यकृत के कोषाणु नष्ट हो जाते हैं तथा यकृत कठिन और दृढ़ होजाता है। इस रोग के दो भेद हैं।

१—विशीर्णता युक्त यकृद्दाल्युदर ।

२ विवर्धन युक्त यकृद्दाल्युदर ।

१-विशीर्णतायुक्त यकृद्दाल्युदर—

हेतु भेद या स्वरूप भेद से इस रोग की संज्ञा निम्नानुसार पृथक् २ हो जाती है।

१-विशीर्णता युक्त यकृद्दाल्युदर, २-मद्यज यकृद्दाल्युदर, ३-प्रतिहारिणी शिरावरोधक यकृद्दाल्युदर, ४-बहुखण्डीय यकृद्दाल्युदर, ५-कौषिक यकृद्दाल्युदर, ६-उपदंशज यकृद्दाल्युदर, ७-नख सदृश दृढ़ यकृद्दाल्युदर, ८-शोथ युक्त यकृद्दाल्युदर ९-मेदमय यकृद्दाल्युदर ।

निदान-

दीर्घ काल तक शराब (जिन, ह्विस्की, बीअर आदि) का पान और उपदंश के विष से इस रोग की उत्पत्ति होती है। कभी २ विषम ज्वर और काला आजार से भी इस रोग की प्राप्ति हो जाती है।

यह व्याधि विशेषतः युवावस्था के पश्चात् प्रौढ़ावस्था के प्रारम्भ में अधिकांश में पुरुषों को होती है। इनमें भी यह शराबियों को विशेष हो जाती है पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियों को यह व्याधि कम होती है। कदाचित् यह व्याधि बालकों को भी होजाती है परन्तु बालकों के लिये इसका मूलभूत कारण वंश परम्परागत (पैतृक) उपदंशज विष होता है।

यद्यपि कभी शराब न पीने वालों, किन्तु तमाखू और अति तेज मसाले दायक आदि पदार्थों के सेवन करने वालों को भी यह रोग हो जाता है। शराब और तेज मसाले से यकृत की रोग निरोधक शक्ति नष्ट हो जाती है फिर अन्य विष या कीटाणु यकृत पर आक्रमण करके सरलता से चिरकारी दाह-शोथ उत्पन्न कर देते हैं। विष या कीटाणु विशेषतः प्रतिहारिणी शिरा द्वारा यकृत में प्रवेश कर दाह और शोथ का उत्पत्ति करती है। पश्चात् सौत्रिक तन्तु निर्माण होकर यकृत के कोषाणुओं का नाश होजाता है।

सम्प्राप्ति-

इस व्याधि का उत्पादकविष, अन्त्र या प्लीहा में से निकल प्रतिहारिणी शिरा द्वारा रस मिश्रित रक्त के साथ मिलकर यकृत में प्रवेश कर जाता है। फिर यकृत कोषों को नष्ट कर देता है तथा उनके स्थानों पर सौत्रिक तन्तुओं की वृद्धि कर देता है। फिर सौत्रिक तन्तुओं के अनुरूप यकृत भी बढ़ता जाता है। बाद में पुनः सौत्रिक तन्तुओं में कृशता आने लगती है तब यकृत भी कृश(संकुचित होजाता है। सौत्रिक तन्तु उत्पन्न होने पर प्रारम्भ में यकृत वृद्धि होती है फिर शनैः २ किसी किसी रोगी में प्रारम्भ से ही यकृत की कृशता हो जाती है। यह

कृशता जितनी अधिक होती है उतना ही यकृत कठोर और दाने (गांठ) युक्त बनता जाता है ।

यकृत की अनेक कण्डिकाओं में अत्यन्त सौत्रिक तन्तु बढ़ जाते हैं। पश्चात् जब इनका संकोच होता है तभी यकृत की सतह विषम उभार चढ़ाव युक्त गांठदार बन जाती है।

यकृत संकोच हेतु से प्रतिहारिणी शिरा की शाखाओं पर भी दवाव पड़ता है और उनमें रक्त संचार न्यून हो जाता है या बन्द हो जाता है। फिर यकृत का सम्बन्ध इतर स्थान में रही हुई प्रतिहारिणी की शाखाओं से बढ़ जाता है तथा रुका हुआ रक्त अन्य शाखाओं द्वारा निकलने लगता है।

प्रतिहारिणी शिरा का कार्य—

प्रतिहारिणी शिरा आमाशय, अन्त्र, प्लीहा और अग्न्याशय आदि स्थानों से रस मिश्रित यकृत में लाती है। यकृत में जाने पर प्रतिहारिणी शिरा अनेक सूक्ष्म शाखाओं में फैल जाती है। इन शाखाओं की सूक्ष्म प्रशाखाओं में यकृत की कण्डिकाओं के चारों ओर लग जाती हैं। उनको कण्डिकान्तरात्मा शिरायें कहते हैं। इन शिराओं की अत्यन्त सूक्ष्म शाखायें कण्डिकाओं के अन्दर उन के मध्य विन्दु की ओर जाती है। जिसमे प्रत्येक कण्डिका के अन्दर वर्तमान यकृत कोष शिरा द्वारा रक्त को पीकर तृप्त होते हैं और पित्तोत्पत्ति भी करते हैं।

सम्प्राप्ति–

प्राथमिक अवस्था में यकृत के ऊपर संयोजक तन्तुओं से बना हुआ आच्छादन है, जिसे यकृदावरण कहते हैं, उसमें रक्त वृद्धि होती है, फिर रक्त वृद्धि होने से यकृत के कोषाणुओं पर दवाव पड़ता है और वे मेदापक्रान्ति से ग्रसित होजाते हैं।

द्वितीयावस्था में परिवर्द्धित संयोजक तन्तु संकुचित हो जाते हैं। जिससे यकृत छोटा होजाता है, और उसकी गांठें बन जाती हैं। जड़ की ओर जाने वाली प्रणालियां सब नष्ट हो जाती हैं, जिससे यकृत वाहिनियां तथा प्रतिहारिणी शिरा की शाखाओं के भीतर रक्त संचालन में प्रतिबन्ध होता है।

यकृत का आच्छादन (उदर्यकला) स्थूल और मलिन हो जाता है। एवं वह महाप्राचीरापेशी पित्ताशय और आमाशय से संलग्न हो जाता है। यकृत के किसी २ स्थान में कभी २ संयोजक तन्तुओं की वृद्धि हो जाती है, साथ ही उसमें दृढ़ता भी आ जाती है।

इसे डाक्टरी में "हाइपरट्राफीस्क्लेरोसिस" कहते हैं। इसका सविस्तार वर्णन आगे किया जायगा। इससे यकृत कण्डिकाओं के अन्दर वर्तमान संजोजक तन्तु का ह्रास होता है। जिससे यकृत के कोषाणुओं का संकोच हो जाता है।

यकृत के कोषाणुओं की वृद्धि और ह्रास निम्न कारणों से होती है। मेदोहीनता और यकृत के कण्डिकाओं के भीतर संयोजक तन्तुओं की वृद्धि होने से पीड़ा और दवाव होता है। अतः यकृत की सब शिराओं तथा शाखाओं पर दवाव पड़जाता है। प्रतिहारिणी शिरा के रक्त संचालन विधान में रक्त संग्रह और जलोदर उत्पन्न होते हैं। पित्त-नलिका संकुचित हो जाती है, और पित्त संचय होने लगता है। इस समय यकृत का वर्ण हरा, धूसर अथवा श्वेत या हरिद्वर्ण हो जाता है।

किसी २ विद्वानों के मत में यकृत की काण्ड-काओं के मध्य में काली पंक्तियां या संयोजक तन्तु के व्याप्त चिरकारी प्रदाह के पश्चात यकृद्दाल्युदर रोग की उत्पत्ति होती है। कई विद्वानों के मत हैं कि यकृत के सब कोषाणुओं में पहले परिवर्तन हो जाता है। इस मतानुसार यकृत में प्रदाह के हेतु से परिवर्तन नहीं होता है। यकृत के भीतर पित्तस्राव करने वाले कोषों की अपक्रान्ति होजाने पर यह रूपान्तर हो जाता है, परन्तु इन कोषों का अपकर्ष इस रोग का कारण है, इस बात को बहुत से विद्वान स्वीकार नहीं करते हैं। पित्तस्राव कराने वाले कोष में संयोजकतन्तुरूप से परिवर्तित होते या मेद युक्त होते हों यह समुचित नहीं ज्ञात होता है। किन्तु इनकी मेदोपक्रान्ति ही होती है।

यकृत का आच्छादन स्थूल नहीं है, सामान्यतया एक अप्राकृतिक सौत्रिक तन्तु से स्तर द्वारा आवृत हो जाता है। इस स्तर को निकाल देने पर यकृदावरण संलग्न रह जाता है। इस सौत्रिक तन्तु के आवरण द्वारा सबल दबाव होने पर यकृत के परिमाण में न्यूनता हो जाती है। इस आच्छादन का संकोच हो जाने से स्थान २ पर गह्वर देखने में आते हैं। अनुमान होता है कि अन्त्रावरण प्रदाह इस यकृद्दाल्युदर रोग का कारण है। हृत्पिण्ड, प्लीहा, और वृक्क के रोग बहुधा इस यकृद्दाल्युदर के सहवर्ती प्रतीत होते हैं।

लक्षण-

इस रोग के लक्षण विशेषतया शिराओं की स्थिति पर निर्भर है। शिराओं में प्रतिबन्ध होने से आमाशय प्रदाह, यकृतवृद्धि, कृशशरीर, कामला और आयुर्वेदोक्त पित्तोदर के लक्षण होते हैं। फिर अन्त में जलोदर हो जाता है, तथा भ्रम, प्रलाप, मूर्च्छा, मस्तिष्क विकृत, बलक्षय आदि उपस्थित होते हैं।

रोग की प्रथमावस्था में यकृत के अवयवों में किसी तरह के परिवर्तन नहीं ज्ञात होते, रोग गुप्तसा रहता है, परन्तु जैसे २ रोग बढ़ता जाता है। वैसे २ यकृत कठोर और दृढ़ होता जाता है। तथा उसके कोषाणु नष्ट होने लगते हैं। साथ ही बलक्षय भी होने लगता है।

यकृदावरण मैले अस्वच्छ (धूसर वर्ण) श्वेतरङ्ग का होता जाता है। और उस पर अनेक प्रकार के छोटे २ काले दाग से पड़ जाते हैं। इन दागों के पड़ने का तात्पर्य यही है कि विष प्रकोप से उत्पन्न हुये सौत्रिक तन्तु संकोच होने से यकृत काण्डकायें गोलाकार में परिणत हो जाती हैं। ये गोलाकार छोटे २ होने पर यकृत का दाने विशिष्ट कहते हैं। यदि यकृत को काटा जाय तो उसके भीतर भी काले २ दाने से प्रतीत होते हैं।

मद्यज यकृद्दाल्युदर-

अत्यन्त मद्यपान करने वाले को रोगारम्भ से पहिले पचनेन्द्रिय संस्था में (विशेषतः आमाशय और अन्त्र में) विकृती हो जाती है। फटी हुई मैली जिह्वा हृदयाधरिक (कौड़ी) प्रदेश और यकृत में भारापन ज्ञात होना, अग्निमांद्य, अफारा, खट्टी डकार, प्रातः काल खट्टी वमन, आन्त्रों की क्रिया में विलक्षणता, कभी कोष्ठ बद्धता, कभी अतिसार आदि लक्षण होते हैं। रोग प्रकट होने पर ये लक्षण और भी तीव्र हो जाते हैं। रोगी

निस्तेज, निर्बल मेंढकों के सदृश पीले वर्ण का हो जाता है।

कपाल में वेदना, मस्तिष्क में भिन्नाहट, मन की अस्थिरता, दुःस्वप्न का देखना, मुख पर शिराजाल प्रतीत होना, गाल बैठ जाना, नेत्र अन्दर धंस जाना, कण्ठनली में श्लेष्मा का संचय होना आदि लक्षण प्रतीत होते हैं। हृदय की क्रिया विकृति हो जाती है। कभी २ बेहोशी भी होजाती है।

कुछ रोगियों को कभी २ कामला भी होजाता है। कुछ को मृत्यु से (एक दो मास) पूर्व यकृत बढ़ भी जाता है, पर यकृत का रूप दृढ़ और विषम हो जाता है। प्लीहा भी कुछ बढ़ जाती है। कुछ को रक्तपित्त भी हो जाता है, और कभी २ आमाशय में संचित मल के साथ रक्त निकलने लगता है, किसी किसी को अन्त्र से रक्त श्राव होने लगता है, किसी २ को गुदा की नालियों में रक्त भर जाने से रक्तार्श हो जाता है, इत्यादि अनेक उपद्रव उत्पन्न हो जाते हैं।

रोग के अन्त में जलोदर भी हो जाता है बहुधा जलोदर क्रमशः होता है, परन्तु कभी आकस्मात् शीत ज्वर आदि के आक्रमण शीघ्र हो जाता है। जलोदर होने पर मूत्र की मात्रा हो जाती है, और पेशाब में एलब्यूमन जाने लग है। कभी २ शीत के साथ विषमज्वर आ लगता है।

यकृत प्लीहा बढ़े हुये हों तो भी प्रतीत नहीं होते और उदर की सब शिरायें उभर आती हैं। फिर मूत्र विषयुक्त रक्त बनने और अति क्षीणता आजाने पर मृत्यु हो जाती है। या राजयक्ष्मा फुफ्फुसावरण प्रदाह, अथवा आन्त्रक्षय आदि उपद्रव रूप उत्पन्न हो जाने से मृत्यु हो जाती है।

यकृद्दाल्युदर और यकृत कर्कस्फोट के अने लक्षण समान होते हैं। इसलिये इनके लक्षण निम्न दिये जाते हैं।

लक्षण	यकृद्दाल्युदर	यकृत कर्क स्फोट
१—रोग वृद्धि	क्रमशः	शीघ्र
२—आकृति	यकृत की आकृति विकसित या संकुचित, गांठ नहीं होती, या गांठ देर से होती है।	यकृत बड़ा विषम तथा बड़ी गांठों वाला होता है। गांठें जल्दी जाती हैं।
३—वेदना	नहीं होती है।	होती है।
४—जलोदर	हो जाताहै।	अनिश्चित
५—कामला	देर से होता है।	तीव्र कामला होता है।

उपदंशज यकृद्दाल्युदर—

उपदंश (फिरङ्ग रोग) पूर्वज प्राप्त जन्मजात होने पर उसके विष से ६ से १२ वर्ष की आयु के बा पर यह व्याधि आक्रमण करती है। कभी

युवा व्यक्ति को भी यह रोग हो जाता है । कदाचित इस व्याधि की तृतीयावस्था में गोंद सदृश फिरङ्गज ग्रन्थियां हो जाती हैं । इन ग्रन्थी को डाक्टरी में "गोमा" कहते हैं ।

उपदंश विष जनित इस विशीर्णता ग्रस्त यकृद्दाल्युदर से दुखी बालक को निद्रा नहीं आती । अकस्मात् चौंककर जग जाता है । बद्धकोष्ठ, नेत्र के नीचे हिस्से में कालामण्डल, मांस पेशियों में विकृति, मूत्र में अम्लगुण विशिष्ट होना, मूत्र में यूरिक एसिड बढ़ जाना आदि लक्षण प्रारम्भ में होते हैं । उपदंश रोग जिसको हुआ हो, उसे कभी २ उपदंश की द्वितीयावस्था में यकृत प्रदाह के हेतु कामला हो जाता है, और तृतीयावस्था में उपदंशज ग्रन्थियां उत्पन्न होजाती हैं । फिर चिरकारीवृद्धयकृद्दाल्युदर के समान प्रतीत होने लगती है, और इसके साथ जलोदर भी उत्पन्न हो जाता है । जलोदर होने पर पेट फूल जाता है, तथा पेट पर नीली और मोटी शिरायें स्पष्ट प्रतीत होने लगती हैं । यकृत बढ़ने पर किनारी विषम हो जाती है । क्योंकि यकृद्वृद्धि समान रूपेण नहीं होती है । यकृत का बाम खण्ड अधिक छोटा होते हुये भी दक्षिण खण्ड की अपेक्षा अधिक बड़ा हो जाता है ।

यकृत के साथ सीहा भी बढ़ जाती है । यकृत में कुछ काल तक वृद्धि होकर विशीर्णता उत्पन्न होने लगती है, परन्तु सीहा क्रमशः बढ़ती ही रहती है । उस समय रोगी की शक्ति अधिक क्षीण हो जाती है, जलोदर भी बढ़ता जाता है तथा शोथ भी बढ़ता है, इसमें त्वचा में म्लानता, क्षुधा का नाश, उदर किसी का कठिन या किसी का नरम, उदर में अति वेदना, तथा आमाशय, अन्त्र या नासिका से रक्तस्राव होना आदि लक्षण उपस्थित होते हैं, अधिक अतिसार, सर्वाङ्ग शोथ, या साथ २ रक्तस्राव होने पर रोग असाध्य होजाता है । कभी २ इस रोग के साथ उपदंशज ग्रन्थि होने से प्रतिहारिणी शिरा या पित्त नलिका पीड़ित होजाती है, फिर जलोदर या कामला रोग की उत्पत्ति हो जाती है । यह कामला, इस रोग से ग्रसित रोगियों में तिहाई को तो हो ही जाता है । परन्तु इसमें देह अधिक कृश नहीं होती है ।

उपदंशज यकृद्दाल्युदर का विनिर्णय–

उपदंश के पूर्ववृत्त या कुलवृत्त और उपदंश के विष जन्य इतर लक्षण आदि सहायक होते हैं । कभी २ उपदंशज अनेक ग्रन्थियां न होकर एक ही बड़ी ग्रन्थी हो जाती है । कितनेक रोगियों में ज्वरादिक लक्षण होने से यकृद्वृद्धि की भ्रान्ति हो जाती है । परन्तु यकृद्वृद्धि के पूर्वरूपमें प्रवाहिका होती है । अतः प्रवाहिका लक्षण पूर्ववृत्त है या नहीं ? इस बात का निर्णय होने पर यकृद्वृद्धि का संशय दूर हो जाता है ।

जीर्ण ज्वर के लिये स्वर्णवसन्तमालती महौषधि है ।
मिलने का पता–धन्वन्तरि कार्यालय, बिजयगढ़ (अलीगढ़)

बनौषधि-विज्ञान—

मदन फल

ले०—कवि० श्री० पं० युगलकिशोर जी द्वारिकाप्रसाद शर्मा दधिमथ आयु०भवन राजगांगपुर ।

"मदनश्छर्दनः पिण्डीतकस्तथा ।
करहाटो मरुबकः शल्यको विषपुष्पकः ॥"

सं० नाम—मदन, छर्दन, पिण्डीनट, पिण्डीतक, करहाट, मरुबक, शल्यक, विष पुष्पक । हिन्दी—मयनहर, मयनफल । बं०—मयनाकांटा । म०—गेल । गु०—ढोल । क०—वोनगेररणाय । तै०—बमंतकीड, मिथेट्टु । ता०—मडुककरय । औ०—पातर । नै० मैदल । पं०—मिन्डकोल्ल । द०—मेणाहल । ई० बुसी गारडिनिया । लै०—रेन्डियाड्यू मेटोरम । अ०—जोजुल्कै । फा० यू०—नूरमतलप ।

गुण—

मदनो मधुरस्तिक्तो वीर्योष्णो लेखनोलघुः ।
वान्तिकृद् विद्रधिहरः प्रतिश्यायव्रणांतकः ॥
रूक्षकुष्ठ कफानाह शोथगुल्मव्रणापहः ।

(नि० र०)

कटुस्तिक्तश्चतुवरो वान्ति कृतकफनाशनः ।

(भा०)

मयनफल मधुर, कटु, तिक्त, कषैला उष्णवीर्य, लेखन, हलका, वमन कारक, विद्राव, व्रण और प्रतिश्याय नाशक है । रुक्ष तथा कफ आनाह सूजन, कुष्ठ और गुल्म तथा घावों को दूर करता है ।

मदनफल का विवरण—

मदनफल के वृक्ष छोटे २ कांटेदार होते हैं । निर्जन पहाड़ी स्थानों में ये सर्वत्र पाये जाते हैं । इसके कांटे एक से दो अंगुल तक लम्बे होते हैं । पत्ते गोलाकार कुछ लम्बे फल जिसे मदन फल कहते हैं, सुपारी या अक्रोट के समान छोटे बड़े होते हैं । अंग्रेजी में इसे Emeticmut वमनोत्पादक सुपारी कहते हैं । ये फल पकने पर पीले वर्ण के हो जाते हैं, फूल कुछ पिलाबट लिये हुए श्वेतवर्ण के होते हैं ।

मदनफल के गुणादिकों पर विचार—

मदन फल रूक्ष गुण युक्त है । यथा—

"रूक्षं समीरणकरपरं कफहरं मतम् ।"

रूक्ष गुण विशिष्ट द्रव्य वात कारक तथा कफ नाशक होता है । यह लेखन है इससे वातादि दोषों को देह से बाहर निकालना इसका कार्य ही है, यह लघु गुण युक्त भी है ।

"लघुर्वातकर परं त द्विपर्ययो लघुर्गुरुः ।"

लघु गुण युक्त द्रव्य कफ नाशक वात कारक और गुरु गुण के विपरीत शीघ्र पाकी और हल्की होती है, उष्ण वीर्य है, उष्ण वीर्य युक्त द्रव्यों से वात, कफ शान्त होता है और पित्त की वृद्धि होती है परन्तु मदन फल लघु और रूक्ष होने के कारण वायु को शान्त नहीं कर सकता, क्योंकि वायु भी रूक्ष लघु आदि गुणों से युक्त है । मदन फल में मधुर, तिक्त कषाय रस के अतिरिक्त विशेषकर कटु रस है । अतः इसका विपाक तीक्ष्ण ही होना चाहिये, यद्यपि इसका विपाक नहीं होता क्योंकि वमनकारी है परन्तु कहीं २ होता भी है कारण कि बहुत से मनुष्य इसके कच्चे फलों की तरकारी खाते हैं ।

मदनफल कटु, तिक्त, कषाय रस युक्त होने से कफ नाशक है और तीक्ष्ण विपाक युक्त होने से भी कफ नाशक है और पित्त वर्धक है, यद्यपि मधुर रस होने के कारण पित्त को बढ़ा नहीं सकता

परन्तु वामक क्रिया द्वारा कफ का क्षय होने से पित्त (गर्मी) हो जाना सम्भव है।

मदनफल का प्रभाव पृथिव्यादि तत्वों की विशेषता से रसों की उत्पत्ति—

सर्व पदार्थों की उत्पत्ति पृथिव्यादि पंच तत्वों से होती है, परन्तु प्रत्येक द्रव्यों में तत्वों के परिमाणुओं के न्यूनता या अधिकता से रसों में अन्तर पड़ जाता है। यथा—

"वाय्वग्नि गुण बाहुल्यात्कटुः"

वायु और अग्नि के गुणों की अधिकता से कटुरस होता है। मदनफल में कटुरस की प्रधानता है, अतः इसकी उत्पत्ति अग्नि और वायु से है।

'तत्राग्नि महतात्मकारसा प्रायेणर्ध्वभाजः'

अग्नि और वायु तत्व की अधिकता से उत्पन्न होने वाला कटु रस हलका होता है। इससे कटु रस बहुल पदार्थ हलके होने के कारण उर्ध्वगामी होते हैं। और इनका प्रभाव विशेषकर शरीर के उर्ध्व भाग में होता है, यही कारण है कि मदनफल से वमन होने लगता है, यह इसकी विशेष शक्ति है, यद्यपि अन्य कटु रस युक्त द्रव्यों से भी वमन होता है और किसी २ से नहीं भी होता परन्तु उर्ध्वगामी अवश्य होते हैं। मदनफल की गणना विशेषकर वमनौषधि में है। यथा—

"अपक्वपित्तश्लेष्माणौ बलादूर्ध्वंनयेत्तु यत्।
वमनं तद्धि विज्ञेयं मदनस्यफलं यथा॥"

जो औषधि पक्व दशा को नहीं प्राप्त हुये पित्त और कफ को बलात्कार करके मुख द्वारा निकाले उसे वमन संज्ञक जानना, जैसे मदनफल। औषधि प्रयोग में मदनफल का फल ही लिया जाता है और बीज, अतः उपरोक्त गुण फल तथा बीज के ही समझनाचाहिये वृक्ष के नहीं। इसकी फल और छाल दोनों वामक होने से वमन कर्म में बहुत उपयोगी है। दोनों प्रस्वेदोत्पादक (पसीना लाने वाले) उद्वेष्टन शामक (अपस्मारादि) में उद्वेष्टन शरीर में ऐंठन फड़कनादि विकृत क्रियायें होती हैं उन्हें शमन करने वाले हैं।

इसकी छाल में विशेष गुण ये हैं कामोत्तेजना शामक अर्थात् मज्जा तन्तु या 'नर्व्ज' की उत्तेजना को शमन करने वाली वेदना शामक किसी जख्म या चोट की वेदना को शमन करने के लिये या ज्वर की दशा में जो कभी-कभी हड़फूटन की वेदनायें होती उन्हें शमन करने के लिये इसकी योजना ऊपर से प्रलेप के रूप में की जाती है और क्वाथ रूप में यह पिलाई भी जाती है, छाल का काढ़ा घृणा जनक होता है इसमें स्तम्भक गुण भी हैं। प्रदर, रक्त स्राव, अतिसारादि को बन्द करने की इसमे शक्ति है।

यह अपने आयुर्वेद में वमन कर्म और वस्तिकर्म के लिये उत्कृष्ट माना गया है। यथा-

"लघुरूक्षोवांतिकारी वस्तिकर्मणि चोत्तमः"

औषधि प्रयोग-

कफ पित्त के विकारों पर—

५७८—अच्छे मदनफल २ या ३ नग लेकर, उनके ऊपर की त्वचा निकाल डालें और फिर जवकुट कर जल ५ तोला में रात को भिगो देवे, सवेरे अच्छी तरह मसल और छानकर पिला देवे. तत्काल वमन होकर विकार शांत हो जावेगा। अथवा—

५७९-इसके पके हुये फलों के मगज या गूदे को निकाल और सुखाकर महीन चूर्ण कर शीशियों में भर रखते हैं। वमन के लिये इसकी मात्रा २ माशा से ६ माशा तक देते हैं। यह पूर्ण मात्रा है, इसकी ५ से १० रत्ती तक की मात्रा सेवन करने से मिचलाहट शुरू हो जाती है। मुख से पानी छूटने लगता है तथा पसीना आने लगता है। लगभग दो फलों को खा लेने से जी खूब मिचलाने लगता है और १० मिनट के अन्दर कय होना शुरू हो जाते हैं। वमन या कय ठीक तरह से हो जाने के लिये ऊपर से थोड़ा गरम पानी पी लेवे। अथवा —

५८०-छोटे बच्चों को कफ का विकार हो तो इस फल को उचित मात्रा में जल के साथ घिसकर चटावे या पिलावे।

कफ वात के विकारों पर—

५८१-मदनफल का महीन चूर्ण २ से ६ माशा तक दूध के साथ सेवन करावे।

पित्त को निकालने के लिये—

५८२-मदनफल का रस १ से १॥ तोला या महीन चूर्ण २ से ६ माशा तक शहद में चटावे, विकारी पित्त कय और दस्तों के द्वारा निकल जाता है।

विष पर—

५८३-मदनफल की छाल पानी में पीसकर बार २ पिलावे, वमनों के द्वारा सर्व विष बाहर निकल पड़ेगा।

कृमि विकार—

५८४-इसका महीन चूर्ण १ माशा थोड़े शहद के साथ मिलाकर चाटने से दस्त साफ होकर कृमि झड़ जाते हैं या उनका जोर कम हो जाता है।

अर्धावभेदक पर—

५८५-मदनफल और मिश्री सम भाग किंचि प्रमाण में गो दुग्ध के साथ पीसकर सूर्योद के पहिले ही नस्य देना चाहिये।

स्तन रोग पर—

५८६-मदनफल को शीतल जल में पीसकर ले करने से लाभ होता है।

अण्डकोष की सूजन और दर्द पर—

५८७-इसको पानी में पीसकर लगाने से पीड़ा शान्त होती है।

सूखी खांसी पर—

५८८-मदनफल की गिरी को थोड़ी मात्रा में सेवन कराने से लाभ होता है।

शीघ्र प्रसूति के लिये—

५८९-किसी भी कारण विशेष से प्रसूति वेदना बहुत देर तक होने पर भी यदि शीघ्र प्रसूति न हो तो शुष्क मदन फलों की धूनी योनि मार्ग से देवे।

अतिसार पर—

५९०-मदनफल का महीन चूर्ण आधा माशा शहद के साथ चटावे, इसी प्रकार दिन में ३ बार चटावे। २ या ३ दिन में बड़ा से बड़ा अतिसार भी दूर होजाता है।

आकस्मिक उदर शूल पर—

५९१-मदनफल को कांजी के साथ पीसकर नाभी पर लेप कर देवे।

गलगंड और विसर्प रोग पर—

५९२-इसको नीम के रसमें पीसकर लगाना चाहिये।

५९३-इसका रस शिर में लगाने से जूं मर जाती हैं।

वैद्यों से परामर्श

परामर्श नं० ४२—

एक रोगी की अवस्था २५ वर्ष की है । इसे दाहिने पांव की ऐड़ी के ऊपर बगल में जरा खुजली पैदा होकर घुटना के नीचे समूचा पैर में सूजन पैदा हो जाती है । यह मर्ज १-२ माह तक बढ़कर फिर अपने आप अच्छा हो जाता है । कृपया इसके लिये वैद्यों से प्रार्थना है कि कोई अनुभूत योग लिखेंगे ।

—ग्रा० नं० ५५३६ ।

परामर्श नं० ४३—

वैद्य महानुभावों से प्रार्थना है कि "माहूदाना" का हिन्दी में क्या नाम है, तथा यह किस उपयोग में आता है सूचित करें ।

—ग्रा० नं० २८९२ ।

परामर्श नं० ४४—

नीम का उपयोग किन २ रोगों में कितने प्रकार से होता है, लिखने की कृपा करें ।

—सरयूप्रसाद भट्ट विद्यार्थी ।

परामर्श नं० ४५—

एक मरीज को रोटी खाते समय मसूड़े नीचे के छिल जाने से जखम होगया, जिसे करीब ६ साल होगये । अब उसमें पीव आती है, दर्द भी बना रहता है । कृपया कोई उत्तम दवा लिखने की कृपा करेंगे ।

—ग्रा० नं० २६१२ ।

परामर्श नं० ४६—

भाग २० अङ्क ५ में प्रकाशित बच्चों के डब्बा रोग परएक औषधि के नुस्खे में "लालरस" और सर्पास्थि भस्म लिखा है । कृपया बतलावें कि लालरस क्या चीज है, तथा सर्पास्थि भस्म कैसे बनाई जाय लिखें ।

—बाबूराम शर्मा अलीगढ़ ।

परामर्श नं० ४७—

एक स्त्री की आयु २८ वर्ष की है । उसको जब बच्चा पैदा होता है तो तीन चार महीने बाद से बच्चे को ज्वर, दस्त, वमन होना शुरू होजाता है । और मस्तक के ऊपरी भाग तालु में एक खड्डल धसना प्रारम्भ होजाता है जो ललाट तक पहुंच कर बच्चा मर जाता है । वैद्यों से प्रार्थना है कि रोग की निदान सहित चिकित्सा लिखने की कृपा करेंगे ।

—ग्रा० नं० ४८०४ ।

परामर्श नं० ४८—

मेरा भाई ११ माह से बीमार है । उसकी आयु ३१ वर्ष की है । बीमारी की शुरूआत प्रतिश्याय (जुकाम) से हुई, पर बाद में बढ़कर खांसी होगई । करीब दो माह तक वैद्यों का इलाज करवाया मगर कोई फायदा न हुआ बल्कि इलाज के दरम्यान में मलेरिया, खून का खखारा व खून की टट्टियां भी शुरू हो गई । वैद्यों के इलाज से कोई फायदा न होते देख मैंने डाक्टरों की शरण ली । डाक्टरों ने ३ दफा खून टैस्ट किया, २ दफा एक्सरे फोटो व खखार टैस्ट किया । सारी चीजें देखने के पश्चात् डाक्टरों ने खून में मलेरिया के कीटाणुओं का होना, बांयें तरफ का सीना कमजोर होना इत्यादि बताया । साथ ही साथ "खखारे में टी० बी० के कीटाणु नहीं है" यह भी कहा । सात माह तक डाक्टरों का इलाज शुरू रहा, परन्तु रोगी को किसी भी तरह का फायदा न हुआ, आज भी उसकी हालत पूर्ववत ही है ।

अब अनुभवी वैद्यों से निवेदन है कि उपरोक्त रोग क्या है ? क्यों होता है ? और इसकी चिकित्सा क्या है । इत्यादि सारी जानकारी "धन्वन्तरि" के आगामी अङ्क में देने की कृपा करें ।

—ग्राहक नं० ३८१२ ।

परामर्श नं० ४९—

सूर्यावर्त का रोग अर्से १५ साल से है। (यानी १६ साल की उम्र से है) सर्दियों की मौसम से शुरू होता है। हर साल ५-६ दिन कभी ज्यादा कभी कम दुखता रहता है और अपने आप ही आराम हो जाता था, उन्नीसवीं साल से २६ वीं साल तक कतई यह रोग नहीं हुआ है। फिर २७वीं साल से शुरू हुआ उस वक्त बनफसे का प्रयोग करने से आराम हो गया फिर दूसरी साल (२८ वीं साल) यह रोग हुआ उस वक्त कायफल सेवन किया आराम हो गया। फिर २९-३०-३१ वीं साल में भी हुआ तो फिर वही कायफल प्रयोग किया तो आराम हो गया। सूर्यावर्त रोग हरसाल सर्दियों में ही होता रहा है। ३२ वीं साल में गर्मियों में और सर्दियों में २ दफा हुआ सो उस वक्त बहुत ही प्रयोग किये गये परन्तु आराम नहीं हुआ, २० २० दिन तक दुःखना रहा उस वक्त एक योगीराज के कहने के मुताबिक १ चिलम गांजा की पीकर के ऊपर से गुड़ और घी खाया तो आराम हो गया। अब ३३ वीं साल में ४ दफा यह रोग हुआ प्रयोग करते रहे और आराम होता रहा, कभी ज्यादा कभी कम ऐसे ही करके दिन निकाले जा रहे हैं। इस समय यह रोग जुकाम होने के पश्चात् कुछ दिन पैदा होकर कई दिन रहा है। कृपया इस के लिये कोई उत्तम योग बतावें।

श्री अम्बालाल जी जैन।

परामर्श नं० ५०—

धूप में फिरने से शरीर में सुई चुभोने जैसी पीड़ा जलन और दाह होती है. शरीर का वर्ण लाल हो जाता है, फिर छाया में बैठने से रोग ठीक हो जाता है। इस रोग को आयुर्वेद में क्या कहते हैं। वैद्य समाज इस रोगी की चिकित्सा बतायें।

—दौलतराम

परामर्श नं० ५१—

शिंशिपा विवेचन

अनुभूत प्रयोगों की एक पुस्तक के लेखक ने प्रमेह की औषधि रूप में शीशम का एक प्रयोग दिया है। यथा—

५९४—मुट्ठी भर शीशम पत्र चीनी की कटोरी में संध्या समय १½ पाव जल में भिगो प्रातःकाल मल छानकर रखें। यह पिच्छिल रस निकलता है उसमें कुछ सिता मिला पी जाने से १० दिन में प्रमेह दूर होकर वीर्य गाढ़ा हो जाता है प्रदर नाशक भी है। सेवन काल में हाथ पैरों के तलों से अग्नि सी गर्मी निकल जाती है। साथ में विश्राम जमाने को कोई हानि हीन औषधि नाम मात्र को दे दें। इस प्रकार यह योग है। इसमें वीर्य गाढ़ा होने के विषय में लिखा है परन्तु भाव प्रकाश में शीशम के विषय में—

शिंशिपा पिच्छिला श्यामा कृष्णा सारा च सा गुरुः।
कपिलाम्भैव मुनिभिर्भस्मगर्भेति कीर्तिता॥
शिंशिपा कटुका तिक्ता कषाया शोथ हारिणी।
उष्णवीर्य्या हरेन्मेदः कुष्ठश्वित्र वमि क्रिमीन्॥
वस्ति रुग्व्रणदाहास्त्र बलासान् गर्भपातिनी।

भस्मगर्भा, उष्णवीर्या तथा गर्भपातिनी शब्दों का प्रयोग किया गया है। यहां पर दो शंकायें उत्पन्न होती हैं।

(अ) यदि शिंशिपा प्रमेह का नाश कर दे तो गर्भ पातिनी, भस्मगर्भा होने के कारण उस रोग

मुक्ति व्यक्ति को सन्तान उत्पन्न करने के अयोग्य बना सकती है।

(म) वीर्य वर्धनार्थ शीतवीर्या औषधियां लाभदायक हैं। फिर शिंशिपा उष्णवीर्या होकर किस प्रकार सम्यग् पेण वीर्य वर्धन (वह भी संतान उत्पन्न करने योग्य) कर सकती है ?

(स) प्रदराक्रांता नारी को रोग मुक्त कर अपने भस्मगर्भा तथा गर्भपातिनी नामों को सार्थक करने के लिये उस नारी को वंध्या अथवा गर्भपातिनी कर सकती है।

निवेदन यह है कि क्या शीशम यथार्थ में उपर्युक्त वर्णित प्रमेहघ्न, प्रदरघ्न तथा वीर्य वर्द्धन शक्तियां रखती हैं ? यदि रखती है तो उपर्युक्त शंकायें कहां तक यथार्थ हो सकती है ? क्या शीशम वास्तव में उक्त शंकाओं के अन्तर्गत आती है या नहीं ? यथार्थ में लाभप्रद होते हुए उक्त शंकाओं को स्थान नहीं देती तो यह भारत का सौभाग्य है। यदि शंकाओं को स्थान देती है वा रोगघ्न नहीं है तो ऐसे योगों से पूर्ण पुस्तकें भारत भार ही हैं। विज्ञ वैद्यवरो तथा सम्पादक महोदय से सविनय निर्णयतथा परीक्षण करने का अनुराध करते हुए इन पंक्तियों का लेखक प्रत्येक रूप में योग दाता तथा अन्य से क्षमा प्रार्थी है। तथा शीघ्र निर्णय प्रकाशित कराने का अनुरोध करता है।

—ग्रा० नं० २००४

परामर्श नं० ५२—

एक स्त्री उम्र ३० वर्ष की है उसके ८ मास पूर्व कन्या पैदा हुई, मैला मामूली निकला, पेटमें नन्हा२ दर्द जारी रहा, बाद ३ मास में पेट बढ़ गया, यहां तक कि रोगिणी की श्वास की गति तीव्र व ऊंची हो गई अन्य वैद्यों ने असाध्य कर छोड़ दी! मैंने रोगी हाथ में लिया परन्तु रोग ठीक २ समझ में नहीं आया, मैंने वृहद् हिंग्वादि चूर्ण देकर लाभ उठाया पेट उभर गया रोगी शान्त है। हर वक्त १०१ डिग्री बुखार रहता है, पेट में सीधी तरफ एक लम्बी रेखा सी गांठ सदृश प्रतीत होती है, सर में दर्द, पैरों में हड़कल, भूख की कमी, कमज़ोर हालत चल फिर नहीं सकती, चेहरा पीला सफेद, दस्त साफ है, माहवारी २ दिन हुई रक्तश्राव ठीक निकला था, मैंने कई प्रयोग दे चुका लेकिन कोई फायदा नहीं। कृपया वैद्य महानुभाव इसकी चिकित्सा लिखने की कृपा करें।

ग्राहक नं० ५६३३

परामर्श नं० ५३—

१—बल हानि व देह क्षीणता पर वृंहण (बलिष्ठ व मोटा) बनाने वाला परीक्षित व अनुभूत योग रस, भस्म योग जिसमें कि नाग, बङ्ग, सुवर्ण, स्वर्णमाक्षिक आदि भस्म रहेगा) और मोदक, पाक आदि लिखें।

२—मल्ल सिन्दूर, ताल सिन्दूर, ताम्र सिन्दूर, शिला सिन्दूर आदि का प्रयोग व अनुपान।

३—रक्तचाप से होने वाला शिर दर्द, शिरघूर्णन आदि पर अचूक दवाइयों का योग लिखें।

—ग्राहक नं० ६६५२।

परामर्श नं० ५४—

मेरे मित्र की आयु ३३ वर्ष की है। जिसके दांतों में तीन साल से पायरिया होगया है। आयुर्वेदिक और डाक्टरी औषधियों से कुछ फायदा नहीं हुआ अतः कोई योग शत प्रतिशत अचूक लिखने की कृपा करें।

—ग्राहक नं० ५५८४।

परामर्श नं० ५५—

काला व श्वेत सुरमा की भस्म करने की विधि विस्तृत गुण विवेचन सहित लिखने की कृपा करें।

परामर्श नं० ५६--

धन्वन्तरि अङ्क ५ में बच्चों के डिब्बा रोग पर प्रयोग नं० १२८ में "लालरस" लिखा है। प्रयोग लिखने वाले महाशय लिखें कि लालरस क्या है।

परामर्श नं० ५७—

बवासीर के मस्सों का कोई ऐसा मलहम हो जो भीतर बाहर के मस्सों पर लगाने से बिना कष्ट अथवा मामूली कष्ट से बाहर निकल कर गिर जांय अथवा ऐसी कोई खाने की औषधि हो।

परामर्श नं० ५८--

श्वास रोग पर अव्यर्थ प्रयोग लिखें। साथ ही सेवन विधि भी हो।

—ग्राहक नं० ५०५८।

परामर्श नं० ५९—

एलोपैथी में इस तरह की कितनी ही वटी हैं जो तीव्र दर्द में देने से शीघ्रातिशीघ्र निद्रा तथा दर्द आराम कर देती हैं। और डाक्टरों को काफी समय मिल जाता है जिससे चिकित्सा कर रोग आराम कर देते हैं। क्या कोई महानुभाव आयुर्वेदीय पद्धति के अनुसार उक्त वटी के समान कोई वटी लिखने की कृपा करेंगे ?।

परामर्श नं० ६०--

सन्निपात विशूचिका प्रभृति रोग में बाह्य तथा अन्तर्दाह इतना देखा जाता है कि रोगी पंखा चिल्लाता है और कुछ काल के बाद बमता है, ऐसी दशामें कौनसी दवा दी जाय, से पसीना प्रभृत भी नष्ट हो, नाड़ी तथा संज्ञा दुरुस्त हो जाय।

श्री हरिश्चन्द्र झा आ

परामर्श नं० ६१--

वर्तमान हालत-

खून की कमी से या अन्य किसी व्याधि इस वक्त हाथों के नाखून बैठे हुए हैं, मासिक १ या १॥ सप्ताह से होता है रक्त कम जाता और नींद अच्छी होती है, भोजन में स्वाद आ है, दस्त ठीक ढङ्ग से लगता है, भूख वक्त पर लग है, शरीर में किसी किस्म की हरारत व सुर्खी रहती है, घर का सब कार्य ठीक ढङ्ग से करती यकृत व प्लीहा ठीक है।

पूर्व विवरण-

उम्र इस वक्त २४ साल की है, इसकी शादी दश वर्ष हुए हैं। इससे ३ लड़कियां हुई हैं जि से बड़ी लड़की मौजूद है जिसकी उम्र ६ मास है इसमें से दो गर्भपात हुए एक तो ४ माह का दू ८ मास का।

उपरोक्त रोग विवरण समझ कर रोग औषधि अनुभूत लिखने का कष्ट करें।

ग्राहक नं०

आवश्यकीय सूचना-

धन्वन्तरि में परामर्श भेजने वालों से प्रार्थना है कि अब अभी परामर्श नहीं भेजें। हमारे पा जो आवश्यकीय परामर्श थे, उन्हें हमने ११ वें अङ्क में प्रकाशित कर दिया है। और अङ्क १२ में यथो पलब्ध सम्मति प्रकाशित कर देंगे। फिर जून-जौलाई तथा अगस्त का अङ्क, "रक्त-रोगाङ्क" नाम विशेषाङ्क तथा परिशिष्टाङ्क होगा. इसके बाद अङ्क ४ में हम परामर्श प्रकाशित करेंगे, आशा है त तक के लिये ग्राहक हमें क्षमा करेंगे। और जो परामर्श आवेंगे वह अङ्क ४ में ही प्रकाशित होंगे, ज तक रक्खे रहेंगे।

—व्यवस्थापक-"धन्वन्तरि"।

विविध समाचार

[गतांक से आगे]

१५-इस बात को ध्यान में रखते हुए कि ३३ वें निं० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन (वेजवाड़ा) द्वारा एक प्रामाणिक निघण्टु पुस्तक के निर्माणार्थ जो समिति बनाई गई थी, उसने अभी तक अपनी रिपोर्ट नहीं दी है, यह नि० भा० आयुर्वेद महा सम्मेलन भारतवर्ष के विभिन्न भागों में शास्त्रीय औषधियों के समीकरण के लिये तथा औषधि निर्माण का सही फार्मूला बनाने के लिये निम्न लिखित महानुभावों की एक समिति नियुक्त करता जिसे अन्य सदस्यों को भी सम्मिलित करने का अधिकार होगा। श्री० केलू नेम्बियर, श्री० लक्ष्मी नारायण नायक, श्री० डी० के० भारद्वाज, श्रीयुत पार्थनारायण पण्डित, श्री० परमेश्वरम् पिल्ले, श्री० आश्रमाजी।

१६—यह सम्मेलन एक स्थायी आयुर्वेदीय प्रदर्शनालय की आवश्यकता का अनुभव करता है और उसकी पूर्ति के लिये यह समझता है कि प्रत्येक प्रान्तीय आयुर्वेद महामण्डल को प्रति वर्ष न्यूनातिन्यून दस नवीन सपत्रपुष्प वनस्पतियां सुरक्षित रूप से इस प्रदर्शनालय में भेज दिया करें।

१७-यह सम्मेलन ३५ वें नि० भा० आयुर्वेद सम्मेलन के लिये कानपुर (युक्तप्रान्त) का निमन्त्रण स्वीकार करता है।

१८-यह सम्मेलन निश्चित करता है कि संडोर (जि० विबारी मद्रास) के महाराजा साहब ने अपने अर्थ सचिव द्वारा डा० ए० लक्ष्मीपति से जो प्रार्थना की है उनका ध्यान में रखते हुए नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन का एक विशिष्ट अधिवेशन सण्डौर में किया जाय। निश्चय हुआ कि यह अधिवेशन अगस्त १९४६ में हो जाना चाहिये।

१९—यह सम्मेलन सुझाव करता है कि नि. भा. आयुर्वेद महा सम्मेलन के ३४ वें अधिवेशन की सफलता की स्मृति में उडुपी के मठाधीशों के पवित्र स्थान पर एक आयुर्वेदीय पाठशाला स्थापित की जाय तथा उपर्युक्त सुझाव को कार्यान्वित करने के लिये निम्न लिखित महानुभावों की एक समिति बनाई जाय, जिसे अन्य सदस्य बढ़ाने का भी अधिकार हो-श्री डा० टी० माधव पाई (संयोजक), श्री डा० एम० आर० भट्ट, श्री वैद्य पन्गा लक्ष्मी, श्रीयुत वैद्य नारायण नायक, श्रीयुत यू० बादरायणाचार्य, श्रीयुत वैद्य टी० एन० केल्यू नेम्बियर।

(सभापति द्वारा)

५००) का वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक—

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक सम्मति में निम्न सज्जन चुने गये हैं—

१—प्रधान मन्त्री—यू० पी० वैद्य सम्मेलन, बरेली।
२—पं० रामरक्ष पाठक, प्रधानाध्यापक, आयुर्वेदिक कालेज, गुरुकुल कांगड़ी, सहारनपुर।
३—पं० रामचन्द्र जी शर्मा, यू० पी० फार्मेसी, कनवरीगंज, अलीगढ़।
४—पं० गणेशदत्त जी सारस्वत, बी० ए० आयुर्वेदाचार्य, देहली।
५—वैद्य बांकेलाल गुप्त विजयगढ़ (अलीगढ़)

इस समिति ने तय किया है कि इस बार के पारितोषिक के लिये नियमावली में प्रकाशित समस्त विषयों पर प्रकाशित समस्त पुस्तकें ली जांय।

यह पुस्तकें सन् १९३५ तक की ही प्रकाशित होनी चाहिये। इनकी पुस्तकों की ५-५ प्रतियां धन्वन्तरि विजयगढ़ के पते से भेजनी चाहिये, ये पुस्तकें ३१ जुलाई सन् १९४६ तक ही स्वीकार की जांयगी।

समस्त लेखकों एवं प्रकाशकों से प्रार्थना है कि अपनी २ पुस्तकें शीघ्र ही स्टेशन रतीकानगला B. B. & C. I. Ry या सासनी E. I. Ry पेड बिल्टी द्वारा भेजें। नियमावली धन्वन्तरि के जनवरी १९४६ के अङ्क में देखें।

भवदीय-

संयोजकः।

वैद्य सम्मेलन माधोपुर–

जयपुर राज्य सम्मेलन श्री माधोपुर अधिवेशन के लिये जो स्वागत समिति व कार्य कारिणी समिति बनाई गई है वह नीचे लिखे अनुसार है।

संरक्षक—राजवैद्य नन्दकिशोर जी शर्मा, प्रिंसीपल महाराजा कालेज जयपुर।

स्वागत समिति—

स्वागताध्यक्ष—वैद्य वंशीधर जी शर्मा एल० एल० सी० श्री माधोपुर।

स्वागत मन्त्री—वै० विश्वेश्वर दयाल जी शास्त्री, श्री माधोपुर।

उपमन्त्री—वै० पूर्णानन्द जी जोशी श्री माधोपुर।

प्रचारक व अर्थ मन्त्री—वै० घनश्याम शर्मा श्री माधोपुर।

प्रदर्शन मन्त्री—वै० मोहनलाल जी ओझा अमरसर

कार्य कारिणी समिति—

श्री स्वामी मंगलदास जी दादू महाविद्यालय जयपुर

श्री वै० निरंजनलाल जी शास्त्री भू० पू० मं० रा० प्रा० वै० स० जयपुर।

श्री वै० ओमदत्त जी शास्त्री जटवाड़ा।

श्री वै० रामसुन्दरलाल जी बाजपेई कांवट।

श्री वै० मणिराम जी शर्मा खेजडोली।

श्री वै० लखनलाल जी शास्त्री त्रिवेदी मनोहरपु

श्री वै० लक्ष्मीनारायण जी श्री माधोपर।

श्री वैद्य हरीप्रसाद जी जोशी, सिन्ध।

जयपर के वैद्यबन्धुओं में सविनय निवेदन कि सम्मेलन में पधार कर उसे सफल बनायें।

—घनश्याम शर्मा मन्त्री

सूचना–

आयुर्वेद प्रेमी तथा वैद्य महानुभावों को जानकर हार्दिक प्रसन्नता होगी कि युक्त प्रान्ती चिकित्सा प्रचारक संघ का कार्यालय सम्प्र कानपुर में नियत होगया है।

—मन्त्री

सेगमऊ में वैद्य सभा–

आज १२-२-४६ को श्री पं० नित्यानन्द जी शं धार वैद्यराज संगठन मन्त्री संयुक्त प्रान्तीय वै सम्मेलन की अध्यक्षता में बड़े समरोह के सा सम्पन्न हुई। जिसमें वैद्यों तथा आयुर्वेद प्रेमि की अधिक उपस्थित थी सभापति महोदय संघटन के ऊपर ओजस्वी भाषण दिया और प्र द्वन्दी सम्मेलन की आलोचना की तथा कई उ योगी प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुये बाद जय हिन्द जय धन्वन्तरि की जय घोष में स विसर्जित हुई।

कटनी में वैद्य सभा–

समस्त आयुर्वेद प्रेमियों को यह जानकर अ हर्ष होगा कि कटनी नगर में एक वैद्यसभा स्थापि की गई है, जिसका कि मूल उद्देश्य जनता

देशी चिकित्सा का प्रचार करते हुए परस्पर वैद्यों को सुसंगठित करना है, और प्राचीन आयुर्वेद का संरक्षण एवं सेवा करना है।

—वैद्य क्षेमचन्द्र, कटनी।

वैद्य मण्डल देहरादून—

देहरादून वैद्य मण्डल की तरफ से दो प्रस्ताव आये हैं, जिसमें प्रथम प्रस्ताव का आशय है कि षोडश यु० प्रा० वै० सम्मेलन का हिसाब स्वागत मन्त्री को प्रकाशित करा देना चाहिये। और दूसरे प्रस्ताव द्वारा देहरादून वै० सम्मेलन में अवैधानिकरीत्या प्रधान मन्त्री का चुनाव हुआ जिसके लिये असन्तोष प्रगट किया गया है।

वार्षिक रिपोर्ट—

श्री मोतीलाल नेहरू सार्वजनिक औषधालय अमरसर (जयपुर) का १५ वां वर्ष दिसम्बर सन १९४५ को समाप्त हो चुका। वर्ष भर में १७३२० बिमारों को औषधियां दी गई। जनवरी से दिसम्बर तक १६३३।=)॥ प्राप्त हुये, १५०८।=॥ खर्च हुये, ६१३॥) स्थाई कोष में रहे।

— वै० मोहनलाल ओझा, अमरसर।

वैद्य समाज पर अनभ्र वज्रपात—

राजस्थान के प्रख्यात यशस्वी चिकित्सक कविराज पं० चन्द्रशेखर जी भिषगाचार्य का आकस्मिक देहावसान ता० ३० जनवरी १९४६ को बीकानेर में होगया। आपके निधन से न केवल राजपूताना बल्कि समस्त भारतवर्ष के चिकित्सक समुदाय को अत्यन्त दुःख हुआ है।

—आचार्य सोहनलाल शास्त्री, सरदार शहर।

शोक समाचार—

आयुर्वेद संसार के सुपरिचित एवं [illegible] के यशस्वी लेखक, विशुद्ध आयुर्वेद के भक्त एवं कविराज श्री हरदयाल जी वैद्य प्रिंसीपल दयानन्दायुर्वेद महाविद्यालय के ज्येष्ठ भ्राता वैद्यराज घनश्याम जी वैद्यशास्त्री, साधारण रुग्णता के पश्चात १९-२-४६ को नूरपुर (कांगड़ा) में दिवंगत होगए।

आप अपने प्रान्त के यशस्वी चिकित्सकों में से थे। आपके स्वर्गारोहण के कारण कांगड़ा प्रांत एक अनुभवी वैद्य से वंचित होगया है।

प्रभू दिवंगत आत्मा को सद्गति एवं सम्बन्धियों को धैर्य प्रदान करें।

—सम्पादक।

३५ वां आयुर्वेद महा सम्मेलन कानपुर—

अखिल ब्रह्माण्ड नायक परम पिता परमात्मा की असीम अनुकंपा से पैंतीसवां आयुर्वेद महा सम्मेलन सुविख्यात (आयुर्वेद के आदि प्रवर्तक श्री भगवान ब्रह्मा जी का परम क्षेत्र ब्रह्मावर्त) कानपुर में होना निश्चित हुआ है। यह हम लोगों का परम सौभाग्य है कि आयुर्वेद महासम्मेलन की सेवा करने का पुनः स्वर्ण सुअवसर उपलब्ध हुआ है। अतः हमारा यह परम कर्तव्य है कि ऐसे पुण्य सुअवसर को प्राप्त कर छोटी से छोटी बातों में समय को व्यर्थ न बिताकर कोई न कोई ऐसा कार्य अवश्यमेव करें जिससे कि पैंतीसवां महा सम्मेलन चिरस्मरणीय तथा आदर्श एवं उदाहरण स्वरूप हो सके। उक्त कार्य परिपूर्ण करने के लिये समिति ने महा सम्मेलन के अङ्ग प्रत्यङ्ग विषय आदि निम्नाङ्कित क्रम से विभाजित किये हैं।

अङ्ग विभाजन क्रम—

आयुर्वेद महा सम्मेलन के चार अङ्ग।

१-वैद्य सम्मेलन, २-अध्यापक सम्मेलन, ३-स्नातक सम्मेलन, ४-विशिष्ट विद्वज् सम्मेलन।

—बालकृष्ण शास्त्री, कानपुर।

व्यापार की
चाभी
विज्ञापन है

आज कल के समय में

स्वविषयक पत्र में प्रकाशित
उपयुक्त स्थान पर दिये हुये **विज्ञापन**
सुन्दरता से छपे हुये
हर समय लाभदायक है

इसलिये

धन्वन्तरि

में विज्ञापन छपाइये

विज्ञापन दर (साधारण अंकों को)—

स्थान	१० बार	६ बार	३ बार	१ बार
१ पृष्ठ	२००)	१३०)	७०)	२५)
½ पृष्ठ	११०)	७०)	४०)	१५)
¼ पृष्ठ	६०)	४०)	२५)	१०)

(औषधियों के विज्ञापन नहीं छापे जांयगे)

विशेषांक के लिये विज्ञापन रेट्स पत्र द्वारा मंगावें।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

गुप्त सिद्ध प्रयोग

ब्लाक बन रहे हैं, कागज आगया है प्रेस कापी तैयार हो रही है। टाइप भी नया आ गया है, कमी टाइप की जो रह गई है वह भी आने वाली है अब अधिक विलम्ब नहीं है। परन्तु अभी जो रद्दी प्रयोग नष्ट किये गये है उनको स्थान की पूर्ति में ५-७ वैद्यों की ही कमी है। अतः जिन्होंने फोटू प्रयोग परिचय नहीं भेजा हो शीघ्र भेज दें।

जिन वैद्यों के प्रयोग परिचय फोटू यह तीनों में से एक की भी कमी होगी वह नहीं छपेंगे, हम उन सबको पत्र द्वारा भी सूचना देचुके हैं कि वह तीनों पूरा करें, और अब धन्वन्तरि द्वारा भी द्वितीय बार सूचना दे रहे हैं अब हमें वह क्षमा करेंगे। —व्यवस्थापक।

AYURVEDIC INJECTIONS

PREPARED AT INDIA'S PIONEER
AYURVEDIC LABORATORY
(Established in A. D. 1914)
THE APOLLO PHARMACY
MANUFACTURING CHEMISTS
P. O. JHARIA, E. I. Rly.

LIFE COMES FROM APOLLO
TRADEMARK
THE APOLLO PHARMACY, JHARIA

BRANCHES & AGENCIES

Ahmedabad, Ajmer. Anjar Cutch, Bangalore City, Baroda, Bavla, Belgaum. Bhavnagar, Bombay, Botad, Broach, Cairo (Egypt), Cawnpore, Chhindwara, Chuda, Davangere, Devpur, Dhandhuka, Dhrol Ilkal, Jammu, Jamnagar, Jodia, Kapadwanj, Karachi, Kosamba, Lahore, Lakhtar Latur, Limbdi, Marwar-Mundwa, Mehsana, Morvi, Nadiad, Nairobi (East Africa) Nasik City, Palitana, Patan, Patna, Patiala, Rajkot, Raver, Srinagar-Kashmir, Secundrabad, Shiroda, Sihore, Surat, Visnagar, Wadrhwan Camp and City

Apollo injections are being used by many leading physicians and surgeons of India, who are interested in the Indian system of medicine. This is the only Indian laboratory well known for its high standard of accuracy and purity. Some leaders of Ayurvedic Congress have praised our products with open hearts.

Our products are available from your city agent at our fixed rates. They are highly beneficial and used with success by millions of people throughout India and abroad.

Medical practitioners get reasonable commission. For further details see our agent or write to the Pharmacy. We are to appoint more agents in non represented areas.

आयुर्वेदिक इन्जेकशन्स

दि अपोलो फार्मेसी, झरिया ई० आई० आर०

अपोलो आयुर्वेदिक इन्जेकशन्स लाखों रोगियों पर परीक्षित किये गये हैं। अल्प मूल्य होने पर भी अधिक गुणकारी है। भारतवर्ष के आयुर्वेद के महान् नेताओं ने उनकी मुक्त कण्ठ से प्रशंमा की है। आप अपने शहर के हमारे एजेन्ट से खरीद कर थोड़े व्यय में ही आरोग्यता प्राप्त कीजिये। आपके यहां न मिलने पर फार्मेसी से मंगवालें, विशेष विवरण हमारे एजेन्ट द्वारा ज्ञात करें।

WAR--TIME BRANCH--OFFICE
THE APOLLO PHARMACY
P. O. BOX NO. 93, BARODA.

भारत की जड़ी बूटियों द्वारा वैज्ञानिक ढंग पर निर्मित विशुद्ध

"अवध"

आयुर्वेदिक-इंजैक्शन

[रजिस्टर्ड]

अवध आयुर्वेदिक इंजैक्शन आम जनता पर जैसे पोस्ट, रेलवे, जेल, बैंक और गांधी समिति के धर्मार्थ औषधालयों के रोगियों आदि पर हमारे इंजैक्शन्स पूर्ण लाभप्रद प्रमाणित हुये हैं। आशा है वैद्य, डाक्टर और हकीम गण हमारे इंजैक्शन्स काम में लाकर धर्म और यश कमायेंगे।

पता—डा० बी० एस० वर्मा, अवध आयुर्वेदिक इन्जैक्शन फार्मेसी,
महिजाबाद रोड, हैदराबाद (सिन्ध)

आश्चर्य जनक आविष्कार

आयुर्वेदिक-कालाजार इन्जेक्शन से—

हजारों बार का परीक्षित !!

केवल ४-६ इन्जेक्शनों में कालाजार ज्वर, प्लीहा व यकृत एकदम निर्मूल हो जाता है। फायदा न हो तो दाम वापिस। यहां से स्वल्प खर्च में इन्जेक्शन देना सीख कर डिप्लोमा भी प्राप्त कर सकते हैं।

शर्तिया आराम

स्टोकिस्ट-दि नेशनल आयुर्वेदिक कालेज (रजिस्टर्ड) गोल बाजार,
समस्तीपुर O. T. Ry.

फकीरी गुप्त रहस्य—

यह पुस्तक अनुभूत प्रयोगों का भण्डार है, स्त्री पुरुषों के गुप्त रोगों की चिकित्सा विधि, जिससे सर्व साधारण आदमी गुप्त रोगों का इलाज करके हजारों रुपया कमा सकता है। प्रयोग सभी तत्कालीन प्रभावशाली और शतशः अनुभूत है। इस पुस्तक में वही प्रयोग लिखे गये हैं, जो अनेक बार कसौटी पर परखे जाचुके हैं। इस पुस्तक के पास रहने से किसी वैद्य की आवश्यकता नहीं रहती क्योंकि यह स्वयं ही घर का वैद्य है, जिस औषधालय में यह पुस्तक नहीं है उसका औषधालय अधूरा ही है, इसमें फकीरों के खास प्रयोग है। लेखक ने सागर को गागर में बन्द कर दिया है। इतने बड़े उपयोग ग्रन्थ का मूल्य केवल ३॥।-)॥ डाक व्यय पैकिंग॥ ॥

पेटेन्ट औषधियां—

इस पुस्तक में सब प्रकार के धड़ाधड़ बिकने वाली पेटेन्ट औषधियों के सच्चे प्रयोग लिखे गये हैं, जिन्हें बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीखकर साधारण पूंजी में तैयार कीजिए, इस पुस्तक द्वारा सैकड़ों रुपये मासिक की स्थायी आमदनी पैदा कर सकते हैं। मूल्य ६७६ प्रयोग ४) डाक व्यय।=)

पता—जीवन बन्धु कार्यालय, संगरिया (बीकानेर)

दवा के सच्चे मोती।

वैद्यो !　　हकीमो !!　　तथा फार्मेसी वालो !!!

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा, जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारतवर्ष के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं, निहायत किफायत से मिलते हैं। धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने की कृपा करें।

पता-नगीनदास वीरचन्द जेवरी, ४४-४६, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३।

"इन्जैक्शन्स"

हमारी फार्मेसी व अपने निजी अनुभव से तैयार किये हुये शतप्रतिशत फलप्रद इन्जैक्शन्स से सैकड़ों मरीजों ने शर्तिया लाभ उठाया है।

उदार शर्तों से एजेन्सी के लिये लिखें। एजेन्सी के नियम व प्राइस लिस्ट (सूचीपत्र) मुफ्त मंगावें।

पता—मैनेजिंग डाइरेक्टर—

पाराशरी फार्मेसी, चनस्मा, जी. वी. एस. रेलवे।

विगत वर्षों की भांति "धन्वन्तरि त्रयोदशी व दीपावली" के शुभ अवसर पर हमने इस वर्ष भी विशेष उपहार देना स्वीकृत किया है, जिसकी अवधि दिवाली से होली तक सीमित है।

मोती चूरा—

के ग्राहक इस विशेष अवसर से अवश्य लाभ उठावें। उपहार का विवरण इस प्रकार है।

१० तोला मोती चूरा नं० १ के ग्राहक को १ मशीन रस निचोड़ने की जो १ घण्टे में करीब १ मन रस निचोड़ सकती है।

१० तोला मोती चूरा नं० २ के ग्राहक को १ मशीन टिकिया (टेब्लेट) बनाने की जो १ घण्टे में करीब २०० टिकियां अति सुन्दर बना सकती है।

१० तोला मोती चूरा नं० ३ के ग्राहक को १ वर्ष तक धन्वन्तरि-पत्रिका निःशुल्क भेजी जावेगी।

ध्यान रखिये ?

मोती चूरा बहुमूल्य मोतियों का छीलन होने के कारण बाजारू साधारण मोतियों से श्रेष्ठ होता है।

भाव निम्न प्रकार है—

मोती चूरा नं० १-२-३ का क्रमशः १०) रु०, ८) रु० व ६) रु० प्रति तोला है।

रघुवरदयाल वैद्य, दयालु आयु० फार्मेसी, चन्दवारगेट, फिरोजाबाद, यू. पी.

बहुत बड़े अभाव की पूर्ति

आयुर्वेद संसार को अभूत पूर्व दान

सचित्र शरीर क्रिया विज्ञान

प्रकाशित हो गया।

आयुर्वेद की उन्नति की उत्कट अभिलाषा के कारण ही इस दुर्लभ ग्रन्थ का प्रकाशन युद्ध की इस संकट-घड़ी में किया गया है, जबकि एक-एक सीट कागज के लिये कितनी कठिनाई उठानी पड़ रही है, यह सर्व विदित है।

आयुर्वेद में यह प्रथम स्तुत्य प्रयास हुआ है। इससे आयुर्वेद के एक प्रधान अङ्ग की पूर्ति हुई है। वैद्यों पर डाक्टरों का यह आक्षेप रहा है कि वे शारीरिक ज्ञान से हीन चिकित्सक होते हैं। इस ग्रन्थ ने उन्हें मुंहतोड़ उत्तर दिया है।

अभी तक शरीर क्रिया के बारे में आयुर्वेद में जो कुछ लिखा गया था वह अंग्रेजी ग्रन्थों का अनुवाद मात्र था। जिसका असर आयुर्वेद के छात्रों पर यह होता था कि वे आयुर्वेद को हीन मानने लगते थे।

इस ग्रन्थ के उदीयमान लेखक आयुर्वेदालंकार श्री रंजीतराय ने आयुर्वेद सिद्धान्त के आधार पर इसे मौलिक रूप में लिखा है। जो आयुर्वेद की श्रेष्ठता का द्योतक है। जिन्हें अंग्रेजी के फिजियालोजी का ज्ञान है वे यदि इस ग्रन्थ को पढ़ेंगे तो देखेंगे कि विदेशी विज्ञान आयुर्वेद से बड़ा नहीं है। इस ग्रन्थ में इस विषय का व्योरावद्ध वर्णन है कि शरीर का कौन सा अङ्ग क्या काम करता है? चिकित्सक के लिये यह जानना अत्यावश्यक है।

अंग्रेजी में तो इस प्रकार के ग्रन्थों का मूल्य पन्द्रह-बीस रुपये से कम होता ही नहीं है। हिन्दी और संस्कृत में भी अनुवाद ग्रन्थ का ही काफी मूल्य है। लेकिन हमने आयुर्वेद की सेवा के ख्याल से इसका मूल्य बहुत कम रक्खा है। ५२ अध्याय, डिमाई १/८ साइज के ६०० पृष्ठ जिनमें ५३ चित्र हैं, का मूल्य सिर्फ ६) रु० रखा गया है। डाक व्यय ।।।≡) है। पेशगी के साथ आर्डर भेजकर शीघ्र ग्रन्थ मंगवा लें, नहीं तो दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करनी होगी।

अस्थायी हेड आफिस- **श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन,**
कदम कूआं पटना। कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

नोट—आयुर्वेद के छात्र ५) रु० में ही यह ग्रन्थ पा सकते हैं, यदि वे अपने अध्यापक के पत्र के साथ पूरा मूल्य अग्रिम भेज देंगे। उन्हें डाक व्यय नहीं लगेगा।

हर प्रकार के कठिन और असाध्य रोगों से थोड़े समय और
मामूली खर्च में छुटकारा पाने के लिये

'मिश्रा'

आयुर्वेदिक-इंजैकशन

प्रयोग कीजिये
यहां इन्जेक्शन लगाने की शिक्षा भी दी जाती है ।

एजेन्टों की आवश्यकता है--

नियमादि मुफ्त मंगावें ।

सचित्र आयुर्वेदिक इन्जेक्शन विज्ञान पुस्तक मूल्य ५) पो० व्यय ॥)

जी० ए० मिश्रा, आयुर्वेदिक फार्मेसी (रजि०) झांसी

मौडर्न एडवरटाइजर झांसी द्वारा प्रचारित ।

आप भी लखपती बन जाइये

सुगन्धित तैलों के नुस्खे— (ले० वैद्यभूषण श्री मोहनलाल कोठारी) लेखक ने हजारों रुपये व्यय करके देश की सभी प्रसिद्ध २ तैलों के नुस्खे प्राप्त किये हैं और अपने बीस साल के अनुभव को हृदय खोलकर जनता के सामने रख दिया है। नुस्खे इस पुस्तक में सैकड़ों तैलों के दिये गये हैं, जिनमें कुछ के नाम ये हैं--हिमसागर तैल, केशराज तैल, बुद्धिवर्द्धक तैल, मनमोहनी तैल, कलकत्ते के डा० नगेन्द्रनाथ सेन को करोड़पती बनाने वाला केशरंजन तैल, हिमकल्याण तैल, पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री को लखपती बनाने वाला ब्राह्मी-विलास तैल, मालती तैल आदि तैलों के साफ करने और खुशबुओं को देने का भी विधान समझा दिया गया है। मूल्य सिर्फ २) डा० मह० ॥)

शर्बतों का रोजगार--लेखक बा० प्रीतमलाल जी एम० एस० सी० एल० एल० बी० एडवोकेट, गर्मियों में पीने वाले बहारदार शर्बतों और सोडा-वाटर बनाने का विधान और अनेकों नुस्खे दिये गये हैं। मूल्य २) डा० म० ॥)

सामुद्रिक विद्या- (लेखक पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री) मुख आदि अङ्गों को देख कर ही चोर, ठग, नेक, बद, धनी निर्धन, बांझ, विधवा, जिन्दगी और मौत की बात आप बता सकते हैं। हाथ देखने की विद्या का भी पूरा वर्णन है। लिथो के लगभग ५० चित्र २५० पृष्ठ के मूल्य सिर्फ ३) डाक महसूल ॥)

पते चाहिये

विशेषतया वैद्यों, हकीमों डाक्टरों, अत्तारों, पंसारियों तथा व्यापारियों, बजाजों आदि के २५ पते भेजने वाले सज्जनों को हम ॥) के टिकट भेंट करेंगे। अथवा हमारे यहां की कोई भी पुस्तक खरीदने पर हम ॥) की रियायत देंगे।

फन पेन्टी—इस पुस्तक को पढ़कर साइनबोर्ड बनाना सीखकर १०)-१५) रोज पैदा कीजिये। मूल्य २) रु० डाक मह० ॥)

मंगाने का पता--पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री, ब्राह्मी औषधालय, अलीगढ़ ।

यदि आपको आयुर्वेदिक इञ्जेक्शनों का—

हजारों बार का परीक्षित

अदभुत चमत्कार

अपूर्व उत्कृष्ट आविष्कार

देखना हो तो निम्न पते से ही प्रत्येक रोगों का इंजेक्शन मंगाकर धन व यश के भागी बनें

आयुर्वेदिक कुनैन इञ्जेक्शन

केवल १ इंजेक्शन में मलेरिया लापता हो जाता है। एलोपैथी कुनैन से विशेष लाभदायक है। इसे बड़े २ वैद्य डाक्टरों ने आजमाकर मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। परीक्षा प्रार्थनीय है।

दी आयुर्वेदिक इञ्जेक्शन सप्लाई एजेन्सी, मंगलगढ़ (दरभंगा)

वैद्य हकीमों को सर्जरी शिक्षा

नित्य प्रति काम आने वाले विभिन्न ५० आवश्यकीय सर्जरी कार्यों की जैसे—सर्व प्रकार के प्रचलित इंजैक्शन, एनिमा, कैथेटर, सैलाइनऐपरेटस, ग्लिसरीन एनिमा, वैक्सीनेशन लगाना। गर्भाशय, मूत्राशय, आमाशय, नेत्र, कर्ण, गुदा गला, नासिका आदि अङ्गों का अन्दर से धोना तथा इनमें औषधी लगाना, पेट, अण्डकोष का जल और स्तन का रुका दूध, पेट की रुकी वायु, गर्भ में से टेढ़ा व रुका हुआ बच्चा निकालना, साधारण अङ्गों का आप्रेशन उसका ड्रेसिङ्ग, दांत उखाड़ना, पट्टी बांधना, शिरावेध, शिरोघात, शिरो विरेचन कार्य। मल, मूत्र, रक्त; थूक, दुग्ध परीक्षोपाय, स्थानच्युत अस्थि व आंत्र का बैठना, ट्रस (पेटी) बांधना, रक्तस्राव, जलमग्न, अग्निदग्ध, श्वासावरोध, विष भक्षण, अभिघातादि आकस्मिक घटनाओं में तुरन्त किये जाने वाले उपचार स्टैथिस्कोप, थर्मामीटर, अइरफैर, हाटवाटरबैग, ब्लडरबर, स्प्रीटग्लास, लैक्टोमीटर; डाइग्नौसिससैट आदि यन्त्र शास्त्र उपयोग तथा उपरोक्त सम्पूर्ण विषयों की शिक्षा क्रियात्मकक्रम (प्रैक्टीकल) सहित दी जावेगी। शिक्षा-शुल्क ५०) मात्र।

ज्ञानेच्छुक वैद्य शिक्षा लेने के निमित्त प्रार्थना पत्र के साथ २५) अर्द्धशुल्क पूर्व भेज शीघ्र स्थान सुरक्षित करा लें। क्योंकि नियत संख्या पूर्ण हो जाने पर प्रवेश बन्द कर दिया जायेगा। सेवा सदन आयुर्वेदोन्नति, प्रचारादि लक्ष्य से ऐसे शिक्षा केन्द्र भारत के विभिन्न ३० स्थानों पर प्रारम्भ कर रहा है। जिससे प्रत्येक व्यक्ति घर के समीप अल्प व्यय में शिक्षा ग्रहण कर लाभ उठा सके। शिक्षा केन्द्रों के साथ २ आयुर्वेद विशेषज्ञ सर्जनों द्वारा नेत्र के मोतियाबिंदु, परवाल, फूला, रतौंधी आदि और अर्श (बवासीर) रोगों के आपरेशन चिकित्सालय तथा नेत्र अर्श आप्रेशन शिक्षणालय भी विशेष रूप से स्थापित किये जारहे हैं। सम्पूर्ण कार्यों की सूक्ष्म योजना बिना मूल्य और विशेष विवरण पत्रिका ।-) मनीआर्डर भेजने से मिलेगी।

प्रबन्धक—आयुर्वेद सेवा सदन, हरबटपुर, जिला देहरादून नं० १

आवश्यकीय सूचना—

धन्वन्तरि के समस्त ग्राहकों से निवेदन है वह अपना २ चन्दा ५=) हमारे छपे मनिआर्डर फार्म से जो मई के अङ्क में भेजा जायगा, अन्तिम जून तक भेज दें, उसके बाद में आने वाले रुपये में भूल हो जाने के उत्तरदायी हम नहीं हैं।

व्यवस्थापक-धन्वन्तरि।

उपयोगी नवीन पुस्तकें

योगरत्नाकर (दोनों भाग)	१५)
भैषज्य रत्नावली (दोनों भाग)	१०)
भावप्रकाश निघण्टु	४॥)
दूध-चिकित्सा	४)
तपेदिक	४)
हमारा भोजन	४)
आयुर्वेद-प्रकाश (प्रथम भाग)	४)
आयुर्वेद प्रश्नोत्तरी (दोनों भाग)	४)
रुग्ण परिचर्या	३॥)
वैद्य सहचर २॥) सजिल्द	३)
त्रिदोषालोक	२॥)
फलाहार चिकित्सा	२।)
आंख का अचूक इलाज	२)
भोजन विधि अर्थात रोग और पथ्यापथ्य	२)
भोजन ही अमृत है	१॥।)
जुकाम	१॥)

स्वास्थ के लिये शाक तरकारियां	१॥)
सर्प-विज्ञान	१।)
मनुष्य का आहार	१)
साधारण नेत्र रोग	१)
पेटेन्ट औषधि और भारतवर्ष-	
(प्रथम भाग)	॥)
(द्वितीय भाग)	१)
शहद	॥।)
मट्ठा (उसके गुण और उपयोग)	॥=)
ग्राम्य चिकित्सा	॥=)
स्त्री रोग चिकित्सा	॥)
टोटका विज्ञान	।=)
मधुमेह	॥)
राजयक्ष्मा	।)
प्लीहा रोग चिकित्सा	।)
श्वास रोग चिकित्सा	।)

पुस्तकें अत्युपयोगी हैं, आज ही आर्डर दीजिये।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

भस्मार्थ उत्तम द्रव्य

शुद्ध बङ्ग	१ सेर	४०)
धान्याभ्रक	,,	४)
	५ सेर	१७॥)
शुद्ध यशद	१ सेर	१०)
शुद्ध ताम्रचूर्ण	,,	१०)
ताम्रचूर्ण (अशोधित)	,,	७)
शुद्ध फौलाद चूर्ण	,,	४)
फौलाद चूर्ण (अशोधित)	,,	३)
मोती सीप	,,	३)
वज्राभ्रक	,,	३)
सीप टुकड़ा	,,	२॥)
शुद्ध मांडूर	,,	१॥)
शंख टुकड़ा	,,	१)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़

कतिपय असली द्रव्य

कस्तूरी अत्युत्तम	१ तोला	४८)
केशर अत्युत्तम	१ तोला	४॥)
अष्टवर्ग	१ सेर	१०)
मुलहठी सत्व	१ सेर	६)
तालीसपत्र असली	१ सेर	२)
सर्पगन्धा	१ सेर	१५)
ब्राह्मी असली	१ सेर	२)
दशमूल असली	१ मन	२५)
	१० सेर	८)
शिलाजीत नं० १ सूर्यतापी	१ सेर	४०)
,, नं० २ अग्नितापी	१ सेर	१२॥)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़

—धन्वन्तरि वर्ष २१ का अभूतपूर्व विशेषांक—

रक्त-रोगांक

इसमें भारत के मान्य वैद्यों के रक्त रोग और कुष्ठ पर विवेचनात्मक और चिकित्सा युक्त लेख रहेंगे। दर्जनों रङ्गीन तथा सादे चित्र होंगे। अभी से तैयारियां आरम्भ कर दी गई हैं। जून जौलाई मास में ग्राहकों की सेवा में भेज दिया जायगा, यह विशेषाङ्क धन्वन्तरि के ग्राहको को मुफ्त मिलेगा। अतः ५॥) भेजकर अभी से धन्वन्तरि के ग्राहक बन जांय।

IF NOT DELIVERED PLEASE RETURN TO—

DHANWANTARI KARYALAYA, BIJAIGARH (ALIGARH

श्रीमान्—

2203 पुस्तकालयाध्यक्ष
गुरुकुल विश्वविद्यालय
गुरुकुल कांगड़ी (हरिद्वार)

धन्वन्तरि

भाग २०
अङ्क १२

—सम्पादक—
वैद्य बांकेलाल गुप्त— वैद्य देवीशरण गर्ग।

मई
१९४६

ग्राहकों से आवश्यक निवेदन

१–यह २० वें वर्ष का अन्तिम अङ्क है। इस अङ्क में क्षयरोगांक से बने हुये सभी ग्राह का चन्दा पूरा हो जायगा।

२–२१ वें वर्ष में "रक्तरोगांक" नामक विशेषांक होगा, इसमें रक्त एवं कुष्ठ रोग का विश विवेचन एवं चिकित्सा होगी। आगामी साधारण दसों अङ्कों में भिन्न २ रक्त रोगों के वर्णन प्रकाशित होंगे। जिसकी विषय सूची रक्त रोगांक में दिये जांयगे औ इस प्रकार प्रत्येक अंक एक विशेष रोग का परिचायक होगा।

३–कागज की कमी और इच्छित तादाद में न छपने के कारण विशेषांक ग्राहक संख्यानुस ही छापा जा रहा है। अतः पुराने ग्राहकों को चाहिये कि १२ वां अंक पहुंचते ही अग्रिम वार्षिक मूल्य ५≡) शीघ्र ही मनिआर्डर से भेज दें, मनिआर्डर फार्म छपा हुआ इसी अंक में लगा है।

४–अंक ग्राहक संख्यानुसार ही छपेगा। वृद्धि न की जायगी, सर्व प्रथम मनिआर्डर से रुपया भेज देने वालों को अङ्क भेजा जायगा, तब जो अंक की प्रतियां बचेंगी उन्हें वी०पी० भेजी जांयगी। हम यह प्रतिज्ञा नहीं कर सकते कि वी० पी० से मंगाने वालों को प्रतियां अवश्य ही दी जांयेंगी। यदि प्रतियां बची तो वी० पी० भेजी जांयगी अन्यथा नहीं।

५–जो महानुभाव ग्राहक बन रहे हैं या जिन्होंने ग्राहक बनाये हैं उनके हम हृदय से कृतज्ञ हैं। प्रार्थना है कि अपने २ बनाये ग्राहकों के रुपये शीघ्रता से ही भिजवादें, मनिआर्डर फार्म साथ है।

६–डाक के नियमानुसार विशेषांक के साथ में अन्य कोई वस्तु (पुस्तक या औषधि) आदि नहीं भेजी जा सकती है।

७–ग्राहक महानुभावों से निवेदन है कि मनिआर्डर फार्म पर अपना पता और ग्राहक नम्बर साफ २ लिखें, ताकि गलती की सम्भावना न रहे।

८–जिन महानुभावों को किसी कारणवश ग्राहक नहीं रहना हो, वह एक कार्ड द्वारा सूचना भेज दें ताकि यदि वी. वी. भेजने का अवसर आवे तो व्यर्थ हानि न उठानी पड़े।

—व्यवस्थाप

गुप्तसिद्धप्रयोग-

का सब कार्य प्रायः समाप्त हो चुका, छपना ही शेष है वह गवर्नमेंट की आज्ञा मिलते ही छपने लगेगा प्रयत्न हो रहा है।

मैनेजर—

Approved by Dept. of Public Instructions of Central & Provinces Berar.

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

MURARI ART AGRA

धन्वन्तरि

या औषधी पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगपुरा।
मनैनु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

सचित्र मासिक पत्र

भाग २०

अङ्क १२

धन्वन्तरि के प्रति

जय धन्वन्तरि प्यारे !

सरस सुधाधारा बरसाते, तीस दिवस पर सजकर आते।
अनुपम अनुभव ज्योति जगाते, सब पत्रों से न्यारे॥ जय०॥

आयुर्वेद महत्व बताते, जड़ी बूटियों के गुणगाते।
प्रणय प्रदीप पुनः दिखलाते, रोग राग को मारे॥ जय०॥

जागृति का संदेश दिया है, प्रतिपल उन्नति वेश लिया है।
त्रिगुण प्रतीक पताका देकर, वैद्य विश्व को तारे॥ जय०॥

सुजन सुमन की सुरभित माला, वैद्यमण्डली का मधुप्याला।
मानव के अणु-अणु में डाला, अमृतकलश को धारे॥ जय०॥

अग जग में तेरी गुण हाला, नव बसन्त में मधुवन बाला।
कोयल का पञ्चम स्वर गाता, "धन्वन्तरि" अपनारे॥
जय धन्वन्तरि प्यारे॥

रचयिता—श्री रतिप्रसाद जी पाठक "धीर" भिषगाचार्य, श्री कालिकेश्वर कार्यालय, बक्सर (आरा)

सम्पादकीय—

श्री भगवान धन्वन्तरि की कृपा तथा आप सब ग्राहक अनुग्राहकों की सहायता और लेखकों के अनुग्रह से धन्वन्तरि का यह २० वां वर्ष सानन्द सम्पन्न होरहा है। इस वर्ष में अनेकों विघ्न बाधाओं के होते हुये भी आपके प्रिय कृपापत्र धन्वन्तरि ने सदा की भांति आपकी सेवा सम्पन्न की है। हमें विश्वास है कि आप भी धन्वन्तरि की सेवा से सन्तुष्ट और प्रसन्न होंगे। और अपनी कृपा दृष्टि सदैव की भांति धन्वन्तरि पर बनाये रखेंगे।

धन्वन्तरि का प्रथम और दूसरा अङ्क अर्थात् जून जौलाई का अङ्क "रक्तरोगांक" होगा, ऐसी सूचना गत पत्रों में भी प्रकाशित हो चुकी है। यह विशेषांक पूर्व प्रकाशित सब विशेषांकों से सर्वोत्तम और महत्वपूर्ण होगा। क्योंकि भारत भर के लब्ध प्रतिष्ठित विद्वान लेखक वैद्यों ने प्रायः इसके लिये लेख भेजने की कृपा की है। वैसे तो धन्वन्तरि के सभी विशेषांक विषय और पृष्ठ संख्या की दृष्टि से अभूतपूर्व रहे हैं, किन्तु इस विशेषांक का साहित्य और भी अधिक उपयोगी एवं महत्वपूर्ण होगा।

धन्वन्तरि में सभी आगत लेखों को स्थान नहीं दिया जाता, उत्तम से उत्तम लेख ही छांट कर दिये जाते हैं। यद्यपि इसमें हमें कुछ लेखकों की रुष्टता सहन करनी पड़ती है, किन्तु पाठकों के समय का ध्यान रखते हुये हम वही लेख देते हैं जो कि उपयोगी हों। व्यर्थ का पिष्टपेषण पाठकों का समय नष्ट न करे इसका सदैव ध्यान रखा जाता है, और इस विशेषांक में भी इसका ध्यान रखा गया है। धन्वन्तरि के लिये विशेषांक की आवश्यकता से कई गुने लेख हमारे पास उपस्थित हैं, और तभी यह सम्भव है कि हम १-१ लाइन आपके ज्ञानवर्धन योग्य प्रदान कर सकेंगे।

इस विशेषांक के लिये चित्रों की भी पूरी चेष्टा की जा रही है। पूर्व की भांति सचित्र और वह भी भाव पूर्ण चित्रों से युक्त यह विशेषांक आपकी सेवा में उपस्थित होगा।

रक्तरोगांक को सुन्दरतया प्रकाशित करने के लिये हमने नया टाइप मंगवा लिया है। उसका नमूना इस अङ्क में देखकर ग्राहक अनुग्राहक अवश्य प्रसन्न होंगे।

यद्यपि हमें इस बेहद तेजी में इस सुविधा के देने में अत्यधिक खर्च करना पड़ा है। फिर भी हमने अपने प्रेमी पाठकों की प्रसन्नता के आगे इस बात को कुछ भी महत्व नहीं दिया। यही नहीं, आगे भी हम उनकी प्रसन्नता के लिये कुछ भी कसर न उठा रखेंगे। इस बात का हम आप को विश्वास दिलाते हैं और प्रयत्न भी कर रहे हैं।

यह विशेषांक कागज के इस भीषण अकाल में ग्राहक संख्या के अनुकूल ही छापा जायेगा, अधिक नहीं। अतः ग्राहकों को चाहिये कि वे अपना वार्षिक मूल्य ५=) शीघ्र ही मनिआर्डर से भेजकर अपनी प्रति रिजर्व करालें। अन्यथा हम कोई सुविधा देने के लिये बाध्य नहीं होंगे। इस बार—

यह निश्चय किया गया है कि—

केवल उन ग्राहकों को ही धन्वन्तरि भेजा जाय जिनका कि वार्षिक मूल्य मनिआर्डर से आजाय। इस बार वी० पी० यथा सम्भव एक भी नहीं भेजी जायगी। यदि आप धन्वन्तरि से लाभ उठाना चाहें तो अविलम्ब वार्षिक मूल्य (छपे हुये मनिआर्डर फार्म जो इसी अङ्क में लगा हुआ है भरकर) भेज दें। जो सज्जन मूल्य नहीं भेजेंगे उनकी सेवा में धन्वन्तरि नहीं पहुंच सकेगा।

—वैद्य बांकेलाल गुप्त।

स्वास्थ्य सुधार की नयी योजना

“भारत वर्ष में सार्वजनिक स्वास्थ्य की इतनी दुरवस्था है कि यहां मनुष्य की औसत आयु २६ वर्ष है, जब कि आस्ट्रेलिया में ६७, इंगलैंड में ६३ और जापान में ४७ वर्ष है।

“इस देश में शिशुओं की मृत्यु संख्या १००० के पीछे १६२ है, जब कि वह संयुक्तराष्ट्र अमेरिका में ४५, इंगलैण्ड में ५८ और जापान में १०६ है। भारतवर्ष में ४० करोड़ जनता के लिये ४७५०० डाक्टर हैं अर्थात् ६८०० लोगों के लिए सिर्फ डाक्टर, जब कि इंगलैण्ड में १००० के लिए १ डाक्टर उपलब्ध है। ४३००० के पीछे एक नर्स और ६०००० के पीछे १ धाय मिलती है, जब कि ब्रिटेन में ये संख्याएं क्रमशः २०० और ६१८ हैं।

भारत सरकार ने सर जोसफ भोर की अध्यक्षता में स्वास्थ्य पर्यवेक्षण और उन्नति कमेटी अक्टूबर १९४३ में युद्धोत्तर कालीन पुनर्निर्माण के लिये नियुक्त की थी। इसमें २४ सदस्यों (८ सरकारी और १६ गैर-सरकारी) में से १९ भारतीय और ५ यूरोपियन थे।

कमेटी ने २२० पृष्ठों में भारत की वर्तमान अस्वास्थ्यकर दुरवस्था का चित्र खींचा है और ५०० पृष्ठों में स्वास्थ्य-सम्बन्धी सिफारिशें प्रस्तुत की हैं।

भारतवर्ष के गिरते हुए स्वास्थ्य के लिये उक्त अंक देते हुए कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में बताया है—

प्रति वर्ष भारतवर्ष में १ करोड़ व्यक्ति मलेरिया से ग्रस्त होते हैं, जिनमें से २० लाख मर जाते हैं। देश को कम से कम १५७ लाख और १८७ लाख रु० के बीच आर्थिक क्षति उठानी पड़ती है।

प्रायः २५ लाख व्यक्ति तपेदिक के शिकार होते हैं, जिनमें से ५ लाख प्रति वर्ष मर जाते हैं। हैजे चेचक व प्लेग के विषय में भारतवर्ष संसार का सब से संकटग्रस्त देश है। २ लाख स्त्रियां प्रति वर्ष गर्भावस्था अथवा प्रसूतिकाल में मर जाती हैं तथा ४० लाख अन्य बीमारियों से ग्रस्त होती हैं।

रिपोर्ट के अनुसार पर्याप्त डाक्टरी सहायता के लिये खर्च करने की सामर्थ्य न होने के कारण किसी व्यक्ति को उससे वंचित न रहना चाहिये। देहात को अपनी प्रधान सिफारिशों का केन्द्र बिंदु रखा गया है, क्यों कि कृषकों के प्रति भारत का ऋण बहुत अधिक है। जब देश में महामारी और दुर्भिक्ष पड़ते हैं तो केवल उसे ही सबसे अधिक बलिदान देना पड़ता है और इस पर भी उसे केवल नाम मात्र की डाक्टरी सहायता मिलती है। इसके अलावा लगभग ९० प्रतिशत भारतीय जनता गांवों में रहती है और देश की मूलभूत समस्या जनता के बहुत अधिक भाग के लिए स्वास्थ्य सम्बन्धी पर्याप्त सुरक्षा की व्यवस्था करना है। इस लिए इन सुझावों के अन्तर्गत गांवों में रहने वालों को ही मुख्य रूप से लाभ पहुंचाने की चेष्टा की गई है।

समिति ने सिफारिश की है कि केन्द्रीय, प्रांतीय और स्थानीय शासन व्यवस्था के केन्द्रों में विशेषज्ञों की स्थायी परिषदों का निर्माण किया जाय। इन परिषदों में डाक्टरी, जन्तु चिकित्सा, सेवा सुश्रूषा तथा अन्य सम्बद्ध अंगों के प्रतिनिधि रहेंगे।

समिति ने बताया है कि संयुक्तराष्ट्र अमेरिका के ढङ्ग पर प्रान्तों में संक्रामक रोगों की रोक थाम के लिए आवश्यक सभी उपायों को लागू करने की जिम्मेदारी केन्द्रीय सरकार की ही होनी चाहिये। कुछ असाधारण परिस्थितियों में समस्त देश के हितों की दृष्टि से केन्द्रीय सरकार को किसी प्रान्त में प्रत्यक्ष कार्रवाई करने का अधिकार होना चाहिये।

दीर्घकालीन कार्यक्रम--

दीर्घ कालीन कार्यक्रम के अन्तर्गत समिति ने इस बात पर जोर दिया है कि रोग निवारण के विषय पर न केवल तत्काल सहायता पहुंचाने का बल्कि रोग की जड़ निवारण के निराकरण के यत्न द्वारा रोग के सामूहिक कुप्रभावों को भी दूर करने का प्रयत्न किया जाय। उपयुक्त निवास-व्यवस्था, स्वच्छ वातारण तथा पीने के लिये शुद्ध जल की प्राप्ति स्वस्थ जीवन की प्रथम आवश्यकताएं हैं। पोषणात्मक स्तरों का किस्म तथा परिणाम की दृष्टि से सुधार, बेकारी का निवारण, सभी मजदूरों के लिये न्यूनतम आवश्यक पारिश्रमिक, कृषि और औद्योगिक उत्पादन का सुधार (विशेषकर देहाती इलाकों में) आदि व्यवस्थाएं एक ही समस्या के अनेक रूप हैं, जिनकी ओर तत्काल ध्यान देना नितान्त आवश्यक है।

अल्प कालीन कार्यक्रम--

अल्प कालीन कार्यक्रम के अन्तर्गत जिला स्वास्थ्य संगठन की साधारण योजना होगी, जैसी दीर्घ कालीन कार्यक्रम के अन्तर्गत बताई गई है, फिर भी वह उसकी अपेक्षा कम विस्तृत होगी। प्रस्ताव किया गया है कि अपर्याप्त उपलब्धि को ध्यान में रखते हुए प्रत्येक प्रारम्भिक संगठन को पहले दस वर्षों में ४०,००० लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रबन्ध करना चाहिये (परन्तु दीर्घ कालीन कार्य क्रममें यह संख्या १,००,००० से २००,००० तक होगी) और जिला स्वास्थ्य केन्द्र की स्थापना १० वर्ष तक की अवधि के समाप्त होने तक स्थगित रखी जाय। १० वर्ष की अवधि के बाद इस संगठन के कार्यक्षेत्र में प्रत्येक जिले की आधी आबादी आजानी चाहिये। इस प्रकार १० साल के बाद एक हजार व्यक्तियों के पीछे एक बिस्तर का प्रबंध हो जायगा।

समिति की सिफारिश है कि प्रत्येक प्रान्त में गृह-व्यवस्था तथा नगर एवं ग्राम-निर्माण का १-१ सरकारी विभाग होना चाहिये और मजदूरों के लिए घरों की सुव्यवस्था और उद्योग-धन्धों के स्थान तथा क्षेत्र के निर्धारण के विषय में इन विभागों को व्यापक अधिकार दिये जाने चाहिये। प्रत्येक बड़े नगर में इम्प्रूवमेंट ट्रस्ट अर्थात् नगर सुधार संघ होने चाहिये और गन्दी बस्तियों की सफाई तथा वास स्थान आदि के निर्माण की व्यवस्था की जानी चाहिये।

देशव्यापी निवास-निर्माण योजना--

एक देश व्यापी गृह-निर्माण की योजना के अनुसार सब से पहले उन लोगों की आवश्यकता की पूर्ति की जानी चाहिये, जिनकी आमदनी कम है। शहरी और देहाती दोनों की हालतों में सरकार को निवास-निर्माण अथवा निवास सुधार सम्बन्धी स्वीकृत योजनाओं का खर्च उठाने या खर्च में सहायता देने के लिये तैयार रहना चाहिये। योजनाओं के निर्माण तथा कार्यान्वित करने के कार्य पर और

विशेषकर नव-निर्मित निवास-स्थानों का किराया निश्चित करने तथा सुधारे गये पुराने मकानों के किराये की वृद्धि आदि विषय में सरकारी नियंत्रण आवश्यक है। नये मकानों के डिजाइन और पुराने मकान सुधारने के लिये आवश्यक सुझाव, गांव वालों को स्वास्थ्य तथा अन्य विभागों के द्वारा सहज सुलभ होने चाहिये।

जल-प्राप्ति की व्यवस्था—

१४७१ में से केवल २५३ शहरों को जल-प्राप्ति के रक्षित साधन उपलब्ध हैं। अतएव जल प्राप्ति कार्य क्रम को उन्नत करने के लिये सक्रिय नीति से काम लेना आवश्यक है। इस कार्य क्रम का लक्ष्य यह होना चाहिये कि २५ साल के भीतर देश की पूरी आबादी के लिये पीने तथा घरेलू काम के निमित्त जल-प्राप्ति की पूरी २ व्यवस्था की जा सके। समिति का सुझाव है कि ५० हजार और इसके ऊपर की आबादी वाले सब शहरों में १० साल के भीतर गंदे नालों के निर्माण की व्यवस्था हो जानी चाहिये।

डाक्टरी शिक्षा—

समिति का सुझाव है कि प्रथम १० वर्षों में ५०० डाक्टर प्रति वर्ष शिक्षा प्राप्त करके निकलने चाहिये। चिकित्सा सम्बन्धी शिक्षा एक ही कोटि की, डाक्टर डिग्री (एम० बी० बी० एस०) तक की होनी चाहिये और लाइसेंशियेट (एल० एम० पी०) शिक्षा दस वर्षों के भीतर बन्द कर दी जानी चाहिये। डाक्टरी के पाठ्य विषयों के पुनः संगठन और हर मेडिकल कालेज में रोग निरोधक तथा सामयिक चिकित्सा का एक नया विभाग खोलने की सिफारिश की गई है। आर्थिक साधनों के अभाव के कारण सुयोग्य विद्यार्थी डाक्टरी की पढ़ाई से वंचित न होने दिये जाने चाहिए और जो छात्र डिग्री लेने के बाद सरकारी नौकरी में आने को राजी हों, उन्हें एक हजार रुपया वार्षिक छात्रवृत्ति दी जानी चाहिये।

मलेरिया (जूड़ी ताप) भारत का सबसे अधिक व्यापक रोग है। अतएव समिति ने 'भारतीय मलेरिया इंस्टिट्यूट के विस्तार, प्रान्तों में मलेरिया संघों की स्थापना तथा मलेरिया दलों के संगठन की सिफारिशें की हैं।

चिकित्सा की देशी प्रणाली—

यह प्रश्न प्रान्तीय सरकारों के निर्णय के लिये छोड़ दिया जाना चाहिए कि सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा चिकित्सा सम्बन्धी सहायता के पुनः संगठन में देशी चिकित्सा प्रणाली को क्या स्थान प्राप्त होना चाहिये। लेकिन चिकित्सा की वैज्ञानिक प्रणालियां केवल पूर्वी तथा पश्चिमी नहीं, वरन् सारे विश्व की सम्पत्ति समझी जानी चाहिये।

जनसंख्या की समस्या—

समिति के मत से जनसंख्या की वृद्धि अधिकाधिक गम्भीर होने वाली समस्या होगी। इस बात की सम्भावना बहुत कम है कि लोगों के देश छोड़कर विदेशों में बसने से यहां जनसंख्या का दबाव कम हो। जनसंख्या की अनियन्त्रित वृद्धि अन्ततः देश की उत्पादन शक्ति का अतिक्रमण करेगी। समिति के विचार से इस वृद्धि को रोकने के लिये दो ही कार्य किये जा सकते हैं। एक रहन-सहन ऊंचा करने की व्यवस्था और दूसरा इस देश की विशेष परिस्थिति की मर्यादा के अन्दर संतति नियमन के ज्ञान का प्रसार। यदि प्रसव से स्त्री अथवा

बच्चे को हानि पहुंचने की आशङ्का हो तो गर्भ-निरोध सर्वथा उचित है और ऐसी स्थिति में गर्भ-निरोध के उपाय सरकार द्वारा बताये जाने चाहिये

प्रांतीय सरकारें इस समय रोगों की चिकित्सा और रोगों के निरोध की कार्रवाइयों पर जो खर्च करती है वह उनके कुल खर्च का बहुत ही थोड़ा अंश अर्थात् २.५ से ७.३ प्रतिशत तक है। इन कार्रवाइयों पर अधिक खर्च किया जाना चाहिये। इस समय प्रान्तों में स्वास्थ्य की कार्रवाइयों पर प्रति मनुष्य ३.२ आने से १०.६ आने खर्च होता है। समिति के प्रस्तावों को कार्यान्वित करने में, प्रति मनुष्य पहिले वर्ष में १ रुपया ३ आना अधिक खर्च और अन्तिम अर्थात् १०वें वर्ष में २ रुपये १३ आने अधिक खर्च होगा।

भोर कमेटी की स्वास्थ्य योजना में आगामी १० वर्षों में १० अरब रुपया व्यय की सिफारिश की गई है। डाक्टरी शिक्षा आदि पर पहले ५ वर्षों में १ अरब ६३ करोड़ रुपया और अगले ५ वर्षों में २ अरब रुपया व्यय होंगे, जिसमें पहले ५ वर्षों में प्रति वर्ष चालू खर्च ४० करोड़ तथा आगे ६२ करोड़ रु० खर्च होगा। पहिले प्रति व्यक्ति १।) और बाद में २।=)॥ वार्षिक खर्च होगा।

कमेटी की योजनानुसार २००० नागरिकों के पीछे एक डाक्टर होगा और १९७१ तक उस उद्देश्य को पूरा किया जायेगा। योजना के पूर्णतः क्रियान्वित होने पर १८५००० डाक्टर होंगे, जब कि अब ४७००० ही हैं।

स्वास्थ्य सम्बन्धी जांच तथा उन्नति समिति ने प्रायः २०० से अधिक अनुरोध पत्रों पर विचार किया और ६५० व्यक्तियों के बयान लिये।

—शल्य विज्ञान का एक अपूर्व ग्रन्थ—

शल्य-तन्त्रम

लेखक—श्री० धर्मानन्द जी शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य प्रिंसीपल–महिला आयुर्वेदिक कालेज,
निस्बत रोड, लाहौर।

इस पुस्तक में भिन्नप्रकरणों में शल्य के भेद और लक्षण एवं विभिन्न प्रकार के व्रणों का वर्णन और उनकी चिकित्सा आदि का विस्तृत विवेचना पूर्वक शल्य शास्त्र को अत्यधिक सरल बना दिया है। ३६० पृष्ठों की पुस्तक का मूल्य केवल २॥) मात्र है।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

चिकित्सा सम्प्रदाय और स्वराज्य

ले०—भा० चि० आयुर्वेदाचार्य श्री० रवीन्द्रचन्द जी कुलश्रेष्ठ (शिकारी) सराय हकीम अलीगढ़ ।

भूमिका—

आजकल भारतवर्ष में अनेक सम्प्रदाय हैं तथा उन सम्प्रदायों के अन्तर्गत अनेक जातियां और उपजातियां भी विद्यमान हैं। वास्तव में यदि ठण्डे मस्तिष्क से भली भांति विचारा जाय तो पता चलेगा कि इस साम्प्रदायिकता का उत्तरदायित्व किस पर है और कौन इससे लाभ उठाता है। ये सब बातें अत्यन्त महत्व की हैं और इनके अन्दर एक बड़ा भारी रहस्य छिपा हुआ है।

यदि तनिक विचारा जाय तो इस साम्प्रदायिकता का स्पष्टीकरण आजकल की भारत की स्थिति से प्रत्यक्ष हो जाता है। हम लोग सब भारतीय सम्प्रदाय के हैं और सभी भारतीय कहाने का अधिकार रखते हैं, यद्यपि कर्म तथा रहन सहन में देश तथा जलवायु के प्रभाव से अशंतः भिन्नता अवश्य पाई जाती है। परन्तु जहां एक वृहद् कार्य की सिद्धि के लिए हम लोग आगे बढ़ रहे हैं वहां इन आंशिक अन्तरों का कोई महत्व नहीं रह जाता।

सब का एक उद्देश्य—

उद्देश प्रत्येक सम्प्रदाय या जाति का यही है कि वह शीघ्रातिशीघ्र अपने को स्वतन्त्र समझने लगे और अधिक से अधिक अपने ही प्रतिनिधियों को विधान-निर्मात्री और कार्य-कारिणी समिति में भेजने में समर्थ हो। सब का यह विचार नहीं है कि जिस अनुपात से हमारा अस्तित्व इस भारतवर्ष में है उसी अनुपात से हम धारा-सभाओं और कार्य-समितियों में भाग लें या इस भार को केवल साम्प्रदायिकता की तराजू से हटाकर एक मात्र योग्यता के ऊपर ही छोड़ दें।

हम लोगों को लीग, सिक्ख, हिन्दू, अहरार और यूनियनिष्ट आदि २ प्रथक सम्प्रदायिकता ही अंग्रेजों को हिन्दुस्तान में अधिक समय तक रखने में समर्थ हो रही है। यदि हम एक भारतीय सम्प्रदाय को ही मानें तो यह निश्चय है कि अंग्रेज हिन्दुस्तान में अधिक समय तक पैर जमाने में बिलकुल ही असमर्थ हो जावेंगे।

चिकित्सक सम्प्रदाय—

इसी प्रकार हम लोगों का भी एक सम्प्रदाय है और हम चाहे किसी भी प्रणाली से चिकित्सा करें परन्तु कहने को 'चिकित्सक-सम्प्रदाय' के ही सदस्य कहलावेंगे। 'चिकित्सक' शब्द एक सर्व व्यापक 'भारतीय' शब्द की भांति ही है और इस शब्द के अन्तर्गत आयुर्वेदिक, यूनानी तथा एलोपैथी आदि सभी चिकित्सकों का अन्तर्भाव होजाता है और सब का ही कर्तव्य रोगियों को आरोग्य दान करने का है।

वैद्य डाक्टर का भेद—

अब प्रश्न यह होता है कि फिर चिकित्सक सम्प्रदाय के अन्दर वैद्य, डाक्टर या हकीम कहलाने में अन्तर क्या है और क्यों ये शब्द जो कि एक सम्प्रदाय के अन्दर पार्थक्य का कारण है रक्खे गये इसका उत्तर बिलकुल हिन्दू महासभा तथा मुस्लिम लीग और सिक्ख सभा की भांति ही है। सरकार अपने लालच के वशीभूत इस चिकित्सक सम्प्रदाय

में भी फूट का बीज बोकर अपने करोड़ों रुपयों का लाभ इसी भारतवर्ष से उठा रही है और इसी लाभ के कारण वह चिकित्सक सम्प्रदाय को एक नहीं होने देती। उसमें भेद-भाव रक्खा जाता है, जो अंग्रेजी ढङ्ग पर चिकित्सा शास्त्र को पढ़ते हैं उनको डाक्टर शब्द लगा दिया जाता है और उनको बाध्य किया जाता है कि वे केवल एलोपैथी के ढङ्ग से ही चिकित्सा करें और किसी आयुर्वेदिक या यूनानी पद्धतियों को सहायता न दें, नहीं तो उनका रजिस्ट्रेशन काट दिया जाता है और यदि वे लोग आयुर्वेद आदि को पढ़कर किसी प्रकार का अनुसंधान भी करते हैं तो यह भी एलोपैथिक का ही कहा जाता है। हम सब जानते हैं कि मुलहठी, अशोक, दशमूल तथा पुनर्नवा आदि आयुर्वेदिक दवाइयां हैं और इन्हीं के सत्व (Extracts) अब एलोपैथी के आविष्कार समझ कर प्रयोग में लाये जा रहे हैं। इसी प्रकार से अन्यान्य मकरध्वज आदि दवाइयां भी एलोपैथी में प्रयुक्त होती हैं।

आधुनिक वैद्य—

साथ ही साथ आजकल के वैद्य तथा हकीमों को देखिये वे यथोचित् रूप से ५ या ६ साल अखंड परिश्रम करके एलोपैथी के साथ २ आयुर्वेद और यूनानी पढ़ते हैं और दोनों ओर के व्यवहारिक ज्ञान से पूर्ण विज्ञ होकर डिग्री (ए० एम० एस०) तथा डिप्लोमा (डी० आई० एम० एस०) का प्राप्त करते हैं और रोगियों को केवल एम. बी. बी. एस. तथा एल. एम. पी. आदि से कई गुनी अधिक सहायता पहुंचाने के साथ ही जो दवायें फार्मेसियों से अधिक रुपयों में आती हैं उनको भी स्वयं तैयार करके पैसों की बचत कर सकते हैं। ये लोग मुलहठी के सत्व (Ext glycerrhiza) के लिये तथा अडूसा के शर्बत (Syp vasaka) के लिये कम्पनियों को आर्डर न देकर स्वयं ही तैयार कर थोड़े से थोड़े दामों में रोगियों को आरोग्य दान कर सकते हैं।

अब सोचिये जब कि एलोपैथी असमर्थतावश आयुर्वेद की ओर चल रही है और आयुर्वेदज्ञ एलोपैथी के ज्ञाता होते जाते हैं अर्थात् दोनों ओर से ही मिलने का प्राकृतिक सुभाव होता जा रहा है और समय आने पर प्रयाग की त्रिवेणी के समान तीनों ही मिलकर एक मात्र 'चिकित्सा' शब्द का द्योतक होंगी। ये निष्फलता द्योतक शब्द 'डाक्टर' 'वैद्य' या 'हकीम' इस संसार से स्वयं ही लुप्त हो जावेंगे। केवल एक मात्र 'चिकित्सक' शब्द शेष रहेगा।

अब प्रश्न यह है कि इसमें विलम्ब होने का कारण क्या है? प्रकृति पूर्ण रूप से तीनों का मेल चाहती है परन्तु इसमें भी एक मात्र हमारी सरकार की कृपा का फल है कि वह मेल होने नहीं देती। क्योंकि प्रति वर्ष लाखों और करोड़ों के लाभ की दवाइयां इन्हीं एजेन्टों के द्वारा जिनको सरकार ने डाक्टर की पदवी दे रक्खी है भारतवर्ष में आती हैं। इसे हम लोग नित्य प्रति अपनी आंखों से देखते हैं।

देशी तथा विदेशी औषधि—

हां यह अवश्य है कि रोगी के प्राणों की रक्षा के सामने हम को जो भी औषधि कार्यकर हो बिना रोक टोक प्रयोग में लानी चाहिये। जैसे निमोनियां में ६६३ की गोली (M & B. 693) या पेनेसेलीन के सामने हम प्रतापलंकेश्वर या वृहद् कस्तूरी भैरव का ही प्रयोग पर्याप्त नहीं कह सकते अपितु आवश्यकतानुसार रोगी की दशा देखकर पेनसेलीन का भी

प्रयोग कर सकते हैं। परन्तु साधारण मलावरोध में हरीतकी चूर्ण या पंचसकार चूर्ण या गुलकन्द आदि को छोड़कर मेगसल्फ या वेजीटेबल पिल्स देना या साधारण ज्वर में मृत्युञ्जय या हिङ्गूलेश्वर या पिप्पली चूर्ण न देकर स्वेदज मिश्रण देना कहां की बुद्धिमत्ता है। यह तो एक मात्र अपनी जातीयता की जड़ का जमाना और विदेशों के माल को अपनाकर गुलामी और पराधीनता को बलात् आमन्त्रित करना है।

डाक्टर भाइयों की भूल—

हमारे देश के एलोपैथिक डाक्टर जिसमें बहुत से हमारे आधुनिक भारत के नेता कहे जाने का गौरव भी प्राप्त कर चुके हैं, जैसे डा० बिधानचन्द्र राय आदि यह नहीं सोचते कि जिस प्रकार से विदेशी वस्त्र के बहिष्कार का आन्दोलन हो चुका है उसी प्रकार विदेशी औषधि बहिष्कार आन्दोलन भी चलाया जाय। अरुणा के शब्दोंमें विदेशी माल का भी पूर्ण बहिष्कार घोषित हो चुका है। क्या वह समय दूर है जब कि प्रत्येक इस बात को सोचेगा कि वह विदेशी औषधियां भी जो लाखों को प्राण दान देती हैं? करोड़ों को भूखों मारने का भी उत्तरदायित्व रखती हैं और साथ ही साथ ये विदेशी वस्त्र तथा विदेशी अन्य सामान की अपेक्षा अधिक घातक और गुलामी का पालक हैं।

सरकार से—

हम यह अवश्य कह सकते हैं कि सरकार अपने तन, मन, धन से इस पाश्चात्य चिकित्सा प्रणाली को सहायता दे रही है और एलोपैथिक चिकित्सकों को कुछ विशेषाधिकार देकर उन्हें एजेन्ट बनाने तथा दासता स्वीकार करने के लिये बाध्य कर रही है। वे इस प्रकार के नशे में हैं कि उनको यह स्वप्न में भी विचार नहीं होता कि उनकी इज्जत और बहादुरी जिनकी वजह से है वह स्वयं ही शीघ्र नाशवान है।

सरकार की सहायता—

सरकार की इतनी सहायता होते हुए भी सैनिक सम्प्रदाय को छोड़कर (क्योंकि वहां तो एलोपैथी के अतिरिक्त अन्य पद्धति का समावेश ही नहीं किया जाता) अन्य चिकित्सा से लाभ नहीं उठाते। हां, यह अवश्य है कि नौकरी सम्प्रदाय के लोग या रेलवे कर्मचारी या अन्य मिल के नौकर अपने २ स्थानिक डाक्टरों के पास या सिविल सर्जन के पास केवल अपना नाम दर्ज कराने और सार्टीफिकेट लेने अवश्य जाते हैं परन्तु उनका भी इलाज बाहर के अन्य वैद्यों या हकीमों के चिकित्सालयों में ही होता है और अधिक कहां तक कहा जाय अच्छे अच्छे डाक्टरों के घर भी वैद्यों का इलाज होता है।

वैद्यों की कमी—

वैद्य लोग अभी तक सर्जरी नहीं जानते थे इसी लिये यह आवश्यक हो जाता था कि जनता सर्जरी तथा चीर-फाड़ के रोगों के लिये डाक्टरों की सहायता ले। परन्तु अब काशी विश्वविद्यालय तथा अलीगढ़ विश्वविद्यालय इस कमी को भरसक दूर करने का प्रयत्न कर रहे हैं। यह अवश्य है कि केवल एलोपैथी में ही ये लोग एम. बी. बी. एस. के कांटे के नहीं हैं परन्तु व्यवहार में जितना एम. बी. बी. एस. का ज्ञान प्रयोग में आता है उससे कदापि एक तिल भी कम नहीं है बल्कि साथ ही

साथ आयुर्वेदाचार्य होने से एम. वी. वी. एस. से कहीं अधिक जनता के लिये लाभप्रद है।

सभी एम. वी. वी. एस, डाक्टर जोशी की बराबरी नहीं कर सकते और यदि सरकार पूर्ण सहायता तथा अधिकार मेडिकल कालेज की भांति देदे, तो किसी प्रकार सन्देह नहीं कि ए.एम.एस. भी था तद्रूप डी० आई० एम०एस० भी बहुत अच्छे सर्जन होसकते हैं। इसका प्रत्यक्षीकरण हिन्दू विश्व-विद्यालय के कई स्नातकों से जो कि शल्य कर्म में काफी सफलता पा चुके हैं हो जाता है। साथ ही साथ पब्लिक हेल्थ डिपार्टमेंट में जो कार्य ए० एम० एस० ने किया है वह केवल एलोपैथी के स्नातकों से किसी प्रकार कम नहीं है। साथ ही साथ कम खर्च में हो जाता है। इससे अधिक जनता तथा सरकार का भला दूसरा कौन का कर सकता है।

भोर कमेटी का निर्णय—

भोर कमेटी ने जो निर्णय दिया है वह आजकल की स्थिति को दृष्टि में रखते हुए परमावश्यक और लाभकर है। देहातों की जनता ६० प्रतिशत चिकित्सा की सहायता के अभाव में ही मरती है, क्यों कि एक तो देहातियों के पास पैसा ही कम होता है; पैसा भी हो तो शिक्षित चिकित्सक कम मिलते हैं। इसके साथ २ सरकार ने जो प्रबन्ध डाक्टरों को पब्लिक हेल्थ डिपार्टमेंट में रखकर किया है वह भी अधिक सफल नहीं प्रतीत होता। उसमें कई कारण बड़े महत्व के हैं। पहली बात डाक्टरों का पहनावा है, जिसको देखकर हर एक उनको सेवक न समझ कर आफीसर मानता है और अधिक कहांतक कहा जाय साधारण जनता को तो साहस ही नहीं होता कि डाक्टर साहब से अपने रोग या रोगी के विषय में खुलकर बात भी कर सकें और साहस भी हुआ तो डाक्टर साहब के भाषण में वह शक्ति नहीं है कि रोगी को देखकर यह समझा सकें कि यह बीमारी छूत की है और इससे बचने के लिये टीका लगाना आवश्यक है। बजाय समझाने के वे चौकीदार या पुलिस के द्वारा गांव वालों को बलात् टीका के लिये पकड़वाते हैं इससे जनता में भांति २ के भ्रम उत्पन्न हो जाते हैं। कोई २ अनजाने तो इतना कह देते हैं कि इस पोटाश परमैंगनेट को कुओं में डालकर तथा तन्दुरुस्त आदमी को टीका या सुई लगाकर सरकार स्वयं हैजा फैलाना चाहती है। यह डाक्टरों की भाषा की कमजोरी है। उन्हें हिन्दी में समझाने में भी कष्ट होता है उनको यह नहीं मालूम कि Sterilization, Disinfection और Immunity आदि शब्दों का व्यवहारिक भाषा में क्या अनुवाद है।

चिकित्सक ऐसे होने चाहिये जो अधिक से अधिक जनता की सेवा कर सकें, अर्थात् जो अपने को जनता का हाकिम न समझ कर प्रत्येक रूप से सेवक समझें।

—"नार्थार्थं न काम.र्थमथ भूतदयां प्रति" चरक।

भोर कमेटी के निर्णय के अनुसार प्रति २०० आदमियों के पीछे १ चिकित्सक का होना अनिवार्य बताया गया है। इस प्रकार से भारत में कार्य करने वाले डाक्टरों की संख्या १८५००० होगी और वे सब के सब एम. वी. वी. एस. से कम न होंगे। इतने डाक्टरों को पूरा करने के लिये मेडिकल कालिज भी बढ़ाये जायेंगे और प्रत्येक छात्र को कालिज में पढ़ते समय १०००) साल की छात्र वृत्ति भी दी जायगी। इस प्रकार से १० वर्ष में १० अर

रुपये की योजना तैयार की गई है।

डाक्टरों की नियुक्ति की असफलता—

योजना अत्यन्त ही महत्व की है परन्तु भारतवर्ष के लिये केवल एम. बी. बी. एस. की ही नियुक्ति करना लाभप्रद नहीं होगी, क्योंकि जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है कि सर्जरी के अतिरिक्त ६० प्रतिशत से अधिक जनता डाक्टरी (एलोपैथिक) चिकित्सा से लाभ नहीं उठाती। जनता के लिये तो सर्जरी के लिये डाक्टर और काय चिकित्सा के लिये वैद्य या हकीम ही चाहिये और उन्हीं पर उनको विश्वास भी है और विश्वास का होना चिकित्सा कार्य में कुछ महत्व रखता है। दवा के साथ २ रोगी का चिकित्सक पर विश्वास होना सोने में सुगन्ध पैदा करता है। इसलिये ऐसी जनता उस समय भी १८५००० डाक्टरों के होते हुये भी चिकित्सा के लिये वैद्यों और हकीमों पर ही जायगी और 'भोर' साहब की योजना पूर्ण रूप से निष्फल ही रहेगी।

भारत के लिये उपयोगी चिकित्सक—

भारतवर्ष के लिये तो ऐसे चिकित्सकों की आवश्यकता है जो कि यहां की देशी प्रणालियों (आयुर्वेद या यूनानी)में से एक के पूर्ण विज्ञ हों तथा आधुनिक एलोपैथी के साथ २ सर्जरी का भी पूर्ण ज्ञान रखते हों। केवल एलोपैथी के डाक्टरों को तो विदेशियों के अतिरिक्त जिनको कि उन पर विश्वास है जनता के कार्य के लिये कदापि नहीं रखना चाहिये, क्योंकि उनसे जनता को लाभ नहीं हो सकता। हां, यह अवश्य है कि १८५००० डाक्टरों की नियुक्ति से ब्रिटेन की फार्मेसी का कार्य कई गुना बढ़ जायगा और उसी हिसाब से राज्य चले जाने पर भी ब्रिटेन की आमदनी (औषधियों की) में कोई अन्तर नहीं पड़ सकेगा और भारत की दासता की जड़ अधिक पक्की हो जायगी।

भारत के लिये प्रशस्त योजना—

भारतवर्ष तो ऐसा देश है जो कि अपनी पुरानी चिकित्सा पद्धतियों को जो कि आधुनिक एलोपैथी की दादी है छोड़ नहीं सकता चाहे किसी का राज हो और चाहे किसी की सत्ता। प्रत्येक डाक्टर चाहे वह एम० बी० बी० एस० हो या एल० एम० पी० परन्तु बिना आयुर्वेदिक या यूनानी की परीक्षा पास किये जनता के कार्य के लिये नहीं जाने देना चाहिये और अच्छा तो यह हो कि सम्पूर्ण भारतवर्ष को संयुक्तप्रान्त का अनुकरण करना चाहिये। तथ स्थान २ पर काशी विश्वविद्यालय और अलीगढ़ विश्वविद्यालय की भांति चिकित्सक विद्यालय स्थापित करना चाहिये। विद्यालयों में ५ या ६ साल का अध्ययन काल रखकर आयुर्वेद के साथ २ एलोपैथी की आवश्यक बातों को भी विस्तार से पढ़ाना चाहिये। इसके बाद विशेषज्ञों के लिये अलग २ कोर्स निर्धारित करना चाहिये। विद्यार्थियों को अधिक से अधिक छात्र वृत्तियां देकर पूर्ण सुविधा मिलनी चाहिये। शिक्षा का माध्यम अंग्रेजी न रखकर भारतीयराष्ट्र भाषा 'हिन्दुस्तानी' को बनाना चाहिये। साथ ही इस वैद्य या डाक्टर शब्द को हटा कर केवल चिकित्सक शब्द रखना चाहिये क्योंकि ये भांति २ के शब्द पारस्परिक द्रोह का कारण होते हैं। प्रत्येक चिकित्सा करने वाला अपने को कविराज या वैद्य या डाक्टर न कहकर 'चिकित्सक' या "भारतीय चिकित्सक" लिखने

को बाध्य हो। और इन "भारतीय चिकित्सकों" का रजिस्ट्रेशन बोर्ड तथा कौंसिल दोनों से होकर वही अधिकार मिलने चाहिये जो कि आजकल किसी भी ऊंची से ऊंची एलोपैथिक डिग्री पाने वाले को मिलते हैं।

भोर कमेटी से प्रार्थना–

उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट हो जाता है कि 'भारतीय चिकित्सक' जो भारतीय प्रणाली के साथ-साथ एलोपैथिक प्रणाली को भी जानते हैं, भोर कमेटी की निर्णयात्मक योजना के अनुसार नियुक्त किये जांय और सम्पूर्ण मेडीकल कालेजों को तथा सम्पूर्ण शुद्ध आयुर्वेदिक और यूनानी कालेजों को संयुक्त बना दिया जाय अर्थात् सम्पूर्ण कालेजों में एलोपैथी के साथ २ आयुर्वेद या यूनानी में से एक को वैकल्पिक अवश्य रक्खा जाय तो शायद यह भोर कमेटी की योजना अधिक और थोड़े पैसों में सफल हो सकती है अन्यथा जनता के लाभ की भी न होकर बृटिश साम्राज्य को भारत में अधिक दृढ़ बनाने में समर्थ होगी, और आर्थिक व्यय भी १० अरब के स्थान पर ५ अरब में ही प्रति ५०० नागरिकों के लिये १ 'चिकित्सक' उपलब्ध हो सकेगा, जितना कि ब्रटेन में भी नहीं है। ब्रटेन में प्रति १००० नागरिकों के लिये १ चिकित्सक होता है। साथ ही साथ नर्स और दाइयों का प्रबन्ध उचित रूप से होकर स्थान २ पर जनाने चिकित्सालय होने चाहिये। उनमें जच्चा तथा बच्चों का इलाज पूर्ण रूप से मुफ्त होना चाहिये औरतों को अधिक छात्र वृत्तियां देकर चिकित्सा विद्यालयों में प्रविष्ट कराना चाहिये क्योंकि भारत में महिला चिकित्सकों की बड़ी आवश्यकता है।

वैद्य तथा डाक्टर भाइयों से प्रार्थना–

वैद्य तथा डाक्टर भाइयों से उनके तथा देश के हित के लिये यही प्रार्थना है कि अपने स्वार्थ को दृष्टि में न रखकर देश की स्वतन्त्रता के लिये प्रत्येक स्थान पर सभायें करके सरकार को यही प्रस्ताव पास करके विवश करें कि भोर कमेटी में उपरोक्त परिवर्तन अवश्य होना चाहिये और शीघ्रातिशीघ्र कांग्रेस सरकार द्वारा स्वीकृत सन् १९३९ का इण्डियन मेडीसन एक्ट (भारतीय चिकित्सा का कानून) कार्यरूप में परिणित किया जाना चाहिये।

यदि चारों ओर से इसी प्रकार के प्रस्ताव आये तो मैं समझता हूं कि कांग्रेस सरकार क्या अन्य कोई भी बुद्धिमान सरकार इस हमारी स्वतन्त्रता की पुकार को अवश्य ही सुनेगी। चिकित्सकों को यह अवसर नहीं चूकना चाहिये। और शीघ्रातिशीघ्र प्रस्तावों को अखबारों द्वारा जनता तथा सरकार दोनों के पास भेजकर आन्दोलन सा मचा देना चाहिये।

भारत के नेताओं से–

अन्तमें भारत के नेताओं को जो कि भारत के भले और बुरे का उत्तरदायित्व रखते हैं। उन्हें यह भली भांति विचार लेना चाहिये कि जितना बहिष्कार उनकी दृष्टि में कपड़े तथा अन्य विदेशी माल का आवश्यक है उतना ही विदेशी अनावश्यक औषधियों का बहिष्कार भी कुछ मूल्य रखता है। इसलिये यदि भारतीयों के हित का उनको कुछ भी ख्याल है तो अवश्य ही उपरोक्त संशोधन 'भोर कमेटी' के निर्णय में शीघ्र कराना चाहिये। और

(शेषांश पृष्ठ ६८२ पर देखिये।)

कांग्रेस मन्त्रिमण्डल एवं आयुर्वेद

ले०—पं० ताराशङ्कर मिश्र, आयुर्वेदाचार्य, अध्यापक-अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय, काशी।

राष्ट्रीय सरकार में हमारा विश्वास है, वह भूल नहीं कर सकती, ऐसी हमारी धारणा है। परन्तु कभी २ ऐसा देखा गया है कि विशेष विषय ही जानकारी के अभाव के कारण वह धोखा खा जाती है। धोखे का ज्ञान हो जाने पर यदि सम्भव रहता है तो वह सचेत होकर संभल जाती है। अपने बिगड़े हुये कार्य को ठीक भीं कर लेती है। तब जनता को कोई विशेष हानि नहीं होती, भूल सुधारने का समय न रहने पर दूसरे लोग उसका दुरुपयोग करते हैं और जनता को बहुत बड़ी हानि का सामना करना पड़ता है।

कांग्रेस मन्त्रि मण्डलों ने अपने विगत कार्यकाल में कुछ ऐसी ही भूलें कर डाली हैं, भारतीय आयुर्वेद को आगे बढ़ाने के दृष्टिकोण से भी उन्होंने कुछ कार्य किये थे। परन्तु वे इस नियम विशेष से सर्वथा अनभिज्ञ थे और आयुर्वेद के सच्चे प्रतिनिधि उनके पास न पहुंच सके अतः वे भूल कर बैठे। बाद की सरकार ने उनका जो दुरुपयोग किया वह आयुर्वेद जगत में क्षोभ का कारण बन गया।

युक्त प्रान्त एवं बम्बई आदि प्रान्तों में वैद्यों को नियन्त्रित करने के निमित्त रजिस्ट्रेशन एक्ट बनाये गये। जिनके अनुसार एक संकुचित परिधि के वैद्यों को रजिस्टर्ड किया गया। उन्हें थोड़े से अधिकार भी दिये गये। एलोपैथों के अधिकार की तुलना में इनका ध्यान आने पर हंसी के साथ २ [illegible] भी होता है। अस्तु……।

यहां तक तो बात क्षन्तव्य थी लेकिन अगला कदम हानिकारक सिद्ध हुआ। वह है प्रान्तों में व्याप्त अनन्त संख्या वाले अनरजिस्टर्ड वैद्यों को चिकित्सा व्यवसाय से रोकने का मिथ्यासत्प्रयत्न! अब वे सरकार की दृष्टि में अयोग्य हैं! योग्यता का कागजी प्रमाणपत्र (डिगरी) प्राप्त करने वालों के अतिरिक्त पुराने लब्ध प्रतिष्ठ वैद्यों की रजिष्ट्री भी बन्द होने का कारण कहा जाता है अनधिकारी लोगों का रजिष्ट्रेशन। विचारा जाय तो पता लगेगा कि इन अनधिकारी लोगों को प्रमाणपत्र देने वाले गजटेड आफिसरों की ही भूल थी। वे मूर्खों को प्रमाणपत्र क्यों देते थे? उनसे बड़ी भूल की सरकार ने! जिसने आयुर्वेद ज्ञान से सर्वथा शून्य इन आफिसरों को वैद्य की योग्यता निर्धारित करने का अधिकार दिया। मजे की बात तो यह है कि "और करै अपराध को और पाव फल भोग" भूल की सरकार और उसके कर्मचारियों ने! दंड मिला पुराने वैद्यों को!! उनकी रजिष्ट्री ही बन्द हो गई। अब ये भी मूर्ख हो गये। जनता समझ ले कि इसके अनुसार काशी, प्रयाग एवं भारत के कोने २ में व्याप्त बड़े २ धुरन्धर पीयूषपाणि वैद्य भी चिकित्सा करने के योग्य नहीं रहे। आज तक जिनके हाथ में समस्त भारत की स्वास्थ्य व्यवस्था रही वे ही अब अयोग्य हो गये। युक्त प्रान्त में पुराने चिकित्सकों की एक सूची बनाकर उन्हें चिकित्सा करने को आश्वासन भी दिया गया। पर यह तो प्रवञ्चना मात्र है। क्योंकि यह सूची केवल एक वर्ष में बन्द

कर दी जायगी। यह राष्ट्रीय सरकार की भद्दी भूल है। क्योंकि वैद्य की योग्यता का सब से बड़ा प्रमाण तो उसकी जन प्रियता है। यदि वह योग्य है तो सरकार के लाख बार मना करने पर भी जनता उसके चरण चूमेगी। यदि अयोग्य है तो जनता उसे स्वयं ठुकरा देगी। सरकार का निर्माण करने वाली जनता उससे अधिक बुद्धिमान है एवं अपने जीवन का मूल्य स्वयं समझती है। वह कभी भी अयोग्य वैद्य के पास नहीं जा सकती। इस मामले में उसे कोई धोखा भी नहीं दे सकता। ऐसी अवस्था में अयोग्य वैद्यों की चिकित्सा व्यवसाय अपने आप बन्द हो जायगा। सरकारको इसके लिये कुछ करने की आवश्यकता नहीं थी। अनरजिष्टर्ड वैद्यों के चिकित्सा निरोध से सरकार, जनता एवं आयुर्वेद का रञ्चमात्र लाभ न होगा। क्योंकि ये सरकार का न तो कुछ बिगाड़ते हैं और न तो उससे कुछ मांगते ही हैं बल्कि इतना अवश्य करते हैं कि उनके पास जो आर्तजन आ जाते हैं उनकी सेवा करते हुये आयुर्वेद की पुरातन ध्वजा को ऊंचा किये हैं और अपने पुराने अनुभव एवं अमृतमयी औषधियों केवल पर बड़े २ डिग्रीधारी चिकित्सकों के मुकाबले आश्चर्यजनक चमत्कार दिखाते हैं।

अब इस एक्ट की आड़ में पुरातन वैद्य सरकारी कर्मचारियों, रजिस्टर्ड चिकित्सकों एवं अन्यान्य दुष्ट जनों के द्वारा तंग किये जा सकते हैं। या तंग किये जाने के भय से अपने व्यवसाय को शिथिल अथवा बन्द कर सकते हैं। पण्डित मानी कुछ बाबू लोग 'अनक्वालीफाइड' समझ कर उनकी उपेक्षा और अपमान करने का साहस भी कर सकते हैं। सरकार भी लाइसेंस वाली वस्तुओं एवं अन्यान्य औषधोपयोगी साधनों से उन्हें वञ्चित कर पंगु बना सकती है। अर्थात् उनके साथ अन्याय किया गया, साथ ही अन्याय किया गया, ९९ प्रतिशत भारतीय जनता के साथ, जिस के स्वास्थ्य प्रतिनिधि हैं। क्या थोड़े से रजिस्टर्ड चिकित्सक समस्त भारत के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी लेने समर्थ हैं? समस्त विश्व कहता है कि भारत चिकित्सकों का अभाव है पर राष्ट्रीय सरकार दृष्टिकोण में चिकित्सक इतने बढ़ गये हैं कि उनकी बाढ़ रोके नहीं रुकती, तभी तो वह अनरजिस्ट वैद्यों को सहयोग, सहायता एवं सहानुभूति दे तो दूर रहा बल्कि उनके व्यवसाय को ही एक रोक देना चाहती है।

विगत राष्ट्रीय सरकार के बाद की सरकार डाक्टर पन्नालाल के स्वास्थ्य विभाग के सला

(पृष्ठ ६८० का शेषांश ।)

मलाया आदि में कांग्रेस की ओर से जाने वा मेडीकल मिशन में (ए० एम० एस० या डी० आ एम० एस०) 'भारतीय चिकित्सकों' को अवश्य नियुक्त करना चाहिये। जिससे भारत में शीघ्र स्वतन्त्रता देवी का पदार्पण होवे। अन्यथा स्वत भारत भी औषधियों के लिये आने वाले युगों विदेशों का दास ही बना रहेगा। और फिर दासता को हटाने के लिये १८५००० डाक्टरों विरुद्ध जो कि भारत में एलोपैथी की जड़ आन्दोलन करना पड़ेगा और एलोपैथी को से उखाड़ने में अधिक परिश्रम और १८ जड़ों को काटना पड़ेगा। अच्छा हो कि आज प्रारम्भ को ही विनष्ट कर दिया जाय।

कारत्व में एक हाथ और बढ़कर मारा। उसने गुरुकुल कांगड़ी, अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय काशी, समस्त भारत के वैद्यों की एक मात्र प्रतिनिधि संस्था अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ एवं हिन्दी साहित्य सम्मेलन आदि के वैद्य स्नातकों की रजिष्ट्री भी बन्द कर दी। अब सरकार या लोकल बोर्ड उक्त वैद्य स्नातकों को चाहे वे पहिले से क्यों न रजिस्टर्ड हों एक पाई की भी नौकरी या सहायता न देगी।

सन् ४२ के बाद से केवल हिन्दू विश्वविद्यालय एवं इण्डियन मेडीसन बोर्ड के ही स्नातकों की रजिष्ट्री होरही है। जिनकी संख्या वर्ष में मुश्किल से २०० के लगभग पहुंच पाती है। अब यही आयुर्वेद के कर्णधार हैं। यह समझ लेना चाहिये कि उक्त दो संस्थाओं में आयुर्वेद के सुधार के नाम पर उसका गला घोटा जारहा है। उसे एलोपैथी का जामा पहनाया जारहा है, उनमें बड़ी संख्या में एलोपैथ-प्रिंसिपल एवं प्रोफेसरों के पद पर प्रतिष्ठित हैं। इनके स्नातक खुले आम अपने को डाक्टर घोषित कर रहे हैं।

बम्बई और मद्रास की विगत राष्ट्रीय सरकार ने आयुर्वेद के आसवारिष्टों को मद्य कानून में समाविष्ट कर उन पर लाइसेन्स रख दिया। बहुत से वैद्य उनके निर्माण एवं विक्रय कार्य से वंचित कर दिये गये। इसका कारण बताया जाता है कि कई कम्पनियों के आसवारिष्टों में निर्धारित मात्रा (सम्भवतः ५ प्रतिशत) से अधिक अल्कोहल पाया गया।

सम्भव है कुछ दूषित मनोवृत्ति के वैद्य या व्यापारिक कम्पनियां अधिक बिक्री के लोभ से आसवारिष्टों में तेजी लाने के निमित्त कुछ अल्कोहल ऊपर से मिला देते हों। पर इतने अपराध से सब वैद्यों और कम्पनियों की तो हानि नहीं करनी चाहिये यह समस्या अपराधियों को अधिकारी वैद्यों की व्यवस्था से दण्ड देने से ही सुलझ सकती थी। सभी आसवारिष्टों को मद्य घोषित कर देना तो सद्बुद्धि का परिचायक नहीं ज्ञात होता।

आसवारिष्टों पर लाइसेन्स लगाने से पूर्व किसी प्रान्तीय सरकार, केन्द्रिय सरकार, या मेडीकल कौंसिल ने क्या उन एलोपैथी औषधियों पर भी नियन्त्रण किया जिनमें लेबुल पर अंकित उपादेय सामग्री के परिमाण से अत्यन्त न्यून द्रव्य पाये जाते हैं? (देखिये हिन्दू विश्वविद्यालय में सम्पन्न अखिल भारतीय विज्ञान कांग्रेस के सभापति का भाषण) सभी वर्गों के दुष्टों पर नियन्त्रण होना चाहिये। यह कहां का न्याय है कि एक वर्ग के दुष्टों को खुलकर खेलने खाने का अवसर दिया जाय और दूसरे वर्ग के दुष्टों को पीस दिये जाने के साथ ही सज्जनों पर भी नियन्त्रण बैठा दिया जाय।

उपर्युक्त बातों पर कतिपय प्रश्नों के साथ ही निम्न प्रश्न भी उठते हैं।

१—सरकारी सहायता प्राप्त आयुर्वेद विद्यालयों के अधिकांश स्नातकों एवं एलोपैथ-चिकित्सकों का चिकित्सा व्यवसाय पुरानी प्रणाली के वैद्यों के कारण पनप नहीं पाता था, अतः इनकी वृद्धि बन्द कर उन्हें आगे बढ़ाने का यह सब कौशल तो नहीं है?

२—क्या इनसे एलोपैथी औषधियों व विलायती कम्पनियों की और एलोपैथी प्रसार योजना को

सहायता तो नहीं मिलेगी ?

३—क्या इनसे एलोपैथी एवं अनियन्त्रत होम्योपैथी की वृद्धि तो नहीं होगी ?

४—राष्ट्रीय स्वास्थ्य पर क्या इनका भयानक प्रभाव नहीं पड़ेगा ?

५—इनसे आयुर्वेद को धक्का तो नहीं लगेगा ?

६—युक्तप्रान्त में प्रायः सभी हकीम रजिस्टर्ड होगये अतः उनकी और उनके साथ ही उनके प्रतिनिधियों की वृद्धि एक दम स्वयं रुक गई। परन्तु वैद्यों के रजिस्ट्रेशन दिन २ बढ़ते गये। अतः रजिस्टर्ड वैद्यों के प्रतिनिधियों की वृद्धि अनिवार्य होगई। इण्डियन मेडिसन बोर्ड में प्रायः हर एक बात में समानता का दावा रखने वाले हकीमों द्वारा रजिस्टर्ड वैद्यों के प्रतिनिधियों की वृद्धि को रोकने के लिये सरकारी सहायता प्राप्त आयुर्वेद विद्यालयों के स्नातकों की सुरक्षा के बहाने, वैद्यों का रजिस्ट्रेशन बन्दकर आयुर्वेद को ठेस तो नहीं पहुंचायी गई ?

उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर चाहे जो हो, पर इतना अवश्य है कि विगत प्रांतीय राष्ट्रीय सरकारों के आयुर्वेद सम्बन्धी कार्यों से आयुर्वेदाभिमानी जगतको अत्यन्त कष्ट है। लेखक स्वयं वैद्यों पर राजतन्त्र का नियन्त्रण होना स्वीकार करता है। पर वह राजतन्त्र पूर्णतः हमारा हो। उसके स्वास्थ्य विभाग पर वैद्यों का पूर्ण प्रभुत्व हो। उसके द्वारा बड़े २ आयुर्वेद विद्यालय खोलकर उच्च कोटि के आदर्श वैद्य बनाने का प्रबन्ध हो।

. यहां वास्तविक बात तो यह है कि कांग्रेसी मंत्रिमण्डलों में स्वास्थ्य विभाग के मंत्री या तो एलोपैथ हैं, या एलोपैथी के परम भक्त हैं। जिन्हें आयुर्वेद के विषय में कभी जानकारी प्राप्त करने का अवसर ही नहीं मिला। और वह सलाह लेते हैं सरकारी या सरकारी सहायता प्राप्त आयुर्वेद विद्यालयों के प्रिंसीपलों अथवा प्रोफेसरों से जो या तो शुद्ध एलोपैथ अर्थात् M. B. B. S. हैं, या एलोपैथी के पूर्ण समर्थक हैं। बस निम्ब और करैले का संयोग होगया, परिणाम कड़ुआ होगा यह निश्चित बात है।

जनता को दिखाने के लिये कुछ प्रांतीय सरकारों ने भारतीय चिकित्सा बोर्ड भी बना रक्खे हैं। पर इनका चुनाव इतने भद्दे ढङ्ग से होता है कि उनमें आयुर्वेद के सच्चे प्रतिनिधि पर्याप्त संख्या में नहीं पहुंच पाते। इतना होने पर भी सरकार उक्त बोर्डों की बहुत सी बातों को ठुकरा देती है जैसा कि डाक्टर पन्नालाल के समय में युक्त प्रांत में बहुत से आदर्श विद्यालयों के स्नातकों की रजिस्ट्री बंद करते समय किया गया था।

सभी प्रान्तीय सरकारों को समझ लेना चाहिये कि आयुर्वेद के हितैषी बहुत से हो सकते हैं पर उनका प्रतिनिधित्व करने वाले नम्न लोग भी हैं—सर्व श्री० एम० के० मुखर्जी (सभापति अखिल भारतीय आयुर्वेद कांग्रेस) ज्योतिष चन्द्र सेन सरस्वती देहली, सत्यनारायण शास्त्री काशी, लालचन्द्र वैद्य काशी, राजवैद्य जीवाराम कालीदास गोंडल एवं कविराज ज्ञानेन्द्रनाथसेन हरिद्वार प्रभृति अन्यान्य बहुत से लोग जिन्हें ये सज्जन ही बता सकते हैं। मन्त्रीगण आयुर्वेद के सच्चे प्रतिनिधियों को पहिचानें।

[शेषांश पृष्ठ ६८६ पर देखें]

प्रलापक ज्वर

लेखक—श्री० वैद्य सोहनलाल जी अग्रवाल, कृष्णगोपाल औषधालय कालेड़ा (अजमेर)

[गतांक से आगे]

चिकित्सोपयोगी सूचना-

सर्व प्रथम रोग के कारण जुओं को नष्ट करना चाहिये। अगर रोगी के वस्त्रों में हों तो दूसरे बदलवा देना चाहिये। और जुओं वाले वस्त्रों को खूब पानी में उबालना चाहिये। अगर जुऐं रोगी के बालों में हों तो बाल भी साफ करा देने चाहिये। अगर बाल साफ न कराये जा सके तो कृमिघ्न नीम आदि के तैल लगाना चाहिये। रोगी को प्रकाश और वायु वाले मकान में रक्खे।

पूर्वरूप मालूम होने पर रोगी के अन्त्र वमन विरेचन द्वारा शुद्ध कर लिये जांयगे तो विशेष उग्रता नहीं होगी।

इस रोग में अकसर मलावरोध होता है इससे एरंड तैल या ग्लिसरीन की पिचकारी द्वारा उदर शुद्धि करावें।

इस रोग में ताप वृद्धि होने से मस्तिष्क को हानि पहुंचती है। अतः मस्तिष्क पर से बाल कटवाकर बर्फ की थैली या शीतल जल की पट्टी रखवाने का प्रबन्ध करना चाहिये। डाक्टर लोग ज्वर की वृद्धि होने पर स्पंज या गीले वस्त्र से शरीर को पोंछते हैं। कितनेक चिकित्सक मस्तिष्क पर मक्खन रखते हैं। एवं कोई नाभी पर कांसी का बर्तन रख कर उसमें शीतल जल की धारा डालते हैं। समान्यतः २-४ दिन में शरीर को पोंछकर विष निकाल लिया जाय तो स्वेद बाहर निकलने में सुविधा हो जाती है।

रोगी को सुबह शाम दूध और दोपहर को मोसम्बी का रस पिलावे। अन्न व मांस खाने को कभी न दें। डाक्टर लोग मांस रस पिलाने में हानि समझते हैं। रोगी को जल गरम करके शीतल किया हुआ पिलावे। रोगी जल जितना मांगे उतना पिलावे संकोच न करे।

मूत्रावरोध हो तो कैथेटर से मूत्र निकाल दें। अनिद्रा उपद्रव हो तो अहिफेन प्रधान औषधि विशेष उपयोगी है। केवल कोष्ठबद्धता का ख्याल रखना चाहिये।

इस रोग में तीव्र ज्वर शामक औषधी नहीं दी जाती। ज्वर विष को पचन करने और शक्ति का संरक्षण करने वाली औषधी मुख्यतः दी जाती है। इस रोग में प्रयोजन अनुसार रोगी को उत्तेजक या अवसादक औषधी देनी चाहिये। हृदय की शिथिलता होने पर उत्तेजक और नाड़ी सबल वेग पूर्वक चलती हो और ज्वर अधिक हो तो उत्तेजक औषधी देवे।

सामान्यतः प्रथम सप्ताह में उत्तेजक औषधी नहीं दी जाती। पहले से ही उत्तेजक औषधी का प्रयोग करने पर अपकार होने की भीति अधिक रहती है। फिर भी हृदय शिथिल हो, हृदय की पहली ध्वनि क्षीण हो, नाड़ी क्षीण और द्रुतगामी हो तो उत्तेजक औषधि देनी चाहिये। किन्तु एक ही मात्रा देने पर उत्ताप वृद्धि होकर अस्थिरता बढ़ जाय तो उत्तेजक औषधी बन्द करदें। यदि प्रथम मात्रा में क्लान्ति और प्रलाप शमन हो, हृदय और

नाड़ी की गति सबल बने, जिह्वा आर्द्र हो और रोगी को निद्रा आने लगे तथा जगाने पर स्फूर्ति का बोध हो तो शराब या मद्यार्क सम्हाल पूर्वक कम मात्रा में दे सकते हैं।

प्रलापक ज्वर चिकित्सा—

आयुर्वेदिक चिकित्सा प्रणाली में आन्त्रिक ज्वर की चिकित्सा से बहुत कुछ समानता है। परन्तु आन्त्रिक ज्वर के बनिस्बत यह आशुकारी रोग होते और इससे मस्तिष्क, फुफ्फुस और हृदय भी प्रभावित होने के कारण अधिक सावधानी की आवश्यकता पड़ती है और कुछ विशेष औषधी की योजना करनी पड़ती है।

प्रथमावस्था में आन्त्रिक ज्वर के ही समान लक्ष्मी नारायण, प्रवाल पिष्टी और मधुरान्तक बटी देते रहने से रोग उग्रता धारण नहीं करता और आसानी से बिना उपद्रव के शमन हो जाता है। इससे रोग विष भी शनैः २ पचन होकर उचित समय पर शमन हो जाता है।

द्वितीय अवस्था में इस रोगी की विशेष सम्भाल रखनी चाहिये। पिटिकाएं निकल आने से रोग निदान पूर्णांश में हो जाता है। बहुत से नव चिकित्सक उचित रोग निदान न करके प्रलाप आदि लक्षणों पर ये सन्निपात मान लेते हैं और अनेक उत्तेजक औषधियां देकर रोगी का जीवन संकट में डाल देते हैं। इसलिये पिटिकाएं व अन्य लक्षण अवश्य देख लेना चाहिये। इस अवस्था में मस्तिष्क और हृदय को बल देने वाली अवसादक औषधी दी जाती है। उसमें लक्ष्मीविलास (अभ्रकवाला) बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अगर प्रलाप ज्यादा हो तो इसके साथ तगरादि क्वाथ भी दिया जा सकता है।

यदि फुफ्फुस विकृति रूप उपद्रव हो जाय तो

[पृष्ठ ६८४ का शेषांश]

मेरे लिखने का केवल यही अभिप्रा कि उक्त मूलों की पुनरावृत्ति कदापि न हो पाये और वर्तमान कांग्रेस मन्त्रि मण्ड डाक्टर पन्नालाल के समय में दिये गये इण्डिय मेडिसन बोर्ड के उस आदेश को शीघ्रातिशीघ्र र करे जिसके द्वारा गुरुकुल कांगड़ी, अर्जुन आयुर्वे विद्यालय, अखिल भारतीय आयुर्वेद विद्यापीठ ए हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रभृति संस्थाओं के स्नातक वैद्यों की रजिष्ट्री बन्द कर दी गई है। इन संस्था के स्नातकों को भी उन पुराने वैद्यों को जि अभी तक के कठिन काल में आयुर्वेद की रक्षा की है, एवं अनरजिस्टर्ड चिकित्सकों को चिकित्सा व्यवसाय से रोकने वाली धारा इण्डियन मेडिस एक्ट से शीघ्र उड़ा दी जाय।

बड़ा उत्तम हो यदि कम से कम लखनऊ के किंगजार्ज मेडिकल कालेज के समकक्ष का आद आयुर्वेद विद्यालय जिनमें आयुर्वेदाभिमानी ही अध्यापक हों, प्रत्येक प्रान्त में खोला जाय। वैद्य को स्वास्थ्य सम्बन्धी प्रत्येक कार्य में अवसर जाय। कम से कम एलोपैथी के बराबर आयुर्वेद पर भी रुपये व्यय किये जांय। तब देखा जाय आयुर्वेद के चमत्कार को! एश्वर्य को!! और उसके महा वाङ्मय को!!! प्रत्येक सम्भव उपाय से आयुर्वेद को आगे बढ़ाकर उसे उसके वास्तविक पद पर अर्थात् समस्त भारतीय ही नहीं अपितु विश्व स्वास्थ्य के अग्रदूत के रूप में प्रतिष्ठित कर दिया जाय।

फुफ्फुस पर अलसी की पुल्टिस बांधे। अगर कास हो तो चन्द्रामृत रस और अगर रोगी बालक हो तो माणिक्यरसादि बटी हितकर रहती है। सितोपलादि और वासावलेह भी दिया जा सकता है।

निद्रा न आती हो या उत्तेजक औषधी की भी आवश्यकता हो तो लक्ष्मीनारायण के स्थान पर कस्तूरी भैरव रस दिया जाता है।

उदर शुद्धि योग्य नहीं हुई हो तो अभ्रकंचुकी, ज्वरकेशरी में से एक औषधी दी जा सकती है। अभ्रकंचुकी दिनों तक निर्भयता पूर्वक दे सकते हैं, अतः इसका प्रयोग विशेष अनुकूल रहेगा।

शय्याक्षत हो जाय तो उसका उपचार सत्वर करना चाहिये। इसके लिये स्पिरिट पीठ पर लगा कर घीया पत्थर का बारीक चूर्ण या बोरिक पाउडर बुरका देने से इसका भय जाता रहता है। अगर असावधानता के कारण हो भी जाय तो व्रणोपचार करना चाहिये।

तृतीयावस्था में रोगी की शक्ति का ह्रास बहुत मालूम पड़ता है। रोगी जो अत्यन्त प्रलाप करता था उठ २ कर भागता था, दो चार आदमियों के रोकने से रुकता था और जिसके चहरे से भय मालूम पड़ता था, वह इस अवस्था में निर्जीव होकर शय्या पर पड़ा रहता है, निद्रा आ जाती है। इस अवस्था में हृदय पौष्टिक औषधियां नवजीवन रस जवाहरमोहरा आदि दी जाती हैं।

चौथी अवस्था में रोगी की विशेष सम्भाल रखनी चाहिये। इसमें आकस्मिक उपशय होता है। इससे हृदयावरोध होकर मृत्यु होने का भय रहता है। इस अवस्था में हृदय पौष्टिक औषधियां ही देते रहना चाहिये।

चिचड़ी जनित प्रलापक ज्वर

यह ज्वर भारत, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया और दक्षिण अफ्रीका में होता है। इसकी उत्पत्ति कुत्ते के देह पर रही हुई चिचड़ी के काटने से होती है। इनके कीटाणुओं को 'रिकेट्सिया रिकटसी वेराइटी कोनोरी' कहते हैं। इसका निर्णय विलफोलिक्स की कसौटी द्वारा हो जाता है।

इस रोग के दो प्रकार हैं। १—सौम्य और २—पूर्व लक्षण युक्त। इनमें से भारत के कुमायूं प्रान्त, सीमा प्रान्त आदि में सौम्य प्रकार प्रतीत होता है।

लक्षण—

चिचड़ी के काटने पर प्राथमिक क्षत और रस प्रणालियों का प्रदाह प्रतीत होता है। रोग पूर्ण रूप धारण कर ले तो ८-१० दिन तक ज्वर, शिरदर्द, पांचवे दिन पिटिका निकलना, कण्ठ अकड़ जाना, नेत्र की श्लैष्मिक कला प्रदाह (अभिष्यन्द) आदि लक्षण उपस्थित होते हैं। कभी २ मस्तिष्ककला प्रदाह भी हो सकता है।

पूर्व लक्षण उपस्थित होने पर मस्तिष्क कला, प्रदाह, रोमांतिका और मधुरा होने की भ्रांति होजाती है। कुछ दिन होने पर रिलफेलिक्स की परीक्षा द्वारा इस रोग का निर्णय स्पष्ट हो जाता है।

इस रोग में भारतीय, अफ्रिकन और अमरीकन प्रकारों की उत्पत्ति और लक्षणों में कुछ २ भेद हो जाता है।

चिकित्सा—

तात्विक प्रलापक के समान उपचार करे। यह रोग सरलता से शमन हो जाता है।

पिस्सू जन्य प्रलापक ज्वर

व्याख्या—

यह सम्भवतः तात्विक प्रलापक का सौम्य प्रकार है। किन्तु यह जुंए द्वारा उत्पन्न नहीं होता एवं न जनपद व्यापी रूप धारण करता है। यह विकीर्ण रूप से प्रतीत होता है, इसकी शोध न्यूयार्क में ब्रिल साउब ने की है। अतः इस रोग को ब्रिल का रोग भी कहते है। यह रोग पिस्सू से प्राप्त होता है अतः पिस्सू जन्य प्रलापक ज्वर कहलाता है। यह विश्वव्यापी है, मलाया में इसे उर्बन संज्ञा दी है।

इसका वाहन चूहे हैं। संरक्षक या उत्पादक चूहे के देह पर रहे हुये पिस्सू हैं, इसके कीटाणुओं को रिकेट्सिया प्रोवाजैकी कहते हैं। यह रोग एक मनुष्य से दूसरे मनुष्य को कभी नहीं प्राप्त होता है।

यद्यपि चूहे प्लेग की उत्पत्ति में कीटाणुओं का संक्रमण कराने में कारण रूप हैं, किन्तु उस रोग में चूहे मर जाते हैं और इस रोग में चूहे नहीं मरते हैं। इस रोग में संक्रमण अस्थाई होता है, इस पिस्सू भी दूर नहीं जा सकते हैं। तात्विक प्रका शीतकाल में फैलता है किन्तु इसकी उत्पत्ति उ ऋतु में होती है।

लक्षण—

तात्विक प्रलापक ज्वर के समान किन्तु सौम् इसकी सम्प्राप्ति विशेषतः परिपक्वावस्था और युव वस्था में होती है। इसका आक्रमण अकस्मात् हो है। यह विकीर्ण भाव से प्रतीत होता है। शारीरि उत्ताप कुछ बढ़ता है, आरम्भिक उपशय १४ दि में होता है। इस रोग में पिटिकायें पहले धड़ प हाथ पैर की संधी स्थान पर रही हुई पेशियों प होती है। कभी पिटिकाएं मुखमण्डल, हथेली पैर के तलों में भी निकलती हैं। इस रोग में मृ संख्या ५ प्रतिशत होती है।

चिकित्सा—

तात्विक प्रलापक ज्वर में लिखे अनुसार ही।

हैजा cholera से सावधान

(कपूरासव अर्क कपूर)

हैजा की अक्सीर दवा है।
साथ ही गर्मी के दस्त, पेट का दर्द, जी मिचलाना, अजीर्ण
पर भी अच्छा लाभ करता है।

गृहस्थों को इसे सदैव साथ रखना चाहिये।

नोट—६ शीशी से कम वी. पी. द्वारा नहीं भेजी जा सकेंगी।
१ शीशी ।) १२ शीशी २॥)

पता— धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

॥ श्री धन्वन्तरये नमः ॥

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक-नियमावली

सम्वत् २००२ वैक्रमे श्रावण कृष्ण पक्षीय त्रयोदश्यां (६-८-१९४५) अलीगढ़ मण्डले व्रजमण्डल वैद्य सम्मेलनस्याऽलीगढ़ प्रान्तीय वैद्य सम्मेलनस्य च शुभेऽवसरे यु० प्रा० वैद्य सम्मेलनस्याऽपि स्थायी समितेरधिवेशनः समभवत्। यत्रालीगढ़ प्रान्तीय वैद्यसम्मेलनाधिपतिना धन्वन्तरि प्रधान सम्पादकेन वैद्य बांकेलाल गुप्तेन विजयगढ़ीयेन पञ्चसहस्र मुद्रात्मकं दानमुद्घोषितं। यस्य वृद्धि द्रव्येण प्रति वर्षत्रयं यु० प्रा० वै० सं० द्वारेण पञ्चशतमुद्रात्मकं पारितोषिकं तस्मै प्रदेयम्भवेद्यस्यायुर्वेद विषयकः संस्कृत भाषामयो हिन्दी भाषामयोवा मौलिकः प्रवन्धः सर्वोत्तमः सम्पद्येत्।

अमुमेवार्थं देहरादून नगरे षोड़श यु० प्रा० वै० सम्मेलनः सधन्यवादं स्वीकृत्य तदर्थं निम्ननियमान् विधाय पारितोषिकं प्रचालयितुं समादिदेश।

अस्य नाम—

अस्य पारितोषिकस्य "वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक" इति संज्ञा भवेत्।

पारितोषिक दानम्—

१—पारितोषिकोऽयं यु० प्रा० वै० सम्मेलनस्य वार्षिकाधिवेशने प्रतित्रिवर्षं ताम्रपत्रेण सह पञ्चशतमुद्रा परिमितः प्रदेयो भवेत्। यद्यवसरे पारितोषिक प्राप्तकर्तुरनुपस्थितिः सम्भाव्येत तदात्र नामोद्घोषितमात्रं भवेत्। तदनु सम्मेलनस्य वार्षिकाधिवेशने स्थायिसमितेरधिवेशने वा प्रदत्तम्भवेत्। किन्तु ताम्रपत्रे प्रदेयकालीनैवतिथिः समङ्किता भविष्यति।

२—अयं पञ्चशतीयः सम्पूर्णः पारितोषिकः सर्वोत्तम लेखकायैव प्रदेयःस्यात्।

३—लेखक शब्दे लेखिकाशब्दस्याप्यन्तर्भावः।

४—कोऽपि लेखकः सकृदेव परिष्कृतो भवेत्।

५-पारितोषिकोऽयं जीवित लेखकायैव प्रदेयः स्यात्, यदि कश्चिल्लेखकःस्वीय पुस्तकं पारितोषिकार्थं पारितोषिक समित्यै प्रदायैव स्वर्गतस्तदा तत्पुस्तकमपि विचारश्रेण्यामन्तर्भूतं भविष्यति, प्राप्ते च पारितोषिके तदधिकारिणे समर्पितो भवेत्। तद्योग्याधिकारिनिर्णये पारितोषिक समितेरेवाधिकारः।

ग्रन्थस्य योग्यता—

अस्मित्पारितोषिके सम्मिलितु तेषु पुस्तकेषु निम्नाङ्किताः विशेषिताः समपेक्षिताः।

(१) पुस्तकं संस्कृते राष्ट्र भाषाया म्वा प्रकाशितं (मुद्रितं) भवेत् ।

(२) पुस्तकं शत पृष्ठात्न्यूनं न भवेत् ।

(३) आकारेण २०×३०=१६ परिमितं प्रकाशितं (मुद्रितं) प्रस्तकं ग्राह्यम् ।

(४) मौलिक रचनायाः प्राधान्यम् । संग्रहीतस्य, संकलितस्य, टीकायाः, अनूदितस्य चग्रन्थस्य गणना मौलिक रचनाभ्यन्तरे नैव स्यात् । किन्तु यदि टीकायामनुवादे वा स्वातन्त्र्येण व्याख्याऽलोचनया वा सिद्धान्तः स्थापितो भवेत्सोऽपि मौलिक प्रबन्धान्तर्गत एव स्यात् ।

(५) मुद्रितेष्वेव पुस्तकेषु पारितोषिक समितिः पारितोषिक कार्यं सम्पादयेत् ।

(६) पारितोषिक समिति सदस्यैः पुस्तक समिति समक्षेऽनागतमपि पुस्तकं समुचित पारितोषिक प्रतियोगिकं विज्ञाय तल्लेखकान्तिके पारितोषिक समिते र्नियमावलिः सुरक्षितं प्रषेणीया ।

पारितोषिक समितिः--

(१) वैद्य यांकेलाल गुप्त पारितोषिक व्यवस्थां सम्पादयितुं वर्षत्रयेण सदस्यपञ्चकैः पारितोषिक समितिः स्थापिता भविष्यति ।

(२) पारितोषिक समितेः स्थापना यु० प्रा० वैद्य सम्मेलनस्य वार्षिकाधिवेशने तस्य स्थायि समिते रधिवेशने वा भवेत् ।

(३) समितावस्यामेको वैद्य यांकेलाल गुप्तः स्वयं तदधिकारी वा, एकोनिखिल भारतवर्षीयायुर्वेद विद्यापीठस्य प्रतिनिधिः, एकः संयुक्त प्रान्तीय वैद्य सम्मेलनस्य प्रधानामात्यः, शेषयोर्द्वयोर्मध्ये एको यु० प्रा० वै० सम्मेलनेन निश्चितो वैद्यबांकेलाल गुप्तेनतदधिकारिणा वा निर्द्धारितश्चैक इति पञ्च सदस्याः स्युः ।

(४) कार्यकालोऽस्याः समितेः पुरस्कारस्य घोषणा पर्यन्तमेवभवेत् ।

(५) समिते रस्याः कर्तव्योऽधः प्रदर्शितो भवेत् ।

(i) यथा नियमं पुस्तकागम कालस्य निर्धारणम् ।

(ii) निर्णायकान्नियुज्य तेषां सकाशान्निर्णयमुपलभ्य पारितोषिक निर्णय करणाम् ।

(iii) निर्णायक निर्णये सन्दिग्धेऽव्यवस्थिते वा कार्ये पारितोषिक समितिरेव निर्णय करिष्यति ।

(६) पारितोषिक समिते र्निर्णये बहुमतमवलम्ब्यैव भविष्यति ।

(७) पारितोषिक समितेः कार्यारम्भिस्त्रभिरपिसदस्यैः सम्पन्नः स्यात्, अर्थात् कोरमस्त्रयाणामपि सदस्यानामुपस्थित्या मन्तव्यः ।

(८) अनुपस्थित सभ्यानां सम्मतिः पत्रद्वारेणाऽपि सम्पन्ना स्यात् ।

(९) पारितोषिक समिति सदस्यैर्लिखितानि प्रकाशितानि च पुस्तकानि पारितोषिक प्रतियोगिनी नैव भविष्यन्ति ।

(१०) पारितोषिकार्थमागतानां पुस्तकानां सूचना तत्क्षणमेव प्रेषयितुः समीप गामिनी भवेत्

(११) प्राप्त पुस्तकेभ्य स्तादृशोत्तमानि निर्णायक समीपे प्रेषण योग्यानि पुस्तकानि पृथक् करिष्यति पारितोषिक समितिः । यानि चाऽयोग्यानि तेषां विषये त्रिभिः सदस्यैः प्रदत्ता स्वीकृत सूचिका सम्मतिरावश्यकी ।

(१२) पारितोषिक समितिः पुस्तक प्राप्तेरनन्तरं सर्वसम्मत्या यद्येकमपि पुस्तकं निर्णायकान्तिकमुपेतुं नोचितम्मन्येत तदा तस्मिन्वर्षे पारितोषिक वितरणमप्रदत्तं स्यादिति घोषयेत् ।

(१३) निर्णायक समीपादागते निर्णये पारितोषिक योग्यं नास्ति पुस्तकमिति निरीक्ष्य पारितोषिक समितिः तस्मिन्वर्षे पारितोषिकं नदद्यात्; किन्तु यदि पारितोषिक समितिर्विचारे स्वर्णपदक योग्यं पुस्तकं भवेत्तदा तत्पुस्तक लेखकाय स्वर्णपदकं ससम्मानं समर्पयेत्

(१४) पारितोषिक प्रतिदानेभ्यो देयादवशिष्टं द्रव्यं यु० प्रा० वै० सम्मेलनस्य स्थायि समित्यनुज्ञामधिगम्यैव पारितोषिक समितिः प्राचीन हस्तलिखित पुस्तकान्वेषणे आवश्यक ग्रन्थ निर्माण कार्ये च प्रेषयेत् ।

(१५) पारितोषिक समितिः कापिका द्वयं संरक्षेत् । एकस्यां पारितोषिक प्रतियोगितायामागतानाम्पुस्तकानां विवरणं लिखितं स्यात्, तस्यां सप्त प्रकोष्ठा भविष्यन्ति । ते यथा—

(१) क्रम संख्या (२) पुस्तक नामानि (३) लेखक नाम निवासादि निर्देशः सविस्तरम् (४) प्रेषयितु र्नियानं निवासादि सङ्केत युक्तम् (५) प्रकाशकस्य नाम निवासादयः (६) कार्यालये समागम कालः (७) विशेष विवरणः कश्चित् ।

अन्यस्यां कापिकायां प्राप्त पारितोषिक प्रतियोगितानां पुस्तकानां पारितोषिक वितरणं लिखितम्भवेत् । तस्यां नव प्रकोष्ठा भवेयुः ।

(१) क्रम संख्या (प्रथम पुस्तिकानुरूपा) (२) पुस्तकनामानि (३) नियम विरुद्ध मागतानां पुस्तकानां नाम (४) निर्णायकान [illegible] पुस्तकानि (५) निर्णायक योग्यानि पुस्तकानि (६) निर्णायक समीपे पुस्तक प्रेषणस्य तिथिः (७) निर्णायक सम्मतिः (क, ख, ग) (८) निर्णायक मतगणना (९) विशेषो विवरण इति ।

१६—पारितोषिक समितिर्निर्णायक योग्यानि पुस्तकानि विचिन्त्य निर्णायक समीपे चैकैकाम्प्रतिप्रेषयेत् ।

१७—पारितोषिक समितिश्चयनानन्तरं मासाभ्यन्तर मेव प्रतियोगितायां प्राप्त विषयस्य [illegible] कुर्यात्प्रचारयेच्च ।

पारितोषिक ग्रन्थानां विषयाः—

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक लाभार्थं निम्नाङ्कितेषु विषयेषु पुस्तकानि गृहीतानिस्युः।

(१) स्वास्थ्य विज्ञानम् (२) रोग विज्ञानम् (३) चिकित्सा विज्ञानम् (४) कौमारभृत्यम् (५) धातृ विज्ञानम् (६) भूततन्त्रम् (मानसिक रोग विज्ञान गृहबाधा विज्ञान सहितम्) (७) कीटाणुवाद आयुर्वेदश्च (८) उर्ध्वाङ्ग चिकित्सा (९) शल्य तन्त्रम् (१०) अगद तन्त्रम् (११) रसायन तन्त्रम् (वाजीकरणं कामशास्त्रञ्च) (१२) पदार्थ विज्ञानम् (१३) वनस्पतिविज्ञानम् (१४) रसतन्त्रम् (१५) पञ्चकर्म (१६) अभिनवानुसन्धानम् (१७) आयुर्वेदीयेतिहासः (१८) शारीर रचना विज्ञानम्।

द्रष्टव्यम्—

पारितोषिक समितिरायुर्वेद शास्त्रसम्मतं विषयान्तरमपि सन्निवेशयितुं चतुर्णां सदस्यानां सम्मति समधिगम्य तथाकर्तुं शक्नुयात्।

अवधिः संख्याच—

१—यस्मिनब्दे पारितोषिक वितरण व्यवस्थानिर्धारिता भवेत्, तस्मिन्वत्सरे यु० प्रा० वै० सम्मेलनान्मासषट्कात्पूर्वंभेदमुद्रितम्पुस्तकं विचारार्थं गृहीतम्भवेत्।

२—प्रथम पारितोषिक वितरण समयस्तु १९४६ वर्षीय युक्तप्रान्तीय वैद्यसम्मेलनस्य वार्षिकाधिवेशन एव भविता।

३—प्रथम पारितोषिकं लाभार्थं पारितोषिक समित्या निश्चिते विषये १९४६ वर्षीय युक्तप्रा० वै० सम्मेलनतिथेः षड्मासात्पूर्वं मुद्रितानिसर्वाण्यपि पुस्तकानि गृहीतानिस्युः, परंतानिद्वाविंशति वर्षात्पूर्वमपि प्रकाशितानि कथंनभवेयुः। परंपुस्तकेषु प्रकाशनतिथिरावश्यकी।

४—अतः परं पारितोषिकवितरणदिनात्पूर्वं षड्मासात्प्रारभ्यमादिपारितोषिक वितरणतिथिपर्यन्तं प्रकाशितानिपुस्तकानि गृहीतानि भवेयुः।

५—कस्यचिदपि पुस्तकस्यलेखकः प्रकाशकोऽन्योऽपि यःकश्चित्पारितोषिकविचारार्थं पुस्तकप्रदाता तैः पारितोषिकसमितेः समीपे पञ्च पुस्तकानिप्रेषयितव्यानि।

६—पारितोषिकार्थमागतेषु सर्वेष्वपि पुस्तकेषु सम्मेलनस्याधिकारः। सम्मेलनेच्छया यदि च पुस्तकानि विक्रीतानियुस्तदातद्धनेन प्राचीन हस्तलिखितग्रन्थानां प्रकाशनं, नवीन पुस्तकनिर्माणं, (सामयिकमुपयोगिकञ्च), लेखक पुरस्करणञ्च सम्पद्येत।

निर्णायक नियमाः—

१—पारितोषिकार्थं प्राप्त पुस्तक योग्यतानिर्द्धारणं विधाय पारितोषिकसमितिः त्रीन् निर्णायकान् नियुंक्ते।

२—एतादृशानां निर्णायकानां नियुक्तिः पारितोषिक दिनान्मासचतुष्टयाद्वागेवसम्पन्नास्यात् ।

३—निर्णायक नियुक्तेः प्राक् पारितोषिकसमितिः समाचारपत्रद्वारेण निर्णायकानां नाम संग्रहं कुर्यात्, आयुर्वेद विद्यापीठस्य यु० प्रा० वै० सम्मेलनस्य स्थायिसमितेःसकाशान्नाम याचेत् ।

४—पारितोषिक समितेःकोऽपि सदस्यो निर्णायको नैव भवेत् ।

५—एतादृशोऽपि कश्चिन्निर्णायको नैवभविष्यति यस्य लिखितं प्रकाशितम्वा पुस्तकं पारितोषिकार्थ मागतम् ।

६—पुस्तक प्राप्ते रनन्तरं निर्णायकस्यायं कर्तव्योयत्प्रत्येकं पुस्तकं समालोचनात्मिकयासूक्ष्मेक्षिकयासमीक्ष्य प्रतिपुस्तकं विशदं विविच्यतेष्वेकमेव सर्वोत्तमेनावधार्य तदर्थं तुलनात्मिकयादृष्ट्यायथासम्भवं निर्णायस्वीयां सम्मतिं समालोचनारूपां पारितोषिकसमितेः समीपे प्रहीयेत । तस्याऽपरोऽयमपि कर्तव्यो यत् द्वित्राणि पुस्तकानि सर्वोत्तमादवरस्यापि तुलनया समालोच्य विविच्यसम्मति निर्दिशेत् ।

१०—निर्णायकः पुस्तकप्राप्तिकालान्मासद्वयात् प्रागेवस्वीयां सम्मतिं पारितोषिसमितिसमक्षं प्रेषयेत् ।

निर्णयः—

१—निर्णायक सकाशान्निर्णयमवाप्य पारितोषिकसमितिः पारितोषिक निर्णयङ्कुर्यात् ।

२—यत्पुस्तक विषयेऽधिकांशं सर्वोत्तमा सम्मतिःस्यात्तल्लेखक एव पारितोषिकभाग्भवेत् ।

३—सर्वोत्तमपुस्तकस्य निर्णयावसरेत्रयाणां मध्येद्वयोरपि सम्मतिं समुपलभ्य तस्मिन्नेवपक्षे निर्णयः साधीयाःसम्भवेत् । किन्तु निर्णेतृणां सम्मतिपार्थक्ये सति पारितोषिकसमितिः स्वयमेव निर्णीय पारितोषिकमुद्घोषयेत् । समितेरनिच्छायां सत्यां पारितोषिकः स्थगितोऽपि भवेत्तस्मिन्वर्षे । कस्मैचित्सर्वोत्तमलेखकायस्वर्णपदकं प्रदातुमप्रदातुम्वा सर्वथा स्वाधीना समितिःपारितोषिक प्रदात्री ।

४—सत्यावश्यके समुचितेच पारितोषिक समितिःपुस्तकोपरिसमागतानां निर्णायक सम्मतीनां प्रकाशनमपि कर्तुं शक्नुयात् ।

ताम्र पत्रम्—

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिकेणसमं यत्ताम्रपत्रंप्रदीयेत तस्येयम्प्रतिलिपिरधोऽङ्किताऽनुसन्धेया

संयुक्त प्रान्तीय वैद्य सम्मेलनस्य

सं०————————————स्य

श्री वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिकम्

पञ्चशत मुद्राः ५००) रुपया

परितोषिक प्रतियोगितार्थं समागतेषु पुस्तकेषु श्रीमतः/श्रीमत्याः.............................. निवासितः/निवासिन्याः सर्वोत्तम रचनार्थं सं० प्रा० वै० सम्मेलनस्य.......................वार्षिके अधिवेशने पारितोषिकेण सहैवेदं ताम्रपत्रं सम्मानपुरःसरं समर्पयति।

स्थानम् ....
तिथिः ....

सभापतिः
हस्ताक्षर ....

स्वर्णपदकम्

वैद्य बांकेलाल गुप्त पारितोषिक समित्या कस्याश्चिद्रचनायाः सर्वश्रेष्ठायाः सम्मनार्थं यत्स्वर्णपदकं प्रदीयेत तत्स्वरूपं निम्नाङ्कितं ज्ञेयम्:—

प्रथम पृष्ठे

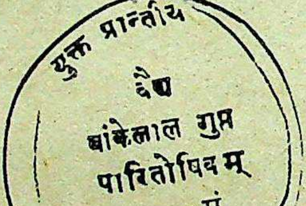

द्वितीय पृष्ठे

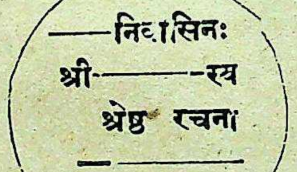

जीर्ण ज्वर से पीड़ित—

रोगियों के लिये हमारी स्वर्ण मालती वसन्त नं० १ व्यवहार कराइये। इसके निर्माण में हम शुद्ध हिंगुल के स्थान पर सिद्ध मकरध्वज नं० १ और स्वर्ण वर्क के स्थान पर स्वर्ण भस्म डालते हैं। आजकल ७५ प्रतिशत ज्वर रोगी वीर्य विकार से भी पीड़ित होते हैं, उनके लिये मालती में सिद्ध मकरध्वज का मिश्रण अमृत के समान उपयोगी सिद्ध होता है। एक ही औषधि ज्वर और वीर्य विकार दोनों को नष्ट करती है। सैकड़ों वैद्य डाक्टर इसे सफलता पूर्वक अपने रोगियों पर व्यवहार कर रहे हैं। मू० नं०१—१तोला २०), नं०२—१तोला ११)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

वैद्यों की सम्मतियां

सम्मति नं० १८—

परामर्श नं० १७ (२) पर सम्मति—

एक पाव छोटी पीपल लेकर पहिले गाय के दूध में १ दिन भिगोना चाहिये बाद को निकाल कर पत्थर के खरल में पिष्टी बना इसमें तुलसी स्वरस व गुलाबजल की निरन्तर ६४ प्रहर घुटाई करे, घुटाई करते समय किसी भी वक्त खरल बन्द न रखा जावे। रात दिन निरन्तर ८ दिन तक घुटाई करने पर उत्तम ६४ प्रहरी पीपल बन जायगी, इसको श्वास कास युक्त राजयक्ष्मा, जीर्ण ज्वर पर किसी भी सौम्य चूर्ण यां अवलेह के साथ प्रयोग किया जा सकता है।

सम्मति नं० १९—

परामर्श नं० १७ (३) पर सम्मति—

मृगश्रृङ्ग के टुकड़े कराकर पहिले सम्पुट में फूंक ले, बाद को अर्क दुग्ध की भावना देकर गजपुट में फूंक कर उत्तम भस्म बन जायगी। यह भस्म १-२ रत्ती अग्रांगअवलेह के साथ प्रयोग करने से कफज श्वास कास, निमोनियां, पार्श्व शूल पर शीघ्र असर करती है एवं घी कुमार में घोटकर फूंकने पर भस्म कर लेने से पित्तज कफज, श्वास, कास पर, निमोनियां, पर्श्वशूल में फायदा करेगी।

आयुर्वेद शिरोमणि भानुकुमार जैन
भिंड गवालियर।

सम्मति नं० २०—

५६५-कत्था
लौंग
बंशलोचन
मुलेठी
तुलसी के पत्ते

—इन सब को पीस कर चने के बराबर गोलियां बनाकर रखलें, दिन रात में कई बार १०-१० गोली तक चूसें।

मिर्गी रोग पर आजमाया हुआ नुस्खा—

५६६-कागजी बादाम ५
मुनक्का ५
काली मिर्च ७
ब्राह्मी की पत्ती ¼ भर

—बादाम रात को पानी में भिगोदें, रोज सुबह सब चीजें ठण्डाई के माफिक पीस छानकर दूध और मिश्री मिलाकर पीना चाहिये।

रामनारायण अग्रवाल।

सम्मति नं० २१—

परामर्श नं० ११ पर सम्मति—

महोदय जी !

५-६ मांह की लड़के के बांई आंख में जो आप नासूर लिख रहे हैं, समझने की भूल है। उसे गर्भाशय के दोष जान पड़ते हैं और साथ २ गर्भाधान के समय मातृज दोष ज्यादा देखा जाता है। नहीं तो इस तरह की नासूर की बीमारी होना असम्भव है, चूंकि बीमारी का स्थान मातृ भाव में विभक्त है।

यह बीमारी अर्श रोग है। इसे नेत्रार्श भी कहते हैं, इसमें केवल सूरन की कोपल को रसौत और मधु में मिश्रण कर नासूर की जगह अनुलेपन करें। मेरा ये अनुभव दो-चार दफे का परीक्षित है, कृपया आप भी लाभ उठावें।

—बालगोविन्द जी मिश्र, भागलपुर।

सम्मति नं० २३-

परामर्श नं० २ पर सम्मति—

आपकी जिज्ञासा में अधोलिखित चिकित्सा पेश करता हूं, प्रयोग कर सूचित करें, हस्तमैथुन से टेढ़े हुये शिश्न को प्रथम गरम जल से धो डाले, पश्चात् एरण्ड के पत्तों को अधोलिखित तैल लगा कर थोड़ा अग्नि पर उष्ण करे, पत्तों को शिश्न पर लपेट ऊपर से रुई बांध देवे, शिश्न के लंबान इतनी बारीक किमचियां बनाकर किमचियों को गेहूं २ की दूरी के आकार पर सूत से लपेट देवे, व इन किमचियों के जालको शिश्न पर ठीक से बांध देवे। यह क्रम ७ दिन तक रहे, एरंड के २-३ पत्तोंको मल कर काम में लेवे।

तैल विधि—

५ तोले तिल तैल में १ तोला धत्तूर बीज डालकर तैल तपावे, बीज जलने पर तैल छानकर कुप्पी में बन्द कर घूरे में दबा देवे, ४० दिन दबा रहने देवे, तदनंतर निकाल उपयोग करे, यह परम स्तम्भक बाजीकरण है।

—भिषग्वर पं० व्या. नां. शुक्ला, नागपुर।

सम्मति नं० २४-

परामर्श नं० ६ पर सम्मति—

५९७-तिलों का खालिस तैल	१ छटांक
मुश्ककाफूर देशी	२॥ तोला

—सर्व प्रथम तैल को गरम करें फिर उसमें मुश्ककाफूर पीसकर डाल देवे और शीशी में भरकर रख लेवें। इस तैल की प्रति दिन मालिश करने से जमजूआं बिल्कुल नहीं रहती।

—वैद्यरत्न अमरचन्द्र जैन बरनाला।

सम्मति नं० २५—

परामर्श नं० ३ पर सम्मति—

५९८-भृङ्गराज (साभर सींग) के छोटे २ टुकड़े करके अर्क दुग्ध में भिगो दें, ३ दिन तक भीगा रहने दे, पश्चात् निकाल कर अर्क पत्र में लपेट सम्पुट करे, गजपुट की अग्नि दे दें, श्वेत वर्ण की भस्म बन जायेगी, जो काली रह जाय उस को फिर अर्क दुग्ध में घोटकर अग्नि दें। तत्पश्चात् पीसकर रख लें।

५९९-भृङ्गराज को लेकर ४-६ कंडों में रखकर अग्नि लगाकर रख देवें, कुछ देर बाद देखें कि भृङ्गराज में आग पकड़ ली हो तब कंडो को अलग कर पवन में रख देवें जिससे आग और जोर पकड़ कर भृङ्गराज को भस्म कर देगी, अगर कुछ कम जला हो तो फिर कुमारी रस की भावना देकर फिर अग्नि दे देवें पुनः भस्म हो जाने पर पीसकर शीशी में रख लेवें।

भृङ्गराज भस्म के गुण

यह उष्ण, रूक्ष प्रकृति का द्रव्य है, इसके सेवन से शरीर के आर्द्र में तर व कफ भाग घटता है, शरीर में शीत की प्रधानता हो तो इसके सेवन से जाती रहती है, शरीरमें स्फूर्ति होतीहै, निमोनियांमें कफ को पतला कर बाहर फेंक देता है, मन्थर-ज्वर के दाने इसके सेवन से जल्दी बाहर निकल आते हैं यह हमारा कई बार का अनुभव है, फेफड़ों को साफ करता है यथा वक्षोदर, मांस पेशी, आंत्रिक आक्षेप, हिक्का, श्वास, कास में महान् लाभकारी है। हृदय रोग में भी विशेष फायदा करता है

मात्रा—इसकी २ चावल से १ रत्ती तक है।

कालीचरण त्रिपाठी वैद्य, सागर (सी०पी०)

सम्मति नं० २६–

परामर्श नं० २६ पर सम्मति—

इस रोगी को आप प्रातः सायं 'पुष्पधन्वा रस' (भै० र० वाजी० अधिकार) ईसबगोल भूसी और मिश्री के चूर्ण मिलित चूर्ण ३-६ माशा के साथ सेवन करावें।

अनुपान—'सुकुमार कुमार घृत, (भै० र० मूत्रकृच्छ्राधिकार) दूध ʃ। पात्र एक में डाल कर पिलावे।

उचित पथ्य व्यवस्था करें एवं भ्रमण करावें। भगवान् धन्वन्तरि की कृपा से पूर्ण लाभ होगा।

सम्मति नं० २७–

परामर्श नं० ४० पर सम्मति—

इस रुग्णा को आप प्रातः सायं "योगेन्द्र रस" २-२ रत्ती, बड़ी एला चूर्ण ४ रत्ती और शहद से सेवन करावें। अनुपान में मुनक्का स्याह ५-६-७ जैसा उचित समझें, का हिम या क्वाथ ऋत्वनुकूल देवें और दोनों वक्त भोजन के बाद उत्तम द्राक्षासव १ तोला १ मोसम्बी रस में अथवा गुलाबजल २ तोला में देवें, अवश्य लाभ होगा।

सम्मति नं० २८–

परामर्श नं० ४१ पर सम्मति—

इस रोगी को सुबह शाम "चतुर्भुज रस" २-२ रत्ती, शुद्ध मालकांगनी चूर्ण १ माशा के साथ देवें, ऊपर जटामांसी व सौंफ के क्वाथ का अनुपान देवें। रात को सोते वक्त 'स्वल्पचैतस घृत' (भै.र.) १ तोला दूध में देवें। शरीर में महाचन्दनादि तैल अथवा महालाक्षादि तैल की मालिश करावें।

सम्मति नं० २९–

परामर्श नं० ४७ पर—

उक्त स्त्री के बच्चों को जो व्याधि होती है उसका नाम आयुर्वेद में "तालुकण्टक" है। इसको भिन्न भिन्न भाषाओं में "सूखिया मसान" "मगखी" "सुखन्ना" (Marasmus) आदि नाम से भी कहा जाता है। आयुर्वेद ग्रन्थों में इसका निदान इस प्रकार किया है।

> तालु मांसे कफः क्रुद्धः कुरुते तालुकण्टकम् ।
> तेन तालु प्रदेशस्य निम्नता मूर्ध्नि जायते ।
> तालुपातः स्तन द्वेषः कृच्छ्रात्पानं शकृद्द्रवम् ।
> तृडास्य कण्ठ्वक्षिरुजा ग्रीवा दुर्धरतावमिः ॥
>
> अ० ६ ह० अ० २ श्लो० ४, ५।

अर्थात्—तालु के मांस में कुपित हुआ कफ "तालुकण्टक" व्याधि उत्पन्न करता है, इससे तालु स्थान में नीचा गड्ढा हो जाता है, बच्चा दूध नहीं पीता, शरीर अत्यन्त कृश हो जाता है, ज्वर रहता है, मल पतला हो जाता है, प्यास अधिक रहती है। नेत्र, कण्ठ, मुख इनमें पीड़ा होती है, वमन होने लगती है, इन लक्षणों के होने पर यदि उचित व्यवस्था नहीं की जाती तो बच्चा चल बसता है।

इस प्रकार के अनेक रोगी मेरे आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय में चिकित्सा के लिये आते हैं। इस व्याधि की सरल परीक्षा अनुभूत यह है।

परीक्षा–

बच्चे के तालु स्थान पर जो गड्ढा होता है उसमें २ माशे गुड़ रख कर गेहूं के आटे की लोई बना कर उसे ढक दें और पट्टी बांध दें; ४ घण्टे के उपरान्त पट्टी खोलें यदि उक्त रोग होगा तो गुड़ नहीं मिलेगा, गुड़ के होने पर यह रोग नहीं होगा।

इस रोग का कारण जो माता से सम्बन्ध रखता है वह इस प्रकार है—

माता पिता के अन्दर क्षय वा उपदंश का अंश हो, प्रदर, अशुद्ध जलवायु का सेवन एवं खान-पान में A. D. विटामिन की कमी, दुर्बलता आदि कारणों से इसका असर बच्चों पर होता है।

इसकी चिकित्सा जिन योगों द्वारा हम अपने औषधालय में करते हैं और लाभ प्राप्त करते हैं पूर्णतया अनुभूत है। यहां लिखी जाती है।

६००-शृङ्गबेर निशा भृङ्गं कल्कितं वटपल्लवैः ।
बद्ध्वा गोशकृता लिप्तं कुकूले स्वेदयेत्ततः ॥
रसेन लिम्पेतालवास्यं नेत्रेच परिषेचयेत ॥
अ० हृ० उ० अ० २ श्लो० ६६, ६७।

अर्थात्—अद्रक, हल्दी, भांगरा, इन तीनों को सम-भाग में लेकर पीस लें और कल्क बना गोला बनावें, इस गोले के ऊपर गाय के गोबर से लेप कर दें, पुनः दहकती आग में इसे रख दें, जब गोबर जलने लगे उसे निकाल लें और ऊपर से साफ कर साफ वस्त्र में द्रव्यों को डाल उसका रस निकाल लें, इस रस को बच्चे के तालु व मुख पर लेप करें, नेत्रों पर भी सिञ्चन करें।

६०१-हरीतकी वचा कुष्ठं कल्कं माक्षिक संयुतम् ।
पीत्वा कुमारः स्तन्येन मुच्यते तालुकण्टकात ॥
अ० हृ० उ० अ० २ श्लो० ६८।

अर्थात्—हरड़, मीठी वच, कूट, इनको सम-भाग में ले चूर्ण कर मधु में मिला उचित मात्रा में माता के दुग्ध से चटावें। बच्चा "तालुकण्टक" व्याधि से मुक्त होगा।

६०२-शंख के अन्दर का कीड़ा इस रोग की उत्तम सिद्ध औषधि है। शंख का सूखा कीड़ा लेकर चूर्ण करलें १-१ रत्ती की मात्रा में मधु में मिलाकर चटावें आशातीत लाभ होगा।

६०३-उत्तम जहर मोहरा की कुमारी रस द्वारा की गई भस्म १-२ रत्ती शर्बत अनार में चटावें इससे भी लाभ होगा।

६०४-सम्भालु के पत्तों का कल्क तालु प्रदेश में अच्छी तरह रक्खें कुछ काल बाद उतार दें, चमत्कारिक गुण होगा।

बच्चे के शरीर पर इन तैलों की सुविधानुसार मालिश करें। लाक्षादि तैल, महा नारायण तैल, महा मरिच्यादि तैल, मालिश के बाद हलकी धूप सेवें।

बच्चे की मां को हलका, पौष्टिक, सुपाच्य भोजन एवं विशेषतयां A. D. बिटामिन युक्त पदार्थों का सेवन करावें, फलों का रस दें। साथ ही यदि स्त्री को प्रदर, उपदंश आदिं कोई विकार हो तो उसकी विधिवत चिकित्सा करावें।

मिर्च, मसाला, तैल, खटाई, बासी पदार्थ आदि विकारी पदार्थ न दें।

—आयु० भा० पं० दयाराम शास्त्री वैद्य, आर्वेदा०
सिवहारा (बिजनौर)

साहित्य समालोचना

नैसर्गिक आरोग्य—

लेखक—वैद्य पं० जगन्नाथ प्रसाद जी शुक्ल, प्रकाशक—वैद्य राजेन्द्रचन्द्र शुक्ल, सुधानिधि कार्यालय, ३ सम्मेलन मार्ग प्रयाग, जि० इलाहाबाद। २०×३० १६ पेजी पृष्ठ संख्या १७३ मूल्य १।।)

प्रस्तुत पुस्तक के लेखक का विशेष परिचय देनां सूर्य को दीपक दिखाना है, क्योंकि आयुर्वेद जगत में क्वचित् ही वैद्य ऐसे होंगे जो शुक्ल जी से परिचित न हों। शुक्ल जी की जैसी विद्वत्ता है उसी प्रकार परमात्मा ने आपको लेखन शक्ति, कर्मठ शक्ति और वक्तृत्व शक्ति भी प्रदान की है। आप जैसे प्रतिभाशाली वैद्य क्वचित ही दृष्टिगत होते हैं। अस्तु—

मनुष्य का शरीर पृथ्वी, जल, वायु, आकाश और अग्नि के संयोग से बना है। अतः शरीर को स्वस्थ रखने के लिये इन सब का ज्ञान पूर्णरूप से होना आवश्यक हो जाता है। इस पुस्तक में बहुत उत्तम ढङ्ग से विवरण सहित वैज्ञानिक ढङ्ग से उक्त पञ्चतत्वों का वर्णन किया गया है। इतना अच्छा वर्णन आजतक किसी भी पुस्तक में देखने में नहीं आता है। जलवायु और उसके परिवर्तन का भी वर्णन महत्वपूर्ण है। साथ ही भारतवर्ष में उत्तम जलवायु के स्थानों का और वहां की सुविधाओं का भी वर्णन महत्वपूर्ण है। पुस्तक प्रत्येक के लिये उपयोगी है।

मुख रोग विज्ञान—

इस पुस्तक के भी लेखक तथा प्रकाशक उक्त ही महोदय हैं। इसमें मुख, ओष्ठ, जिह्वा, दन्त आदि की बनावट सामुद्रिकमुख, उनमें होने वाले रोगों का पूर्ण निदान और बाहरी तथा भीतरी मुख रोगों की विस्तृत चिकित्सा लिखी गई है। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में वर्णित समस्त मुखमण्डल के ६७ रोगों के अतिरिक्त सब मिलाकर इसमें १५६ रोगों का वर्णन है। साथ ही चिकित्सासूत्र, पथ्यापथ्य, साध्यासाध्य और यन्त्र शस्त्रों का भी वर्णन है। मुखरोग पर पूर्णरूप से प्रकाश डालने वाली यह सर्व प्रथम पुस्तक है। इसकी एक-एक प्रति प्रत्येक को अपने पास रखनी चाहिये। मूल्य २)

नासा रोग विज्ञान—

इसके भी लेखक तथा प्रकाशक उक्त ही महानुभाव हैं। आयुर्वेदीय ग्रन्थों में वर्णित ३४ नाशा रोगों के अतिरिक्त इसमें सब मिलाकर १०० से अधिक रोगों का पूर्ण विवेचन निदान और चिकित्सा लिखी गई है। नाक की भीतरी बनावट विस्तृत रूप से देकर नासा सामुद्रिक भी दिया गया है। नासारोग में रखने योग्य सावधानी पथ्यापथ्य लिखकर परिशिष्ट में खांसी, कुकर खांसी, श्वास, क्षय, शोष, नासाभेद, क्षयज नासा प्रदाह, बाह्यनासिका भेद, नाक का नासूर नाक का घाव, ब्रोंकाइटिस, वांको न्यूमोनियां, श्वसनक ज्वर, तीव्र गल ग्रन्थि शोथ, बालरोगों में नासा विकार, नासा चिकित्सा में उपयोगी यन्त्र शस्त्र शिरावेधन नासा छिद्र की परीक्षा आदि विषयों का भी वर्णन है। मूल्य २)

—पं० सभाकान्त झा शास्त्री,
स० सम्पादक धन्वन्तरि।

कर्मयोग—

गीता मन्दिर आगरा का प्रमुख पाक्षिकपत्र है। अभी तक इसके चार अङ्क प्रकाशित हो चुके हैं। इसके लेख सब पढ़ने योग्य रहते हैं, इसमें राजनैतिक, शिक्षा तथा गल्प आदि लेख रहते हैं। इसका वार्षिक मूल्य ४) तथा एक प्रति का =) है। गीता मन्दिर आगरा से प्राप्त होता है।

विविध समाचार

३५ वां नि० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन कानपुर

गत मास के अङ्क में पैंतीसवें महासम्मेलन के अङ्गों का वर्णन किया जा चुका है। अतः उनके प्रत्यङ्ग का और विषयों का वर्णन करना आवश्यक है। जो कि निम्नलिखित क्रम से किया जारहा है।

वैद्य सम्मेलन के तीन प्रत्यङ्ग-(१) संगठन, (२) प्रचार, (३) संरक्षण।

अध्यापक सम्मेलन के तीन प्रत्यङ्ग-(१) लेख, (२) सम्भाषण, (३) प्रदर्शन।

स्नातक सम्मेलन के ३ प्रत्यङ्ग-(१) सहयोग प्रदान (२) सेवा (३) स्वाधिकार प्राप्ति।

विशिष्ट विद्वत् सम्मेलन के प्रत्यङ्ग-(१) आयुर्वेद विज्ञाना-चरण क्रम निर्माण, (२) आयुर्वेद विज्ञाना-ध्ययन क्रम निर्माण, (३) आयुर्वेद विज्ञान, अध्ययन नियम निर्माण।

निवेदक-

--बालकृष्ण जी शास्त्री, प्र० मन्त्री।

अवन्तिका वैद्य-मण्डल सभा-

अखिल भारतीय "आयुर्वेद-महामण्डल" के अध्यक्ष आयुर्वेदाचार्य पं० एम० के० मुकर्जी बी० ए० भारत के प्रमुख स्थानों में आयुर्वेद संगठन और प्रचार करते हुए तथा इन्दौर धार देवास आदि संस्थानों में होते हुवे ता० २५-३-४६ को उज्जैन पधारे। अवन्तिका वैद्य-मण्डल की ओर से उनका स्वागत किया गया। ता० २८-३-४६ को एक सामूहिक सभा में, श्री मुकर्जी को मानपत्र दिया गया। इस दिन प्रातः नगर के सभी प्रतिष्ठित वैद्यगण और नागरिक उपस्थित थे।

ता० २९-३-४६ को फ्रीगञ्ज में अरुणोदय फार्मेसी द्वारा आयोजित एक सार्वभौम सभा आयुर्वेद और व्याकरण के आचार्य विद्वद्वर्य पं० गोपीकृष्ण जी शास्त्री के सभापतित्व में हुई। आयुर्वेदाचार्य पं० वासुदेव जी शास्त्री ने एक महत्वपूर्ण और आवश्यक प्रस्ताव रखा जिसमें श्रीमन्त महाराज ग्वालियर से निवेदन किया गया कि "पूर्व निश्चय के अनुसार विक्रमकीर्ति मन्दिर और स्तम्भ का निर्माण शीघ्र ही किया जाना आवश्यक है, तथा कीर्ति मन्दिर के साथ ही साथ आयुर्वेदोद्धारक, विक्रम नवरत्नों के आद्य-रत्न धन्वन्तरि जी महाराज की स्मृति में धन्वन्तरि आयुर्वेदिक अनुसंधान कार्य भी शीघ्र प्रारम्भ होना चाहिये। प्रस्ताव का अनुमोदन श्री अनन्तलाल जी वैद्य ने किया। आयुर्वेदालंकार पं० काशीनाथ शर्मा शास्त्री ने प्रस्ताव की आवश्यकता का महत्व सिद्ध करते हुये और वैद्यों के संगठन की आवश्यकता बतलाते हुए उक्त प्रस्ताव का समर्थन बड़े जोरदार शब्दों में किया।

विद्वद्वर्य आयुर्वेद महारथी श्री मुकर्जी के भाषण बड़े ही गवेषणात्मक और प्रभावोत्पादक रहें। उन्होंने वैद्यों को आयुर्वेद की राष्ट्रीयता सिद्ध करते हुये संगठन के लिये बहुत जोर दिया तदनुसार यहां के "अवन्तिका वैद्य मण्डल" ने भी आयुर्वेद सेवा करते रहने का निश्चय कर दिया है।

--कन्हैयालाल शर्मा वैद्य शास्त्री, प्र० मन्त्री

श्रीगुलाबकुंवरबा आयुर्वेद एसोसियेशन जामनगर

श्री आयुर्वेद विद्यालय जामनगर

भगवान धन्वन्तरि के अनुग्रह से विद्यालय के

लिये बनाये हुये विशाल मकान में आयुर्वेद की शिक्षा का प्रबन्ध किया जायेगा।

जून १९४६ से इस विद्यालय का कार्य आरम्भ होगा। बिना किसी प्रकार के जाति या धर्म अथवा वर्ण की भिन्नता से विद्यार्थियों को दाखिल किया जायेगा। ८० से १०० विद्यार्थी एवं विद्यार्थिनीयां रह सकें। इस प्रकार से दो पृथक् छात्रालय बनाये गये हैं।

विद्यालय में भाषा ज्ञान, षड्दर्शन, भौतिक ज्ञान, बनस्पति शास्त्र, प्राणिविज्ञान, रसायन शास्त्र, शरीर ज्ञान और शरीर क्रिया ज्ञान इन सब विषयों का सम्पूर्ण ज्ञान कराया जायेगा। प्रत्यक्ष ज्ञान के और बाग बगीचा उद्भिज्ज निदर्शन, चित्र, नकशा, आदि की व्यवस्था की गई है। औषधि परिचय और औषधि निर्माण इन सब के लिये निष्णात एवं तद्विज्ञ विद्वान रखे गये हैं।

विद्यालय में चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट, शार्ङ्गधर, माधव, भावमिश्र और रसग्रन्थ इनमें प्रत्येक का यथोचित ज्ञान देने के लिये अलग २ पारंगत अध्यापकों की नियुक्ति की जायेगी। कायचिकित्सा, शस्त्रक्रिया विज्ञान और प्रसूति विज्ञान आदि के प्रत्यक्ष ज्ञान के लिये साधन एकत्रित करने की तथा इन विषयों के विद्वानों को नियुक्त करने की इच्छा है।

विद्यालय शुरू हो इससे पूर्व विद्यालय के लिये उपयोगी सम्पूर्ण साधन और सामिग्री एकत्रित करनी आरम्भ कर दी गई है। इसके लिये योग्य विद्वान खूब लिये गये हैं।

प्रत्येक विषय का प्रत्यक्ष ज्ञान पूर्ण रूप से मिल सके इसलिये विशाल हौस्पीटल की व्यवस्था भी करदी गई है।

यह संस्था बोर्ड औफ इण्डियन सिष्टम औफ मेडीसन बम्बई के साथ संयुक्त है। इसलिये इसका अभ्यास क्रम चार साल का है। संस्कृत के साथ जिन्होंने मैट्रिक्युलेशन की परीक्षा पास की है वे इस कालेज में प्रविष्ट हो सकेंगे। मासिक फीस १०) है। इस संस्था में पढ़ने वाले छात्र के लिये १०) दस रुपया मासिक की छात्रवृत्ति मिलेगी। इस प्रकार की १० छात्रवृत्तियों के लिये वचन मिला है।

प्रविष्ट होने की इच्छा रखने वालों को जून मास की ता० १०मी से पहिले अरजी निम्न पते पर भेजनी चाहिये।

पता—सैक्रेटरी
कौलेज कमेटी जामनगर (काठियावाड़)

कानपुर में आयुर्वेद राष्ट्रपति का शुभागमन—

ता० २२-४-४६ को आयुर्वेद राष्ट्रपति श्रीयुत एम० के० मुकर्जी धन्वन्तरि के स० सम्पादक पं० सभाकन्त झा शास्त्री के साथ कानपुर पधारे। आप द्विवेदी आयुर्वेद विद्यालय में ठहराये गये। मध्यह्नोत्तर ३ बजे से नागरिक वैद्य सभा के प्रधान मन्त्री जी के उद्योग से एक सभा हुई। जिसमें कानपुर के लब्धप्रतिष्ठित तथा वयोवृद्ध वैद्य सब उपस्थित थे। सभा में राष्ट्रपति जी ने कानपुर में होने वाले ३५ वें महासम्मेलन को सफल बनाने की वैद्यों से प्रार्थना की तथा अपने में संगठन के लिये कहा। फिर ६ बजे सभा विसर्जित कर पं० देवसेन जी शुक्ल सभापति नागरिक वैद्यसभा के यहां गये। वहां जलपानादि कर वापिस आये और प्रातः २३-४ ४६ को ७ बजे की गाड़ी से लखनऊ चले गये।

—मन्त्री।

अलीगढ़ में आयुर्वेद राष्ट्रपति का शुभागमन–

इन्दौर, देवास, उज्जैन, मध्यभारत आदि प्रदेशों में भ्रमण करते हुए ता० २०-६-४६ को आप अलीगढ़ स्टेशन पर १२ बजे की गाड़ी से रात को उतरे, स्टेशन पर आपके स्वागत के लिये सर्व श्री० पं० रामचन्द्र जी वैद्य आयुर्वेदाचार्य, श्रीगोपाल जी गुप्त वैद्य, पं० सभाकांत झा आयुर्वेद शास्त्री, स० सम्पादक 'धन्वन्तरि' आदि उपस्थित थे। स्टेशन से सन्मान पूर्वक लाकर पास के ही एक होटल में रात भर विश्राम करने के लिये आपको ठहराया गया।

ता० २१-४-४६ को—

प्रातः होटल से लाकर आपको पं० रामचन्द्र जी वैद्य आयुर्वेदाचार्य के मकान पर ठहराया गया। शहर में करफ्यू आर्डर लागू होने की वजह से भाषणादि की व्यवस्था विशेष रूप से नहीं हो पाया। फिर भी जिला अलीगढ़ वैद्य सभा की तरफ से आपको अभिनन्दन-पत्र दिया गया। अभिनन्दन पत्र पं० इन्द्रमणि जी जैन वैद्य आ० आचार्य्य ने पढ़कर सुनाया, अभिनन्दन का उत्तर देते हुये आप ने कहा कि संगठन तथा आयुर्वेद प्रचार करने के लिये जो समय अभी उपस्थित है, वह फिर मिलने वाला नहीं है, अतः हम लोगों को तन, मन, धन से अपनी संगठन शक्ति को मजबूत बनाने चाहिये आदि २। फिर समागत वैद्यों को तथा राष्ट्रपति जी को धन्यवाद देकर सभा विसर्जित की गई। इसी अवसर पर प्राणाचार्य वैद्य भास्कर बांकेलाल गुप्त, प्रधान सम्पादक 'धन्वन्तरि' ने २०१) देकर आ. म. मण्डल के संरक्षक सदस्य बने। तथा पं० इन्द्रमणि जी जैन वैद्य १०१) रुपये देकर आश्रयदाता सद बने।

गीता मन्दिर चिकित्सालय का सेवा कार्य–

आगरा ३ अप्रैल सन् १९४६—

गीता–मन्दिर के संरक्षणत्व में ता० ७ अग सन् ४५ को आस पास के ग्रामों के वास्ते धामा चिकित्सालय की स्थापना की गई थी। ७ अग से ३१ दिसम्बर तक २१९७ नवीन रोगियों त ९४७९ दुबारा दवा ले जाने वाले रोगियों की सं रही। १ जनवरी से १९४६ मार्च तक नये रोगि की संख्या १०२१ तथा ४७६१ पुराने रोगियों ने ला उठाया। मन्दिर के उत्साही कार्यकर्ता व्याख्यान-वाचस्पति पं० गोपालदत्त जी पाराशर वैद्य शास की अध्यक्षता में यह कार्य अच्छी तरह चल रहा है चिकित्सालय से रक्तार्श (खूनी बवासीर) की अनु भूत एवं अचूक औषधि 'बावली घास' मुफ्त भेजी जाती है।

—अखिलानन्द रूपराम शास्त्री।

धर्मार्थ आर्य औषधालय पाठकपुर—

श्री धर्मार्थ आर्य औषधालय पाठकपुर (उन्नाव का सातवां वर्ष दिसम्बर सन् १९४५ को सम हो चुका है। वर्ष भर में कुल ५८५७ व्यक्तियों ने औषधियों से लाभ उठाया जिसमें २५१६ पुरुष, –१९० स्त्रियां, ११५१ बच्चे रहे। इस वर्ष औषधालय को ९३॥।=) आय तथा ९२।-)॥। व्यय हुआ। विशेष सहायता श्री गोकुलप्रसाद जी गुप्ता, दानापुर (विहार), पं० उमाशंकर जी त्रिपाठी पाठकपुर (उन्नाव) और श्री जगन्नाथ रामजीदास कलकत्ता से प्राप्त हुई।

रामनारायण वाजपेई मन्त्री–

आश्चर्य जनक आविष्कार
आयुर्वेदिक

कालाजार

हजारों बार का परीक्षित !!
इन्जेक्शन से-

केवल ४-६ इन्जेक्शनों में कालाजार ज्वर, प्लीहा व यकृत एक दम निर्मूल हो जाता है। फायदा न हो तो दाम वापिस। यहां से स्वल्प खर्च में इन्जेक्शन देना सीख कर डिप्लोमा भी प्राप्त कर सकते हैं।

शर्तिया आराम

स्टोकिस्ट–दि नेशनल आयुर्वेदिक कालेज (रजिस्टर्ड) गोल बाजार,
समस्तीपुर O. T. Ry.

व्यापार की
चाभी
विज्ञापन है

आज कल के समय में

स्वविषयक पत्र में प्रकाशित
उपयुक्त स्थान पर दिये हुये
सुन्दर से छपे हुये
विज्ञापन

हर समय लाभदायक है

इसलिये

धन्वन्तरि

में विज्ञापन छपाइये

विज्ञापन दर (साधारण अंकों का)-

स्थान	१० बार	६ बार	३ बार	१ बार
१ पृष्ठ	२००)	१३०)	७०)	२५)
½ पृष्ठ	११०)	७०)	४०)	१५)
¼ पृष्ठ	६०)	४०)	२५)	१०)

(औषधियों के विज्ञापन नहीं छापे जांयगे)

विशेषांक के लिये विज्ञापन रेट्स पत्र द्वारा मंगावें।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

AYURVEDIC INJECTIONS
PREPARED AT INDIA'S PIONEER
AYURVEDIC LABORTTORY
(Established in A. D. 1914)
THE APOLLO PHARMACY
MANUFACTURING CHEMISTS
P. O. JHARIA, E. I. Rly.
BRANCHES & AGENCIES

Ahmedabad. Ajmer, Anjar Cutch, Bangalore City, Baroda, Bavla, Belgaum, Bhavnagar, Bombay, Botad, Broach, Cafro (Egypt), Cawnpore, Chhindwara, Chuda, Davangere, Devpur, Dhandhuka, Dhrol Ilkal, Jammu, Jamnagar, Jodia, Kapadwanj, Karachi, Kosamba, Lahore, Lakhtar Latur, Limbdi, Marwar Mundwa, Mehsma, Morvi, Nadiad, Nairobi (East Africa) Nasik City, Palitana, Patan, Patna, Patiala, Rajkot, Raver, Srinagar Kashmir, Secundrabad, Shiroda, Sihore, Surat Visnagar, Wadrhwan Camp and City

Apollo injections are being used by many leading physicians and surgeons of India, who are interested in the Indian system of medicine. This is the only Indian laboratory well known for its high standard of accuracy and purity. Some leaders of Ayurvedic Congress heve Praised our qroducts with open hearts

Our products are available from your city agent at our fixed rates. They are highly beneficial and used with success by millions of people throughout Indla and abroad.

Medical practitioners get reasonable commission. For further details see our agant or write tr the Pharmrcy, We are to apqoint more agents in non represented areas

आयुर्वेदिक इन्जेक्शन्स
दि अपोलो फार्मेसी, झरिया ई० आई० आर०

अपोलो आयुर्वेदिक इन्जेक्शन्स लाखों रोगियों पर परीक्षित किये गये हैं। अल्प मूल्य होने पर भी अधिक गुणकारी है। भारतवर्ष के आयुर्वेद के महान् नेताओं ने उनकी मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। आप अपने शहर के हमारे एजेन्ट से खरीद कर थोड़े व्यय में ही आरोग्यता प्राप्त कीजिये। आपके यहां न मिलने पर फार्मेसी से मंगवालें, विशेष विवरण हमारे एजेन्ट द्वारा ज्ञात करें।

WAR- -TIME BRANCH---OFFICE
THE APOLLO PHARMACY
P O. BOX NO. 93, BARODA.

दवा के सच्चे मोती !

वैद्यो ! हकीमों !! तथा फार्मेसी वालो !!!

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा, जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारतवर्ष के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं, निहायत किफायत से मिलते हैं। धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने की कृपा करें।

पता—नगीनदास वीरचन्द जेवरी, ४४-४५, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३।

विगत वर्षों की भांति "धन्वन्तरि त्रयोदशी व दीपावली" के शुभ अवसर पर हमने इस वर्ष भी विशेष उपहार देना स्वीकृत किया है, जिसकी अवधि दिवाली से होली तक सीमित है।

मोती चूरा—

के ग्राहक इस विशेष अवसर से अवश्य लाभ उठावें। उपहार का विवरण इस प्रकार है।

१० तोला मोती चूरा नं० १ के ग्राहक को १ मशीन रस निचोड़ने की जो १ घण्टे में करीब १ मन रस निचोड़ सकती है।

१० तोला मोती चूरा नं० २ के ग्राहक को १ मशीन टिकिया (टेब्लेट) बनाने की जो १ घण्टे में करीब २०० टिकियां अति सुन्दर बना सकती है।

१० तोला मोती चूरा नं० ३ के ग्राहक को १ वर्ष तक धन्वन्तरि-पत्रिका निःशुल्क भेजी जावेगी।

ध्यान रखिये ?

मोती चूरा बहुमूल्य मोतियों का छीलन होने के कारण बाजारू साधारण मोतियों से श्रेष्ठ होता है।

भाव निम्न प्रकार है—

मोती चूरा नं० १-२-३ का क्रमशः १०) रु०, ८) रु० व ४) रु० प्रति तोला है।

रघुवरदयाल वैद्य, दयालु आयु० फार्मेसी, चन्दवार गेट, फिरोजाबाद, यू० पी०

यदि आपको आयुर्वेदिक इञ्जेक्शनों का—

हजारों बार का परीक्षित

अदभुत चमत्कार

अपूर्व उत्कृष्ट आविष्कार

देखना हो तो निम्न पते से ही प्रत्येक रोगों का इंजेक्शन मंगाकर धनव यश के भागी बनें

आयुर्वेदिक कुनैन इञ्जेक्शन

केवल १ इंजेक्शन में मलेरिया लापता हो जाता है। एलोपैथी कुनैन से विशेष लाभदायक है। इसे बड़े २ वैद्य डाक्टरों ने आजमाकर मुक्त-कण्ठ से प्रशंसा की है। परीक्षा प्रार्थनीय है।

दी आयुर्वेदिक इञ्जेक्शन सप्लाई एजेन्सी, मंगलगढ़ (दरभंगा)

हर प्रकार के कठिन और असाध्य रोगों से थोड़े समय और मामूली

खर्च में छुटकारा पाने के लिये

'मिश्रा'

आयुर्वेदिक-इंजेक्शन

प्रयोग कीजिये

यहां इन्जेक्शन लगाने की शिक्षा भी दी जाती है।

एजेन्टों की आवश्यकता है-

नियमादि मुफ्त मंगायें।

सचित्र आयुर्वेदिक इन्जेक्शन विज्ञान पुस्तक मूल्य ५) पो० व्यय ॥)

जी० ए० मिश्रा, आयुर्वेदिक फार्मेसी (रजि०) झांसी

मौडर्न एडवर टाइजर झांसी द्वारा प्रचारित।

आप भी लखपती बन जाइये

सुगन्धित तैलों के नुस्खे—(ले० वैद्यभूषण श्री मोहनलाल कोठारी) लेखक ने हजारों रुपये व्यय करके देश की सभी प्रसिद्ध २ तैलों के नुस्खे प्राप्त किये हैं और अपने बीस साल के अनुभव को हृदय खोलकर जनता के सामने रख दिया है। नुस्खे इस पुस्तक में सैकड़ों तैलों के दिये गये हैं, जिनमें कुछ के नाम ये हैं--हिमसागर तैल, केशराज तैल, बुद्धिवर्द्धक तैल, मनमोहनी तैल, कलकत्ते के डा० नगेन्द्रनाथ सेन को करोड़पती बनाने वाला केशरंजन तैल, हिमकल्याण तैल, पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री को लखपती बनाने वाला ब्राह्मी-विलास तैल, मालती तैल आदि तैलों के साफ करने और खुशबुओं को देने का भी विधान समझा दिया गया है। मूल्य सिर्फ २) डा० मह० ॥)

शर्बतों का रोजगार--लेखक बा० पीतमलाल जी एम० एस० सी० एल० एल० बी० एडवोकेट, गर्मियों में पीने वाले बहारदार शर्बतों और सोडा-वाटर बनाने का विधान और अनेकों नुस्खे दिये गये हैं। मूल्य २) डा० म० ॥)

सामुद्रिक विद्या- (लेखक पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री) मुख आदि अङ्गों को देख कर ही चोर, ठग, नेक, बद, धनी. निर्धन, बांझ, विधवा, जिन्दगी और मौत की बात आप बता सकते हैं। हाथ देखने की विद्या का भी पूरा वर्णन है। लिथो के लगभग ५० चित्र २५० पृष्ठ के मूल्य सिर्फ ३) डाक महसूल ॥)

पते चाहिये

विशेषतया वैद्यों, हकीमों डाक्टरों, अत्तारों, पंसारियों तथा व्यापारियों, बजाजों आदि के २५ पते भेजने वाले सज्जनों को हम ॥) के टिकट भेंट करेंगे। अथवा हमारे यहां की कोई भी पुस्तक खरीदने पर हम ॥) की रियायत देंगे।

फन पेन्ट्री-इस पुस्तक को पढ़कर साइनबोर्ड बनाना सीखकर १०)-१५) रोज पैदा कीजिये। मूल्य २) रु० डाक मह० ॥)

मंगाने का पता—पं० चन्द्रशेखर वैद्य शास्त्री, ब्राह्मीऔषधालय, अलीगढ़।

बहुत बड़े अभाव की पूर्ति

आयुर्वेद संसार को अभूत पूर्व दान

सचित्र शरीर क्रिया विज्ञान

प्रकाशित हो गया।

आयुर्वेद की उन्नति की उत्कट अभिलाषा के कारण ही इस दुर्लभ ग्रन्थ का प्रकाशन युद्ध की इस संकट-घड़ी में किया गयाहै, जब कि एक-एक सीट कागज के लिये कितनी कठिनाई उठानी पड़ रही है, यह सर्व विदित है।

आयुर्वेद में यह प्रथम स्तुत्य प्रयास हुआ है। इससे आयुर्वेद के एक प्रधान अङ्ग की पूर्ति हुई है। वैद्यों पर डाक्टरों का यह आक्षेप रहा है कि वे शारीरिक ज्ञान से हीन चिकित्सक होते हैं। इस ग्रन्थ ने मुंह तोड़ उत्तर दिया है।

अभी तक शरीर क्रिया के बारे में आयुर्वेद में जो कुछ लिखा गया था वह अंग्रेजी ग्रन्थों का अनुवाद मात्र था। जिसका असर आयुर्वेद के छात्रों पर यह होता था कि वे आयुर्वेद को हीन मानने लगते थे।

इस ग्रन्थ के उदीयमान लेखक आयुर्वेदालङ्कार श्री रंजीतराय ने आयुर्वेद सिद्धान्त के आधार पर इसे मौलिक रूप में लिखा है। जो आयुर्वेद की श्रेष्ठता का द्योतक है। जिन्हें अंग्रेजी के फिजियालोजी का ज्ञान है वे यदि इस ग्रन्थ को पढ़ेंगे तो देखेंगे कि विदेशी विज्ञान आयुर्वेद से बड़ा नहीं है। इस ग्रन्थ में इस विषय का ब्यौराबद्ध वर्णन है कि शरीर का कौन सा अङ्ग क्या काम करता है? चिकित्सक के लिये यह जानना अत्यावश्यक है।

अंग्रेजी में तो इस प्रकार के ग्रन्थों का मूल्य पन्द्रह-बीस रुपये से कम होता ही नहीं है। हिन्दी और संस्कृत में भी अनुवाद ग्रन्थ का ही काफी मूल्य है। लेकिन हमने आयुर्वेद की सेवा के ख्याल से इसका मूल्य बहुत कम रक्खा है। ५२ अध्याय, डिमाई १/८ साइज के ६०० पृष्ठ जिनमें ५२ चित्र हैं, का मूल्य सिर्फ ६) रु० रखा गया है। डाक व्यय ॥।≡) हैं। पेशगी के साथ आर्डर भेजकर शीघ्र ग्रन्थ मंगवा लें, नहीं तो दूसरे संस्करण की प्रतीक्षा करनी होगी।

अस्थाई हेड आफिस—
कदम कूआं पटना।

श्री वैद्यनाथ आयुर्वेद भवन,
कलकत्ता, पटना, झांसी, नागपुर।

नोट—आयुर्वेद के छात्र ५) में ही यह ग्रन्थ पा सकते हैं, यदि वे अपने अध्यापक के पत्र के साथ पूरा मूल्य अग्रिम भेज देंगे। उन्हें डाक व्यय नहीं लगेगा।

भारत की जड़ी बूटियों द्वारा वैज्ञानिक ढंग पर निर्मित विशुद्ध

"अवध"

आयुर्वैदिक-इंजैकशन

[रजिस्टर्ड]

अवध आयुर्वेदिक इंजैक्शन आम जनता पर जैसे पोस्ट, रेलवे, जेल, बैंक और गांधी समिति के धर्मार्थ औषधालयों के रोगियों आदि पर हमारे इंजैक्शन्स पूर्ण लाभप्रद प्रमाणित हुये हैं। आशा है वैद्य, डाक्टर और हकीमगण हमारे इंजैक्शन्स काम में लाकर धर्म और यश कमायेंगे

पता—डी० बी० एस० वर्मा, अवध आयुर्वेदिक इन्जैक्शन्स फार्मेसी,
सहिलावाद रोड, हैदराबाद (सिन्ध)

"इन्जेकशन्स"

हमारी फार्मेसी के अपने निजी अनुभव से तैयार किये हुये शतप्रतिशत फलप्रद इन्जैक्शन्स से सैकड़ों मरीजों ने शर्तिया लाभ उठाया है।

उदार शर्तों से एजेन्सी के लिये लिखें। एजेंसी के नियम व प्राइस लिस्ट (सूचीपत्र) मुफ्त मंगावें।

पता—मैनेजिङ्ग डाइरेक्टर—

पाराशरी फार्मेसी, चनस्मा, जी. वी. एस. रेलवे।

सन्यासियों के गुप्त भेद

हर रोग की दवा दो मिनट में तैयार कर लो।

संसार इस बात को मान गया है कि मिश्रित योगौषधियों की अपेक्षा एकौषधि में व्याधि हरने का अधिक प्रभाव होता है। निदान 'एकौषधि-गुण-विधान' में प्रत्येक रोग की केवल एक २ औषधि से चिकित्सा करनी बताई गई है। प्रयोग वे ही लिखे गये हैं जो तत्काकीन प्रभावक तथा शतशोनुभूत हैं। विशेषता यह है कि मंहगे से महंगा प्रयोग भी पैसों की लागत से तैयार होजाता है। कई प्रयोग तो ऐसे हैं कि एक पैसे की दवा २० रोगियों को पर्याप्त होती है। और सब से बड़ी खूबी यह है कि प्रत्येक योग दो मिनट में तैयार हो जाता है। प्रत्येक रोग के कई २ नुस्खे लिखे गये हैं। संक्षेप में पुस्तक क्या है सन्यासियों के गुप्त भेदों का अपूर्व भण्डार है। थोड़ी प्रतियां शेष हैं, शीघ्र मंगाकर लाभ उठावें। २१२ पृष्ठ की पुस्तक का मूल्य १॥।≡) डाक व्यय ।≡)

पता—जीवन-बन्धु कार्यालय संगरिया (बीकानेर)

कुछ उपयोगी नवीन पुस्तकें।

योग रत्नाकर (दोनों भाग)	१५)	स्वास्थ्य के लिये शाक तरकारियां	१॥)
भैषज्य रत्नावली (दोनों भाग)	१०)	सर्प-विज्ञान	१।)
भावप्रकाश निघण्टु	४॥)	मनुष्य का आहार	१)
दूध-चिकित्सा	४)	साधारण नेत्र रोग	१)
तपेदिक	४)	पेटेन्ट औषधि और भारतवर्ष—	
हमारा भोजन	४)	(प्रथम भाग)	॥)
आयुर्वेद-प्रकाश (प्रथम भाग)	४)	(द्वितीय भाग)	१)
आयुर्वेद प्रश्नोत्तरी (दोनों भाग)	४)	शहद	॥।)
रुग्ण परिचर्या	३॥)	मट्ठा [उसके गुण और उपयोग]	॥=)
वैद्य सहचर २॥) सजिल्द	३)	ग्राम्य चिकित्सा	॥=)
त्रिदोषालोक	२॥)	स्त्री रोग चिकित्सा	॥)
फलाहार चिकित्सा	२।)	टोटका विज्ञान	।=)
आंख का अचूक इलाज	२)	मधुमेह	॥)
भोजन विधि अर्थात् रोग और पथ्यापथ्य	२)	राजयक्ष्मा	।)
भोजन अमृत है	१॥।)	प्लीहा रोग चिकित्सा	।)
जुकाम	१॥)	श्वास रोग चिकित्सा	।)

ये पुस्तकें अत्युपयोगी हैं, आज ही आर्डर दीजिये।

पता— धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

भस्मार्थ उत्तम द्रव्य

शुद्ध वङ्ग	१ सेर ४०)
धान्याभ्रक	,, ४)
	५ सेर १७॥)
शुद्ध यशद	१ सेर १०)
शुद्ध ताम्रचूर्ण	,, १०)
ताम्र चूर्ण [अशोधित]	,, ७)
शुद्ध फौलाद चूर्ण	,, ४)
फौलाद चूर्ण [अशोधित]	,, ३)
मोती सीप	,, ३)
वज्राभ्रक	,, ३)
सीप टुकड़ा	,, २॥)
शुद्ध मांडूर	,, १॥)
शंख टुकड़ा	,, १)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़

कतिपय असली द्रव्य

कस्तूरी अत्युत्तम	१ तोला ४८)
केशर अत्युत्तम	१ तोला ४॥)
अष्टवर्ग	१ सेर १०)
मुलहठी सत्व	१ सेर ६)
ताली रपत्र असली	१ सेर २)
सर्पगन्धा	१ सेर १५)
ब्राह्मी असली	१ सेर २)
दशमूल असली	१ मन २५)
	१० सेर ८)
शिलाजीत नं० १ सूर्यतापी	१ सेर ४०)
,, ,, २ अग्नितापी	१ सेर १२॥)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़

—धन्वन्तरि वर्ष २१ का अभूतपूर्व विशेषांक—

रक्त-रोगांक

GURUKULA KANGRI SAHARANPUR

इसमें भारत के मान्य वैद्यों के रक्त रोग और कुष्ठ रोग पर विवेचनात्मक और चिकित्सा युक्त लेख रहेंगे। दर्जनों रङ्गीन तथा सादे चित्र होंगे। अभी से तैयारियां आरम्भ कर दी गई हैं। शीघ्रातिशीघ्र ग्राहकों की सेवा में भेज दिया जायगा, यह विशेषाङ्क धन्वन्तरि के ग्राहकों को मुफ्त मिलेगा। अतः ५≈) भेजकर अभी से धन्वन्तरि के ग्राहक बन जांय।

IF NOT DELIVERED PLEASE RETURN TO—

DHANWANTARI KARYALAYA, BIJAIGARH (ALIGARH)

श्रीमान्—

२००३ पुस्तकालयाध्यक्ष —
गुरुकुल विश्वविद्यालय
गुरुकुल कांगड़ी, Haridwar

धन्वन्तरि

भाग २१
अंक ३

—सम्पादक—
वैद्योपाध्याय देवीशरण गर्ग
जे. पी. अग्रवाल बी. एस. सी.

अगस्त
१९४६

विषय-सूची

'भोर कमेटी' और आयुर्वेद (सम्पादकीय) २८१
रोग प्रतिरोधिनी शक्ति २८३
किलास कुष्ठ और उसकी चिकित्सा २८६
श्वित्र तथा उसकी सफल-चिकित्सा २६२
मेरे अनुभव २६५
दद्रु रोग-दाद
अन्धों को विचित्र वनस्पति
विविधि-समाचार
अपने एजेन्टों से निवेदन

-आवश्यकता-

आफिस में २-३ क्लर्कों की आवश्यकता है, जो हिन्दी में पत्र-व्यवहार कर सकें, प्रूफ पढ़ सकें, कुछ अंग्रेजी भी जानते हों, आयुर्वेद का थोड़ा ज्ञान हो, कम से कम वेतन जो ले सकें, उम्र, योग्यता, अनुभव आदि लिखते हुए पत्र शीघ्र लिखें।

धन्वन्तरि के लिये एक सहायक सम्पादक की आवश्यकता है। आयुर्वेद के साथ-साथ अंग्रेजी का भी ज्ञान हो, योग्य एवं अनुभवी व्यक्ति पत्र लिखें। वेतन योग्यतानुसार दिया जायगा, कम से कम जो वेतन ले सकें, वह भी अवश्य लिखें।

पता—

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

Printed and Publisned by Vaidya D.S. Garg at the Dhanwantari Press, Bijaigarh.

केश--दद्रु के दो रोगी

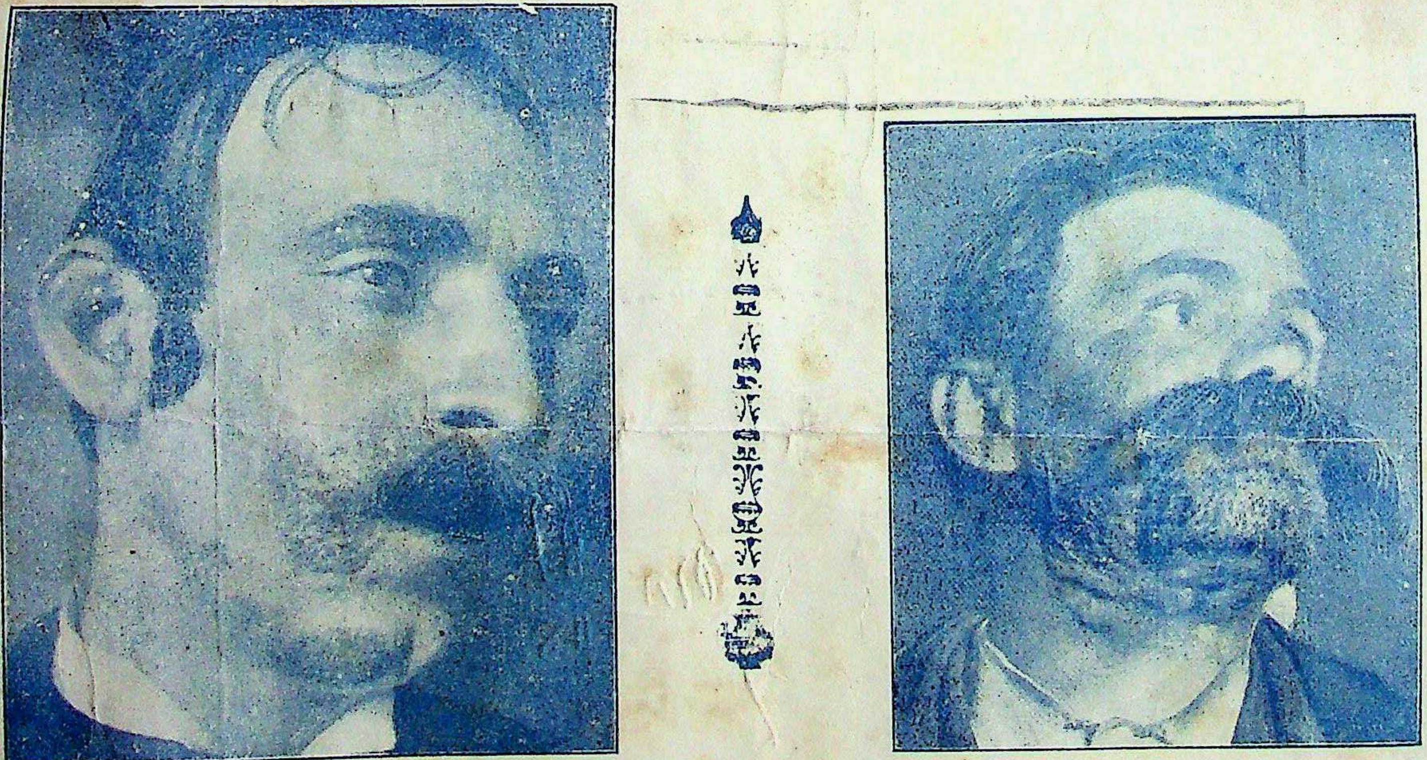

इन रोगियों की दाढ़ी-मूंछ में १० दिन से दाद हो गया है बाल ढीले पड़ने लगे हैं, ठोड़ी से ऊपर के होंठ तक दाद फैल गया है। यह दाद बढ़ते-बढ़ते गर्दन तक फैल जाता और परेशान करता है।

काकणक - कुष्ठ

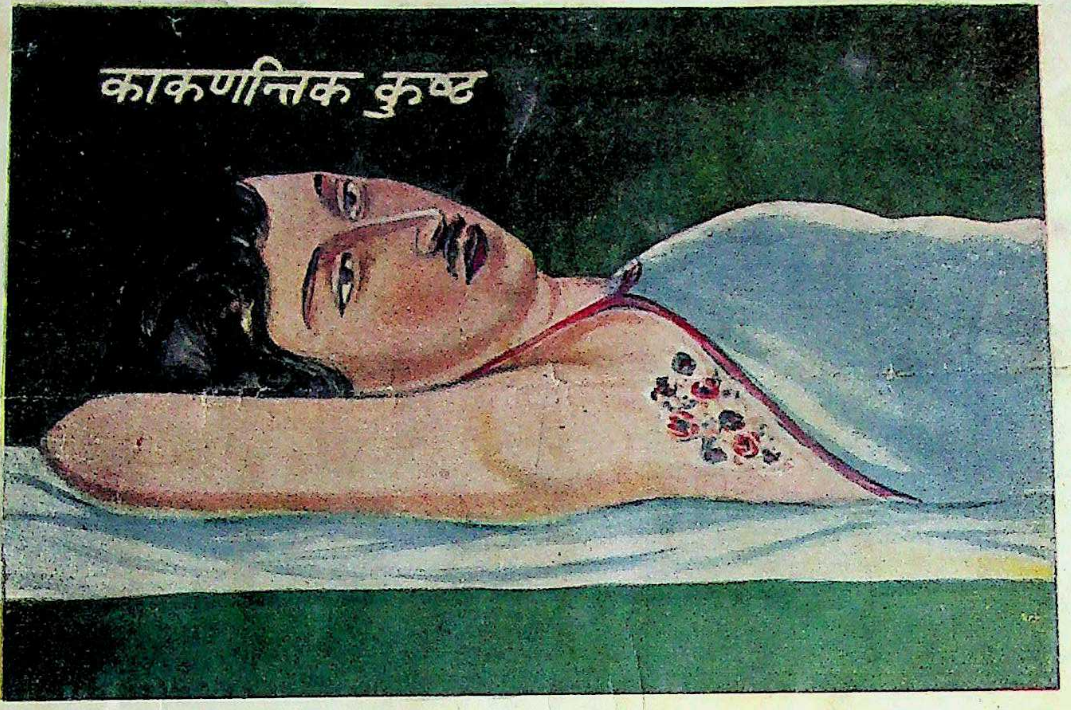

यह चिरमिटी (गुंजा) की तरह बीच में काला और ओर-पास लाल होता है।
पक जाने पर तीव्र-वेदना होती है। इसमें तीनों दोष कुपित
होते हैं अतः असाध्य माना गया है।

Dhanwantari Press, Bijaigarh.

Approved by Dept. of Public Instructions of Central Provinces & Berar.

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

धन्वन्तरि

या औषधी पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगं पुरा।
मनैनु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

सचित्र
मासिक-पत्र

अगस्त

१९४६

'भोर कमेटी' और आयुर्वेद

युक्त प्रान्तीय सरकार ने कुछ समय हुआ एक कमेटी नियुक्त की थी जिसका प्रयोजन था प्रान्त के स्वास्थ्य की दशा सुधारने के लिये सम्भव प्रयत्नों का निर्देश करना। यह कमेटी 'भोर-कमेटी' के नाम से प्रसिद्ध हुई थी। बहुत सोच-विचार के बाद उसके योग्य सदस्यों ने यह सुझाव पेश किया बताया जाता है कि प्रान्त के सभी बड़े २ गांवों में विधिवत् शिक्षा-प्राप्त एलोपैथ नियुक्त कर दिये जांय जो जनता की चिकित्सा का कार्य करें। इस सुझाव के साथ ही साथ यह भी विचार प्रकट किये हैं कि नियम बना कर देशी चिकित्सा पद्धतियों को जिनमें आयुर्वेद और यूनानी तिब्ब की भी गणना है, अवैध ठहरा दिया जाए अर्थात् वैद्यों और हकीमों को कानून द्वारा चिकित्सा करने से रोक दिया जाए

पाठक उपर्युक्त सुझाव के लिये शायद आश्चर्य करने लग जायें, लेकिन जब उनको यह ज्ञात होगा कि उक्त भोर कमेटी में कोई भी वैद्य या हकीम नहीं था तो उन्हें इस निर्णय के विषय में आश्चर्य न होगा।

विदेशियों ने लाखों-करोड़ों रुपया फूंक कर इस देश में एलोपैथ डाक्टरों को बढ़ाया और उनको हर प्रकार की सुविधाएं दीं यह क्यों किया गया? क्या आपने कभी इस विषय पर भी विचार किया है। विदेशियों को हमेशा बड़ी चिन्ता अपने व्यापार की रही है और अपनी पेटेन्ट औषधियों का व्यापार बढ़ाने के निमित्त ही ये डाक्टर बनाने के विविध कारखाने चालू किये गये थे। इधर हमारी प्राचीन पद्धति आयुर्वेद व यूनानी आदि की इस प्रकार उपेक्षा की गई कि यदि इनमें कोई खास गुण न होता तो आज इसका नाम लेने वाला शायद ही इस संसार में दिखाई देता।

अब जब कि राष्ट्रीय चेतना का समय आया तो उन्हें डर है कि देशी चिकित्सा-पद्धतियों को मान्यता मिलने से विदेशी औषधियों का व्यवहार घ

व्यापार कम न हो जाय। यही भावना 'भोर कमेटी' की सिफारिशों में काम करती दिखाई देती है अन्यथा यह जान बूझ कर वस्तुस्थिति की उपेक्षा न की जाती। सी. पी. के स्वास्थ्य-मन्त्री जी ने जब्बलपुर वैद्य-सभा में जो भाषण दिया है उसमें भी उन्होंने स्पष्ट प्रकट किया है कि एलोपैथ डाक्टर विदेशी औषधियों के मात्र एजेंट हैं और भारतीय जनता का वास्तविक लाभ आयुर्वेद या यूनानी देशी चिकित्सा पद्धतियों से ही होता है। यह सभी मानने लगे हैं कि भारत की ९० प्रतिशत ग्रामीण जनता देशी पद्धतियों से ही लाभ उठा रही है और केवल १० प्रतिशत डाक्टरों के पास आते-जाते हैं इन १० प्रतिशत व्यक्तियों पर जितना व्यय किया जा रहा है यदि उसका आधा भी देशी पद्धतियों द्वारा व्यय किया जाय तो हम दावे के साथ कह सकते हैं कि भारतीय जनता के स्वास्थ्य में आकाश-पाताल का अन्तर दृष्टि-गोचर होगा।

किसी रणक्षेत्र में दो योद्धाओं में से एक को सम्पूर्ण हथियारों से सुसज्जित कर दिया जाय और दूसरा योंही खड़ा कर लड़ने को वाध्य किया जाय तो यह निश्चित है कि पहिला वास्तव में कमज़ोर होते हुए भी बाजी मार ले जा सकता है। यही हालत एलोपैथ एवं देशी पद्धतियों की रही है। देशी पद्धतियों को विदेशी सरकार ने सौतेले पुत्र के जैसा व्यवहार किया है और उसे हर प्रकार निराश्रित छोड़ रखा है। यदि केवल ५ वर्ष तक देशी पद्धतियों और विदेशी पद्धतियों पर बराबर खर्चा किया जाय; सभी सुविधाएं बराबर दी जांय तो हम दावे के साथ कह सकते हैं कि विदेशी पद्धतियों का इस देश में नामोनिशां मिट जायगा।

सन् १९२१ में कुछ जिला बोर्डों ने अपने जिलों में देशी औषधालय खोले थे। यद्यपि उनमें अधिक पैसा नहीं लगाया गया था और न वैद्यों व कम्पाउण्डरों को ही उचित वेतनादि दिये गये, फिर भी वार्षिक रिपोर्टें देखकर कलक्टर व कमिश्नर दंग रह गये। उन देशी दातव्य औषधालयों से लाभ उठाने वाले रोगियों की संख्या इतनी बढ़ी-चढ़ी थी कि उसी जिले के सफाखानों की रोगी-संख्या से उसकी तुलना नहीं की जा सकती थी। सम्भवतः अनुपात ५:१ का था, जब कि व्यय का अनुपात ठीक उल्टा १:५ था। वे सभी आंकड़े प्रान्तीय सरकार के आफिस में भी सुरक्षित होंगे, अब भी उनकी जांच की जा सकती है।

इस विषय में प्रान्तीय स्वास्थ्य मन्त्री से हमारा यही निवेदन है कि भोर कमेटी के सुझावों पर अमल करने से पहिले वस्तुस्थिति की जांच अच्छी प्रकार कर ली जाय और कोई ऐसा क़दम न उठाया जाय कि जिससे देश की करोड़ों जनता स्वास्थ्य-प्राप्ति के देशी साधनों से वंचित होकर विदेशी पैटेन्ट-वाजों के चंगुल में सदा के लिये फंस जाए।

वैद्यों को भी स्थान-स्थान पर सभाएं कर विरोध प्रकट करना चाहिये।

—वैद्य देवीशरण गुप्त,
प्र० सम्पादक।

औषधियों पर नज़र डाली वह तथा अन्य उससे भी बढ़िया औषधियां उसने सेवन की थीं क्योंकि एक सदर(जिले के) हस्पताल का इंचार्ज भी तो पाश्चात्य चिकित्सा-विज्ञान का आचार्य होता है। अन्त में मेरी दृष्टि इस असहाय भग्न आयुर्वेद पर गई तो मुझे सुश्रुत का एक श्लोक याद आया किः—

यथा हंति प्रवृद्धत्वात् कुष्ठमातुरमोजसा,
तथा हन्त्युपयुक्तस्तु खदिरः कुष्ठमोजसा।

यह सोचते २ मुझे खदिरारिष्ट मिल गया, मैंने उसी शाम को विशुद्ध एरण्ड-स्नेह विरेचनार्थ देकर ३ मात्रायें दो-दो तोले की छः छः माशा मधु मिलाकर दीं, तीसरे दिन से उसके चकत्ते लुप्त से होने लगे, ५ वें दिन उसका शोथ भी नाश हो गया। मेरे हृदय में उस समय आयुर्वेद के प्रति कुछ कुछ श्रद्धा हुई। मैंने उसी धुन में पूर्ण लाभ की आशा से उस रोगी को ३ बोतल खदिरारिष्ट पिलवाया, आज ३ वर्ष से उसको तत्सम्बन्धी चिन्ह भी नहीं है। यह सर्व प्रथम घटना थी जिसने मेरे मिथ्याभिमान और भ्रान्त धारणा की दृढ़ भित्ति में शक्तिशाली टक्कर दी। मैं चिकित्सा कर रहा था, यद्यपि अधिक सफल चिकित्सक तो न था, तथापि थोड़े ही समय में मैंने कुछ असाधरण सी ख्याति पाई थी, किन्तु हृदय नितान्त विक्षुब्ध था कि मैं वैद्य बनूं अथवा डाक्टर (नामधारी)।

इसी अव्यवस्थित चिंता में एक दिन मेरे पास एक ईसाई लड़की आई। यह तीन वर्ष से उपान्त्र प्रदाह (Appendicitis) से पीड़ित थी मेरे सामने आकर रोई और बोली 'डाक्टर साहब मैं पिछले ३ वर्ष से डाक्टरों का इलाज करा रही हूं। किन्तु ठीक नहीं होती और मेरा दर्द बढ़ता ही जाता है अब डाक्टरों की यह सलाह है कि मुझे शल्य-कर्म कराना पड़ेगा अन्यथा अधिक हानि की आशंका है। मैंने सोचा कि डाक्टर बन कर इससे भिन्न सम्मति देना अथवा विचार करना मूर्खता होगी। वह मुझ से बार-बार अनुनय-विनय करने लगी कि आप मुझे ठीक कर दें; मैं शल्य कर्म कराना नहीं चाहती। मुझे याद आया कि आयुर्वेद सिद्धान्तानुसार शल्य कर्म तो उसी समय करना या कराना चाहिये।

'अक्रियायां ध्रुवो मृत्युः क्रियायां संशयो भवेत'

जब इनका ऐसा सिद्धान्त है तो किसी चिकित्सा विश्वास पर ही होगा क्योंकि किसी भी

[२९१ पृष्ठ का शेष]

प्रयोग विधि—माण्ड (पक्व तण्डुल परिस्रुत जल) के साथ पत्थर के खरल में चूर्ण को पीस कर श्वेत स्थान पर लगाने से तुरन्त लाभ दीखने लगता है। २-४ लेप करने से वर्ण साम्यता प्राप्त होगी। यह लेप कुतूहल-कारक है। शीघ्र ही अपना प्रत्यक्ष प्रभाव दिखाता है। अनेक कुष्ठ चिकित्सक इसे बड़े दावे के साथ ढिंडोरा पीटते हुए बेचते हैं और आकाश-पाताल की बातें हांकते हैं, परन्तु वास्तव में यह चिरस्थायी लाभ नहीं करता, हां तमाशा अवश्य दिखा देता है।

अन्तः प्रयोग की औषधि में रसरत्न-समुच्चयोक्त कासीस बद्ध रस का हमने अच्छा गुण देखा है। ३-४ मास यथा-विधि सेवन करने से दागों के वर्ण में परिवर्तन होने के साथ २ रोग की वृद्धि-क्षमता अवश्य रुक जाती है।

भांति 'वेदनायाश्च निग्रहः एतद्वैद्यस्य वैद्यत्वं' तो उनका भी सिद्धान्त है। तब विचार कर जैसा कि सुश्रुत का सिद्धान्त है मैंने सहंजने (शोभांजन) के साथ कज्जली का प्रयोग कराना चाहा किन्तु गर्मी की ऋतु में मैंने केवल कज्जली ही मधु से दी क्योंकि सहंजना अत्युष्ण होता है। ६ दिन के प्रयोग से ही उसके दर्द में काफी कमी होगई। १॥ मास के निरन्तर प्रयोग ने जब यह द्वितीय घटना आश्चर्य के रूप में मेरे सामने रखी कि रोगिणी शरीर में पहिले से ड्योढ़ी प्रसन्न बदन मेरे सामने आई तो मेरा डाक्टर बनने का अभिमान चढ़े ज्वर की भांति उतर गया।

उपरोक्त घटनाओं के सिवाय अन्य भी कई घटनायें ऐसी हुई हैं जिनसे मेरे हृदय में आयुर्वेद के प्रति अगाध विश्वास और एलोपैथिक के काम तथा चिकित्सा की ओर विशेषतः उपेक्षा हो गई है, अब मेरा यह विश्वास हो गया है कि ऐसा कोई रोग नहीं है जिसकी उत्तमोतम औषधि आयुर्वेद रत्न भण्डार में ढूंढने से न मिल सके और साथ ही वह किसी भी अन्य पद्धति की औषधि से कम न रहेगी, अतः अब मुझे यह लगन और धुन है कि जिस प्रकार पाश्चात्य विज्ञान में कुनैन मलेरिया के लिये, ऐस्प्रीन शिरःशूल के लिये हैं इसी भांति हमारी आयुर्वैदिक औषधियां भी प्रख्यात हों।

अब तक इस दिशा में हम लोगों ने कुछ भी नहीं किया है, फिर भी कुछ उत्साही आयुर्वेदज्ञ, इधर कुछ करना चाहते हैं। पं० विश्वनाथ जी शास्त्री आचार्य, ललित हरि आयु० तथा संस्कृत कालेज पीलीभीत ऐसे ही लगनशील व्यक्तियों में से एक हैं। आपने ही यवतिक्ता, जिसका वर्णन मैं अन्यत्र करूंगा और जो मलेरिया की उत्तम, निरापद, देशी औषधि है, का परिचय मुझे दिया और स्वयं भी उसका अच्छे से अच्छा प्रयोग बनाने में उद्योगशील हैं। मैं भी उसके भिन्न-भिन्न प्रयोग कर रहा हूं, अब तक जो प्रयोग हुये हैं उन्हें यवतिक्ता के वर्णन में लिखूंगा। तथापि आप यवतिक्ता पञ्चांगका क्काथ करके फिर उसे शर्वत की भांति अग्नि पर घन करलें, इस प्रकार तैयार किये गये सत्व को आप सफलतापूर्वक प्रयोग कर सकते हैं। इसके प्रयोग के पूर्व दो एक दस्त करा देना आवश्यक है।

इसी प्रकार एस्प्रीन जो साधारणतः डाक्टरों द्वारा शूल में दी जाती है किन्तु कुछ सफलता शिरःशूल में ही देती है, बड़ी आपद्‌कारी औषधि है शिरःशूल को कम करके हृच्छूल पारितोषिक में देती है। मेरा निम्न प्रयोग केवल १ मिनट में ही बिना किसी आपद के शिरःशूल नाश करता है, फिर चाहे वह वातज, पित्तज, कफज, अथवा सन्निपातज हो। मेरे पास से रोते रोते रोगी हंसकर गये हैं, आप भी इसको प्रयोग कीजिये और एस्प्रीन को शपथ पूर्वक त्यागपत्र दे दीजिये। यही मेरा आग्रह है। योग निम्न हैः—

नागरं सगुडं विश्वं मरिचं वा ससैन्धवं,
भुजस्तम्भादि रोगेषु सर्वेषूर्ध्वगदेषु च।

अथवा

नागरं सगुडं विश्वं पिप्पली वा ससैन्धवा, अर्थात् गुड़ के साथ सोंठ अथवा सोंठ, मिर्च व सैंधव (लाहौरी नमक) के साथ अथवा सोंठ, पीपल, सैंधा नमक के साथ बनाये गये नस्य का भुजस्तम्भादि रोगों तथा शिरो-रोगों में प्रयोग

दद्रु रोग-दाद

लेखक—न्यायायुर्वेदाचार्य वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन वैद्य भूषण, शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्योपाध्याय,
संचालक—अमृत कार्यालय, जवाहरगंज, जबलपुर।

दाद बहुत बुरी बीमारी है। बड़ी परेशान करती है। जब दाद में आनन्द की खुजली चलती है तब तो मानो स्वर्ग ही सामने आजाता है, पर हां, पीछे होने वाली वेदना अवश्य नरक का स्मरण दिलाती है, तब बरबस मुंह से निकल पड़ता है कि भगवान् दुश्मन को भी यह रोग न दे।

कहते ही नहीं, देखते भी हैं कि प्रायः दाद वालों का हाथ हमेशा अपवित्र रहता है? और इस रोग की बेशर्मी का दृश्य सबके सामने प्रगट करता रहता है। अतएव इस पाजी रोग से अवश्य बचना चाहिये, यदि खुदा न ख्वास्ता यह शैतान हमला ही कर बैठे तो फौरन नीचे चिकित्सा प्रकरण में लिखे हुए अमोघ अस्त्रों से उसे मार भगाना चाहिये।

दाद पैदा होने के निदान-कारण—

(१) परस्पर विरोधी भोजन करना। जैसेः—दूध और कुलथी का मिलाकर सेवन करना। अथवा दूध व कटहल को एक साथ खाना, या मांसाहारियों द्वारा दूध. मछली आदि विरुद्ध आहार होना, दूध व दही मिलाकर खाना, अथवा दही को गर्म करके खाना, मधु-घृत सम भाग मिलाकर सेवन करना, प्रभृति बातें दाद रोग के उत्पन्न करने में कारण पड़ जाती हैं। (अष्टांग हृदय)

(२) वमन, मल, मूत्र प्रभृति का वेग रोकना।

(३) पसीने में तत्काल नहाना।

(४) तिल, तेल, कुलथी, भैंस का दही आदि का अधिक सेवन करना। (भावप्रकाश)

(५) महीनों स्नान न करने से-शरीर के ऊपर मैल जम जाता और तब चर्म और रक्त दूषित होकर इस भयानक व्याधि को पैदा कर देते हैं।

(६) झटपट यूं हीं बेगार सी टालते हुए स्नान करने से। ऐसे स्नान से रगों आदि में सफाई नहीं होती और तब वहां खुजली चलकर दाद पैदा हो जाता है। इसलिये अच्छी तरह रागें व बगल के पास का स्थान, गरदन, अंडकोश आदि को प्रतिदिन अच्छी तरह साफ़ कर लेना चाहिये।

(७) मन्दिरों के गीले गमछे (तौलिये)-जैनियों के मन्दिरों में प्रायः यह प्रथा होती है कि वे जब मन्दिर में पूजन करने के लिये आते हैं तो अपने सारे कपड़े उतार कर रख देते हैं, फिर एक मन्दिर का गीला गमछा (तौलिया) लेकर, (जो मन्दिर

करना चाहिये। मैं केवल सोंठ. मिर्च और गुड़ का पानी में घोल बना लेता हूं और चम्मच द्वारा रोगी के नथुने में डाल देता हूं, साधारण शूल में केवल एक ही नथुने में और तीव्र शूल में दोनों में आज तक किसी ने यह नहीं कहा कि इससे दर्द बन्द नहीं हुआ। एस्प्रीन से कम से कम ४-५ मिनट लगते हैं, किन्तु इसमे अधिक से अधिक १ या २ मिनट लगते हैं। दूसरी बात "यात्वुदीर्णं शमयति नान्यं व्याधिं करोति च, सा क्रिया न तु या व्याधिं हरत्यन्यमुदीरयेत्।' एस्प्रीन शिरः शूल को खोकर पाण्डु, कर्ण बाधिर्य (Cinchonism) देती है, किन्तु इसका का प्रयोग निरापद है।

मैं अपने दो चार अनुभव ऊपर लिख चुका हूं, और आगे भी यदि पाठक इन्हें प्रयोग करके लाभ उठायेंगे तो लिखता रहूंगा।

—आचार्य धन्वन्तरि।

में पहिले से ही रखा रहता है) पहिन लेते हैं, और बाद में उसे उतार कर फिर मन्दिर की धोती बदल लेते हैं। इसी तरह एक ही अंगोछे (गमछे या तौलिये) से सब पूजा करने वाले कपड़े बदलते हैं। इस तरह 'दाद' बाबा का खूब प्रसार होता है। आप देखेंगे कि बरसात के दिनों में तो खास तौर से जहां पर ऐसी प्रथा है, यह रोग भीषणता से फैल जाता है।

(८) गीला कपड़ा देर तक पहिने रहने से।

(९) बाल वाले स्थानों की सफ़ाई न करने, या क्षौरादि से प्रमाद करने से इस भयानक रोग की उत्पत्ति हुआ करती है।

दाद से बचने के उपाय—

जो महाशय इस शैतान रोग के चंगुल से बचना चाहते हैं। उन्हें उक्त कारणों से अच्छी तरह बचना चाहिये।

नोट—इन उक्त कारणों के अलावा दाद वाले व्यक्ति के साथ संयोग, संभोग प्रभृति करने से भी इस रोग की उत्पत्ति होती है। देखा गया है कि महिलाओं में इस रोग के फैलाने का श्रेय पुरुषवर्ग को ही रहता है।

(२) शहरों में इस रोग के फैलने का एक प्रमुख कारण और भी देखा गया है। शहरों में लोग सण्डासों में ही पैखाने जाते हैं। कतिपय शहरों के विशेष स्थान छोड़कर, पैखाने इतने गंदा होते हैं कि कहा नहीं जासकता। बरसात के दिनों की हालत तो पूछिये ही मत। शहरों में तो २५ प्रतिशत दाद होने का कारण इस पैखाने की गंदगी और मल की भाफ लगना है। अतएव प्रतिदिन इनकी सफ़ाई करा के फिनाइल डलवा देनी चाहिए। ताकि अपने कुटुम्ब में इस मक्कार रोग का प्रसार न हो।

(३) इसके अलावा पारे के विकार से भी दाद रोग पैदा होते देखा जाता है।

दाद रोग की संप्राप्ति व संख्या—

ऊपर लिखे हुए कारणों से वात, पित्त और कफ तीनों ही दोष कुपित होते हैं। इनके कुपित होने से रस, रक्त और मांस भी विकृत (विकारयुक्त) हो जाते हैं। तब यह 'दाद बाबा' पैदा होजाया करते हैं। स्पष्ट विवरण यह है कि दाद में वात, पित्त, कफ, रस, रक्त और मांस ये छहों दूषित होकर भयानक दाद पैदा करते हैं। यदि इसमें कोई दोष कम होता है तो हलका दाद होता है।

यदि दाद का कारण बहिरंग होता है तो बाहर के मार्ग से धातु व दोषों का कुपित होना प्रारम्भ होता है। जैसे त्वचा के बिगड़ने पर रक्त और फिर मांस दूषित होकर वातादि दोष विकृत होते हैं। जैसे जैसे दोषों या विकार का ज़ोर बढ़ता जाता है, वैसे-वैसे बीमारी अधिक ज़ोर बांधती चली जाती है।

दाद की पहिचान और भेद—

यह रोग खुरखुरापन लिये हुए होता है, जो कि त्वचा (शरीर) में खुजली लिए हुए प्रगट होता है और इसमें दर्द नहीं होता। यह खुरखुरापन अधिकतर वृत्ताकार (गोलाई लिये हुए) होता है। और कभी २ दाद से मछली जैसे छिलके उतरते हैं और कभी पीला सा पानी भी निकलता है।

विशेषकर यह दाद दो प्रकार के होते हैं—

(१) लाल दाद

(२) काला दाद

इनमें से लाल दाद चिकित्सा से शीघ्र ही ठीक हो जाता है और वह बहुत मोटा अथवा गाढ़ा नहीं होता, किन्तु काला दाद बहुत दिनों तक रहता है और मुश्किल से आराम होता है। इसका प्रमुख कारण मवाद का दूषित व गाढ़ा होना है।

दाद के प्रकार—

दाद तीन प्रकार का हुआ करता है। अतएव चिकित्सा के समय उन पर अवश्य विचार कर लेना चाहिये।

(१) पहला दर्जा—जब कि दाद तुरन्त ही उत्पन्न हुआ हो और जब तक उसने मांस में अपना प्रभाव न कर पाया हो।

(२) दूसरा दर्जा वह है कि—जहां पर रोग मांस पर अपना कुछ प्रभाव कर चुका हो, पर अधिक प्रभाव न जमा पाया हो।

(३) तीसरा दर्जा—जहां पर कि रोग ने मांस पर भी पूरा प्रभाव डाल लिया हो। साथ ही साथ जिसमें मवाद भी विशेष गाढ़ा हो।

नोट पहिले दर्जे में मवाद बहुत पतला रहता है और खुजाने पर स्पष्ट और शीघ्र ही झलक आता है। दूसरे दर्जे में मवाद पहिले दर्जे से कुछ गाढ़ा हो जाता है. पर खुजाने पर कुछ देर से निकलता है। किंतु तीसरे दर्जे में तो उसका रङ्ग काला पड़ जाता है और खुजाने पर शीघ्रता से मवाद नहीं निकलता, किन्तु थोड़ी देर में और मिकदार में भी थोड़ा किंतु गाढ़ा निकलता है।

दाद की चिकित्सा में ध्यान रखने योग्य बातें—

(१) दाद को देखकर पहिचानो कि यह किस कारण से उत्पन्न हुआ है, और उस कारण को दूर करो।

(२) यदि इसकी उत्पत्ति का कारण भीतरी हो, अर्थात् दोषों के कोप से यह रोग पैदा हुआ हो तो खाने की औषधें तथा रक्त-शोधक वस्तुओं तथा रक्त-दोष शामक आहारों द्वारा उसकी चिकित्सा करनी चाहिए। साथ ही ऊपरी उपचार भी करना चाहिए।

(३) यदि रोग की उत्पत्ति बाहरी कारणों से हुई हो तो जंतुघ्न औषधों से दाद को धोकर दाद-नाशक प्रयोग करना चाहिए। दाद पर औषध लगाने के बाद, जैसा प्रसंग हो तदनुसार जंतुघ्न चीजों से हस्त शुद्धि कर लेनी आवश्यक है।

(४) लोगों के रहन-सहन मिजाज आदि को देखकर ही दादनाशक योगों का प्रयोग करना चाहिए। एक आयुर्वेद विद्यालय से निकले ताजे स्नातक महोदय ने एक सेठ जी का दाद मिटाने के लिए लगाने का ऐसा तेज प्रयोग बनाकर दिया कि बेचारे तिलमिला उठे और नवीन वैद्यों द्वारा किसी भी रोग की चिकित्सा न कराने का दृढ़ संकल्प कर बैठे।

(५) तेजाब आदि के द्वारा त्वचा जलाकर, दाद की चिकित्सा करते हुए देखकर, क्षणिक ख्याति के लिए अपना गौरव नष्ट न करो। किन्तु शांति पूर्वक जड़ से उखाड़ फेंकने वाले योगों द्वारा दाद को मार भगाओ। यशस्वी कहलाओगे।

(६) दाद के स्थान को अच्छी तरह टटोल कर पता लगाओ कि दाद किस दर्जे तक पहुंच गया है और उसकी तदनुसार चिकित्सा करो।

(७) दाद यदि बहुत परेशानी करदे, अनेक औषधें खिलाने-पिलाने व लगाने पर भी जब आराम

न हो तो रक्तमोक्षण कराओ। जोंकों द्वारा खराब खून निकलवा देना, इस समय के लिए सर्वोत्तम और सरल उपाय है।

(८) तीनों दरजों की चिकित्सा का विवरण दाद के चिकित्सा-प्रकरण में दिया गया है, वहां देखकर और भली भांति सोच-समझ कर दाद की चिकित्सा करो।

(९) दाद के चिकित्सा-काल में रोगी से नमक, गुड़, तैल और खटाई का त्याग करादो। स्त्री-प्रसंग, रूक्ष भोजन, आदि से भी बचाओ।

(१०) दाद ठीक हो जाने के बाद भी कुछ समय तक चिकित्सा करो।

दाद की चिकित्सा

लाल दाद नाशक योग—

१४५-पंवाड़ कूट सेंधानमक
कांजी सरसों वायविडङ्ग

—इनको समभाग लेकर एकत्र पानी में पीसकर लेप करो। इससे दूसरे दर्जे तक का लाल दाद ठीक हो जाता है।

नोट—पंवाड़ को संस्कृत में चक्रमर्द कहते हैं। जबलपुर जिले में इसे (चकौंडा) के नाम से पुकारा जाता है। लम्बी फली होती है, जिसमें बीज निकलते हैं। पंवाड़ के बीज ही लेने चाहिए।

१४६-पंवाड़ को कांजी या मूली रस अथवा प्याज़ के रस के साथ पीस कर लेप करने से दूसरे दर्जे तक का लाल दाद ठीक हो जाता है। लेकिन ४-५ दिन तक लगाना पड़ता है।

१४७-इसी तरह सहंजने की छाल भी पानी में पीसकर लगा सकते हैं।

१४८-शास्त्र में लिखा है कि दूब, हरड़, सेंधानमक, चकमर्द और बनतुलसी इनको समभाग लेकर कांजी या तक्र (छाछ) में पीसकर दाद पर लेप करने से सभी प्रकार के दाद नष्ट हो जाते हैं हमने भी प्रयोग कर देखा है। इससे साधारण दाद अवश्य ठीक हो जाता है।

१४९-अमलतास के पत्ते तक्र (मठे) में पीसकर लेप करो।

१५०-कन्नेर के पत्तों का अर्क निकालकर लगाओ।

१५१-अकेली प्याज का रस निकाल कर मलो।

१५२-प्याज का रस २ तोले, कलमीशोरा १ तोले। दोनों को मिलाकर रखलें—आवश्यकता के समय लाल दाद पर मलें। दाद अवश्य नष्ट होगी। बहुत नहीं लगती है। हमारे धर्मार्थ विभाग के द्वारा इसकी परीक्षा भी भली-भांति की जा चुकी है।

प्रथम दर्जे की चिकित्सा में कही गई औषधों का प्रयोग करना चाहिए।

काले दाद की चिकित्सा——

१५३—पीला वैसलीन १ पाउण्ड, गोवा पाऊडर १ तोला, गंधक का पिसा हुआ चूर्ण एक तोला लेकर रखलें। एक साफ कटोरे में वैसलीन डालकर आग पर गर्म करें, जब पानी की तरह हो जाय तो गोवा पाऊडर व गंधक का पिसा हुआ चूर्ण मिलादें और नीचे उतार कर लकड़ी की चम्मच से चलाकर ठण्डा करलें। फिर चौड़े मुंह की शीशियों में भर कर काम में लावें।

दाद पर दवा लगाने से पहिले दाद को कंडे से खुजा लेना चाहिए। फिर यदि दाद पर से पानी-सा

मवाद निकले तो उसे साफ कपड़े से पोंछ दें, ऊपर से यह मरहम लगादें। दाद को नीम के पत्तों के काढ़े से प्रतिदिन धो देना चाहिए। यदि कारबोलिक साबुन या पोटाश परमैंगनेट का डाला हुआ पानी मिल सके तो उससे ही दाद वाला स्थान धोना चाहिए।

१५४-नौसादर, कमलगट्टा की गिरी, पंवाड़ के बीज, मेंहदी के बीज, एक-एक तोले लेकर बारीक कपड़-छन चूर्ण करले। बाद में इसे भैंस की छाछ (तक्र) में खरल कर, थोड़ी सी बबूल के गोंद की पुट देकर, चपटी-चपटी सी टिकियां बनाले। इन्हें पानी से पीसकर दाद पर लगाना चाहिये। उत्तम व्यापारिक एवं लाभप्रद वस्तु है।

१५५-लाख सरलगोंद कूट
हल्दी सफेद सरसों सोंठ
काली मिर्च मूली के बीज
पंवाड़ के बीज पीपल

—इन्हें समभाग लेकर और कांजी में पीसकर, नं० १५३ की तरकीब के मुताबिक लगाने से दाद तथा अन्य भी चर्म-विकार ठीक हो जाते हैं। उत्तम प्रयोग है।

१५६-माजूफल - कच्चा सुहागा धूप गन्धक

—इनको बराबर २ लेकर चूर्ण करलें-और फिर कपड़े से छानकर, भैंस की छाछ में घोंटकर झरबेरी से कुछ बड़ी गोली बनाले। इसे नीबू के रस में ऊपर बताई गई विधि के अनुसार दाद पर लगाना चाहिये। यह दवा दाद पर लगती है पर नं० २ तक का कालां दाद इससे अवश्य अच्छा हो जाता है।

१५७-पारा गंधक ३-३ माशे।
नीला थोथा ६ माशा
नौसादर १ तोला
घी ४ तोला

—लेकर रखलें। पारे और गंधक को पहिले खरल में डालकर घोंट ले, जब कज्जली बन जाय तब नीला थोथा और नौसादर डाल दें और फिर घोंट ले। अन्त में घी डालकर खूब घोंटे, एक दिल हो जाने पर चौड़े मुंह की शीशी में रख ले। यह दाद पर उत्तम प्रमाणित हुआ है तीसरे दर्जे के दाद पर भी पचास प्रतिशत लाभप्रद है।

१५८-सुहागा भुना हुआ भुनी हुई फिटकिरी
मिश्री —प्रत्येक १-१ तोला।

—लेकर बारीक कपड़-छन चूर्ण कर लो। बाद में २ तोले मक्खन डाल कर इस चूर्ण को खूब घोंट लें। अन्त में नीबू का रस २ तोले डालकर खूब घोंटे और शीशियों में भरलें। काले दाद की चिकित्सा में बताये गये नम्बर १५३ के प्रयोग के लगाने के अनुसार तीन दिन में सभी दाद तशरीफ ले जाते हैं। बड़ा सच्चा अनूठा प्रयोग है।

१५९-नीले थोथे को आग में जलालें। जब वह सफेद हो जाय तब उसे बारीक पीस लें। इस तुत्थ भस्म को २॥ तोला लें और एक तोला मिट्टी का तैल मिलाकर और घोंटकर शीशियों में रखलें। यह प्रयोग है तो महा सरल पर काम करने में अच्छे २ प्रयोगों के कान काट लेता है। लगता भी ऐसा है कि नानी याद आ जाती है।

दरजे के अनुसार दाद की चिकित्सा

पहिले दर्जे की दाद पर—

१—लाल दाद में बताये हुये प्रयोगों का प्रयोग करने पर पहिले दर्जे की लाल या काली दाद अवश्य आराम हो जाती है।

२—ऐसी दाद पर हलके लेप लगावें जैसे—गेहूँ का तेल अथवा उपवास (व्रत) करने वालों का दांतों का मैल या बासा थूक आदि।

नोट—गेहूँ का तेल निकालने की विधि इसी लेख में आगे दी गई है।

३—आलू का गोंद सिरके में घिस कर लगावें।

४—हरड़ को सिरके में घिस कर लगाओ।

५—रसौत को सिरके में घिस कर लगावें।

इन उपायों से पहिले दरजे का दाद अवश्य ठीक हो जाता है।

दाद के दूसरे दर्जे का इलाज—

१—दाद के दूषित विकार को खींचने के लिये जौंक लगवावें।

२—माजूफल को जलाकर सिरके में पीसकर लेप करें।

३—काले दाद की चिकित्सा में लिखे गये प्रयोगों को काम में लें। नं० १५७ और नं० १५८ के प्रयोग इसके लिये उत्तम रहेंगे।

१६०—आमलासार गंधक सुहागे का जौहर
बोरिक एसिड —४०-४० तोला।
भुना हुआ नीला थोथा २॥ तोला
श्वेत राल १० तोला
नेनुआ गंधक २० तोला

वैसलीन अन्दाज से ले लें, जितने में सारी दवा मिल जाय।

—पहिले वैसलीन गर्म करलें, फिर सभी चीजों का बारीक कपड़-छन चूर्ण कर मिलाते जावें और लकड़ी की चम्मच से चलाते जावें। खूब मिल जाने पर एक दिल करके रखलें। यथा-विधि प्रयोग करें।

दूसरे दर्जे की दाद को मार भगाने में अत्युत्तम है।

१६१-सिंदूर काली मिर्च कुचला
कलमी शोरा —प्रत्येक १-१ तोला।
उत्तम गोघृत ३ तोला

--पहिले की चारों दवाइयों को कूटकर कपड़-छन करलें, फिर घी में मिलाकर २-३ घण्टे खूब घोंट डालें। यथा-विधि प्रयोग करें।

इससे दाद, खाज तथा अन्य चर्म-विकार शीघ्र ही नष्ट होते हैं। दूसरे दरजे ही क्या तीसरे दरजे तक का इलाज इससे हो जाता है।

दाद के तीसरे दरजे का इलाज—

१-यदि अवस्था अधिक विकृत न हुई हो तो काली दाद की चिकित्सा में लिखे हुये प्रयोगों का लगातार प्रयोग करें और दाद को पैदा करने वाले कारणों को दूर करें।

२-इस दरजे की चिकित्सा में फस्द खोलना भी ठीक रहता है। साथ ही जुलाब भी देना चाहिये इसमें कई बार स्नान कराना आवश्यक है।

३-इसमें दाद की औषधि लगाने से पहिले दाद को खुजालें; फिर बाद में निकलते हुये पानी आदि को पोंछकर ऊपर से दवा लगावें।

१६२-पारा १ तोला
गंधक नीले थोथे का फूला मिश्री
कच्चा सुहागा —प्रत्येक २-२ तोला

पंवाड़ के बीज ४ तोले

-लेकर पारा और गंधक की कज्जली बनाकर बाद में शेष चीजों का कपड़-छन चूर्ण मिलाकर खूब घोंट ले, फिर ६ घंटे नीबू के रस में घुटाई करके पिण्डी सी बनाले। इसे गोमूत्र, दही अथवा नीबू के रस में घिसकर लगाने से सब प्रकार के दाद रोग ठीक हो जाते हैं।

१६३-आमलासार गंधक कच्चा सुहागा
सफेद कत्था राल -प्रत्येक ५-५ तोला

-इनका कपड़-छन चूर्ण करके मिलाले। बाद में ६ तोले गूगल का बारीक चूर्ण मिलाकर, नीबू के रस में कम से कम ६ घंटे खरल करें और पिण्डी बना लेवें।

प्रयोग विधि-इसे गोमूत्र, दही अथवा नीबू के रस में घोंटकर या घिसकर लगाने से तीसरे दरजे का भयङ्कर दाद भी ठीक हो जाता है।

नोट-यदि दवा लगाने से भी बढ़ा हुआ रोग आराम न हो तो फिर नश्तर आदि से चीरकर ऊपर से ऐसी तीक्ष्ण औषधें लगावें जिससे वह अधिक मांस जलादे इससे घाव हो जायगा। घाव हो जाने पर सफेदा आदि के मलहम से उस घाव को भरदें।

दाद रोग की विशेष चिकित्सा--

अंडकोष की दाद पर—

१६४-सफेदा ८ माशे, गंधक २ माशे, पहाड़ी मुनक्का इन्हें ३ माशे लेकर कूट छानले। बाद में इसे बिना पानी आदि लगाए अंडकोष के ऊपर छिड़कना व रुई से लगाना चाहिये।

अच्छा हो कि दवा माशे की अपेक्षा तोले में बदल दी जांय और अलग-अलग कूट कर मिलाली जांय।

छोटे बच्चों की देह में दाद होने पर—

१६५-क्षुधायुक्त (भूखे) मनुष्य के मुंह की लार या आलू का गोंद तथा सिरका मिलाकर लगावे।

गेंहूं का तैल निकालने की विधि—

(१) एक रतल गेहूं लेकर शीशी में भरें, ऊपर से शीशी पर भली-भांति कपरौटी करदें। फिर शीशी के मुंह में छुहारे का गूदा या और कोई उचित चीज़ भरदें, जिससे शीशी के उलटने पर गेहूं न गिरें और तैल टपक-टपक कर गिरता रहे। फिर चोये की विधि से टपका कर तैल निकाल लें। अथवा—

(२) उत्तम गेहूं पत्थर पर रखकर, उसके ऊपर लोहे का तवा खूब गरम करके ढक दें। तवे के ऊपर कोई भारी वस्तु रखकर दबादें। इससे गेहूं में से कुछ पसेव सा निकलेगा उसे इकट्ठा कर काम में लें। इस गेहूं के तैल से निकम्मे फोड़ों पर लगाने से भी लाभ होता है। साधारण दाद भी बहुत जल्दी ठीक हो जाती है।

भीतरी विकारों के कारण यदि इस इस रोग की उत्पत्ति हुई हो तो—

शास्त्रीय प्रयोगों में—

बृहन्मंजिष्ठादि क्वाथ, पञ्च निम्बकावलेह, तालकेश्वर रस; रक्तशोधकारिष्ट, खदिरारिष्ट प्रभृति का प्रयोग आवश्यकतानुसार करें।

अथवा-

शुद्ध भिलावे एक सेर लेकर आठ सेर पानी में उबालें। जब पानी डेढ़ सेर रह जाय तो काढ़े को छानलें। अब इसमें दो सेर घी मिलाकर औटावें। जब पानी जल जाय और घी में फेन आने लगे तो

उतार कर रखलें। कुछ ठंडा होने पर उसमें एक सेर उत्तम मिश्री मिला दो तथा एक सप्ताह आराम से रखा रहने दो।

इसकी मात्रा ६ माशे से एक तोले तक है। बलाबल तथा अवस्था का विचार कर इसका प्रयोग करने से दाद, खाज, रक्त-विकार आदि दूर होकर बल-वीर्य बढ़ता है।

गंधक रसायन--

१६६-गाय के दूध द्वारा शुद्ध किये हुए गंधक में, क्रमशः गो दुग्ध, चतुर्जात (इलायची, दालचीनी, तेजपत्र, नागकेश्वर) के काढ़े गिलोय का स्वरस, त्रिफला काढ़ा, भांगरे का रस, अदरख का रस, इनकी ८-८ भावना दे और फिर सुखाकर बारीक चूर्ण करे।

भावना के विषय में वैद्य लोग अपनी इच्छानुसार १-१ अथवा २-२ भावना दे लिया करते हैं। शीघ्रता में ऐसा करना ठीक भी रहता है, पर सभी जानते हैं कि अधिक भावना देने से गुण में भी उतनी ही अधिक वृद्धि होती है।

इसकी मात्रा (यदि प्रत्येक वस्तु की ८-८ भावनायें दी गई हों तो) २-२ रत्ती से छः रत्ती तक की है। इसका दाद रोग में दो-मास तक सेवन करना चाहिए, भीतरी विकार के कारण यदि यह रोग होगा तो अवश्य निर्मूल हो जायगा।

इससे खाज, रक्त-विकार तथा कोढ़ तक ठीक हो जाते हैं।

नारसिंह चूर्ण—

१६७-शतावर गोखरू छिलके निकले हुए तिल
विदारीकंद —चारों ३२-३२ तोले
बराहीकंद ४० तोले गिलोय ५० तोले
शुद्ध भिलावे ६४ तोले
चित्रक की जड़ की छाल २० तोले
त्रिकुटा मिला हुआ १६ तोले
मिश्री २ सेर मधु १॥ सेर घृत ४० तोले

—प्रारम्भ में सूखी औषधों को कूट छान क कपड़ छान चूर्ण करलें फिर क्रमशः मिश्री, घृ व मधु मिलाले और एक दिल करके अमृतवान में भरलें।

मात्रा—१ से २ तोले। दिन में दो बार दूध क साथ लें। इसे एक माह तक सेवन करना चाहिये। दाद के लिये परमोत्तम है।

इससे वृद्धावस्था की कमज़ोरी, कास, श्वास, निर्बलता, सिर की गंज बहुत से वात, कफ रोग नष्ट हो जाते हैं। यह चूर्ण गर्म है इसलिये पित्त प्रकृति के लोगों को इसका सावधानी से सेवन करना चाहिये।

भृङ्गराजासव—

१६८-भांगरे का रस १०२४ तोले
गुड़ ८०० तोले
त्रिफला ३२ तोले

—मिलाकर अच्छे बड़े अमृतबान में भरकर १५ दिन तक रखा रहने दें। फिर—

पीपल जायफल लौंग
दालचीनी छोटी इलायची
नागकेशर —प्रत्येक ८-८ तोले।

—का जौ कुट चूर्ण मिलाकर १५ दिन और रखा रहने दें, बाद में छानकर आवश्यकतानुसार मधु मिला बोतलों में भरलें।

इसकी मात्रा १ से १॥ तोले तक है। भोजन के बाद दोनों समय बराबर जल मिलाकर पियें।

गुण—यह कब्ज़ नाशक तथा रक्त-शोधक है। इस से कोष्ठस्थ सेन्द्रिय विष नष्ट हो जाता है अतएव दाद रोगों में परमोपयोगी है।

दाद के अलावा धातु क्षय, बन्ध्या रोग नष्ट कर शरीर पुष्ट करता है। पित्त विकार, मुंह की बदबू, मूत्राघात, प्रमेह, क्षुद्र कुष्ठ प्रभृति पर भी उत्तम लाभप्रद है। भृङ्गराजासव के साथ सिद्ध घृत या एरण्ड तैल जैसे स्नेह विरेचन भी दे देने चाहिए।

आरोग्य वर्धिनी वटी—

१६९-शुद्ध पारा	शुद्ध आमलासार गंधक
लोह भस्म	अभ्रक भस्म
ताम्र भस्म	–प्रत्येक १–१ तोला।
त्रिफला	६ तोला
शुद्ध शिलाजीत	३ तोला
शुद्ध गूगल	४ तोले
चित्रक मूल की छाल	४ तोले
कुटकी	२२ तोला

—पहिले कज्जली बनाकर फिर शेष भस्में मिलालें, कूटने व कपड़-छन करने योग्य औषधों को कपड़-छन करके बाद में उसी में डालकर घोंट ले, फिर नीम के पत्तों के रस में तीन दिन खरल करके मटर के बराबर गोलियां बनाले और छाया में सुखाले।

प्रति दिन १ गोली प्रातः और १ गोली सायं हरड़ के क्वाथ से दें।

नोट—यद्यपि शास्त्रकारों ने इस प्रयोग का उल्लेख 'ज्वर-रोग' के नाश करने के लिये किया है। फिर भी अनुभव द्वारा लघु और बृहदन्त्र की विकृति के नाश करने के कारण इसका प्रयोग चर्म विकार, दाद, खाज तथा कोढ़ की प्रारम्भिक अवस्थाओं में किया जाता है। इससे सेन्द्रिय विष भी नष्ट होता है।

दादनाशक कतिपय उत्तमोत्तम प्रयोग

दद्रु नाशक अर्क—

१७०-कपूर १० तोले, पिपरमेंट के फूल ५ तोले, अजवायन के फूल ५ तोले, लोबान के फूल ५ तोले लें। पहिले कपूर, पिपरमेंट और अजवायन के फूल मिलालें। जब पानी की तरह हो जावें तो लोबान के फूल मिलालें। कांच की शीशियों में मज़बूत कार्क लगाकर रखलें।

दाद को खुजाकर फुरेरी से लगादो। दाद बिदा हो जायगा, साथ ही खाज भी। इसी प्रकार अनुपान-भेद से यह औषधि हैज़ा, त्वचा के रोग और कान की बीमारियों में भी काम करती है। दांतदर्द, जुकाम सिरदर्द, में भी अक्सीर है।

सरल दाद नाशक—

१७१-राल, गंधक, सुहागा और खुरासानी अजवायन समान भाग लेकर कूट-पीस लें और कपड़े से छानलें। फिर पानी के साथ खरल करके गोलियां बनालें। दाद पर लगाते समय पहिले कंडे के द्वारा दाद को खुजालें। बाद इन गोलियों को पानी में घिसकर दाद पर लगादें। हलका दाद ठीक हो जायगा।

दद्रु दमन—

१७२-गंधक, सिंदूर, चौकिया सुहागा प्रत्येक १-१ तोले। मुर्दासंग ३ माशे। इनको बारीक पीसकर और कपड़छन कर, सौ बार धुले हुए गाय के घी या मक्खन में खूब मिलाकर मालिश करें, इससे सूखी या गीली दाद तथा खुजली आराम हो जायगा, दाद पर दवा लगाने से पहिले दाद को खुजा लेना चाहिये।

दद्रु संहार--

१७३-पंवाड़ के बीज २ तोला, कत्था २ तोला, सरसों २ तोला, बावची २ तोला। हल्दी और आमलसार गंधक प्रत्येक १-१ तोला।

—इन्हें एकत्र खरल करके दाद के ऊपर लगाने से पुराना दाद भी बिदा हो जाता है।

वर्षा दद्रु नाशक--

बरसात के दिनों में होजाने वाले दाद पर आवश्यकतानुसार उत्तम पपरिया कत्था लेकर पानी में घोंट ले और दाद के ऊपर एक अंगुल मोटा लेप करदे। जब पहिला लेप सूख कर छूट जाय, इसके बाद दूसरा लेप करना चाहिए। इस प्रकार तीन लेप करने से बरसात का किसी प्रकार दाद क्यों न हो अवश्य अच्छा हो जाता है। सुपरीक्षित है।

दद्रु दावानल बटी--

१७४-नौसादर, सैंधानमक, सादा गंधक, राल मग़रवी, नीला थोथा और चीनी इन सबको समान-भाग एक-एक तोला लें कच्चा सुहागा २ तोले, फिटकरी ३ माशे, कलमी शोरा ६ माशे। इन चीज़ों को कूट पीस कपड़छन कर और फिर नीबू के रस में घोटकर गोलियां बनालें।

प्रयोग विधि—पहिले दाद की जगह पानी की पट्टी चढ़ादो। जब दाद के स्थान पर खुजली आने लगे तो उस पट्टी को उतार डालो और ठीकरा का टुकड़ा लेकर उस खुजली वाली जगह को और खूब खुजावे। जिस समय उसमें से सफेद पानी सा निकलने लगे तो उक्त गोलियों को नीबू के रस में घोंटकर, मरहम सी बनाकर लगादे। इसे २-३ बार लगाने से महा भयंकर दाद भी आराम हो जाता है। कई बार का अनुभूत प्रयोग है।

"गुप्त सिद्ध प्रयोग" के विषय में—

उक्त पुस्तक को इच्छां रखते हुए भी अभी तक प्रकाशित नहीं कर सके हैं। ग्राहकों को भी बार-बार तकाजा करने की परेशानी करनी पड़ रही है इसका दुःख है। प्रान्तीय सरकार की स्वीकृति की प्रतीक्षा में इसका प्रकाशन रुका हुआ है और सम्भव है कि कुछ समय और लग जाये, अतः निवेदन है कि इसके ग्राहक कुछ समय और प्रतीक्षा करने की दया करें। छपना प्रारम्भ होते ही धन्वन्तरि द्वारा सूचना दे दी जायगी।

निवेदक—वैद्य देवीशरण गुप्त,

धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

अन्धों को दृष्टि देने वाली एक विचित्र वनस्पति

सर्वत्र उत्पन्न होने वाली

"इस विश्वस्तपरा बूटी में आंखों के रोगों को दूर करने की इतनी चमत्कारिक शक्ति होगी—इसका कोई अनुमान भी नहीं कर सकता। आजकल के दिनों में यह हर जगह मिल जाती है, इसलिये पाठकों को रोगियों पर परीक्षा करनी चाहिये और फलाफल सूचित करना चाहिये।" —सम्पादक।

लेखक—दीवान बोघाराम हकीम, गोल्डमैडलिस्ट,
बाज़ार मसगरां, डेरा इस्माईल खान।

ममीरे के विषय में यह बात प्रसिद्ध है कि उसके प्रयोग से अन्धे भी सूझते हो जाते हैं। एक बार कांगड़ा की सैर करते हुए मुझे अकस्मात् ममीरा असली प्राप्त हुआ, जो इस समय तक भी मेरे पास थोड़ा सा है। मैंने इसे दूसरी औषधों के साथ मिला कर सुरमा तय्यार किया और भिन्न २ नेत्र-रोगों पर इसे बरता। निस्सन्देह प्रायः नेत्र रोगों पर लाभप्रद अवश्य है; परन्तु अन्धों को दृष्टि देने की शक्ति इस में नहीं। पाठक गण! मैं आज आपको एक ऐसी चमत्कारी बूटी से परिचय कराने लगा हूं, जो ममीरा से कई गुनी लाभदायक और सचमुच ही अन्धों को सूझता करने की शक्ति रखती है। विशेषता यह कि उसको ढूंडने के लिये न तो पर्वतों पर घूमना पड़ता है और न इतनी बहुमूल्य ही है कि केवल धनी लोग ही खरीद सकें, किंतु यह हर जगह सुगमता से मिल सकती है। बिना अत्युक्ति मनों मिल सकती है औ वह भी बिना मूल्य के। यह बूटी कैसे प्राप्त हुई इसका संक्षिप्त वर्णन निम्नोक्त है:—

लाला प्यारेलाल जनरल मरचेन्ट की लड़की को भयंकर कुकरों का कष्ट था। अतः उसे सिवल हस्पताल ले जाया गया। दुर्भाग्य से कम्पाउन्डर अनुभवी न था उसने भूल से आंखों में कोई ऐसी औषध डाल दी जिससे लड़की की आंखों की दृष्टि नष्ट हो गई। छः वर्ष की छोटी कन्या जिसके अभी खेलने-कूदने के दिन थे, सदा के लिये घर की चार-दीवारी के अन्दर रहने के लिये विवश करदी गई। अपनी इच्छा से इधर-उधर जाना तो एक ओर शौचादि आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये भी पराश्रिता हो गयी। यद्यपि उसके पिता ने कई प्रसिद्ध नेत्र-चिकित्सकों से उसकी चिकित्सा कराई; परन्तु आंखें ठीक न हुईं। अन्ततः निराश होकर बैठ गये। इस बात को तीन वर्ष का समय बीत गया। अकस्मात एक रमते हकीम मेरे पास पधारे। योग परिवर्तन करते हुए उन्होंने एक बूटी की बात छेड़ी कि यह सब नेत्र-रोगों के लिए अकसीर है। शाम को जब हम शौचादि के लिये गांव से बाहर गये तो उन्होंने वह बूटी दिखाई। उस समय मुझे उस अन्धी कन्या का विचार आया। सैर से लौटकर मैं उस कन्या के पिता से मिला और अगले दिन प्रातः लड़की को लाने के लिये ताकीद करदी, अतः अगले दिन वह लड़की को मेरे मकान पर ले आये।

रमते हकीम साहब ने बूटी उखाड़ कर रस निचोड़ा और ड्रापर से दो २ बूंदें उसकी आंखों में डाल दीं, कुछ मिन्टों के पश्चात् कन्या पीड़ा से चीखने लगी। यहां तक कि पीड़ा के आधिक्य से विह्वल लड़की ज़ोर २ से रोने लगी। हम सब उस कन्या के असह्य कष्ट को देख कर चिन्तित हुए। परन्तु हकीम साहब सन्तोष पूर्वक परिणाम की प्रतीक्षा करते रहे। थोड़ी देर बाद आपने कहा, "अब इसे घर ले जाकर बिस्तर पर आराम से लिटा दो" अतः कन्या का पिता उसे घर ले गया।

ग्रीष्म ऋतु थी और शुक्ल पक्ष था। सारे घर वाले मकान की छत पर सोए हुए थे। अकस्मात् लड़की ने चांद की ओर अंगुली से संकेत कर के कहा 'वह चांद है'। कन्या के मुंह से यह विचित्र वाक्य सुनकर सब घर वाले जाग पड़े और हैरानी से पूछा "तुम्हें चांद नज़र आ रहा है।" लड़की ने सिर हिलाते हुए दूसरी बार चांद की ओर अंगुली उठाई। उस समय जो प्रसन्नता घर वालों को हुई उसका वर्णन करना क़लम की शक्ति से बाहर है। सारांश यह कि दूसरे दिन लड़की स्वयं चल कर मेरे मकान पर आई और यथा पूर्व उसकी आंखो में दवाई डाली गई। उसे दवाई की तेज़ी भी अनुभव न हुई; कुछ दिन लगातार दवाई का प्रयोग किया गया। कन्या के नेत्र बिल्कुल ठीक हो गये। और परमात्मा की बनाई हुई सृष्टि को फिर से देखने-भालने लगी। अब वह लड़की आर्य पाठशाला में विद्या प्राप्त कर रही है।

• लीजिये पाठक गण! अब मैं इस विचित्र बूटी का नाम प्रकट किये देता हूं। वह केवल बिसखपरा (पुनर्नवा) बूटी का ही चमत्कार था, जिसने तीन वर्ष से अन्धी कन्या को पुनः दृष्टि प्रदान की। यह वनस्पति वैशाख से भाद्रपद-ग्रीष्म ऋतु में प्रायः खेतों, बागों और जलीय स्थानों में स्वयमेव उग पड़ती है। कृषक लोग उसे व्यर्थ समझ कर ऊंटों और बकरियों को चरा देते हैं। परन्तु उन्हें ज्ञान नहीं कि यह परमात्मा के बनाए हुए बहुमूल्य पदार्थों में से एक है। जो सज्जन इसको प्रयोग करना चाहें इस बूटी के पत्ते तोड़ कर एक तोला लें और छः माशे आर्द्रक अथवा शुण्ठी डाल कर ठंडाई की की तरह घोट लें, फिर कपड़े से छान कर शीशी में सुरक्षित रखें। आवश्यकता के समय ड्रापर या चील के पर से दो २ बूंद आंखों में डालें। धुन्द, गुबार, जाला, फीला और नज़र की कमज़ोरी के लिए ममीरा से बढ़ कर लाभदायक है।

सुरमा नूरानी—

१७५—यसद फुल्ला (बाज़ारी) स्फुटिका भस्म, शुण्ठी प्रत्येक एक तोला, बिसखपरा (पुनर्नवा) बूटी के पत्तों का रस एक पाव। इन सबको खरल करें। जब धूल समान बारीक हो जाय तो रेशमी कपड़े से छान कर शीशी में सुरक्षित रखें। यह सुरमा रोज़ाना लगाने से नज़र को तेज करता है और वृद्धावस्था की दृष्टि को युवा के समान तेज रखता है। इसके अतिरिक्त कुकरे, धुन्द, जाला, फोला (शीतला या चोट का न हो) में अत्यन्त लाभदायक है। दुखती आंखों के लिये तो मानो जादू है। जो सज्जन इसको तैयार करके काम में लाएंगे मेरे इस त्याग के यश गाएंगे।

—(भारतीय चिकित्सा)

(विविध-समाचार)

हम 'धन्वन्तरि कार्यालय' से बोल रहे हैं, अगस्त माह के समाचार हैं। ज़रा सम्भल कर ध्यान से सुनियेगा। समय कम होने के कारण मैं कुछ संक्षिप्त में ही सुना सकूंगा। हां तो सुनिये—

मंडी बहाउद्दीन के—

"श्री दयानन्द आयुर्वेदिक धर्मार्थ औषधालय"

से समाचार मिला है कि उक्त धर्मार्थ औषधालय ४ वर्षों से स्थानीय आर्य-समाज की ओर से चालू है। इसके इन्चार्ज वैद्य कविराज पं० भगवान दास जी शास्त्री आयुर्वेदाचार्य वैद्यशास्त्री, दो कम्पाउंडर तथा एक कर्मचारी आगत रोगियों से बड़ा अच्छा व्यवहार करते हैं और यही कारण है कि जनवरी से जून १९४६ तक इस संस्था से लाभ उठाने वालों की संख्या १३७२१ रही।

इसके प्रबन्धकों एवं कार्यकर्त्ताओं को गरीब रोगियों की ओर से मैं धन्यवाद देता हूं। अब बैतूल जिला वैद्य-सभा का समाचार सुनियेगा—

बैतूल जिला वैद्य सभा—

ता० १८-८-४६ को कविराज पं० हर्षुल जी मिश्र प्रवीण की अध्यक्षता में उक्त सभा की बैठक सानन्द सम्पन्न हुई। जिले के प्रमुख वैद्यों ने भाग लिया बतलाया जाता है। सभा के सङ्गठन सम्बन्धी प्रस्ताव (भगवान् जाने, यह कार्यरूप ग्रहण करेगा ?) पास होने के बाद वैद्यराज पं० पुरुषोत्तम दास जी मिश्र ने भोर कमेटी के विरोध में लिखित वक्तव्य पढ़ सुनाया। इसी वक्तव्य के कुछ अंशों को प्रस्ताव रूप में स्वीकार कर उसकी प्रति डाक्टर हसन साहब स्वास्थ्य मन्त्री, की सेवा में भेजना निश्चित किया गया। इसके बाद स्वास्थ्य-मंत्री के इस आश्वासन के आधार पर कि भारतीय वैद्यक-शास्त्र और वैद्यराजों को राष्ट्रीय सरकार के शासन में वे सब अधिकार दिये जांयगे, जो डाक्टरों को प्राप्त हैं, अध्यक्ष महोदय जी ने कुछ सुझाव प्रस्ताव रूप में पेश किये, जो सर्व-सम्मति से पास हो गये।

उन सुझावों का सारांश भी मुझे प्राप्त हुआ है लेकिन समय की कमी के कारण नहीं सुना सकूंगा, क्षमा करें। रायपुर की वैद्य-सभा का भी समाचार संक्षेप में सुनियेगा--

रायपुर वैद्य सभा—

वहीं १८-८-४६ को तीन बजे दिन के, शहर के वैद्यों की सभा हुई (समाचार प्रेषक ने सभापति महोदय का नाम नहीं लिखा है) उक्त मीटिंग में ५ प्रस्ताव सर्व-सम्मति से पास हुए, जिनका सारांश यह है—

१—प्रस्तावित आयुर्वेदिक कालेज में आयुर्वेद के शल्य-शालाक्य आदि सर्वाङ्ग पूर्ण शिक्षा का प्रबन्ध आवश्यक है।

२—इस कालेज को शीघ्र चालू करने के लिये राबर्टसन मैडीकल स्कूल नागपुर की इमारत, अस्पताल आदि लिये जांय।

३—वैद्यों के रजिष्ट्रेशन के लिये एक बोर्ड बना दिया जाये।

४—रजिष्ट्रेशन अनिवार्य न हो।

५—आयुर्वेद सम्बन्धी स्टेडिंग कमेटी में ५० प्रतिशत स्थान गुरु-परम्परा से शिक्षा व अनुभव

प्राप्त वैद्यों को तथा ५० प्रतिशत आधुनिक कालेज से शिक्षा प्राप्त वैद्यों को दिया जाये। छत्तीसगढ़ से भी २ प्रतिनिधि अवश्य लिये जांय।

जब्बलपुर में—

सी० पी० के स्वास्थ्य-मंत्री माननीय डा० एस. एम. हसन के पधारने के सुअवसर पर ता० १-८-४६ को जब्बलपुर आयुर्वेद मण्डल ने उन्हें अभिनन्दन पत्र प्रदान किया था, काफी वैद्यों की उपस्थिति थी। श्री० पं० सुन्दरलाल जी शुक्ल प्राणाचार्य की अध्यक्षता में सभा हुई। माननीय मंत्री जी ने भी उक्त सभा में अपने सद् विचारों को प्रकट किया, जो नीचे प्रकाशित कर रहे हैं।

श्री० शिक्षा मन्त्री जी का भाषण—

आपने बताया कि आप एम. बी. बी. एस. होते हुए भी इस बात का अनुभव कर चुके हैं कि भारतीय जनता का लाभ जितना आयुर्वेद से होता आया है उतना किसी भी चिकित्सा प्रणाली से नहीं। इस देश में आयुर्वेद के पतन का कारण विदेशी सत्ता है। अंग्रेजों ने एलोपेथी को मान्यता इसलिए दी कि उसके द्वारा उनके देश का व्यापार बढ़े और भारत का पैसा विदेश जाय। करोड़ों रुपयों की दवाइयां बाहर से मंगाई जाती हैं जब कि आयुर्वेदि दवाइयों से बहुत कम मूल्य पर ही इलाज किया जा सकता है। आपने लड़ाई के समय देखा होगा कि इंजैक्शनों का मूल्य कितना बढ़ा दिया गया है। अब जमाना पलट गया है। आपके प्रांत में कांग्रे मिनिस्ट्री बन चुकी है। उसने निश्चय किया है कि आयुर्वेद की उन्नति की जाय, आयुर्वेदिक काले (विद्यालय) तथा अस्पताल खोले जावें। जिससे जनता का विशेष कल्याण हो सके।

आयुर्वेद कालेज की स्थापना—

यदि पिछली मिनिस्ट्री को अपने पदों से स्तीफा न देना पड़ता तो मैं दावे के साथ कह सकता हूँ कि इस प्रांत में आयुर्वेद प्रणाली की तक काफी उन्नति हो गयी होती। आपने सूचि किया कि आयुर्वेद सम्बन्धी विषयों पर एक बि तैयार करने के लिये एक सब-कमेटी नियुक्त की गयी जो कि असेम्बली के होने वाले अधिवेशन में पेश होगा। प्रान्त के वैद्यों की एक कमेटी बनाई जावेगी जिसमें योजनाएँ तैयार की जावेगी और कार्य किया जावेगा। आपने आश्वासन दिलाया कि आयुर्वेदिक विद्यालय और अस्पताल जहां तक सकेगा बहुत शीघ्र खोले जावेंगे।

स्त्री-सुधा
समस्त स्त्री-रोगों के लिये
परीक्षित उत्तम दवा

कुमार कल्याण घुटी
बालकों की मीठी मोटा-ताज़ा बनाने
वाली उत्तम घुटी

ज्वरारि—ज्वर जूड़ी, तिल्ली की क्विनीन रहित अव्यर्थ महौषधि। सर्वत्र प्रसंशित।
एजेंसी लेकर अपने यहां विक्रियार्थ रखें।
मिलने का पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़-(अलीगढ़)

अपने एजेन्टों से निवेदन—

आज मेरा असीम सौभाग्य है कि आपसे यह निवेदन करने का सुअवसर मिला है। अभी तक 'धन्वन्तरि कार्यालय' में मैं और वै. बांकेलाल गुप्त दो साझीदार थे। कुछ समय से इस कार्यालय के कुछ विभाग मेरे आधीन थे तथा कुछ वैद्य जी के आधीन थे। यह सर्व-विदित ही है कि एक कार्य के सभी विभाग एक-दूसरे पर अवलम्बित रहते हैं और जिस प्रकार गाड़ी का १ पहिया बेकार या कमज़ोर होने पर दूसरा पहिया मजबूत होते हुए भी बेकार हो जाता है, उसी प्रकार एक कार्यालय के विविध विभागों की दशा है। आपसी मन-मुटाव तथा कार्य-पद्धति की भिन्नता होने के कारण यह स्वाभाविक है कि कार्यालय के कार्य में शिथिलता उत्पन्न हो जाती, और वही हुआ। इसके कारण यह भी निश्चित है कि आप महानुभावों को भी परेशानी रही होगी। आपकी शिकायतों पर पूरा ध्यान नहीं दिया जा सका होगा तथा आपको प्रचार-सामिग्री, सूची, सूचना आदि समय पर न भेज सके होंगे, अन्य और भी शिकायतें हो सकती हैं। हम अपनी पिछली सभी त्रुटियों के लिये क्षमा चाहते हुए यह सूचित करते हैं कि अब वैद्य बांकेलाल गुप्त का इस कार्यालय तथा किसी कार्य से किसी भी प्रकार का सम्बन्ध नहीं रहा है और इसके सभी विभाग मेरी अध्यक्षता में आगये हैं। मैं आपकी यथाशक्ति सेवा में तत्पर रहूंगा और आपको विश्वास दिलाता हूँ कि पिछली सभी शिकायतें क्रमशः शीघ्र दूर होंगी, आप भी पूर्ववत् स्नेह रखते हुए मेरी त्रुटियों को अवश्य सूचित करते रहेंगे। जिससे उन पर उचित विचार कर उन्हें दूर करने का उपाय किया जासके। आपसे निवेदन है कि आप भी उत्साह-पूर्वक कार्य-क्षेत्र में आगे बढ़ें और हमारी औषधियों का यथाशक्ति प्रचार करते हुए परस्पर लाभ के भागी बनें।

प्रचार कार्य—

प्रचार कार्य के लिये सबसे अधिक आवश्यक कागज है। गवर्नमेंट कागज वही नपा-तुला दे रही है और उसे भी व्यवहार करने में अनेकों पाबंदियां लगा रखी हैं; इसलिये हमारे ध्यान में जो प्रचार-साधन हैं वे कार्य रूप में पूरी तौर से नहीं आ सकते हैं, फिर भी हम लक्ष्मीस्तोत्र, हनुमान चालीसा, अनुभूत योग आदि छोटी-छोटी पुस्तकें, कलेंडर, छोटे आकर्षक पेटेन्ट सूची, सोखता, झोला आदि अनेकों प्रचार-सामिग्री तैयार करा रहे हैं। इन के विषय में पूरा विवरण आगामी अंक में दिया जायगा।

आप भी वे साधन और उपाय जो आजकल की परस्थिति में सफलता पूर्वक किये जासकें यदि आपकी समझ में आयें तो अवश्य सूचित करें। हम उन पर विचार कर अवश्य व्यवहार में लायेंगे और इस कृपा के लिये आपके आभारी होंगे।

मैं इस कार्यालय के कार्य में लगभग १६ वर्षों से भाग ले रहा हूँ और इस समय में मैंने यह अनुभव किया है कि कार्यालय के अध्यक्ष तथा उसके एजेन्ट एक परिवार के अंग हैं और जब तक परिवार के विविध अंग अपना-अपना कार्य पूर्ण न करेंगे तब

तक यह परिवार फल फूल नहीं सकता है। कार्यालय की कार्य-व्यवस्था बिगड़ने पर एजेंट उन्नति-शील होते हुए भी अधिक उन्नति नहीं कर सकते, उसी प्रकार एजेंटों के उद्योग-हीन होने पर कार्यालय उन्नति नहीं कर सकता। इसी बात को ध्यान में रखते हुए मैंने यह निश्चय कर लिया है कि मैं एजेंटों की हर एक उचित शिकायत एवं सुझाव पर पूरा ध्यान दूंगा। आशा है आप भी अपनी एजेंसी की उन्नति के लिये शक्ति भर प्रयत्न करेंगे।

धन्वन्तरि में यह स्तम्भ नियमित चालू कि जारहा है जिसके द्वारा अपने कृपालु एजेंटों सामयिक सूचना देने की सुविधा रहेगी। आशा कृपालु एजेन्ट भी इस स्तम्भ की सूचन तथा निवेदनों पर उचित ध्यान रखने कृपा करेंगे।

आपका कृपाकांक्षी—

वैद्य देवीशरण गुप्त।

मलेरिया मार भगाने के लिये
अत्युत्तम सस्ती क्विनीन-रहित दवा

ज्वरारि

छोटी शीशी	(१० मात्रा)	१)	१२ शीशी	६)
बड़ी शीशी	(२० मात्रा)	१।।।)	१२ शीशी	१५।।।)
बोतल	(५० मात्रा)	३।)	१२ बोतल	२६।)

आप भी विक्रियार्थ अपनी
दुकान पर रखियेगा।

आविष्कारक—वैद्य देवीशरण गर्ग, प्र० सम्पादक "धन्वन्तरि"
निर्माता—
धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

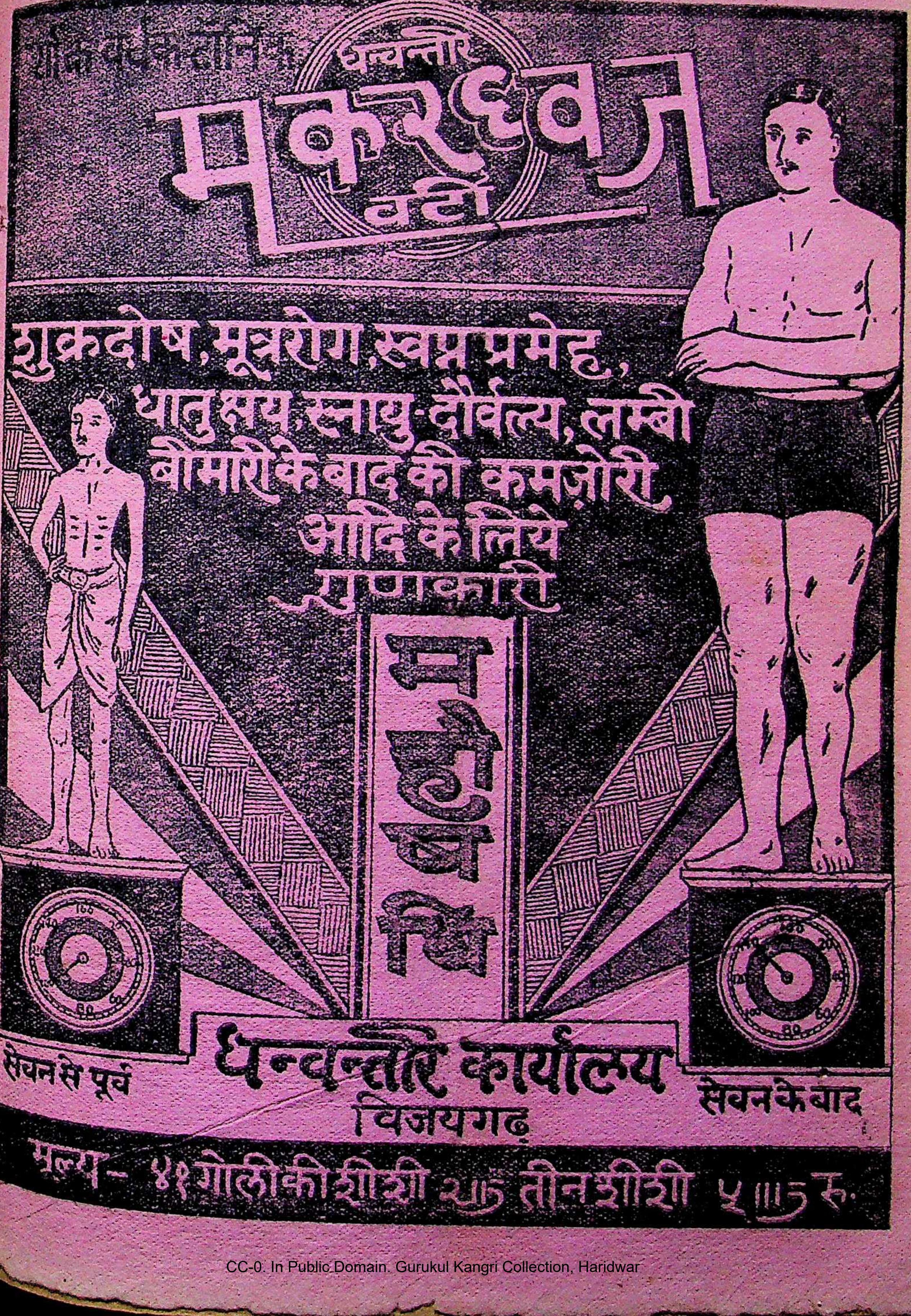

[illegible] टॉनिक

धन्वन्तरि

मकरध्वज वटी

शुक्रदोष, मूत्ररोग, स्वप्नप्रमेह, धातुक्षय, स्नायु-दौर्बल्य, लम्बी बीमारी के बाद की कमज़ोरी आदि के लिये गुणकारी

महौषधि

सेवनसे पूर्व

सेवनके बाद

धन्वन्तरि कार्यालय
विजयगढ़

मूल्य - ४१ गोली की शीशी २) तीन शीशी ५।।) रु.

शी [illegible] ता

बाद में ० [illegible] माना पड़ेगा

जिन शहरों की आबादी ५०००० [illegible] अधिक है हम उन स्थानों पर अपनी सोल एजेंसी खोल रहे हैं। यदि आप ५ [illegible] प्रारम्भ में लगा सकें, शहर में उत्तम स्थान पर आपकी दुकान हो अ[illegible] प्रबन्ध कर सकें तो शीघ्र ही नियम मंगा कर एजेंसी लीजियेगा। [illegible] शनादि भर पूर, विज्ञापन व प्रचार पर्याप्त एवं अन्य सभी सुविधाएँ [illegible] जांयगी।

धन्वन्तरि कार्यालय (एजें[illegible]विभाग) विजयगढ़ (अलीगढ़)

हमारी नवाविष्कृत

कासारि

सभी प्रकार की खांसी

की

अनमोल दवा--

आप भी अपने चिकित्सा कार्य में व्यवहार में लाकर चमत्कार देखें।

मूल्य--१ शीशी २० मात्रा १)

ग्राहक नम्बर ——————

सेवा में ——————

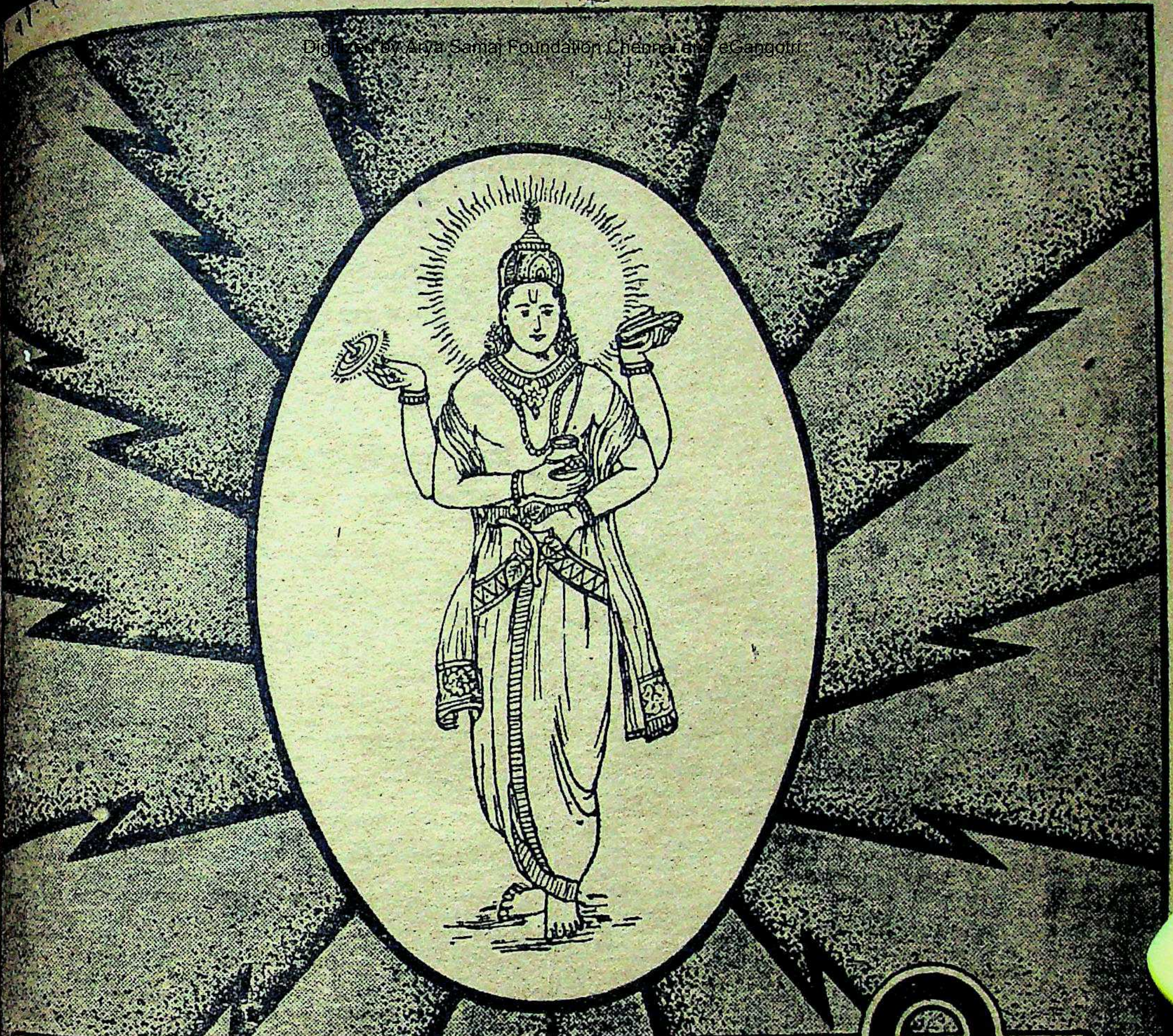

धन्वन्तरि

भाग २१
अङ्क ४

—सम्पादक—
वैद्योपाध्याय देवीशरण गर्ग
जे. पी. अग्रवाल बी. एस. सी.

सितम्बर
१९४६

—विषय-सूची—

धन्वन्तरि वृक्ष (कविता) ३१३
निराश रक्त रोगी से ३१४
खसरा-खुजली-खांसी ३१५
सन्निपात ज्वर में भयङ्कर उपद्रव 'कर्णमूल' ३१७
देशी औषधियां श्रेष्ठ हैं या डाक्टरी ३१८
चिकित्सा में मनः शक्ति का समन्वय ३१९
निर्गुण्डी और कुष्ठ ३२३
कालमेघ ३२५
उपयोगी चुटकुले ३३०
प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांत और उसकी महिमा ३३१
स्वप्न-दोष ३३४
परीक्षित प्रयोग ३३[illegible]
वैद्यों से परामर्श ३४१
विविध समाचार ३४२
हमारे एजेंटों से निवेदन ३४५

धन्वन्तरि के नियम

१—धन्वन्तरि का वार्षिक मूल्य ५≡) है। इसी में एक विशेषांक भी दिया जाता है। इस वर्ष 'रक्त-रोगांक' विशेषांक प्रकाशित हुआ है।

२—वर्ष जून से प्रारम्भ होकर मई में समाप्त होता है। ग्राहक जून से ही बनाये जाते हैं, बीच से नहीं।

३—वार्षिक मूल्य ५≡) मनिआर्डर से भेजना चाहिये। अथवा आज्ञा मिलने पर आपका शुभ नाम ग्राहकों में लिखकर रक्त-रोगांक तथा बाद के प्रकाशित अङ्क वार्षिक मूल्य ५≡) की वी० पी० से भेज दिये जाते हैं।

आयुर्वेद पुस्तक प्रकाशक

यदि अपनी पुस्तकें शीघ्र बिक्री करना चाहें तो हमें लिखें। हम उचित कमीशन पर नकद रुपया देकर मंगाकर अपने स्टाक में रखेंगे तथा धन्वन्तरि में विज्ञापन देकर काफी तादाद में बिक्री कर सकेंगे। कमीशन सोच-समझ कर उचित लिखें, यदि सम्भव हो तो एक प्रति पुस्तक अवलोकनार्थ भेज दें।

—व्यवस्थापक।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

*

आवश्यकता

हम माधव-निदान की विस्तृत तथा सचित्र टीका तैयार कराना चाहते हैं। जो विद्वान् आधुनिक ढङ्ग पर टीका कर सकें वे शीघ्र लिखें, उचित पारिश्रमिक दिया जायगा।

जो विद्वान यहां रहकर 'धन्वन्तरि' का सम्पादन करते हुये माधव-निदान की टीका करना चाहें उन्हें उचित वेतन दिया जायगा। शीघ्र पत्र लिखें।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

Printed and Publisned by Vaidya D. S. Garg at the Dhanwantari Press, Bijaigarh.

(काल मेघ)

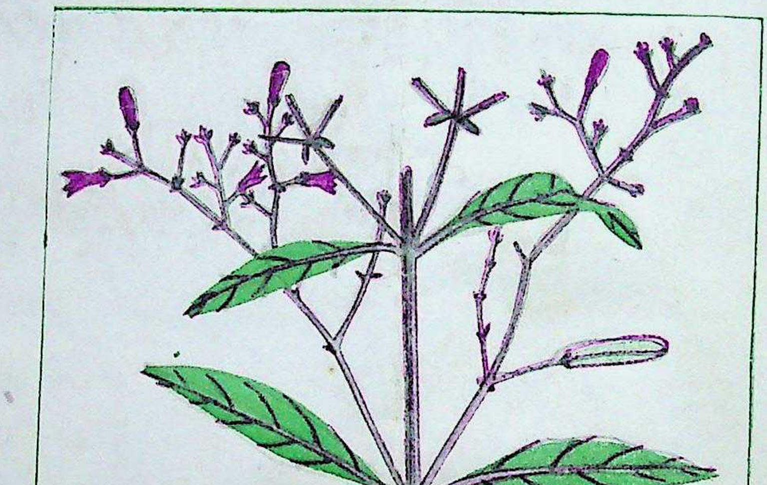

[विवरण इसी अङ्क के पृष्ठ ३२५ पर देखें।]

Approved by Dept. of Public Instructions of Central Provinces & Berar.

MURARI ART AGRA

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

धन्वन्तरि

या ओषधी पूर्वाजाता देवेभ्यास्त्रियुगं पुरा।
मनैनु बभ्रूणामहं शतं धामानि सप्त च॥

सितम्बर
सचित्र
मासिक पत्र
१९४६

धन्वन्तरि वृक्ष।

अहह, मानव दानव बन रहा,
सुखद जीवन दुःखधरा बना।
सतत चिन्तित पीड़ित रोग से,
मृतक-सा जीवित-तन हो रहा ।१।

नव-नवांकुर प्रोहित वृक्षये,
नव सुपल्लव पुष्पित स्वाथ्य का।
लह-लहाता 'धन्वन्तरि' बना,
मनुज दुखहर शीतल छाय मय ।२।

सकल जन विश्राम सदा करें,
जगत में जब तक रवि चन्द्र हों।
यह सुभग तबतक जीवित रहे,
जगत-जीव सदा सुखमय रहें ।३।

रचयिता-न्यायायुर्वेदाचार्य वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री,
अध्यक्ष-अमृत कार्यालय, जबलपुर।

निराश रक्त-रोगी से

लेखक-श्री० ताराशङ्कर जी मिश्र आयुर्वेदाचार्य,
अध्यापक-अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय, काशी।

क्यों कराहते हो भैया ?

क्या कहा ? तुम्हारे अङ्ग गल कर गिर रहे हैं ! तुम भीषण अन्तर्दाह से पीड़ित हो ! तुम्हारे नयन रक्ताभ होकर बेदनाभिभूत हो रहे हैं ! केश भी झड़ रहे हैं ! ओफ !!

नहीं भाई ! पाप-पुण्य तो विश्वनियन्ता की माया मात्र है ! सुख-दुख तो लगा ही रहता है ! यह तुम्हारे दुःख का भोग-काल है बस और कुछ नहीं !

क्या ? हजारों रुपये लग गये ! सबकी दवा करके हार गये ! दो वर्ष हो गये फिर भी कोई लाभ नहीं; रोग बढ़ता ही जा रहा है !

अच्छा ! एक काम करोगे ?

हैं ! यह क्या कर रहे हो ? उठो ! उठो ! चरण क्यों पकड़ रहे हो ? मैं भी तुम्हारी ही भांति एक साधारण मानव हूँ।

देखो ? आज से तुम नमक खाना एकदम छोड़ दो।

कैसे खाओगे ? जीभ को संकुचित करो, केवल दूध से ही रोटी भात खा लेना। दूध नहीं मिलेगा तो मैं प्रबन्ध कर दूंगा। नीम और गुरुच की पत्ती तो मिलेगी। दुनियां में जो सात्विक भोजन मिले, खाओं लेकिन नमक मत खाओ !

चुप क्यों हो ? क्या सोच रहे हो ?

पागल ! रोगी के लिये त्यौहार क्या ? "शुभस्य शीघ्रम्" ! जो करना हो बस आज ही से प्रारम्भ कर दो।

अच्छा ! बड़ी खुशी की बात ! एक काम और करोगे ?

सूर्य भगवान का व्रत !

ढोंग ! नहीं भाई ! यह ढोंग नहीं। सूर्य भगवान की रोग नाशिनी शक्ति का लोहा आज का विज्ञान भी माना गया है। इससे साम्ब (कृष्ण के पोते) आदि बड़े २ कुष्ठी अच्छे हो गये।

विधान ! विधान में क्या रक्खा है ? प्रातः गंगा (या किसी पवित्र नदी, कूप या तालाब) में स्नान, सूर्य भगवान को अर्घ्यदान (सम्भव हो तो सूर्योपस्थान), सूर्य नमस्कार और विकाल (दिन में २ बजे से ४ बजे तक) में रोग मोचन के लिये सूर्य भगवान से प्रार्थना कर मधुर भोजन।

और कुछ नहीं; अधिक करना चाहो तो अपने पण्डित जी से पूछ लेना।

एक बात और कल ही से निम्ब तले अपना डेरा डाल दो। उसी की दातौन करो और पत्ती चबाओ एवं भगवान का भजन करो।

निश्चय एक वर्ष में एक दम चंगे हो जाओगे।

बस ? अब छुट्टी दो एक रोगी देखने जाना है। ज़रा हर पखवारे (पन्द्रह दिन पर) दर्शन दिया करना।

प्रणाम ? भगवान तुम्हें निरोग करे।

महायुद्ध के महा प्रसाद !

ले०-ताराशङ्कर मिश्र आयुर्वेदाचार्य,
अर्जुन आयुर्वेद विद्यालय, काशी।

खसरा-खुजली खांसी आदि।

एक भारतीय को भले ही स्वतन्त्रता प्राप्त न हुई हो, परन्तु महायुद्ध भगवान् के प्रसाद अथवा वर-दान स्वरूप शरीर खुजलाने का जो नैसर्गिक आनंद अनायास घर बैठे प्राप्त हो गया उसे वह जन्म भर नहीं भूल सकेगा। सच मानिये या न मानिये. पर बात सच है, रांची से करांची तक काश्मीर से कन्या (अन्तरीय) तक नगर-नगर, डगर-डगर और घर-घर में निन्यानबे प्रतिशत पुरुष (नारी भी) पशु-पंछी और पालव में से प्रत्येक को यह शीघ्र फल-दायक प्रसाद वितरण किया गया है।

सरकार ने महायुद्ध में भारत की रक्षा के दृष्टि-कोण से(?)अन्न वस्त्र और वस्तुओं पर जो नियन्त्रण किया है वह किसी से छिपा नहीं है; और यह भी सभी जानते हैं कि अन्न बाजार में तभी वितरण किया जाता है जब कि वह हमारे महाप्रभुओं की अज्ञानता के कारण सड़-गल कर अभक्ष्य हो जाता है। यहां तक कि उसमें दुर्गन्ध आने लगती है, स्वाद कटु-तिक्त हो जाता है, उसमें ढोके पड़ जाते हैं तो फिर ऐसा अभक्ष्य भक्षण करने से अन्न रस भी दूषित हो जाता है। दूषित अन्न-रस निर्मित रक्त भी महा-दूषित हो जाता है। जिसके परिणाम स्वरूप खसरा-खुजली एवं इन्द्रलुप्त आदि का होना अनिवार्य हो गया है। यही कारण है कि ये रोग भारत-व्यापी हो गये हैं।

अतः इस प्रक्रिया में रञ्च मात्र भी सुधार नहीं हो पाता है और ये रोग स्थायित्व अथ च असाध्यत्व को प्राप्त होते जा रहे हैं। पथ्य ठीक न प्राप्त होने से औषधियों का भी उत्तम और स्थायी प्रभाव प्राप्त नहीं हो रहा है। जो कुछ शुभ परिणाम होता है वह भी पुनः अपथ्य होने से लुप्त हो जाता है। यही कारण है जिससे रोगी वैद्य और डाक्टर सभी परेशान हैं।

पञ्चकर्म आदि कठिन उपचारों से कुछ लाभ अधिक होगा पर सरलता के दृष्टि-कोण से कुछ अनुभूत योग विवरण सहित नीचे दिये जा रहे हैं—

लोक में खुजली दो प्रकार की मानी जाती है—

१-सूखी - जिसमें सारे शरीर या अङ्ग विशेष में खुजली होती है। इसमें से किसी प्रकार का तरल नहीं बहता। इसका प्रधान कारण बाह्य स्वच्छता का अभाव या रक्त और लसीका की दुष्टि है। इसकी चिकित्सा में विधि-पूर्वक तीक्ष्ण विरेचन कर 'बृहन्मञ्जिष्ठादि अर्क' का सेवन एवं बाह्य स्वच्छता के साथ ही टंकण भस्म (चौकिया सोहागा का लावा) ३ भाग और नवसादर (कोई भी) १ भाग सरसों के तैल में फेंट कर सारे शरीर या खुजली वाले अङ्ग में मल कर थोड़ी देर धूप का सेवन अत्युपयोगी सिद्ध हुआ है।

२-दाने वाली—सूखी खुजली ही अच्छी न होने पर छोटे-छोटे या बड़े दाने के रूप में परिणत हो जाती है—खुजली जारी रहती है। दाने प्रारम्भ में लाल पश्चात् पीताभ हो जाते हैं। उनके फूटने पर अनिर्वचनीय आनन्द की अनुभूति होती है और

उसमें से एक प्रकार का तरल (दुष्ट लसीका) निकलता है जो कुछ २ पूय के सदृश होता है।

चिकित्सा:—

दाना फूटते ही उसका तरल निकल जाने पर फेनाइल लगा दीजिये। यदि तरल बराबर बहता ही रहे तो फेनाइल लगाने के पश्चात् बोरिक पाउडर (एलोपैथी विधान से निर्मित एक प्रकार चौकिया सोहागा की भस्म) छिड़क दीजिये। जब तक तरल निकलता रहता है तब तक फेनाइल का लगाना और बोरिक पाउडर का छिड़कना चालू रखिये। यदि बोरिक पाउडर की एक मोटी तह पड़ जाय तो उसे फेनाइल ही से साफ कर पुनः फेनाइल लगा दीजिये और तरल बहता रहे तो पुनः बोरिक एसिड छिड़क दीजिये। तरल का बहना बन्द होने पर बोरिक एसिड की तह भी सूख कर पपड़ी पड़ जाती है, उसे हटा दीजिये, बस खुजली अस्थायी रूपेण अच्छी हो जायगी। तत्पश्चात् भेड़ का घी ३ भाग और नौनिया गन्धक १ भाग मिलाकर लगाइये। यदि दीपिका का तैल की भांति गन्धक मिश्रित घृत को स्वच्छ कपड़े की बत्ती में लपेट कर जलाकर उसमें से चूते हुए घृत को एक स्वच्छ पात्र में रख लें और उसे बराबर लगाते रहें तो अधिक सम्भव है कि खुजली एक दम अच्छी हो जाय। पर व्यय अधिक लगेगा। यह याद रखना चाहिये कि जब तक तरल बहता रहे तब तक उसमें पानी का स्पर्श न हो। पानी के स्थान पर फेनाइल का व्यवहार होना चाहिये। उसकी तीव्र गन्ध से घबड़ाना नहीं चाहिये क्योंकि वह अधिक से अधिक १० मिनट में उड़नशील होती है। इसका दाग भी कपड़े पर नहीं पड़ता। यदि वैद्यत्वेन आप को बोरिक एसिड से घृणा हो तो द्रव शोषक चूर्ण का विवेक पूर्वक व्यवहार कीजिये पर भगवान् अग्निवेश के "तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते" को न भूलिये। वृहन्मञ्जिष्ठादि अर्क बराबर चालू रखिये। बस अब आपकी खुजली अच्छी होगयी।

आजकल रक्त रोगों के सिलसिले में 'इन्द्रलुप्त' (व्याई चूआं-जगह जगह से बालों का गायब हो जाना) भी अधिक लोगों को हो रहा है। उसमें जहां से बाल उड़ गए हैं उस केश-भूमि को एक बार लेकिन अच्छी तरह नीबू की फांक पर जरासा नमक डालकर उसी से रगड़ दीजिये। ऐसा करने से केश-भूमि में रक्त का सञ्चालन भलीभांति होजायगा। यदि त्वचा के बाहर कुछ रक्त-दर्शन हो तो कोई चिन्ता नहीं। फिर हाथी दांत की भस्म १ भाग रसवत ३ भाग बकरी के दूध में घोट कर दिन-रात में ४-५ बार लेप करने से बाल दिखाई पड़ने लगेंगे। कुछ दिन और इसी प्रयोग को कर लीजिये पूर्णतः बाल आजायंगे। सुविधा के लिये इस योग को इकट्ठा बना कर बत्तियां बना लीजिये और उसी को पानी में घिस कर लगायें तो लाभ में कमी न पड़ेगी। हाथी दांत का बुरादा, हाथी दांत का काम करने वालों के पास पर्य्याप्त रहता है उसे अल्प मूल्य अथवा मुफ्त में प्राप्त कर कसोरे में पुट बना कर थोड़े गोहरे(कंडों)से फूंक कर काली भस्म बनालें।

आजकल खांसी भी व्यापक होरही है जो आजकल के अन्न का ही दोष है। रक्त रोग से विशेष सम्बन्ध न होने के कारण फिर कभी विवेचन किया जायगा।

यदि वैद्य है तब तो ठीक अन्यथा किसी वैद्य से राय लेकर अपनी शंकाओं को मिटा कर उपर्युक्त औषधियों का व्यवहार कीजिये। विश्वास कीजिये आपका कल्याण होगा।

सन्निपात ज्वर में भयंकर उपद्रव 'कर्ण-मूल'

लेखक—आयुर्वेदाचार्य वैद्य कविराज श्री० पं० विश्वनाथ जी त्रिपाठी,
विश्वनाथ फार्मेसी सिधावे, (गोरखपुर)।

जब कि सन्निपात ज्वर में वात, पित्त की गर्मी बहुत बढ़ जाती है और वह उचित चिकित्सा न होने के कारण शान्त नहीं होती, तब वही गर्मी मस्तिष्क में पंहुच कर वहां के रक्त को गरम कर देती है फिर वही रक्त वहां से हट कर कान के नीचे की नस में इकट्ठा होकर जम जाता है। जमने के कारण रक्त का बहना बन्द हो जाता है उसे 'कर्ण-मूल' कहते हैं।

यह 'कर्ण मूल' सन्निपात ज्वर में बड़ा ही भयानक उपद्रव माना गया है, इसमें दारुण सूजन के साथ बहुत तेज दर्द होता है उस हालत में रोगी की मृत्यु ही समझनी चाहिये। बहुतेरे ग्रन्थों में लिखा है कि यह संक्रामक उपद्रव रोगी को मारने के लिये ही उत्पन्न होता है। शुश्रुतादि ग्रन्थों में ज्वर के आदि में असाध्य, मध्य में कष्ट-साध्य, और अन्त में साध्य माना गया है किन्तु चरक में लिखा है कि ज्वर के अन्त में होने वाला कर्ण मूल रोगी को मार डालता है। अतः अनेकों ग्रन्थावलोकन से यह उपद्रव भयानक अवश्य है; लेकिन चतुर और अनुभवी वैद्यों के आगे कदापि असाध्य नहीं है। सर्व-प्रथम तो यह कहना है कि सिद्ध हस्त चिकित्सकों के निरीक्षण में यह उपद्रव होने ही नहीं पाता; अगर हो भी जावे तो यत्न करने से शीघ्र अच्छा हो जाता है।

सूजन के आरम्भ काल में ही खून निकलवाने की व्यवस्था करनी चाहिये, तुम्बी या जौंक द्वारा खून निकलवाना सर्वोत्तम है, जौंक लगाने के पहिले थोड़ा सा भैंस का दूध चुपड़ देना चाहिये, इससे बड़ी आसानी से जौंक पकड़ लेती और खून चूस लेने के बाद फिसलती हैं। इस कार्य में बड़ी मोटी-पुरानी जौंक इस्तेमाल करनी चाहिये। इस प्रकार खून निकालने के पश्चात् नीम की पत्ती का लेप कर देना चाहिये, इससे पकने का भय नहीं रहता।

अगर किसी कारण खून न निकलवाया जावे तो वात-पित्त नाशक लेप कराने चाहिये; लेप के बाद सेंक अति आवश्यक है। नीचे कुछ गुणकारी और परीक्षित योगों के नुसखे लिख रहा हूँ जो इस रोग में सर्वोत्तम साबित हुए हैं।

१७६—पारद का मरहम आधे तोला, जैतून का तैल २॥ तोले, मोंम २॥ तोला, कपूर १ तोला।

—पहले मोंम को गरम करके अन्य औषधियां बारी २ से मिला कर मरहम तैयार करले।

प्रयोग-विधि-फलालैनके कपड़े को सूजन मुताबिक काट कर उस पर मरहम लपेटकर चपका देना चाहिये, ऊपर से रुई रख पट्टी बांध देने से इधर-उधर खिसकने का भय नहीं रहता। इस प्रकार २४

घंटे में २ बार लेप करने से दो-तीन रोज़ में कर्ण-मूल शर्तिया दब जाता है। परीक्षित है।

१७७—कुलथी, कांयफल, सोंठ, काली जीरी सब को समान लेकर सेहुड़ के पत्ते के रस में महीन पीसकर लेप करें और सेंक हमेशा जारी रक्खे। लेप सूख जाने पर बदलता रहे; इससे बहुत जल्द फायदा होता है। याद रहे सेहुड़ के स्वरस में अन्य जल न होना चाहिये।

विधि—सेहुड़ के पत्ते कड़ाही में रख कर आग पर गरम करें पश्चात् रस निचोड़ लें। यही रस उत्तम होता है।

१७८—फिलोजिस्टीन पलास्टर गरम करके फलालैन कपड़े पर रख कर पट्टी बांध देनी चाहिये, इस प्रकार दिन में दो चार पट्टी देते रहने से कर्ण मूल दब जाता है।

देशी औषधियां श्रेष्ठ हैं या डाक्टरी ?

(योग्य डाक्टरों की सम्मतियां)

देशी औषधियों के विषय में Dr. J. S. Bask अपने पत्र "Health of happiness" में निम्नलिखित विचार प्रकट करते हैं—

"मैं आशा करता हूँ कि तमाम डाक्टर और शिक्षित लोग मेरे साथ सहमत होंगे, यदि मैं कहूँ कि भारतवर्ष की ताजी, देशी औषधियां विदेशी दवाओं से अधिक लाभप्रद हैं। मुझे यह देखकर बड़ा शोक होता है कि प्रति वर्ष करोड़ों रुपयों की विदेशी औषधियां भारतवर्ष में मंगाई जाती हैं। और यह भी शोचनीय बात है कि भारत के शिक्षित जन स्वदेश में निर्मित हुई सर्व श्रेष्ठ औषधियों का अनादर कर विदेशी निकम्मी औषधियों को अधिक महत्व देते हैं। जिसका कारण प्रायः हठधर्मी और अल्प शिक्षा है।"

आज देश के अमीर तबके के लोगों को अपने देश की दशा पर भी ध्यान देने की आवश्यकता है; उन्हें देश की सम्पत्ति को इस प्रकार से विदेशी औषधियों में नष्ट नहीं करना चाहिये जब कि अच्छी से अच्छी औषधियां अपने ही देश में प्राप्त हो सकती हैं। बड़े शर्म की बात है कि विदेशी भी हमारे देश की औषधियों की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे हैं पढ़िये दूसरे डाक्टर क्या लिखते हैं।

असिस्टैन्ट कर्नल हैरल्ड ब्राउन I. M. S. कहते हैं—

'वैद्यों को अनेकों उत्तम लाभप्रद औषधियों का ज्ञान है, जो अत्यन्त लाभ की वस्तु हैं।"

सर चार्लस पार्डलैकम लिखते हैं—

"यदि मैं बीमार हो जाऊं, तो मैं अपने लिये अयोग्य डाक्टर की अपेक्षा हकीम या वैद्य की चिकित्सा कराना अधिक पसन्द करूंगा।"

डा० जेवारी क्लार्क एक पत्र में लिखते हैं—

"कि मुझे वर्तमान काल की डाक्टरी की अपेक्षा प्राचीन भारतीय चिकित्सा पर अधिक विश्वास है।"

चिकित्सा में मनः शक्ति का समन्वय

लेखक—श्री० राजेन्द्रकुमार जी शास्त्री-साहित्यरत्न, विजयगढ़ ।

मन की शक्ति भी महान है। मनो-वैज्ञानिकों ने इसका विश्लेषण कर यह सिद्ध कर दिया है कि भयंकर से भयंकर मानसिक और दैहिक उत्पात् एवं परम शान्ति का मूल कारण मन ही है। इससे पूर्व प्राचीन काल के मनीषियों ने भी इस शक्ति का प्रत्यक्ष अनुभव कर लिया था। तभी तो उन्होंने लिखा था "मन एव मनुष्याणां कारणं बंधमोक्षयोः" अर्थात मन ही बन्धन और मोक्ष का कारण है। आजकल योरुप में तो मानसिक शक्ति से ही ऐसे अद्भुत् कार्य किये जारहे हैं जो मनुष्य को विस्मय विमुग्ध कर देते हैं। आधुनिक मैस्मरेजम, हिप्नोटिज़्म आदि सब मानसिक क्रियाओं के ही चमत्कार हैं। इतना ही नहीं अपितु मानसिक शक्ति के द्वारा ही नाना प्रकार के रोगों की चिकित्सा भी की जाती है। अमेरिका में तो ऐसी अनेकों संस्थायें हैं जहां बिना किसी प्रकार की औषधि के रोगों का इलाज किया जाता है। इस प्रकार का साहित्य भी बहुत लिखा गया है जैसे:—Healing without medicines. 'How to remove the disease by will power. इत्यादि और भी ऐसी अनेकों पुस्तकें हैं। म० ब्राउन की 'Mastery of the Fate' इसके दो भाग हैं जिनमें मानसिक शक्ति द्वारा रोग-निवारण की विधियां बतलाई गई हैं।

अभी हिन्दी में तो मनोविज्ञान सम्बन्धी पुस्तकें बहुत कम लिखी गई हैं, किन्तु उद्योग किया जा रहा है। आशा है भविष्य में इस अंश की पूर्ति होजायगी। किन्तु अंग्रेजी और संस्कृत में तो इस विषय पर बहुत गम्भीर विवेचन किया गया है। अथर्ववेद में तो एक सूक्त का सूक्त ही मानसिक-शक्तियों के विषय में लिखा गया है। उसमें यह भी वर्णन् किया गया है कि किस प्रकार से उनका उपयोग करना चाहिये। आवश्यकता ज़रा गम्भीर अध्ययन की है।

यदि वैद्य समुदाय औषधियों के साथ २ मानसिक शक्ति का प्रयोग भी करने लग जांय तो मेरे विचार में "पीयूष-पाणि" शास्त्रोक्त-पदवी अवश्य ही प्राप्त होजाय। प्राचीन और अर्वाचीन चिकित्सकों में प्रायः यही एक अन्तर है। प्राचीन वैद्य मानसिक शक्ति सम्पन्न हैं और अर्वाचीन वैद्यों में यह अभाव है। रोगी का आधा रोग वैद्य के पास जाते २ कम होजाना चाहिये और वैद्य के वार्तालाप से रोगी को यह अनुभव होना चाहिये, मानों वह स्वास्थ्य प्राप्त कर चुका है। यह तभी हो सकता है जब वैद्य मानस बल युक्त हो। अन्यथा, उत्तम से उत्तम औषधि भी हीन वीर्य हो जाती हैं।

दूसरे के कथन का मन पर बहुत प्रभाव पड़ता है, कठोर शब्दों के श्रवण से तत्क्षण मुखाकृति बदल जाती है, मुंह लाल हो जाता है, कभी २ शोक-समाचार श्रवण से सहसा मूर्च्छा आजाती है; मुंह का रंग फीका, और पीला पड़ जाता है। साहस

पूर्ण बातों के सुनने से रक्त में गर्मी आजाती है, और नसों में रक्त-दौड़ने लगता है, छाती फूल जाती है, तद्विपरीत कभी २ मृत्यु तक भी हो जाती है। डाक्टर केशवदेव M. D. ने "अमर जीवन" नामक पुस्तक में एक बड़ी विचित्र घटना का उल्लेख किया है।

"एक बार अमेरिका के जंगल में जब कि मौसम बड़ा आकर्षक था, ठंडी हवा चल रही थी, भीनी सुगंधि छिटक रही थी। मैदान में हरी २ और लम्बी घास थी; चलते २ दोनों में से एक को जंगली सांप ने काट लिया; किन्तु उसके मित्र ने यह रहस्य प्रकट न किया। सायंकाल को जब वे दोनों अपने स्थान पर पहुंचे तो, उसका मित्र जो सर्प ने काट लिया था बोला "आज कुछ थकान सी प्रतीत होती है।" झट उसके मित्र ने कहा ऐसा ही मुझे अनुभव हो रहा है। प्रातःकाल होते ही वह वहां से चला गया, और यदा-कदा पत्र-व्यवहार करता रहा। किन्तु फिर वह अपने काम में लग गया, और बहुत दिन तक अपने मित्र से न मिला।

बहुत दिन के बाद वे दोनों फिर मिले, हंसते हुए उसके मित्र ने कहा "तुम अभी जीते हो?" मित्र ने पूछा "मुझे क्या हुआ है?"

"तुम सांप ने काट लिये थे।"

उसने उस गत घटना को अक्षरशः सुना डाला, परिणाम स्वरूप उसे ज़हर चढ़ने लगा और थोड़ी ही देर में उसका प्राणान्त हो गया।"

उपरोक्त घटना से यह सिद्ध होजाता है, कि वास्तव में मानसिक शक्ति, यदि उसका दुरुपयोग किया जाय तो कभी सांघातिक सिद्ध हो जाती है। युद्धों में शौर्यवर्धक बाजों और गायनों का अभिप्राय भी मनोबल को बढ़ाना ही है।

मनः शक्ति का प्रयोग न केवल मनुष्य अपितु पशु और पक्षियों पर भी किया जा सकता है। उदाहरण के लिये कुत्ते को ले लीजिये। आप कुत्ते को पुचकारिये वह आपके प्रेम को समझ कर पूंछ हिलायेगा और चाटने लगेगा। यदि फटकार दीजिये तो वह पास भी नहीं आयेगा। इसी प्रकार गाय, या बैल की पीठ पर हाथ फेरने से वह कान खड़े कर लेता है। हाथों द्वारा उसके ऊपर मानसिक प्रभाव पड़ता है। मानसिक शक्ति का प्रयोग हिंसक पशुओं पर भी किया जा सकता है; किन्तु इस प्रयोग के लिये अति तीव्र मानसिक शक्ति की आवश्यकता है।

लेफ्टीनेन्ट मूलर ने अपनी पुस्तक 'My System' में अन्य बातों के अतिरिक्त "इच्छा शक्ति 'will-power" को बहुत महत्व दिया है, उनका कथन है कि बिना इच्छा शक्ति के, कोई भी अच्छे से अच्छा व्यायाम, उत्तम से उत्तम औषधि, लाभ नहीं पहुंचा सकती।

Mr. Edvine Ash M.B B.S "Hypnotsim and Suggestion" नामक पुस्तक में लिखते हैं।

It is will power nothing else by which every one can be able to serve his purpose as an Hypnotist, but this stystm requires much practice to obtain the mastery over the subject.

"यह केवल मानसिक शक्ति ही है, जिसके द्वारा कोई भी "हिप्नोटिस्ट" 'सम्मोहक' बन सकता है, किन्तु इसके लिये बहुत अभ्यास की आवश्कता है।"

डाक्टर मैकफेडन अपनी पुस्तक "Supreme vitality" में मनोबल के विषय में लिखते हैं :—

"I have come to the point, and psycholcgically I admit this that the mental-power in a man is a great factor in the world. I am not asserting blindly;but I have exercised this unique power on my patients and found that this wondurfull and latent power should be applied even on the irrecurable patients.

अर्थात् मैं इस परिणाम पर पहुंचा हूं, और मैं इस बात को मनोवैज्ञानिक रीति से स्वीकार करता हूं कि संसार में मानसिक शक्ति बड़ी कार्यकर है, मैं बिना सोचे समझे हां में हां नहीं मिला रहा अपितु मैं इस विचित्र शक्ति का प्रयोग अपने रोगियों पर कर चुका हूँ, और मुझे विदित हुआ है कि इस अद्भुत शक्ति का उपयोग असाध्य रोगियों पर भी करना चाहिये ।"

डा० आश, जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है "Hypnotism & suggestion नामक पुस्तक में एक स्थान पर लिखते हैं:-"कि प्रारंभ में जब मैंने मनोविज्ञान का अध्ययन शुरू किया था, मुझे सन्देह हुआ कि शायद मनो-विज्ञान सम्बन्धी बातें कोरी कल्पनायें ही हैं। किन्तु मैंने अपने इस विचार को अपने ही तक सीमित रखा और एक दिन मैंने अपने बच्चे पर ही इसका परीक्षण किया, बच्चा उस समय स्कूल में पढ़ता था, एक दिन शर्दियों में वह बीमार हो गया। उसके पैर में दर्द हो रहा था और उस दर्द से वह बड़ा विकल होकर रोने लगा था। मैं उसके कमरे में गया और मैंने उसे अच्छा हो जाने का आश्वासन दिया। मैंने एक शीशी जिसमें तैल रखा हुआ था, उसमें से थोड़ा सा लेकर अपने हाथों पर लिया और उसके पीड़ा स्थान पर मला; और प्रभावित शब्दों में कहा—

"अब तुम्हारे पांव में दर्द नहीं है"

"तुम बिलकुल ठीक हो गये हो।"

दस-पन्द्रह मिनट के पश्चात् देखा तो वास्तव में दर्द बिलकुल गायब था।

मानसिक शक्ति बिजली के स्विच की तरह से है; जैसे बिजली के स्विच को दबाने से एक दम प्रकाश हो उठता है, इसी प्रकार से 'आत्म-प्रेरणा' द्वारा मानसिक व्यापार भी होने लगता है। एक बार डेविस महोदय ने (जो कि आध्यात्म-विद्या के महान् पण्डित माने जाते हैं) वैज्ञानिकों की एक सभा में मनः शक्ति का चमत्कार दिखाया था। उन्होंने एक बालक को चारपाई पर लिटा दिया और वैज्ञानिकों से कहा कि है 'एक्सरे' लगाकर देखें कि इस समय इस बच्चे के शरीर में मानसिक क्रिया द्वारा रक्त का प्रवाह किस ओर हो रहा है। लड़के से उन्होंने कहा 'बच्चे ४३६ में ५ का गुणा दो और बतलाओ कि गुणनफल कितना आता है? बच्चे ने गुणा करने की क्रिया प्रारंभ की और उसका रक्त-प्रवाह सर की ओर गति करने लगा, जब तक बालक गणित की क्रिया में रत रहा रक्त की गति निरन्तर मस्तिष्क की ओर रही।

फिर उन्होंने कहा, "बच्चे, तुम्हारे पैर पर कीड़ा सा चल रहा है, देखो तुम्हें कहीं काट न ले? बच्चा पूर्ववत् लेटा रहा, किन्तु अब रक्त-प्रवाह पैरों की ओर प्रबल वेग से गति शील होने लगा था।"

उन्होंने ऐसी अनेकों क्रियायें दिखलाई थीं जिन से यह स्पष्ट हो गया था कि वास्तव में शारीरिक क्रियायें मानसिक प्रेरणाओं द्वारा ही होती हैं। तभी से लोगों का विश्वास "Psychology" मनोविज्ञान और आध्यात्मिकता के विषय में पक्का हुआ।

आत्म-सन्देश

जो व्यक्ति आधि-व्याधियों से निराश हो चुके हैं, जो जीवन से हाथ धो बैठे हैं, जो संसार को कठोर कारागार मान बैठे हैं; जिन्हें जीवन का एक २ क्षण कल्प सा अनुभव होने लगा है उनके लिये आत्म-सन्देश अमृतोपम है। यह वह दिव्य रसायन है जो मुर्दों में भी नव-जीवन एवं नव-आशाओं की तरंगें तरंगित कर देता है।

मनुष्य संसार में आशा को लेकर ही जीवन व्यतीत कर सकता है; और बलवती आशा उसकी अपनी ही अन्तरात्मा की प्रेरणा से उत्पन्न होती है वह संदेश निम्न प्रकार से है—

"मैं स्वस्थ हो रहा हूँ, मैं रोग शोकों से दूर हूँ। मैं अमर शक्ति हूँ, मुझ में दिव्य शक्ति का सञ्चार हो रहा है। समस्त जड़ और चेतन जगत निरोग है। बीमारी कुछ नहीं; केवल मानसिक दुर्बलता है, वह अब मैंने हटा दी है।"

इस प्रकार का आत्म सन्देश दिन में कम से कम ५ बार करने से प्रतीत होगा कि आपकी अवस्था में कितना महदन्तर हो जाता है। यह वह नुस्खा है जिसमें कोई लागत नहीं, किन्तु आप चाहें जब अनुभव कर सकते हैं।

इसी प्रकार वैद्य महानुभाव भी अपनी औषधियों के साथ २ इस मनो-वैज्ञानिक प्रणाली का अनुष्ठान कर सकते हैं। किन्तु यह अच्छा होगा कि वे प्रथम स्वयं ही इस तथ्य का अनुभव करें तत्पश्चात् अन्यों को प्रेरणा करें।

रोगियों के लिये दिव्य-संदेश

रोगी को कोई भी औषधि देने से पूर्व और पश्चात् सदैव उस पर अधोलिखित विचारों का प्रभाव डालिये:—

१-तुम्हारा रोग साधारण है।
२-तुम स्वास्थ्य लाभ कर रहे हो।
३-तुम्हारे चेहरे पर आज रौनक है।
४-आज तुम्हारी दशा पहले से बहुत अच्छी है।
५ यह औषधि अमृतमयी है।
६-तुम बीमार नहीं हो।

इत्यादि सन्देश निस्सन्देह रोगी पर चमत्कारिक प्रभाव करेंगे। लाभ उतना ही होगा, जितना चिकित्सक का मनोबल होगा।

वैद्य को चाहिये कि वह सर्व प्रकारेण रोगी के विभीषिका मय विचारों को निकालदें।

JWARARI
જ્વરારિ- તાવ, ટાઢીયો, અને બરોળ
લીવર વિગેરેની ખાસ દવા
The Best Medicine For Malarial Fevers
and spleenic enlargement
Manufacturers: Dhanwantari Karyalaya, Bijaigarh. (Aligarh)

निर्गुण्डी और कुष्ठ

कुष्ठ जिससे शरीर में घाव होजाते हैं तथा उंगलियां झड़ जाती हैं यू० पी० के एक साधु वर्ष में १ बार इसकी औषधि बांटते हैं। यह हरे रंग का पानी होता है, हिन्दुस्तान के कोढ़ी चिकित्सा कराने यहां पहुंचते हैं। महात्मा हरे पानी को बांटते हैं, इस पानी को रोगी पीते हैं तथा उनमें से कुछ आरोग्य भी हो जाते हैं। इस दवा का मुझे अधिक समय से पता था आज इसे मैं प्रथम बार अंकित कर रहा हूँ।

ज़िला कांगड़ा तथा रियासत जम्मू में एक पेड़ अधिकता से पाया जाता है जिसे वह अपनी बोली में 'तना'' कहते हैं। इसके पत्तों को मल कर सूंघा जाय तो बहुत तेज़ गंध आती है। इस पर नीले रंग के फूल लगते हैं जो बाद में नन्हे काले बीज बन जाते हैं। इन इलाक़ों के लोग "तना" से भली-भांति परिचित हैं। यू० पी० तथा पंजाब में हर स्थान पर पाया जाता है। बाग़ों के किनारों पर बाढ़ के लिये इन झाड़ीदार पेड़ों को लगाते हैं जो संतरे के पेड़ के समान बड़े होते है। वैद्य लोग इसको निर्गुण्डी कहते हैं तथा इस पेड़ का तीसरा नाम सम्भालू है। बाग़ों में दृष्टिगोचर होता है। प्रत्येक माली तथा वैद्य इससे परिचित हैं। बनों में प्राकृतिक बहुत पाया जाता है,किंतु पर्वत की घाटी जिसको पंजाबी कुण्डी का इलाक़ा बोलते हैं इसके पेड़ असंख्य पाये जाते हैं। छोटी पहाड़ियों पर पांचसौ फ़ीट से लेकर तीन हज़ार फ़ीट की ऊंचाई तक अधिकांश पैदा होते हैं।

इसके पेड़ के पत्तों को पानी के साथ भांग के अनुसार रगड़ कर कुष्ठ रोगी को पिलाया जाता है, निर्गुण्डी के १ तोला हरे पत्तों को एक पाव पानी के साथ पीस कर कपड़े में छान कर ख़ाली पेट रोगी को लगातार कुछ दिन तक पिलाते रहने से कुष्ठी के रिसते हुये ज़ख्म सूख जाते हैं। यदि इन हरे पत्तों को बिना पानी पीस कर ज़ख्मों पर नित्य लगाया जाये तो ज़ख्म और भी शीघ्र भर जाते हैं। भारत वर्ष में ये पेड़ इस अधिकता से पाये जाते हैं कि इसके होने से एक भी कोढ़ी न रहना चाहिये। मैंने इस पेड़ के बीजों का तैल निकाल कर कोढ़ियों को कुछ बूंदों की मात्रा में पिलाया तथा जख्मों पर लगाकर देखा अति लाभदायक प्रतीत हुआ। यद्यपि भारतीय जिसको निकम्मा तथा बेकार समझ कर चूल्हे आदि में जलाते हैं। यह कुष्ठ की अनुभूत औषधि "चाल मोगरा आयल" से भी उत्तम है। यद्यपि चाल मोगरा का पेड़ भी भारतीय ही है जिसे डाक्टरों ने अपनाया है। किन्तु सम्भालू का पेड़ कोढ़ को अति उपयोगी है। गले बढ़ने पर इस के पत्तों को कूट कर तथा रगड़ कर टिकिया बना कर गले पर बांधने से गले की बढ़ी हुई गिल्टियां शान्त हो जाती हैं। इन पत्तों में फ़रारी तैल के कारण तेज गंध आती है। यही तैल

गिल्टी बैठाने के लिये उत्तम है। वैद्य हकीम तथा डाक्टरों को चाहिये कि इस पेड़ के पत्तों तथा बीजों से लाभ उठावें। भारतवर्ष के गर्म स्थानों में निर्गुण्डी के पेड़ पाये जाते हैं। इस पेड़ को अंग्रेज़ी में "विजिक्स टेक्स ट्राई फ़ोलिया" कहते हैं, बंगाल में इस पेड़ को निशन्डा, दक्षिण में शान वाली, बम्बई में कड़ी, मरहठी में नलगोर कहते हैं। निर्गुंडी की जड़ बलगम को मुख के द्वारा निकालती है, तथा इसके अतिरिक्त पुष्ट, ज्वर-नाशक है। इसके पत्ते कीटाणु नाशक होते हैं। प्रतिश्याय ज्वर में निर्गुन्डी के पत्तों का काढ़ा पीपल के साथ पिलाने से लाभ होता है। सर दर्द की दशा में निर्गुण्डी के पत्ते भून कर तकिया में भर कर सर के नीचे रखने से लाभ होता है। इसके पत्तों का ताज़ी रस नासूरों और जख्मों में टपकाने से मवाद बहना बन्द हो जाता है। कीटाणु मर जाते है। इसके पत्ते शोथ को शान्त करते हैं अतः गठिया की सूजन पर लाभकारी हैं। कंठमाला के जख्म इससे ठीक हो जाते हैं। मैसूर के प्रदेश में इसके पत्तों को पानी में औटा कर भाप लेने से ज्वर, नजला तथा गठिया शीघ्र आराम होते हैं। प्रसूति के दिनों में इसके पानी से नहाने से गर्भाशय के रोग ठीक हो जाते हैं।

सर दर्द की दशा में इसके पत्तों को चिलम में रखकर तम्बाकू की रीति से पीने से लाभ होता है। चूर्ण बनाकर खाने से पेट के कीड़े मर जाते हैं। बम्बई में अंग्रेज लोग इसको टिकोर वाला पौदा कहते हैं, और वहां पर किसी अंग को सर्दी आदि लग जाने से सम्भालू के पत्तों को पानी में औटा कर भाप दी जाती है। गठिया में स्वरस भांगरा पत्र तथा स्वरस निर्गुण्डी, स्वरस तुलसी पत्र, सम भाग इसमें तिहाई भाग अजवाइन देशी रगड़ छानकर पी जाती है। पश्चात् शुद्ध घृत ६ माशा काली मिर्च १ माशा डालकर के गर्म कर गठिया के रोगी को आधा तोला निर्गुण्डी के पत्तों में दो तोला गौमूत्र मिलाकर रोगी को निराहार मुंह एक सप्ताह तक पिलाने से लाभ होता है। इसके पत्तों के प्रयोग से यह बात ज्ञात हुई है कि इसमें एक प्रकार का तैल है और एक लैसदार गोंद भी है। तैल में निगुण्डी की तीव्र गंध आती है और वह बेरंग होता है। यह तैल थोड़ी मात्रा में गठिया के रोगी को लाभकारी सिद्ध हुआ है। यह मामूली सी झाड़ी जिन्हें प्रत्येक मनुष्य मुफ्त प्राप्त कर सकता है इस प्रकार लाभ दायक है। मेरे भारतीय भाइयों को इससे पूरा २ लाभ उठाना चाहिये।

[मस्ताना जोगी से]

* * *

धन्वन्तरि के लिये उत्तमोत्तम लेख

उचित पुरुष्कार देकर प्राप्त किये जा रहे हैं। हर अङ्क में चित्र देने की व्यवस्था की गई है, हम हर प्रकार से धन्वन्तरि को उपयोगी बनाने का प्रयत्न कर रहे हैं, आपभी अपने मित्रों को शीघ्र ही इसके ग्राहक बनाइयेगा।

कालमेघ

ले.—वैद्यराज बाबू दलजीतसिंह जी आयुर्वेदीय-विश्वकोषकार।

नाम—

(हिं०) किरयात, महातीता, (कालमेघ)। (बं०) कालोमेघ, महातीत। (गु०) लीलुं करियातु। (म०) ओले किराईत, पाले किराइत। (क०) नेलबेवु, नेलबेविना गिडा। (द०) कलफनाथ (कलपनाथ)। (ता०) निलवेंबु, शिरट-[illegible]। (ते०) नेलबेमु। (मला०) किरियातु, निलवेटप। (कों०) किरातु। (सिंह०) बिंको हब्ब या हीनबिंको हब्ब। (अं०) दि (The Creat or Kreat)। (लै०) एन्ड्रोग्रेफिस पेनिक्युलेटा (Andrographis Paniculata, Wall)।

वक्तव्य—

कालमेघ बङ्ग देश में सर्वत्र सुपरिचित एवं गार्हस्थ्य औषध रूप से भूरि व्यवहृत होता है। इसका संस्कृत (आयुर्वेदोक्त) नाम अभी अनिर्णीत है। कोई २ इसे 'यवतिक्ता' लिखते हैं। आयुर्वेद में 'यवतिक्ता' को शङ्खिनी का पर्याय लिखा है। शंखिनी का जो परिचय आयुर्वेदीय ग्रन्थों में दिया है—

"शङ्खिनी शंखबीजाख्यात सुवृत्तफलिका च सा।
शिवलिंगीसमा वल्ली पाके रक्तफला भवेत् ॥
(शिवदत्तः)

इससे यह सिद्ध होता है कि शंखिनी कालमेघ नहीं है। इसके अतिरिक्त डल्हण ने यवतिक्ता का जो परिचय दिया है--

यवतिक्ता यवक्षेत्रेषु जायते तिक्तसलाष्टपत्रा यवतिक्तेति प्रसिद्धा ॥
(सु० ४५-१२५)।

इससे भी यही सिद्ध होता है। वैद्यकोक्त शंखिनी विरेचन है; परन्तु कालमेघ पाचन, दीपन एवं ईषत् रेचक (वा मृदु सारक) है। कालमेघ ही आयुर्वेदोक्त यवतिक्ता वा शंखिनी है या कोई अन्य द्रव्य? इस सम्बन्ध में कभी फिर मैं अपने विचार पाठकों के सन्मुख रखूंगा।

कई लोग (हिन्दू और मुसलमान उभय भेषज ग्रन्थ रचयिता) कालमेघ और *चिरायता नामक औषधियों को एक ही समझते हैं। परन्तु ये दोनों औषधियां बिलकुल अलग २ हैं। यह औषधि चिरायते के बदले में इसको देने से उतना लाभ नहीं होता। यह विषम-ज्वर के लिये अपूर्व है।

अरबी में चिरायता को कसबुज्जरीरा और कसबबुवा; फारसी में नैनेहावंदी कहते हैं। अस्तु, कालमेघ के लिये इन शब्दों का प्रयोग अशुद्ध है। उनके स्थान में कालमेघ के लिये अरबी शब्द 'कसबुज्जरीरा हिन्दी और उर्दू शब्द चिरायता हिन्दी का प्रयोग उचित जान पड़ता है। अस्तु, मख्जनुल् अदविया डाक्टरी के रचयिता ने इसके लिये उक्त संज्ञा का व्यवहार किया है।

---

* किरयात शब्द अनेक तिक्त द्रव्यों के लिये सामान्यतः अभेद रूप से प्रयुक्त होता है।

मुहयुद्दीन शरीफ बतलाते हैं कि र्‌हीडी (Rheede) द्वारा इसके लिये दिया हुआ नाम मलेयालिम कारा कनिरम् (cara caniram) का अर्थ काला कुचला (black Strychnos) है; अतएव उनके विचार से यह अशुद्ध है।

फार्स्कह्ल (Fors*k*ahl) के मत से यह अरब में सामान्य रूप से होता है और वहां इसे विजूर कहते हैं। (डिमक ३ य खं० पृ० ४७)। परन्तु विजूर शब्द किसी यूनानी द्रव्य गुण के ग्रन्थ या द्रव्य गुण विषयक कोषग्रंथ में मेरे देखने में नहीं आया।

इस पौधे के सम्बन्ध में ऐन्सली लिखते हैं कि भारतीय प्रायद्वीप के दक्षिणी भागों में यह फ्रांस के द्वीपों से लाकर लगाया गया।

फ्लकीगर और हनबेरी अपने फार्माकोग्राफिया ग्रन्थ में बतलाते हैं कि यह प्रमादवश उस प्रसिद्ध तिक्त मद्यासव का एक उपादान मान लिया गया है जिसे भारतीय पुर्त्तगालवासी ड्रागा अमारा (Droga Amara) कहते हैं। फार्माकोपिया आफ इण्डिया में यह सम्मत योगों में समाविष्ट कर लिया गया है और उसमें इसके मिश्र फांट और मिश्र मद्यासव (टिंकचर) कल्पना के नियम दिये गये हैं।

वर्णन—

यह चिरायता से सर्वथा भिन्न एक प्रकार की क्षुप जाति की एक वर्षीय क्षुद्र वनस्पति है। इसका पौधा १ से ३ फुट तक ऊंचा होता है।

तना (प्रकांड) और शाखोपशाखा सभी चौकोर नुकीले एवं सपक्ष होते हैं।

पत्र—आमने-सामने (सम्मुखवर्ती), क्षुद्र पत्रवृंत युक्त, भालाकार, सम्पूर्ण (पत्रप्रांत), ऊपरी पृ गहरा, हरा रंग और चमकीला तथा अधो पृष्ठ अधि पांडुरंग एवं दानेदार होता है। ये विभिन्न आकृ प्रकार के होते हैं; परंतु उनमें से अपेक्षाकृत बृहत्त प्रायः तीन इंच लंबे और एक इंच चौड़े, पतले औ भंगुर होते हैं।

पुष्पबाह्यावरण—(पुटचक्र Calyx) छोटा सा रोंगटेदार और पांच भागों में खंडित होता है।

पुष्पान्तरावरण-(दलचक्र-Coroka), द्वयोष्ठीय, ओष्ठ लम्बे, संकीर्ण एवं समान चौड़ाई के (Linear) परावर्तित, ऊर्ध्वौष्ठ त्रिदंतित, अधः ओष्ठ द्विदंतित होता है।

पुष्प—दूरस्थ (Remoted), एकान्तर, दीर्घ पुष्पवृंत पर स्थित, कोमल रोमावृत (Downy), गुलाबी या बैंगनी धारियों से युक्त सफेद होते हैं।

शिंबी—(फलकोष) एक इंच लंबी, सरल, कुछ कुछ बेलनाकार और प्रत्येक दो कोषों से युक्त होती है। इस जाति की अन्य शिंबियों से इसमें प्रधान भेद यह है कि इसकी शिंबी दबी हुई, चपटी और एक सिरे से दूसरे सिरे तक एक ही चौड़ाई की होती है। शिंबी के प्रत्येक कोष में ३ से ४ तक बीज होते हैं।

जड़ - तर्क्वाकार, साधारण, काष्ठमय (कठिन) और असंख्य Radicles से युक्त होती है।

कालमेघ के पौधे वर्षांत में अपने आप छायादार स्थानों में उगते हैं अथवा इसे लगाते हैं। इसका ताजा पौधा औषध के काम में आता है, इसके शुष्क पौधे में किसी प्रकार की गंध नहीं होती स्वाद अत्यन्त तिक्त होता है। यह व्यापार की वस्तु नहीं

है। बूटी संग्रह कर्त्ताओं और बागवानों से इसकी उपलब्धि होती है।

भेद—कहते हैं कि इसका एक अन्य भेद भी जो गुण धर्म में इसके समान है। रहीडी ने इसका नाम पीतुंब लिखा है। इनके कथनानुसार इसका स्वरस ज्वर में दिया जाता है। हेप्लेन्थास् वर्टिसिलेरिस और टेन्टाक्यूलेटस Heptamthus verticillaris, Nees, H. tentacularis, Nees. को पश्चिम भारतवर्ष में 'कालाकिराईत' हिंदी में कस्तुला, मराठी में झाकर और गुजराती में 'कालु करियांतु' कहते हैं। इनका उपयोग भी औषधि में होता है।

उत्पत्ति स्थान—

सम्पूर्ण भारतवर्ष के मैदानों में लखनऊ से आसाम तक और लंका में यह जंगली होता है। अथवा लगाया जाता है। यह विशेषकर बंगाल के अन्दर स्वयंभू रूप से एवं बहुतायत से होता है और आधुनिक युग में इसने वहां विषमज्वर-नाशक औषधि के रूप में बहुत ख्याति करली है। दक्षिण भारत में यह बोया जाता है।

उपयुक्त अंग—

समग्र क्षुप, शुष्क डंठल और जड़।

रासायनिक संगठन—

डीमक और उनके साथियों ने कालमेघ क्षुप के जलीय फांट को अतिशय तिक्त एवं अम्ल पाया। उनके विचार से यह तिक्तता एक उदासीन, आधार-रहित (Nonbasic) तत्व के कारण थी। वे इसके उपक्षारों में (Alkaloids) को पृथक् नहीं निकाल सके; परन्तु उन्होंने इसकी राख में पोटेसियम साल्टस् बड़ी मात्रा में पाया। गार्टर ने सन् १९११ में बतलाया कि इसकी पत्तियों में पाया जाने वाला तिक्त पदार्थ एण्ड्रोग्रे फोलिड (Andrographolid) नामक एक लैक्टोन (Lactone) था। इसके बाद सन् १९१४ में भादुरी ने यह स्पष्ट किया कि इसकी पत्तियों में दो प्रकार के तिक्त तत्व और कुछ उड़नशील तैल रहते हैं। इनमें से प्रथम तत्व अत्यन्त कटु पीत फटिक के रूप में पाया गया। परंतु इसमें उपक्षार (एल कलाइड्स) और ग्ल्यूकोसाइड्स के कोई लक्षण नहीं पाये गये। दूसरा कटु तत्व अमूर्त रूप में पाया गया और 'कालमेघीन (Kalmegin) नाम से प्रसिद्ध हुआ। (Indigenous drugs of India—R. N. chopra, M. A:, M. D·)

मात्रा तथा कल्प—

१—अंगस्वरस आधे से १ तोला सुगंध द्रव्य के साथ देवें।

२—पत्रस्वरस—बालक को १०-२० बूंद तक।

३—कल्क १ से ४ तोला

४—क्वाथ ५ से १० तोला।

५—कालमेघ की सूखी पत्ती ५ रत्ती, गोलमिर्च का चूर्ण १० रत्ती दोनों को एक में मिलाकर सेवन करें (डिमक-३ य खंड, पृष्ठ ४६)।

६—ताजी पत्ती और डंठल का प्रगाढ़ स्वरस ४ भाग औषध में १ भाग। मात्रा-१० से ६० बूंद तक।

७—मिश्र फांट (२० में १) नारंगी का छिलका और धनिया प्रत्येक १ भाग, कालमेघ ४ भाग। यथा-विधि फांट कल्पना करें। मात्रा-१ से २ आउंस।

८—मिश्र मद्यासव (२० में ३) बोल १ भाग, एलुआ १ भाग और कालमेघ छोटे-छोटे टुकड़े किये हुए ६ भाग, यथाविधि मद्यासव (टिंकचर) कल्पना करें, मात्रा-१ से ४ ड्राम।

९— मिश्र गुटिका जीरा, (करातिया) सौंफ, लौंग, और बड़ी इलायची (मतांतर से अनीसून भी) प्रत्येक सम भाग का बारीक चूर्ण कर कालमेघ के स्वरस में घोट कर मटर प्रमाण वटिकाएं प्रस्तुत करें। मात्रा-१ रत्ती से २॥ रत्ती।

गुण कर्म तथा उपयोग—

कालमेघ चिरायता और क्वाशिया (quassia) के सामान तिक्त, बल्य और पाचक (Stomachic) है। ताजे पत्र का स्वरस या मिश्र फांट बड़ी इलायची, लौंग तथा दालचीनी के साथ शिशुओं के सार्वदैहिक दौर्बल्य, ज्वरोत्तरकालीन दौर्बल्य, क्वचित् कठिन क्वचित् तरल मलभेद युक्त उदरोद्वेष्टन (Griping pain) अग्निमांद्य और प्रवाहिका की बढ़ी हुई अवस्था में प्रयुक्त होता है। (आर० एन० खोरी २ य खं० पृष्ठ ४६४-५)

कालमेघ के नाम से यह वनस्पति बंगाल में सुप्रसिद्ध है और 'आलुइ' नामक सर्वजन परिचित औषधि का यह प्रधानतम उपादान है। आलुई शिशुओं के उदरोद्वेष्टन (Griping) उदरामय, तथा क्षुधामान्द्य में व्यवहृत होती है। यह निम्न प्रकार से प्रस्तुत की जाती है। जीरा, अजमोदा, सौंफ, (Aniseed), लौंग और बड़ी इलायची की ढोंढ (Capsule) समभाग लेकर कालमेघ के पत्र स्वरस में भली-भांति मर्दन करने के उपरांत छोटी-छोटी गोलियां बनाकर धूप में सुखाकर रखें। मात्रा एक गोली माता के दूध में रगड़ कर बालक को देवें। यह आलुई 'हालह्विव (Halviva) नाम से संप्रति इंगलैंड में कुनैन की प्रतिनिधि स्वरूप प्रचारित किया गया है। खेती किये जाने वाले पौधे के रूप में यह छायादार परिस्थितियों में होने वाला बहुत ही सामान्य क्षुप है। ग्रामीण लोग ज्वर के लिये सुगंध द्रव्य विशेषतः गंध तृण या हरी चाय (Lemon-grass) के साथ घरेलू दवा की भांति इसका प्रचुर उपयोग करते हैं। कोंकण में कालमेघ (किराइत) सोंठ और डिकामाली इनका उपयोग ज्वर में करते हैं। उदरशूल (Colic) में इसके ताजे पत्ते का रस काली मिर्च, सेंधा नमक और हिंगु के साथ प्रयुक्त करते हैं। जीर्ण ज्वरावस्था में जिसे बारीक-ताप (Barik tap) कहते हैं कालमेघ, सोंठ, कुटकी, जंगली खजूर और कोनेसी त्वक् (Conessi bark) इनका फांट प्रस्तुत कर मधु मिला कर प्रति दिन प्रातःकाल देते हैं। (डिमक, २ य खंड, पृष्ठ ४७)।

जिन लोगों ने कालमेघ का यवतिक्ता नाम से उल्लेख किया है उनके मत से यह अग्निजनक, बलवर्धक, तिक्त, ज्वरातिसारघ्न एवं बालकों के लिये शुभदायक है—

> "अग्निकृत, बलवर्द्धिनी तिक्ता ज्वरातिसारघ्नी एवं बालानां शुभदा सदा।" (व० द० परिशिष्ट १०१ पृ०)

कालमेघ के पत्र एवं मूल ज्वरघ्न या ज्वरहर, बल्य, पाचक, रसायन, पित्तसारक और कृमिघ्न (पत्र) गुण-कर्म के लिये भी प्रसिद्ध हैं। प्रवाहिका सार्वदैहिक दौर्बल्य और आन्त्रस्थ वात गुल्म युक्त कतिपय प्रकार के अजीर्ण में कालमेघ के पत्र का क्वाथ या फांट संतोषप्रद परिणाम के साथ प्रयोग कराये गये हैं। आनाह, अतिसार, प्रवाहिका और

क्षुधामांद्य प्रभृति जैसे बालरोगों में इसका उपयोग करते हैं। डाक्टर डिमक और गार्टर महाशय प्रभृति इसको सार्वदैहिक दौर्बल्य, पुरातन प्रवाहिका एवं ज्वरोत्तरकालीन दौर्बल्य आदि में कटु-पौष्टिक और पाचक रूप से लाभकारी बतलाते हैं। यह प्रबल उत्तेजक और किंचित् सारक (Aperient) भी है, इसलिये वे अजीर्ण एवं यकृत्कार्य-शैथिल्य (Torpidity of the liver) में इसका उपयोग लाभकारी ख्याल करते हैं। डाक्टर मुरे महाशय के कथनानुसार यह औषधि सार्वदैहिक दौर्बल्य, प्रवाहिका और कतिपय प्रकार के अजीर्ण में अतीव लाभकारी है। संक्षेप में कालमेघ में [illegible]राशिया के समस्त गुण-कर्म निहित हैं।

कालमेघ का समस्त क्षुप अत्यन्त कटु है और शीघ्रतापूर्वक इसके गुण भाग जल या सुरा (स्पिरिट) में आ जाते हैं। कहते हैं कि इसकी जड़ का कल्पना किया हुआ सुरासव (टिंकचर) उत्तेजक एवं मृदुसारक है। इसका पत्र स्वरस बालकों के आनाह तथा अतिसार की घरेलू दवा है। यह कृमिघ्न भी है तथा यकृत्शैथिल्य (Sluggish liver) वातवेदना, अजीर्ण, सार्वदैहिक दौर्बल्य, ज्वरोत्तरकालीन दौर्बल्य और प्रवाहिका की बढ़ी हुई अवस्था में लाभकारी है। दुष्ट प्रतिश्याय (एन्फ्लूएञ्जा) जनित जनपदोध्वंसन काल में इसके क्षुप का मद्यासव (टिंकचर) रोग की वृद्धि वा प्रसार रोकने के लिये बहुत ही लाभकारी प्रमाणित हुआ है। विसर्गी (Intermittent) और अविसर्गी (Remittent) ज्वरों में विशेषकर मल्ल के योग से इसका उपयोग बहुत ही गुणदायक होता है। इस की जड़ (Root Stalks) का क्वाथ या फांट घरेलू कटु पौष्टिक और पर्याय-ज्वर निवारक है तथा शीतपूर्व ज्वरों (Ague) या विसर्गी ज्वरों (Intermittent Fever) में गुणकारी है। (नाडकर्णी इण्डियन मेटीरिया मेडिका पृ० ६३-६४)।

कुछ समय पूर्व इस औषधि का एक योग बड़ी तादाद में इंगलैंड भेजा गया था और वहां बड़े पैमाने पर इसका कुनैन की प्रतिनिधि औषधि और एक प्रभावशाली टानिक (बल्य) की तरह विज्ञापन किया गया था परन्तु इसको वहां पर विशेष सफलता नहीं मिली और परीक्षा करने पर इसमें मलेरिया को नष्ट करने वाला कोई तत्व नहीं पाया गया। फिर भी फार्माकोपिया (ब्रिटेन के योग्य ग्रन्थ) में जो दूसरे कड़वे द्रव्य उल्लिखित हैं, उनसे यह किसी भी प्रकार न्यूनतर कोटि का नहीं है। यह अत्यन्त सुलभ, सस्ता एवं सुपरिचित है। (इण्डिजीनस ड्रग्स आफ इण्डिया २८१—आर० एन० चोपरा, एम० ए०, एम० डी०)।

इसमें ज्वर नाशक गुण विशेष रहता है; किंतु यह नवीन ज्वर में कुनैन के बराबर प्रभाव शाली नहीं होता। जराजन्य शीत ज्वर में कुनैन के समान है। शिशुओं के लिये यह औषधि विशेष लाभकारी होती है। शिरोशूल, अजीर्ण, अतिसार और साधारण ज्वर में इसका डिकामली, हींग, सोंठ, मिर्च और पीपल के साथ देते हैं। बंगाल में यह औषधि यकृद्वृद्धि और पुरातन मलेरिया में घरेलू उपयोग की प्रधान औषधियों में एक गिनी जाती है।

मद्रास प्रान्त के कनाडी नामक जंगली जाति के लोग इस क्षुप के ताजे पत्तों और पकी हुई इमली के गूदा को पीसकर उसकी गोलियां बना कर रखते हैं और जब किसी को गेहुंआ सांप काटता है तब

उसको एक गोली पानी में घिसकर दंशस्थान पर लगाते हैं। इन गोलियों के पानी को आंखों में डालते हैं और प्रति घंटे दो गोली की मात्रा से खाने को देते हैं। उनका विश्वास है कि एसा करने से सांप का ज़हर नष्ट हो जाता है। नागपुर की मुंडा जाति के लोग इसके समग्र क्षुप का काढ़ा बना कर ज्वर के रोगी को देते हैं। इससे अच्छा लाभ होता है।

डाक्टर म्हेशकर और कायस के मत से यह औषधि सर्पदंश पर बिलकुल निरुपयोगी है। कालमेघ पत्र १ छटांक काली मिर्च १ तोला घोटकर जंगली बेर के समान गोली बनाकर दिन में आठ बार दो-दो गोली देने से विषम-ज्वर नष्ट होता है। यह मेरा अनुभूत है। (सन्दिग्ध निर्णय बनौषधि-शास्त्र पृ० १०५८ भागीरथ स्वामी)

कालमेघ की पत्ती, इसरौल की पत्ती और देशी सारसापरिल्ला की जड़ की अन्तर छाल इनको कूट छानकर यथाविधि अवलेह प्रस्तुत करें। देशी हकीम बल्य एवं रसायन रूप से फिरंगीय दुःस्वास्थ्य और दुष्ट फिरंगीय व्रण में इसका उपयोग करते हैं। इस अवलेह से अनेकानेक रोगियों को सफलता पूर्वक आरोग्य लाभ करते हुए मैंने स्वयं देखा है। (आनरेरी सर्जन ईस्टर्न आल्फ्रेड मैड्रास नेगापटम)। वाट्स डिक्शनरी।

◆

—उपयोगी चुटकुले—

—शीत ज्वर-रोगी को भुनी फिटकरी १ माशे बताशे में रखकर ज्वरावेग से १ घंटा पूर्व दें। पथ्य में केवल दुग्ध देना चाहिये।

—चन्दन (सफेद) का बुरादा, अरण्ड की जड़ समान भाग पीसकर सिर पर लेप करें। सिर दर्द मिटता है।

—मक्खी की बीट पानी के साथ देने से क्षय तत्काल बन्द हो जाती हैं।

— पित्तज वमन में नीबू के बीज ६ माशा घोट-छानकर बिना मीठे पीना चाहिये। बालक को मात्रा अवस्थानुसार कम दें।

—हुक्के के पानी से घाव नित्य धोने से घाव जल्दी आराम हो जाता है। सड़न मिट जाती है। कीड़े मर जाते हैं।

—मूली के हरे पत्ते का स्वरस ५ तोला में मिश्री २ तोला मिलाकर प्रातः सायं पीने से ८-१० दिन में पाण्डु (पीलिया) रोग नष्ट होता है।

—इमली के बीजों को भाड़ में भुनाकर चूर्ण कर समभाग मिश्री मिलाकर प्रातः सायंकाल ६-६ माशे दूध या जल से दें। प्रमेह अवश्य नष्ट होता है।

—गूमा बूटी १ तोला, काली मिर्च ३ माशे दोनों को घोट पीस छानकर पीने से मलेरिया शीघ्र भाग जाता है।

—श्वास-कास में शुण्ठी का क्वाथ पीने से फायदा होता है?

—संकलित।

प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांत और उसकी महिमा

लेखक—डाक्टर युगलकिशोर जी चौधरी, एन० डी०,
नीम-का-थाना।

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति रोग और चिकित्सा सम्बन्धी विज्ञान है जिसको अनेक महापुरुषों ने अनेक वर्षों तक कठोर परिश्रम व खोज करके निकाला है। यह वह महान् आत्माएं थीं जिन्होंने औषधियों व चीर-फाड़ से संसार को सर्वनाश की ओर जाते देखकर इस प्रणाली का आविष्कार किया।

यद्यपि आयुर्वेद और एलोपैथी के सिद्धांत इस प्रणाली के सर्वथा विरुद्ध हैं फिर भी नैसर्गिक चिकित्सा पद्धति का सिद्धांत एक और अटल है कि रोग बाहर से नहीं आता, प्रकृति के नियम भङ्ग करने से होता है और रोग दूर करने के लिए किसी औषधि जड़ी-बूटियां इन्जैक्शन अथवा शस्त्र-क्रिया की आवश्यकता नहीं है बल्कि वह अत्यन्त सीधे-सरल स्वाभाविक उपचारों द्वारा तथा अन्तरात्मा की आवाज़ पर ध्यान देकर उस पर चलने से दूर हो सकता है।

इस प्रणाली में माना गया है कि रोग को शरीर स्वयं अपने अन्दर स्थित विष या विजातीय द्रव्य को बाहर निकालने व उसे साफ करके पुनः ठीक करने और फिर से अपने को स्वस्थ व क्रियाशील बनाने के लिए उत्पन्न करता है। यह सिद्धांत बिलकुल निराधार व झूठा है कि रोग रोग-जन्तुओं के बाहरी आक्रमण से उत्पन्न होता है जैसा एलोपैथी मानती है।

इस तरह रोग को अपना घातक शत्रु समझकर उसका विरोध न करना चाहिए बल्कि उसे एक आरोग्यदायक कष्ट अथवा शरीर की सफाई करने वाली व आरोग्य देने वाली क्रिया समझकर स्वागत करना चाहिए। रोग को व्यक्तिगत जीवन व आदतों से सम्बन्धित समझना चाहिए और यह कि वह मिथ्या प्रकृति विरुद्ध रहन-सहन से ही उत्पन्न होता है। वह सरदी लगने से, रोग जन्तुओं के आक्रमण से नहीं होता और न वह कोई आकस्मिक घटना है जैसा कि लोगों का अन्ध विश्वास है।

रोग दूर करने की शक्ति स्वयं हर एक रोगी के शरीर में ही मौजूद है यह ध्रुव सिद्धांत है; और उसे किसी बाहरी उपचार की या दवा की जरूरत नहीं है, ज्यों ही रोगी मनुष्य प्रकृति शरण में आ जायगा और अपनी पुरानी खराब आदतों और बद-परहेजियों को छोड़ देगा जिनके कारण वह रोग का शिकार हुआ है त्यों ही शरीर पुनः अपना सुधार आरम्भ कर देगा और स्वाभाविक उपचारों के विधि-पूर्वक करते रहने से आरोग्य प्राप्त होजायगा।

तीन मुख्य सिद्धान्त

नीचे लिखे तीन सिद्धांतों को ध्यान पूर्वक समझिए। फिर आपको इस प्रणाली के बारे में बहुत अधिक जानकारी हो जायगी। याद रखिए औषधि विज्ञान के सिद्धांतों के समान यह केवल काल्पनिक नहीं हैं, बल्कि यह सिद्धांत प्रकृति के अटल नियमों के अनुकूल हैं और जर्मनी, अमेरिका व भारतवर्ष के अनेक विद्वान् प्राकृतिक चिकित्सकों ने लाखों-

करोड़ों रोगियों पर इसके प्रयोग करके उन्हें अच्छा करके बार-बार अनुभव करके निकाले हैं और ऐसे असंख्य रोगियों को अच्छा कर दिखाया है जिन्हें औषधि-विज्ञान अच्छा नहीं कर सका था।

सबसे पहला और महत्वपूर्ण सिद्धांत प्राकृतिक चिकित्सा का तो यह है कि हर प्रकार के रोगों की उत्पत्ति का कारण एक ही है; अर्थात् यह कि शरीर में विजातीय द्रव्य (दोष) और मल पदार्थों का संचय हो जाना, और यह मल-पदार्थ शरीर में बहुत अधिक मात्रा में इसलिए इकट्ठे हो जाते हैं कि रोगी अनेक वर्षों से लगातार मिथ्या प्रकृति विरुद्ध जीवन बिता रहा है और खासकर उक्त रोग ग्रसित व्यक्ति ने खराब गरिष्ठ भोजन किया है, शरीर की रक्षा करने में भूल की है, गंदे मकानों में रहा है, कपड़े बहुत पहने हैं और रात-दिन सामर्थ्य से अधिक परिश्रम किया है और चिंतित रहा है अथवा अन्धाधुन्ध विषय भोगों द्वारा वीर्य का नाश किया है,

स्वाभाविक चिकित्सा पद्धति के इस सिद्धांत के अनुसार रोगों को दूर करने का उपाय यह है कि ऐसे उपचार किए जावें जो शरीर में से संचित मैल को निकाल कर उसकी सफाई कर सकें क्योंकि उस मैल के भरे रहने से शरीर रूपी मशीन के कल पुरजे ठीक-ठीक काम नहीं कर सकते और ऐसा उपाय हमारी प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति ही है।

यह याद रखना चाहिये कि शरीर के अंदर जीवनी-शक्ति रात-दिन अपना काम करती रहती है और विजातीय द्रव्य भी बनता रहता है जो मनुष्य स्वस्थ प्रबल जठराग्नि वाला होता है उसके शरीर की गंदगी फौरन, गुर्दों, आंतों, फेफड़ों व चर्म में होकर निकलती रहती है।

किंतु जिनकी जठराग्नि धीमी है, जिनका खान-पान खराब है उनके शरीर में विजातीय द्रव्य अधिक बनता है और पूरी तरह बाहर न निकल सकने के कारण शरीर में इकट्ठा होने लगता है और यही विष संचय रोग और असामयिक मृत्यु का मुख्य कारण है।

स्वाभाविक चिकित्सा-पद्धति सदा ही शरीर की टूट-फूट सुधारती रहती है और उसकी सफाई भी करती रहती है, शरीर की इस सफाई को रोग-निवारक कष्ट कहते हैं।

सभी रोग निवारक कष्ट-निमोनियां, मलेरिया, चेचक, मोतीझरा, जुकाम, पेचिश, हैज़ा, सूजन फोड़े आदि इस लिये उत्पन्न होते हैं कि शरीर इनके द्वारा अपने अंदर एकत्रित मैल को यत्न पूर्वक बाहर निकाल कर अपनी सफाई करने की कोशिश करता है।

इसके विपरीत दीर्घ (पुराने) रोग, मधुमेह, दमा, हृदय रोग, गठिया बवासीर आदि केवल तब होते हैं जब कि उपरोक्त तीव्र रोगों को दवा, इंजेक्शन, टीका या चीर फाड़ आदि प्रकृति विरुद्ध उपचारों द्वारा दबा दिया जाता है।

इन प्रकृति विरुद्ध उपचारों में यह भी शामिल है, जहरीली व धातु युक्त दवाइयां टीका आदि तेज़ नशा लाने वाली चीज़ें, शस्त्र-क्रिया, एक्सरे, रैडियम क्योर, इंजेक्शन आदि।

इसलिये जब वैद्य महोदय या डाक्टर साहब किसी तेज़ बीमारी जुकाम बुखार आदि को काढ़ा, धातु, टानिक, इंजेक्शन आदि से अच्छा करता है अथवा चीर-फाड़ से किसी तीव्र कष्ट को आराम करना है तो वास्तव में वह झूंठा इलाज करता है।

सच पूछा जाय तो वह उस भयानक विषों व शरीर के मैल को अपनी तेज व घातक औषधियों से वापस शरीर में धकेल देता है जिन्हें शरीर बाहर फेंक रहा है।

परिणाम यह होता है कि शरीर पहले से दुगुना गंदा हो जाता है, प्रथम तो शरीर की अपनी पुरानी गंदगी, दूसरे दवाइयों का ज़हर और गंदगी यह सब शरीर के मर्म स्थानों व प्रमुख अवयवों में जमा हो जाते हैं और उन स्थानों को नष्ट करते रहते हैं व पुरानी बीमारी की नींव डाल देते हैं।

यद्यपि किसी अवस्था विशेष में अन्य कारणों से भी दीर्घ रोग होना सम्भव है, परंतु वास्तव में सभी दीर्घ पुराने रोगों का एक मात्र प्रधान कारण यह है कि तेज़ बीमारियों को दवा इंजेक्शन टीका या अन्य अस्वाभाविक उपचारों से दबाया जाता है।

तीसरा सिद्धांत यह है कि शरीर में ही ऐसी शक्ति मौजूद है कि वह स्वयं बिना किसी दवा के अपने विकार व रोग दूर करके पुनः स्वस्थ बन सकता है परंतु यह तभी संभव है जब प्राकृतिक उपचारों द्वारा उसे सहायता पहुंचाई जावे।

इसका अर्थ यह है कि रोगों को दूर करने की सामर्थ्य किसी भी वैद्य या डाक्टर या हकीम में नहीं है, स्वयं शरीर में है, परंतु वह शक्ति तभी सुधार करेगा जब प्राकृतिक नियमों का पालन किया जायगा और जीवन स्वाभाविक बनाया जायगा।

प्राकृतिक चिकित्सा विधियां

पाठक मेरे कथन को असत्य न समझें। हमारे देश में औषधियों और डाक्टर वैद्यों की इतनी अपार वृद्धि होने हुए भी जनता का स्वास्थ्य दिन दिन गिरता जारहा है और पाश्चात्य देशों में सीधे साधे प्राकृतिक उपचारों से जल मिट्टी धूप हवा फलाहार एनिमा मालिश व्यायाम से अत्यन्त आश्चर्यजनक परिणाम प्राप्त किए जारहे हैं।

उपरोक्त उपचारों का एक मात्र ध्येय यह होता है कि शरीर रूपी मशीन का पूर्ण सुधार व सफाई की जाय और शरीर स्थित जीवनी शक्ति को अवसर और सहायता दी जाय कि वह शरीर को पुनः क्रिया शील व स्वस्थ बना सके। नैसर्गिक उपचारों का पूरा वर्णन् तो आगे किया जायगा, संक्षेप में वर्णन् यह है।

१—उपवास अथवा लंघन—

उपवास प्रकृति की अत्यन्त महत्व-पूर्ण रोगनाशक क्रिया है और यह आरोग्य और दीर्घ जीवन की कुंजी है।

उपवास के द्वारा शरीर के मल पदार्थ व विष जो रोगों की उत्पति के कारण हैं, बड़ी आसानी से सरलता पूर्वक शरीर से निकाले जा सकते हैं।

२—भोजन सुधार—

वास्तव में खराब भोजन अथवा अस्वाभाविक आहार ही रोगोत्पत्ति का प्रधान कारण है और केवल स्वाभाविक आहार फल, मेवा, हरे शाक, कच्चा दूध आदि के द्वारा ही शरीर में विजातीय द्रव्य (मल पदार्थों) का बनना बंद किया जासकता है और इसी उपाय से रक्त को निर्मल शुद्ध विकार रहित बनाया जा सकता है और सभी व्याधियों और अकाल मृत्यु से बचाया जा सकता है।

३—जल के उपचार—

समय-समय पर गरम और ठंडे जल के प्रयोगों से शरीर पर बड़ा ही आरोग्य-दायक व हितकारी प्रभाव पड़ता है।

(क) जल के एनिमा (बस्ति क्रिया) द्वारा बड़ी सरलता से आंतों में जमा हुआ दूषित मल दूर करके सफाई की जा सकती है और किसी भी हानि-कर घातक दस्तावर दवा या जुल्लाब की कोई आवश्यकता नहीं है।

गीली पट्टियों व शीतल व गरम जल की गद्दियों से अनेक प्रकार के ज्वर, सूजन चोट घाव व पुराने रोग समूह अच्छे किए जाते हैं और जल के प्रयोगों से कभी कोई हानि या खराब असर शरीर को नहीं होते जैसे कि उन औषधियों से होते हैं जो इन रोगों को दूर करने के लिए वैद्य-डाक्टरों द्वारा दी जाती हैं।

शरीर की साधारण रक्षा व उसकी पुष्टि—

उचित व्यायाम, प्राणायाम, चर्म की सफाई व रक्षा, धूप व हवा स्नान, मिट्टी की पट्टी आदि से जीवनी शक्ति को सहायता मिलती है और इन उपचारों की सहायता से बड़ी जल्दी रोगों पर विजय प्राप्त की जा सकती है।

आध्यात्मिक चिकित्सा—

अन्य उपचारों की भांति मानसिक विचारों का भी शरीर के आरोग्य पर भारी प्रभाव पड़ता है, इसलिए रोग समूह पर विजय प्राप्त करने के लिए और आरोग्य स्थाई बनाने के लिये मन को प्रसन्न और मजबूत रखना चाहिये। प्राकृतिक चिकित्सक इन्हीं प्रकृति दत्त उपचारों से व मालिश स्नेह आदि से रोग ग्रसित मानव जाति को बीमारियों के फंदे से निकाल लेता है और वे विद्वान् प्राकृतिक चिकित्सा के विशेषज्ञ धन्य हैं जिनकी अमूल्य सम्मति व सत्परामर्श ने लाखों-करोड़ों ऐसे दुःखी निराश रोगियों को दीर्घ रोगों व मृत्यु के भयानक चंगुल से बचा लिया और पूर्ण स्वस्थ व दीर्घ जीवी बना दिया।

केवल नाम

औषधियां केवल नाम से ही लाभ नहीं कर सकतीं, उनका अनुभवी योग्य व्यक्तियों की देख-रेख में उत्तम द्रव्यों से विधिवत् निर्मित होना आवश्यकीय है। जनता तथा चिकित्सक सस्ते के प्रलोभन; आकर्षक पैकिङ्ग व मनमोहक सज-धज के चकाचौंध, उनके चटक-मटक के विज्ञापन आदि के जाल में फंस कर अण्ट-सण्ट औषधियां व्यवहार करते हैं और जब उचित लाभ नहीं होता तो आयुर्वेदि औषधियों को निरर्थक मान बैठते हैं। औषधियां खरीदने से पूर्व विचार कर लेना चाहिये कि ये औषधियां किसी विश्वस्त फार्मेसी की परीक्षित हैं अथवा अण्ट-सण्ट।

मनुष्य चार पैसे की हांडी लेता है तो भी ठोक-बजाकर देख लेता है, फिर आप तो औषधियां स्वशरीर की रक्षा के लिये लेते हैं। इसमें सबसे अधिक सावधानी रखनी उचित है।

निवेदक—वैद्य देवीशरण गर्ग,

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

[५० वर्ष पुराना आयुर्वेदीय औषधियों का विश्वस्त कारखाना।]

स्वप्न-दोष

वैद्यरत्न पं० विजयकुमार शर्मा,
बलदेव (मथुरा)।

प्राचीन समय में हिन्दू धर्म-शास्त्रानुसार "ब्रह्मचर्य" को वह प्रतिष्ठा प्राप्त थी जो किसी उत्तम से उत्तम वस्तु को भी आजकल प्राप्त नहीं। इसके नियम इतने कठोर थे कि आजकल के नवयुवकों के लिए उसका पालन अति दुष्कर है। पूर्व काल में यह व्यवस्था थी कि जब तक विद्यार्थी पूर्ण विद्याभ्यास न करले तब तक वीर्य व्यय की कल्पना भी उसके मन में न होती थी। अर्थात् विद्यार्थियों को नगर से दूर गुरुकुलों में रखा जाता था; वहां उन्हें पूर्ण संयम के साथ २५ वर्ष तक विद्याध्ययन कराया जाता था, तदनन्तर उन्हें इस नियम के साथ गृहस्थाश्रम प्रवेश की अनुमति मिलती थी कि सन्तान की आवश्यकता न होने पर अहैतुक वीर्य नाश करना बालहत्या है। इसके बाद वानप्रस्थ व सन्यासाश्रम का नियम था, जिसमें वीर्य रक्षा ही प्रधान थी। लेकिन आजकल इसके विपरीत जैसे आजकल के युवकों की सजावट, कपड़े की सजधज, निस्तेज मुख को सतेज प्रदर्शित करने को कृत्रिम स्नो, पाउडर, वैसलीन आदि लगाते हैं तथा प्रेम रस पूर्ण शृङ्गारिक चर्चा, उपन्यास, नाटक, आदि उत्साह पूर्वक पढ़ते हैं, अश्लील सिनेमा, नाच आदि देखकर अपनी शुद्ध मनोवृत्तियों को गिराते हैं। सुन्दर स्त्रियों के नग्न व विलासमय चित्र खरीदते हैं। विविध प्रकार की वीर्य को चंचल करने वाली सामिग्रियों को जुटाते हैं। अनेक उत्तेजक व मादक वस्तुओं का सेवन करते हैं। प्रातः शुद्ध वायु सेवन ब्रह्मचर्य, व्यायाम तथा परिश्रम से कोसों दूर भागते हैं। इस प्रकार वीर्य की चंचलता, स्खलिता तथा वीर्यवाही शिराओं का हस्तमैथुन द्वारा निर्बल होना आदि कारणों से ही स्वप्न-प्रमेह रोग होता है।

परिभाषा—

रात्रि में या दिन में सोते हुए स्वप्न में वीर्य का श्राव होना। यह रोग आजकल इतनी व्यापकता से प्रसरित है कि जिसकी कल्पना नहीं। उसका शमन कठिन हो गया है। पाश्चात्य चिकित्सकों का तो यह मत है कि जब वीर्याशय में वीर्य अधिक होजाता है तब वहां स्थिर नहीं रहता; अपितु स्वप्नदोष के रूप में स्रवित हो जाता है।

आरोग्य शास्त्रानुसार वीर्य को शरीर में व्याप्त बताया है। यथा—

यथा पयसि सर्पिस्तु गुडश्चेक्षौ रसो यथा, शरीरेषु तथा शुक्रं नृणां विद्याद्भिषग्वरः॥

शरीर में वीर्य वृद्धि होने पर उतना ही अधिक आरोग्य, तेज, कान्ति, लावण्य, प्रज्ञा, धैर्य, ज्ञान, विवेक, धृति, स्मृति की वृद्धि होती है। तथा च वीर्य के एक विन्दु स्राव से जीवन नाश बताया है यथा—

'मरणं विन्दु पातेन जीवनं विन्दु धारणात" अपरंच यावद्बिन्दुः स्थितो देहे तावत्काल भयं कुतः।

अनेक साधनों द्वारा वीर्य रक्षण कर ही भारत के अनेकों महापुरुष ऊर्ध्वरेतस हो अमर

हो गये हैं। ब्रह्मचर्य से मृत्यु को भी जीता गया है।

"ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत ।"

अतः अहैतुक इस विन्दु का शरीर से अलग होना महान् हानिकर है फिर स्वप्नप्रमेह में एक साथ अनेक विन्दुओं का चले जाना हानिकर अवश्य होगा।

स्वप्न-प्रमेह अधिकांशतः मानसिक रोग है। किसी पुरुष को तो यह रोग इतनी व्यापकता से होता है कि प्रथम सप्ताह में १ बार, फिर सप्ताह में दो बार, फिर हफ्ते २ क्रमशः प्रति दिन होने लगता है और कभी २ तो रात्रि में दो बार भी होजाता है। किसी २ पुरुष का मन इतना चञ्चल होता है कि स्वप्न-दोष कब हुआ उसे पता भी नहीं चलता, यह रोग की भयानक दशा है। इसका ही अन्तिम परिणाम नपुंसकता है।

इस रोग से होने वाले उपद्रव—

मस्तिष्क में पीड़ा व चक्कर आना, उत्साह हीनता शैथिल्यता, स्मृति नाश, आलस्य, भूख की कमी, मलावरोध, मन की चञ्चलता, कुविचार प्रवृत्ति; दुश्चिन्तन, शोक, उद्वेग, भय, हृदय में धड़कन, कुशङ्का, उदासीनता, अनिद्रा, स्वप्नों की अधिकता, इस रोग में होती है।

इस रोग से छुटकारा पाने के सरल उपाय—

मन को वासनाओं से हटा अन्य धार्मिक वासनाओं की ओर प्रवृत्ति तथा सदाचार, सयम, सद्धर्म शिष्ट पुरुषों की संगति, महात्मा, वीर, आदर्श पुरुषों की जीवनी पवित्र मन से पढ़कर मनन करना, शुद्ध वायु सेवन, जङ्गल, पर्वत आदि पर प्रातः वायु सेवन, शारीरिक शक्ति के अनुसार व्यायाम तथा प्रति दिन शीतल जल से स्नान, सोते समय भगवद्भजन तथा शीतल जल से हाथ-पैर धोकर शयन, शरीर एवं मन को उपरोक्त कार्यों में प्रवृत्त करना, यह मन शुद्धि क्रिया इस रोग में जितना लाभ पहुंचाती हैं उतना औषधि नहीं। आहार के विषय में भी सावधानी रखनी चाहिये, भोजन सदैव सादा, सरल, सात्विक हृद्य, करना चाहिये। मादक, उत्तेजक, गरिष्ठ, अधिक मसाले युक्त भोजन न करना चाहिये। विशेषकर रात्रि में हलके पेट रहना चाहिये। रात्रि को मृदु सुकोमल वस्त्र पर शयन न कर जमीन पर साधारण विस्तरे पर शयन करना चाहिये, स्वतन्त्र सोना चाहिये। शुद्ध धुले हुये खादी के वस्त्र पहिनने चाहिये और विलासी सामिग्रिओं से दूर रहना चाहिये। उत्तम कर्म जीवन से सम्बन्धित करें जिससे कुविचार प्रवृत्ति ही न हो! मन शुद्ध पवित्र एवं सुवासना पूर्ण बन जावे यही इस रोग का सरल उपचार है। द्वितीय औषधि उपचार है।

औषधि उपचार—

१७९—रात्रि को शयन समय शीतल चीनी का एक माशा चूर्ण शीतल जल से लें। कुछ समय तक बराबर सेवन करने से स्वप्नदोष दूर होता है।

१८०-आंवला ६ तोला
सत्व गिलोय गोखरू बंशलोचन
सूकमैला —प्रत्येक १-१ तोला।

—सबको कूट पीसकर चूर्ण बनालें इसमें से एक तोला चूर्ण मक्खन में मिला खालें, ऊपर से दूध मिश्री सहित पीवें। अपथ्य वस्तु वर्जित स्वप्नदोष पर अत्युत्तम योग है।

बनौषधियों के चमत्कार

वैद्य देवीशरण गुप्त, प्रधान-सम्पादक।

[उन जंगली जड़ी-बूटियों में, जिनकी तरफ हमारा ध्यान ही नहीं जाता बड़े २ गुण भरे हुए हैं। इस शीर्षक में हम प्रतिमास ऐसी वनस्पतियों के गुणों के विषय में हीं पाठकों का ध्यान आकर्षित करेंगे जो सर्वत्र सुलभता से प्राप्त हो सकती हैं, और जिनके गुणों की हम स्वयं परीक्षा कर चुके हैं। हमारी ही तरह धन्वन्तरि के जो पाठक ऐसी वनस्पतियों से परीचित हों उनका विस्तार से वर्णन् लिखकर हमें भेजदें, हम उसे जहां तक सम्भव होगा परीक्षा करके इस शीर्षक में प्रकाशित करेंगे।]

गंज के ऊपर चिरमटी का प्रयोग—

बनौषधि चन्द्रोदय के तीसरे भाग को पढ़ते समय हमारा ध्यान इस बनौषधि पर गया, गंज के लिये इसका प्रयोग बहुत ही लाभप्रद लिखा हुआ देखकर हमारी इच्छा हुई कि इसका अनुभव करना चाहिये। संयोग से तीन-चार दिन पश्चात् ही हमारे पास १ गंज का रोगी आ गया और हमने उस पर इसका प्रयोग करके देखा वास्तव में ही प्रयोग लाभप्रद सिद्ध हुआ, उसके पश्चात् अन्य रोगियों पर भी इसका प्रयोग करके हमने सफलता प्राप्त की है। हमारा आग्रह है कि आप भी अवसर मिलने पर इसका अवश्य प्रयोग करें। आपको निराश नहीं होना पड़ेगा।

प्रयोग विधि—

१८१-चिरमिटी के ऊपर का छिलका हटा कर, उसके अन्दर का बीज निकाल कर उसका कपड़छन चूर्ण करलें। इस चूर्ण को ५ तोला लेलें और इस में आध पाव भांगरे का रस डालकर घोटें, इस प्रकार ७ भावना दें। जटा मांसी, इलायची छोटी, कपूर कचरी और कूट का भी ५-५ तोला चर्ण ले लें। ऊपर के भावना दिये हुये चिरमिटी के चूर्णको और उक्त चूर्णों को मिलाकर पानी में पीस कर लुगदी बनालें। फिर एक बड़ी पीतल की कलई और कढ़ाई में ५ सेर पानी और १ सेर काली तिली का तैल डाल कर और उस कढ़ाई के बीच में उस लुगदी को रखकर हलकी आंच से पकावें। जब सब पानी जल कर तैल मात्र रह जाय, तब उतार कर छान लें। उस तैल को सिर में जहां के बाल उड़ गये हों मालिश करने से नये बाल पैदा होने लगते हैं। बाल बढ़ाने के कार्य में भी इसे उपयोग में ले सकते हैं।

उक्त प्रयोग बनौषधि चन्द्रोदय तीसरे भाग से लिया गया है। १ बार हमने किसी पुस्तक में देखा था कि आम के अचार का तैल (आम का अचार डालते समय उसमें सरसों का तैल डाला जाता है, धीरे २ अचार समाप्त हो जाता है और तैल रह जाता है) प्रायः तैल को थोड़ा ही डालते हैं; किन्तु यदि आवश्यकता हो तो ज्यादा भी डाला जा सकता है, उस से अचार में कोई हानि नहीं होगी। गंज के लिये अच्छा लाभ करता है; उसी आधार पर हमने तिली के तैल के स्थान में अचार के तैल से उक्त तैल तैयार किया। वास्तव में उक्त तैल बहुत ही उत्तम साबित हुआ। हमारा विश्वास है कि पाठक इससे लाभ उठावेंगे और फलाफल हमें भी भेजने का कष्ट करेंगे।

चिरमटी को-हिन्दी में चौंटनी; संस्कृत में गुंजा, बंगाली में गुंच बम्बई में घुंघची, गुजराती में चनोटी, मराठी में गुंज कहते हैं। रत्तियों के तोल में काम आने से प्रायः यह प्रसिद्ध है और सभी जानते हैं।

परीक्षित-प्रयोग।

अमृत हरीतकी—

१८२-हरड़ बड़ी १०० लेकर गौतक्र में एक दिन भिगोदें। २४ घंटे के पश्चात् इस तक्र को निकाल कर नया तक्र डाल दें। ३ दिन पश्चात् ५ सेर गोतक्र में डाल कर अग्नि पर रखदें। जब हरड़ इतनी मुलायम हो जावें कि उनकी गुठली निकल सके तब अग्नि से उतार लें और सावधानी से चाकू से गुठली निकाल कर उसमें नीचे लिखा चूर्ण भर कर डोरे से बांध दें।

चूर्ण—

१८३-पीपल पीपलामूल चव्य
चीते की छाल सोंठ काली मिर्च
नमक सेंधा सुहागा भुना
सांभर नमक काला नमक
शुद्ध गंधक कचलौना
हींगभुनी यवक्षार
सफेद जीरा भुना हुआ अजमोद
—प्रत्येक १-१ तोला।
निशोथ ६ माशा

—सब वस्तुओं का कपड़-छन चूर्ण करके नीबू या जम्भीरी के रस में खूब अच्छी तरह सान कर पत्थर के खरल में घोटें, अर्क खुश्क होने पर और डाल दें ३ दिन घुटाई करके कुछ खुश्क करलें और हरड़ में भर कर रखलें।

मात्रा-बच्चों को ३ माशा और युवा पुरुषों को ६ माशा, अधिक कठिन कोष्ठ वालों को १ तोला गरम जल के साथ व्यवहार करना चाहिये। प्रातः सायं या भोजन के बाद व्यवहार करें।

गुण-यह है तो शास्त्रीय प्रयोग, किन्तु हमने इसका प्रयोग धन्वन्तरि के प्रथम वर्ष के तृतीय अंक में देखा था, इस प्रयोग को हमने बना कर सैकड़ों रोगियों को दिया है और उत्तम फल प्राप्त किया है। विरेचक प्रयोग तो बहुत से हैं किंतु मलावरोध के लिये इससे उत्तम प्रयोग ढूंढ़ने पर भी नहीं मिलता। यह प्रयोग मलावरोध के रोगियों के लिये अत्युत्तम है। जिन रोगियों को दस्त साफ न आता हो या कभी २ पेट में दर्द होता हो, अग्नि मन्द हो गई हो उन्हें बड़ा लाभ करता है। जो मलावरोध पर्पटी के व्यवहार से ठीक नहीं होता वह इससे नष्ट हो जाता है। यह प्रयोग केवल दस्तावर ही नहीं है अपितु अग्नि को तीव्र करने वाला और पाचक भी है। आंतों के संग्रहीत मल को निकाल देता है और फिर मल को संग्रह नहीं होने देता। इसके प्रयोग से मलावरोध के पुराने रोगियों को हमने आरोग्य किया है, हां जैसा पुराना मलावरोध हो, वैसे ही औषधि का भी कुछ अधिक समय तक सेवन करना चाहिये।

ज्वर के पश्चात् बहुत से रोगियों की प्लीहा बढ़ जाती है अग्नि मन्द होजाती है, दस्त साफ नहीं रहता और खुश्की अधिक रहती है इस दशा में इसका प्रयोग उत्तम रहता है।

अर्श की उस अवस्था में भी जब मल कड़ा होने से मस्सों में दर्द होता हो इस औषधि का प्रयोग लाभदायक है।

सावधानी—हरड़ यथासाध्य उत्तम लेनी चाहिये। गरम करते समय भी सावधानी की आवश्यकता है। अधिक अग्नि लगने से हरड़ मुलायम हो जायगी और चूर्ण भरना कठिन हो जायगा, इसी प्रकार कम अग्नि लगने से स्वाद उत्तम नहीं रहेगा।

कफज शिर दर्द नाशक प्रयोग--

१८४-बादाम की मींग चिरोंजी
तिल राई पिस्ता
—प्रत्येक १-१ तोले।
लोहवान (कौड़िया) ६ मांशे
कुचला बिना शुद्ध कुटे हुए ९ माशे

—सब वस्तुओं को पानी में बारीक पीस लें और घी डाल कर (लूपरी-पुलटिस) बना लें—और सिर एवं माथे पर पीड़ा के समय बांध दें।

गुण-यह प्रयोग वातज और कफज सिर दर्द के लिये बड़ा उत्तम है। पित्तज सिर दर्द नाशक प्रयोग ही अधिक व्यवहारमें आते हैं। जब उनसे लाभ नहीं होना तो प्रायः रोगी डाक्टरों की शरण में चले जाते हैं। यह प्रयोग शीत काल के सिर दर्द में बड़ा लाभ करता है। पुराने सिर दर्द के रोगियों पर भी हमने इसे व्यवहार कर लाभ उठाया है। इसका प्रयोग हमने धन्वन्तरि के प्रथम वर्ष के ११ वें अङ्क में देखा था, उसके पश्चात् अब तक बहुत से रोगियों पर सफलता पूर्वक व्यवहार किया गया है।

सर्प काटने का अनुभूत इलाज—

यह प्रसिद्ध है कि बहराइच में सर्प काटने का इलाज अत्युत्तम होता है। यहां सैकड़ों रोगी ठीक हुए हैं। १०० से ९० रोगी अवश्य स्वस्थ होते हैं। वही प्रयोग यहां लिखा जा रहा है।

देशी नील (भारतवर्ष का बना) जिससे नीले कपड़े रंगे जाते हैं १ तोला लेकर ५ तोला पानी में घोलकर १५-१५ मिनिट के अन्तर से १-१ तोला रोगी को पिलाना चाहिये। यदि १ तोला से लाभ न हो तो और थोड़े २ अन्तर से जब तक कि लाभ ज्ञात न हो देते रहना चाहिये। कभी निराश नहीं होना चाहिये। रेहता जिला बहराइच में है, वहां के सर्प बहुत विष वाले होते हैं, यह प्रयोग वहां के राजा साहब ने ८ वर्ष तक सफलतापूर्वक प्रयोग कराया है।

श्रीयुत आयुर्वेद महामहोपाध्याय रसायन शास्त्री श्री० पं० भागीरथ जी स्वामी का यह प्रयोग धन्वन्तरि भाग ४ अङ्क १० में प्रकाशित हुआ था। उसके पश्चात् केवल एक रोगी पर हमने इसे व्यवहार किया है और लाभप्रद पाया है। हमारा विश्वास है कि शत-प्रतिशत नहीं तो भी बहुत अधिक लाभप्रद सिद्ध होगा। पाठकों को इसकी परीक्षा करनी चाहिये और यदि वास्तव में लाभप्रद सिद्ध हो तो वैद्यक और साहित्यक पत्रों द्वारा जनता और वैद्यों का ध्यान इधर आकर्षित करना चाहिये।

अर्श (बवासीर) की औषधि—

१८५-रीठे के छिलके को यवकुट करके तवे पर जलालें और पीस लें और उसके बराबर ही पपरिया कत्था का चूर्ण मिलाकर, ३-४ घण्टे खरल में घोलकर रखलें।

मात्रा-अनुपान—इसमें से १ रत्ती औषधि सुबह-शाम मलाई या मक्खन में मिलाकर खाने से, सात दिन में बवासीर नष्ट हो जाती है। इसके सेवन से कब्ज़, बवासीर, अर्श की खुजली

और मस्सों को भी बिल्कुल आराम और खून बन्द हो जाता है। यदि हर छटे महीने ७-७ दिन इस औषधि का सेवन किया जाय तो बवासीर के फिर उभरने का भी भय नहीं रहता। यह प्रयोग एक सन्यासी का बतलाया हुआ है और इससे ९० प्रतिशत रोगियों को लाभ होता है।

उक्त प्रयोग श्री० वैद्यरत्न गोपीनाथ जी गुप्त, सम्पादक "आरोग्य दर्पण" का धन्वन्तरि के प्रयोगांक में प्रकाशित हुआ था, हमने भी बनाकर बहुत से रोगियों पर व्यवहार करके उत्तम पाया है। रक्तार्श के वेग शान्त करने के लिये अच्छा प्रयोग है।

श्वास नाशक तैल—

१८६-लोहबान कौड़िया	१ पाव
जायफल	२ तोला
अजवायन देशी	२ तोला
दालचीनी	२ तोला
जावित्री	२ माशे

विधि—सब औषधियों को जव-कुट करके आकाश पातन यन्त्र द्वारा तैल निकाल ले। इस तैल की २ बूंद श्वास के दौरे के समय बतासे में रखकर खिलाइये।

गुण-इसका प्रयोग धन्वन्तरि चतुर्थ वर्ष के अङ्क ४ में प्रकाशित हुआ था, उसके पश्चात् हमने सैंकड़ों रोगियों पर इसका व्यवहार किया है। श्वास को समूल नष्ट करने वाली औषधि तो न अब तक हमारी दृष्टि में आई है और न शायद आये। हां, श्वास के वेग को शान्त करने वाली आशुफलप्रद औषधियां अवश्य प्राप्त हुई हैं। वह भी भिन्न २ अवस्थाओं में भिन्न २ औषधियों का प्रयोग लाभप्रद सिद्ध होता है। वातज एवं कफज श्वास के वेग में यह प्रयोग खूब लाभ करता है। पुरानी खांसी में जब कि रोगी यह कहे कि मैंने बहुत से औषधियां व्यवहार करली हैं लाभ नहीं होता, यह प्रयोग उत्तम रहता है।

इस प्रयोग का बनाना कठिन अवश्य है। विधि यथा-सम्भव खूब समझाकर लिखी है।

ग्लेसरीन के समान आयुर्वेदिक बत्ती—

१८७-देवदाली (बन्दाल)	१ तोला
अमलतास का गूदा	१ तोला
गुड़	२ तोला

—लेकर खूब बारीक पीस लें, और थोड़ा सा अरण्डी का तैल मिला कर, अंगुली बराबर मोटी बत्ती बनालें।

विधि—जिस समय पेट में दर्द और मल हो, लेकिन कड़ा होजाने के कारण दस्त न होता हो। या पेट में आंव बहुत अधिक इकट्ठी हो गई हो और १-२ बूंद बार-बार जाती हो उस समय इसका उपयोग लाभप्रद होता है। इस बत्ती को अन्डी के तैल से चुपड़ कर २-२॥ अंगुल, गुदा में चढ़ा देनी चाहिए। अगर पेट में आंव होगी तो १ साथ निकल जायगी किसी २ रोगी को १ ही बत्ती से पूर्ण लाभ नहीं होता। उस अवस्था में बत्ती कई बार लगाने से किसी प्रकार हानि नहीं होती। यह बत्ती ग्लेसरीन के समान ही उपयोगी हैं। (प्रयोगांक पृष्ठ ४०४)

स्तम्भन-योग—

१८८-उत्तम संजीवनी सुरा या ब्रांडी	१५ तोला
उत्तम शुद्ध शिलाजीत	१ तोला

केशर काश्मीरी	१ तोला
लोवान कौड़या	१ तोला
कस्तूरी	१ तोला
अम्बर	३ माशा
अफीम	६ माशा
कर्पूर	३ माशा

—सब चीजों को पीस कर सुरा में डाल कर खूब हिलावें, तीन दिन तक पड़ा रहने दें और प्रति दिन तीन बार हिला दिया करें। चौथे दिन औषधि को नितार कर किसी कांच की डाट वाली शीशी में भर कर रखलें।

मात्रा—५ से१० बूंद तक दूध १ तोले में मिलाकर सेवन करें। ऊपर से शक्ति के अनुसार और दूध पीलें।

इस प्रयोग के व्यवहार से वीर्य पुष्ट होता है और स्तम्भन भी होता है। शीत-ऋतु में अमीर लोगों को व्यवहार करने से योग्य उत्तम औषधि है। इसका प्रयोग प्रयोगांक में प्रकाशित हुआ था, उसके बाद बहुत से रोगियों को हमने भी सेवन कराया है और प्रयोग को उत्तम पाया है।

वैद्यों से परामर्श

परामर्श नं० १—

एक बच्चा की उम्र ३ साल की है, उसे भूख और टट्टी खुलासा लगती है, कभी २ टट्टी दो दफा से भी ज्यादा लग जाती है। बच्चे की आदत पहले और अब भी मिट्टी खाने की है। इसी बजह से पेट फूल गया है और हाथ-पैर कमज़ोर हैं। खड़ा नहीं हो सकता है और न चल-फिर सकता है कभी २ मामूली ज्वर भी हो आता है,बोलता नहीं है सिर्फ 'भा' 'भू'(जल) या 'उ' 'उ' ऐसे शब्द बोलता है। समझता सब है, उसे किसी चीज़ की जरूरत होने पर इशारा से मांग लेता है, सुनता अच्छी तरह से है, आंख का रंग सफेदी पर है।

इस समय मैं इलाज कर रहा हूँ परन्तु मैं वैद्य महाशयों से सम्मति लेना चाहता हूँ कि ऐसे बच्चों को कौन २ से प्रयोग करना चाहिये तथा कोई उत्तम अचूक औषधि जो परीक्षित होवे तो लिखने की कृपा करें।

—अम्बालाल जैन, जधाजा।

परामर्श नं० २—

मरीज की बगलों में से दुर्गन्ध आती है, जिस को करीब ८ साल हो गये फिटकरी मलने से २-४ दिन को बन्द होजाती है फिर आने लगती है। वैद्यों से प्रार्थना है कि कोई अनुभूत योग लिखने की कृपा करें।

—मेवाराम जी वैद्य।

परामर्श नं० ३—

वनौषधियों में भिलावा वायु और कफ जन्य रोगों की उत्तम औषधि है, भिलावा कुष्ठ, अर्श, ग्रहणी, गुल्म, शोथ, आनाह, कृमि, कफ, वात, श्वित्र आदि नाशक है और यह कषाय पाचक स्निग्ध, तीक्ष्ण, उष्ण, छेदन, भेदन, मेद्य, वह्निकर तथा लघु स्वभाव वाला है।

शङ्का—भिलावा वात, कफ नाशक है और मेद्य करता है मेद्य धातु कफ का निरूपण है। यह कफ को हरता है और मेद्य करता है। तो इस बात का समाधान योग्य व्यक्ति अवश्य करें।

—वृन्दावन भाई भगवन्त भाई।

'धन्वन्तरि' (रेडियो स्टेशन से)

(विविध-समाचार)

हम 'धन्वन्तरि' कार्यालय से बोल रहे हैं। सितम्बर माह के समाचार हैं। स्थान की कमी के कारण संक्षिप्त में ही सुनाऊंगा, सम्भलकर सुनियेगा। यह तो आपको मालूम ही होगा कि ३५ वां अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन कानपुर में होने जा रहा है। श्री० स्वागत मंत्री जी सूचित करते हैं–

स्वागत-समिति-अधिवेशन—

ता० ३०-६-४६ को सायंकाल ५ बजे श्री० ठाकुर नैनसिंह जी के सभापतित्व में प्रारम्भ हुआ। मङ्गलाचरण के बाद गताधिवेशन की कार्यवाही सर्व सम्मति से स्वीकृति हुई। उपसमतियां तथा शिक्षा सम्मेलनादिकों के अधिकारियों एवं सदस्यों का निर्वाचन किया गया। सम्मेलन में निदान, चिकित्सा व द्रव्य ये तीन परिषद करने का निश्चय किया गया। सम्मेलन का स्थान आयुर्वेद विश्व विद्यालय कानपुर तथा समय दिसम्बर १९४६ की अन्तिम तारीखें निश्चित की गई।

विभिन्न स्वागत समितियों के अधिकारी वर्ग की नामावली भी मिली है लेकिन स्थानाभाव के कारण नहीं दे सके हैं। पाठक एवं समाचार प्रेषक क्षमा करें। देहरादून से श्री. वैद्य जगदीश जी लिखते हैं।

सभापति युक्त-प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन—

पं० विश्वनाथ जी द्विवेदी, ध्यान दें। अभी तक अक्टूबर १९४५ में देहरादून में होने वाले सम्मेलन का आय-व्यय-लेखा स्वागत मंत्री द्वारा प्रकाशित नहीं हुआ है। हिसाब में कुछ राशियां एसी थीं, जिनका मामला विचारणीय था।

कटनी वैद्यसभा में भोर कमेटी के विरोध में स्वीकृत प्रस्ताव श्री प्रयाग दत्त जी राजवैद्य द्वारा प्रेषित किया गया है। सुनिये —

कटनी वैद्यसभा की तरफ से भोर कमेटी का घोर विरोध—

इस अनादि काल से चली आई हुई आयुर्वेद विद्या को छिन्न-भिन्न करने के वास्ते इस भोर कमेटी का जन्म हुआ है, परन्तु यह आयुर्वेद-विद्या अब तक अपने ही पग से खड़ी हुई है। इसके द्वारा हर एक प्रांन्त में सर्वजन समूह का उपकार होना है। इससे सभा भोर-कमेटी का विरोध करती है और सरकार से अनुरोध करती है कि वह इस आयुर्वेद विद्या की ओर ध्यान दे जिससे इसकी उन्नति दिन प्रति दिन होती रहे और जन समूह की पूर्णतया सेवा होती रही।

१२ वां पंजाब प्रा० वैद्य सम्मेलन—

इस वर्ष बड़े समारोह पूर्वक पञ्जाब के सुप्रसिद्ध नगर गुजरांवाला में प्रसिद्ध देश भक्त व योगी रामनाथ जी शास्त्री की अध्यक्षता में ता० १५-१७ नवम्बर को हो रही है. जिसमें प्रांत भर के शास्त्र महारथी वैद्यगण सम्मिलित होंगे। इस अवसर पर श्रीयुत वैद्य रामप्रसाद जी राजवैद्य पटियाला वाले धन्वन्तरि पताका लहरायेंगे।

जबलपुर वैद्य-सभा की आम सभा की बैठक ता० ३-८-४६ को सभा के सभापति श्रीमान् पं० द्वारकाप्रसाद जी शर्मा के निवास स्थान पर हुई, निम्न-लिखित प्रस्ताव

सभा में पास किया गया और निश्चय किया गया कि इस प्रस्ताव की १ प्रतिलिपी माननीय डा० हसन सा० को भेजी जावे । प्रस्ताव सुनियेगा—

वैद्य-सभा जब्बलपुर में स्वीकृत प्रस्ताव—

जब्बलपुर की सर्व प्रथम प्राचीन तम वैद्य सभा मध्य-प्रांत तथा बरार प्रांतीय स्वास्थ मंत्री माननीय डा० एस० एम० हसन सा० से यह प्रार्थना करती है कि आयुर्वेद सम्बन्ध में जो एडवाइज़री कमेटी (परामर्श दात्री समिति) बनाई जाने वाली है उसमें इस सभा के कार्य कर्त्ताओं से भी अवश्य सम्मति ली जावे ।

इस प्रस्ताव के साथ 'वैद्य-सभा' का संक्षिप्त इतिहास भी भेजा जाय जिससे इसकी प्राचीनता और इसने क्या-क्या कार्य किये यह श्री० डा० हसन सा० को मालूम हो जाय ।

'आयुर्वेदाचार्य-धन्वन्तरि', पं० शिवनाथ जी शास्त्री का सत्कार समारोह—

बुरहानपुर के सुप्रसिद्ध एवं लोक प्रिय समाज कार्य कर्त्ता पं० शिवनाथ शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि (देहली) काव्यतीर्थ को महाकौशल भारतीय वैद्य सम्मेलन के उप सभापति चुने गये, इसलिये स्थानीय वैद्य सभा की ओर से ता०-२८-८-४६ को दिन के ४-३० बजे वैद्यराज गणपतिराव जी के भवन पर पं० रामचरण जी दीक्षित की अध्यक्षता में अभिनन्दन पत्र समर्पित किया गया । पं० विश्वनाथ जी शास्त्री, कालिका प्रसाद जी, पं० बालकृष्ण जी, श्री नाथूराम जी हकीम इत्यादि वक्ताओं का पं० शिवनाथ जी शास्त्री के गुण-गौरव पर भाषण होकर फलाहार, पान, सुपारी और प्रधान मंत्री डा० तरडे जी के आभार प्रदर्शन करने पर कार्य-क्रम समाप्त हुआ ।

वैद्य सेवा संघ, ओड़ो (गया)—

कतिपय वैद्यों एवं अन्य आयुर्वेद प्रेमियों के सहयोग से वैद्य सेवा संघ की स्थापना की गई है, जिसका उद्देश्य है बड़े २ मेलाओं में जनता की सेवा करना तथा आयुर्वेद प्रचार आदि करना । कार्यालय सम्प्रति मंत्री जी के निवास स्थान पर रहेगा, कार्य की देख-भाल भी वही करेंगे ।

पदाधिकारियों में सर्व श्री हरनारायण जी चतुर्वेदी प्रिन्सीपल आयु० कालेज पटना, राजेशदत्त शास्त्री हिन्दू विश्व विद्यालय बनारस अध्यक्ष चुने गये हैं ।

—पं० "द्वारिका" मिश्र, मंत्री ।

धन्वन्तरि की पुरानी फाइलों की आवश्यकता—

हमें धन्वन्तरि की पुरानी फाइलें स्त्री-रोगांक और बालरोगांक की कई प्रतियां चाहिये । यदि दोनों की पूरी फाइलें न दे सकें तो केवल विशेषांक ही दें । इसके मूल्य में हम से धन्वन्तरि के वर्ष भर का मूल्य लें, नगद अथवा पत्र ।

केवल विशेषांक देने पर वर्तमान विशेषांक रक्त-रोगांक का मूल्य या विशेषांक लें । जो सज्जन देने की कृपा करें वे हमें नीचे पते पर पत्र द्वारा सूचित करें ।

—पुरुषोत्तमदास वैद्य, मौ० उत्तर टोला,
पोस्ट मऊनाथ भंजन (आजमगढ़) ।

अपने एजेन्टों से निवेदन—

वैद्य बांकेलाल जी के धन्वन्तरि कार्यालय से प्रथक हो जाने की सूचना भेजते हुए अपने कृपालु एजेंन्टों से निवेदन किया था कि हम पर व धन्वन्तरि कार्यालय पर पूर्ववत् प्रेम-विश्वास बनाये रखें। उसके फल स्वरूप हमको बधाई के पत्र तथा स्नेह परिचायक रूप में आर्डर प्राप्त हुए हैं। उनके लिये हम आभारी हैं और अपने एजेंन्टों को हृदय से धन्यवाद देते हैं। उन पत्रों का प्रथक-प्रथक उत्तर देना तो हमारे लिये अति कठिन है कृपया इसी प्रकाशित वक्तव्य को अपना उत्तर समझेंगे और हमारी असमर्थता के लिये क्षमा करेंगे। इस अवसर पर हमारे पास आर्डर इतने अधिक आगये हैं कि हम उन्हें समय पर सप्लाई करने में अयोग्य साबित हो रहे हैं। हां, हम यह शीघ्र ही प्रयत्न कर रहे हैं और विश्वास दिलाते हैं कि भविष्यमें आर्डर समय पर सप्लाई किये जाने की व्यवस्था होगी। हमारे बहुत से एजेन्ट बहुत थोड़ा-थोड़ा सा आर्डर देते हैं तथा २-३ दिन बाद आवश्यकता प्रतीत होने पर पत्र लिखते हैं, कि अमुक औषधि आर्डर में और शामिल करली जाय। ५-६ दिन बाद कुछ औषधियों के लिये पुनः आज्ञा दे बैठते हैं। इस प्रकार उनके प्रथम आर्डर के बाद पत्रों एवं परिवर्तनों का तांता सा लग जाता है और हमको उनकी आज्ञा पालन में असुविधा, कठिनाई तथा देरी होती है। प्रार्थना है प्रथम बार में ही सोच-समझ कर अपना स्टाक व आवश्यकता देख कर बड़ा आर्डर लिखना चाहिये।

कतिपय एजेन्ट आर्डर अस्पष्ट अधूरा तथा काट-पीट कर अव्यवस्थित भेजते हैं। प्रार्थना है कि आर्डर देते समय निम्न बातों का ध्यान अवश्य रखना चाहिये।

(१)-औषधियों के नम्बर, तोल, मूल्य, आदि सभी बातें स्पष्ट लिखनी चाहिये।

(२)-एजेन्सी नम्बर हर पत्र में ऊपर बड़े अक्षरों में अवश्य लिखा होना चाहिये।

(३)अपना पूरा पता तथा रेलवे स्टेशन का नाम रेलवे लाइन हर पत्र में अवश्य लिखना चाहिये।

४)-यदि पार्सल पोस्ट द्वारा ही मंगानी हो तो स्पष्ट लिख देना चाहिये।

(५)-मालगाड़ी का बुकिंग प्रायः बंद रहता है और हमको पार्सल सवारी गाड़ी से भेजनी पड़ती है। ऐसी दशा में आधा रेल भाड़ा एजेन्ट को देना होता है। इसका भी ध्यान रखना चाहिये।

निवेदक—

एजेंसी मैनेजर

धन्वन्तरि के ग्राहकों को 'धन्वन्तरि' के विषय में पत्र—व्यवहार करते समय ग्राहक नम्बर अवश्य लिखना चाहिये।

दिवाली गई, शरदी आई

शरद ऋतु खोई हुई शक्ति को पुनः प्राप्त करने के लिये अत्युत्तम समय है। आप निम्न प्रसिद्ध आयुर्वेदिक रसायनों का सेवन कर साल भर के लिये शक्ति-संचय कर लीजिये।

१–सिद्ध मकरध्वज नं० १
१ तोला ३३) १ माशा ४)
२–मल्ल चन्द्रोदय
१ तोला ३५) १ माशा ४)
३–अभ्रक भस्म नं० १
(१००० पुटी) १ तोला २१) १ माशा २॥)
४–स्वर्ण वसन्तमालती नं० १
१ तोला २०) १ माशा २।)
५–बसन्त कुसुमाकर रस–
१ तोला २०) १ माशा २।)
६–चन्द्रप्रभावटी
२० तोला १०) १ तोला ॥।)
७–जयमङ्गल रस
१ तोला १४) १ माशे १॥।)
८–च्यवनप्राश (अष्टवर्ग-युक्त)
१ सेर ४) पाव सेर १॥)
९–द्राक्षासव
१ बोतल २)
१०–मकरध्वज वटी
४१ गोली की शीशी २॥=)

हमारी सभी आयुर्वेदिक औषधियां मां के दूध के समान निर्दोष एवं विशुद्ध होती हैं। ५० वर्ष के लम्बे अनुभव के आधार पर सर्वोत्तम आयुर्वेदिक औषधियां निर्माण की जाती हैं। बड़े २ वैद्य, कविराज, धर्मार्थ-चिकित्सालय एवं सरकारी डिस्पेंसरी हमारी औषधियों को सफलता-पूर्वक व्यवहार कर रहे हैं।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

दवा के सच्चे मोती

वैद्यो ! हकीमो !! तथा फार्मेसी वालो !!!

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई, खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारत के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं, निहायत किफायत से मिलते हैं। धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने की कृपा करें।

पता:—नगीनदास वीरचन्द जवेरी, ४४-४६, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३।

वैद्य देवीशरण गर्ग प्रधान सम्पादक "धन्वन्तरि"
अध्यक्ष—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़

द्वारा आविष्कृत दो रत्न

ज्वरारि

ज्वर-जूड़ी, तिजारी की क्विनीन रहित, आयुर्वेदीय अक्सीर महौषधि।

कासारि

सभी प्रकार की खांसी के लिये परीक्षित, अनमोल दवा; स्वरयन्त्र तथा फुफ्फुसों के सभी रोगों के लिये उत्तम।

मूल्य—

१ शीशी १)   १२ शीशी ६)

बालकों के लिये

- ○ सर्वोत्तम
- ○ मीठी
- ○ निरापद
- ○ रोग नाशक
- ○ स्वास्थ्य-वर्धक

अनमोल प्रसिद्ध घुटी

'धन्वन्तरि'

कुमार कल्याण घुटी

ग्राहक नम्बर————

सेवा में श्री

2803
श्री पुस्तकालयाध्यक्ष
गुरुकुलविश्वविद्यालय
गुरुकुल. कांगड़ी
(Hardwar)

धन्वन्तरि

भाग २१
अङ्क ५

—सम्पादक—
वैद्योपाध्याय देवीशरण गर्ग
जे. पी. अग्रवाल बी. एस. सी.

अक्टूबर
१९४६

विषय-सूची

यू०पी० इण्डियन मैडीसन बोर्ड का चुनाव ३४५
आयुर्वेद-विशेषता ३४६
आयुर्वेदोपदेशः ३४७
वात-रक्त ३४६
सतत यौवन-विधान ३५८
कुष्ठ-चिकित्सा ३६२
मृगी-मूर्छा रोग की प्राकृतिक चिकित्सा ३६४
चिकित्सा-संकेत ३६६
लशुन ३६७
आमातिसार पर उत्तम योग ३७
बृ० योगराज गूगल के आश्चर्यप्रद गुण ३७
चमत्कारिक स्व-परीक्षित प्रयोग ३७
विविध समाचार ३७४
धन्वन्तरि त्रयोदशी उत्सव ३७

हमारी डाक।

"कृपा कर पत्र पाते ही बंगभस्म नं० १ (हरताल द्वारा जारित) जो कि सर्व प्रमेह नाशक अद्वितीय पाई गई है १० तोला बजरिये डाक वी.पी. पार्सल से भेज दीजियेगा।"

—पं० शिवकुमार शुक्ल शास्त्री, कहिंजरी (कानपुर)।

"पहिले तो मुझे ऐसा समझ पड़ता था कि ऐसे कई कारखाने भारत में हैं जो इश्तहार ब करके पैसा कमा रहे हैं, किन्तु सेवन कराने पर आपकी दवा लाभदायक प्रतीत हुई।

—वैद्य दिल्लीपति मास्टर, राजनगर (छत्तरपुर)।

"मैंने आपके यहां से स्त्री-सुधा व मधुकाद्यवलेह मंगाया वी.पी. द्वारा। ये औषधि मैंने एक रिसलदार की स्त्री जो सात वर्ष से दुखित थी सेवन कराई। क्या दवा है-अमृत है, इतना पुराना मर्ज आठ-दस खुराक में नष्ट हो गया। मैं निस्पृह और ईमानदारी से लिख रहा हूं कि आपका कार्यालय अत्यन्त सच्चा है।

—पं० शिवनन्दनलाल पाठक, कबरई (हमीरपुर)।

"आपके श्वासामृत की मैं कहां तक तारीफ करूं मैंने हज़ारों दवा अपनी बेटी की की और बहुत सी डाक्टरी, यूनानी, सियानी दवा की मगर आपके श्वासामृत की एक शीशी मंगाई थी, वास्तव में जगत्प्रसिद्ध माननीय है!"

—वैद्य बचानसिंह, कुम्हरौर।

"श्वेतकुष्ठ (Leucoderma) पर मेरे मित्र ने आपके यहां की बनी दवा भेजी थी। उसका उपचार हमारे केलकू चालू कर दिया है। अत्यानन्द है कि १५ दिन में रुग्णा को बहुत आराम हो गया है।

—दामोराव व्यंकटराव जोशी मालदेकर पो० भोकर, (नांदेड़)।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़
[५० वर्ष पुराना आयुर्वेदीय औषधियों का विश्वस्त कारखाना]
औषधियों के दुकानदार एजेंसी लेकर थोड़ा परिश्रम कर
पर्याप्त आमदनी करें। नियम आज ही मंगावें।

Printed and Published by Vaidya D. S. Garg at the Dhanwantari Press, Bijaigarh

वात-रक्त ।

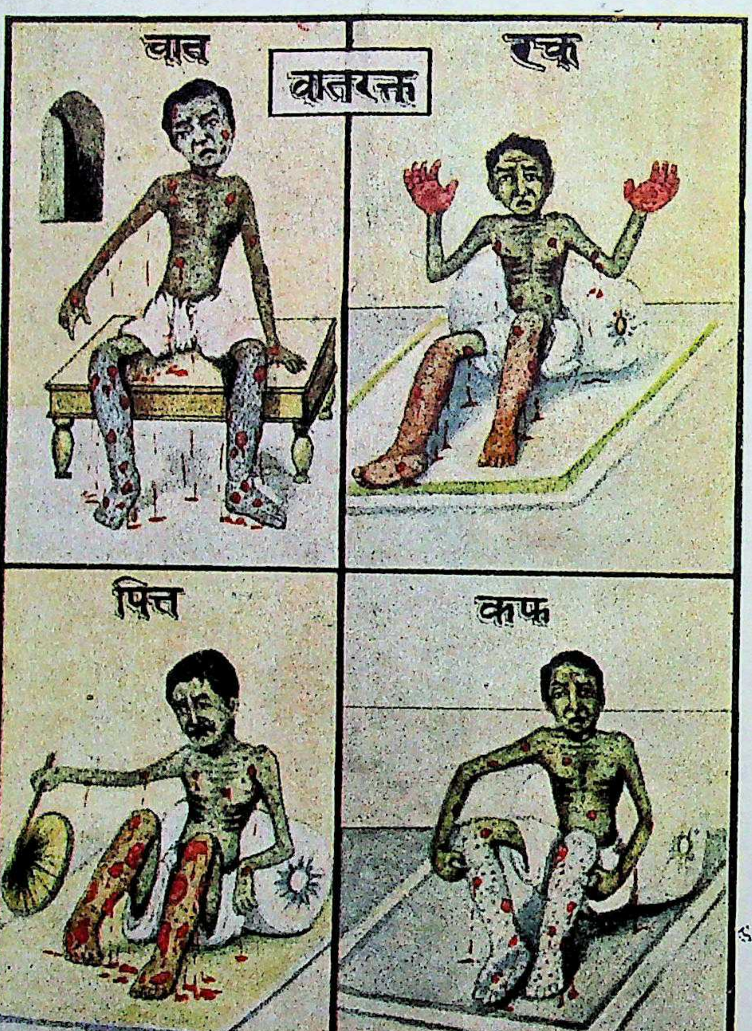
वात
वातरक्त
रक्त
पित्त
कफ

इस चित्र में वातज, रक्तज, पित्तज और कफज वात-रक्त रोगियों के चित्र अलग २ दिये गये हैं जिससे पाठक इनके लक्षणों के सूक्ष्म अन्तर आसानी से समझ सकें।

[पृष्ठ ३४६ पर देखें ।]

Approved by Dept. of Public Instructions of Central Provinces & Berar.

MURARI ART AGRA

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र
धन्वन्तरि
या औषधी पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगंपुरा।
मनैनुबभ्रूणामहं शतं धामानि सप्तच॥
अक्टूबर
सचित्र मासिक पत्र
१९४६

यू० पी० इन्डियन मैडीसन बोर्ड का चुनाव

यह सर्व-विदित है कि यह समय आयुर्वेद एवं अन्य देशी चिकित्सा-पैथियों के लिये परीक्षा-काल है। राजनैतिक परिवर्तनों के साथ-साथ अन्य हर ओर परिवर्तन होने अनिवार्य हैं। यदि हमारी चिकित्सा-पद्धति उपयोगी, सस्ती एवं रुचिकर है, और हमारे आयुर्वेद-कर्णधार कर्मठ हैं तो कोई कारण नहीं कि हमारी राष्ट्रीय सरकार, देशी चिकित्सा-पद्धतियों को क्यों न मान्यता देगी और उनको तिरस्कृत करते हुए विदेशी पैथियों, विदेशी दवाओं पर धन व्यय कर देश के धन को देश से बाहर क्यों कर फेंकेगी।

हमारे राजनैतिक कर्णधार सभी चिकित्सा-पैथियों से अनभिज्ञ हैं, उनके सलाहकार, स्वास्थ्य-विभाग के ऊंचे और नीचे अफसर सभी एसे हैं जो कतिपय भारतीय होते हुए भी विदेशी चिकित्सा पद्धतियों के प्रकाण्ड पण्डित हैं और प्रारम्भ से अब तक ऐसे वातावरण में पले हैं जिसने उनके हृदय में यह दृढ़ता से बिठा दिया है कि देशी चिकित्सा पद्धतियां अवैज्ञानिक एवं आतताइयों की पद्धति हैं। वे कभी यह विचार भी नहीं करते कि वे देशी चिकित्सा-पद्धति रूपी सागर में गोते लगाकर देखें कि इसमें कितने रत्न भरे पड़े हैं जिन्हें कि वे अभी तक पत्थर के टुकड़े समझे हुए थे। ये ही सलाहाकार विदेशियों के हाथ के खिलौने बने हुए हैं और लम्बे-चौड़े वेतन लेते हुए विदेशी पद्धतियों के गुणानुवाद गाते तथा हमारी देशी पद्धतियों के प्रति विष-वमन करते रहे हैं। इन्हीं के प्रचार के शब्द हमारे नेताओं के कानों में निरन्तर पड़ते रहते हैं, अतएव उनका ध्यान भी उसी तरफ रहता है। शायद आप पूंछ बैठें कि देशी पैथियों के विद्वान अपना प्रचार क्यों नहीं करते, तथा वे अपनी पैथियों की वैज्ञानिकता एवं उपयोगिता जनता तथा जनता के नेताओं के समक्ष क्यों नहीं रखते हैं? इसका उत्तर केवल यही है कि निराश्रित, तिरस्कृत हमारी पैथियों के चिकित्सकों को अपने पेट-पालन से इतना समय ही नहीं मिलता कि वे इस ओर

ध्यान दे सकें। उन्हें सरकार से कोई साहयता या लम्बा-चौड़ा वेतन नहीं मिलता कि वे उसके आधार पर निश्चित होकर अपने सिद्धान्तों एवं विचारों को प्रकट कर सकें। यही एक मात्र कारण हमारी अन्वेषणात्मक प्रगति में रोड़ा बना हुआ है।

अब विचार यह करना है कि हमको किस प्रकार अपनी स्थिति को सुधारना चाहिये। ऐसे स्थानों पर जहां कि हमको अपने विचार राज्य कर्मचारियों, राज्य की ओर से बनी कमेटियों के समक्ष उचित रूप में रखने का अवसर मिले, उन कर्मठ एवं उद्योग-शील व्यक्तियों को नियुक्त करना चाहिये जो स्वप्रतिष्ठा की अपेक्षा अपने सिद्धान्तों का मान अधिक करते हों और अपने सिद्धान्तों पर आघात होने पर विचलित हो उठें तथा यदि आ पड़े तो अपने पद को भी त्याग कर जनता को दिखादें कि हमारे प्रति क्या अन्याय हो रहा है? उन व्यक्तियों को नियुक्त करना निरर्थक होगा कि जो अपने विचारों की प्रत्यक्ष अवहेलना देखते हुए भी स्वप्रतिष्ठा एवं समाज में अपना उच्च व्यक्तित्व प्रदर्शनार्थ पद से बुरी तरह चिपके रहें।

यू० पी० इन्डियन मैडीसन बोर्ड का चुनाव शीघ्र ही होने वाला है। इसके लिये रजिष्टर्ड वैद्यों की ओर से ४ व्यक्ति चुने जायंगे। हर रजिष्टर्ड वैद्य का कर्तव्य है कि वह अपना वोट देने से पूर्व अपने वोट का मूल्य सोचते हुए यह पूरी तरह से विचार ले कि मैं जिस व्यक्ति को वोट दे रहा हूँ वह प्रतिनिधित्व के योग्य है भी या नहीं। किसी पार्टी बन्दी के दलदल में न फंसते हुए सच्चे कर्मवीर को वोट देना ही आपका कर्तव्य है। यदि आपने किसी के प्रभाव में आकर, किसी पार्टी के चक्कर में पड़कर योग्य व्यक्ति की अवहेलना करदी तो आप अपनी उस पद्धति के प्रति अपराधी होंगे जिसे समुन्नत बनाना आपको अभीष्ट है।

वोट देने से पूर्व सभी उम्मीदवारों के ऊपर शान्त हृदय से विचारिये और जो व्यक्ति उत्साही, योग्य, कर्मठ आपके मन में जंचे उसे ही वोट दीजिये। आप किसी भी पार्टी या व्यक्ति के असर में न आकर स्वकर्तव्य पालन कीजिये. यही मेरी इच्छा एवं प्रार्थना है। —वैद्य देवीशरण गर्ग,

प्र०-सम्पादक।

'आयुर्वेद-विशेषता'

रचयिता-वैद्य श्री. पं. चन्द्रशेखर जी जैन शास्त्री,
अमृत कार्यालय, जवाहरगंज, जबलपुर।

अजातानामनुत्पत्तौ, जातानां विनिवृत्तये।
रोगाणां यो विधिर्दृष्टः, स आयुर्वेद उच्यते ॥१॥

भावी रोग-जनक-कारण हर,
प्रस्तुत--रोगों का संहार।
करता आयुर्वेद हमारा,
धन्य-धन्य है बारम्बार ॥२॥

आयुर्ज्ञान कराकर प्रतिपल,
रोगोत्पादक—कारण—नाश।
करता आयुर्वेद सदातन,
उन्नत-रवि नैरोग्य-प्रकाश ॥३॥

नीरोगी नीरोग रहि, रोगी होय निरोग।
ऐसी विधि जानें वही, आयुर्वेद प्रयोग ॥४॥

आयुर्वेदोपदेशः

लेखक–न्यायायुर्वेदाचार्य वैद्य पं० चन्द्रशेखर जैन शास्त्री, न्यायतीर्थ,
संचालक–अमृत कार्यालय, जवाहरगंज, जबलपुर (सी० पी०)।

संसार में प्रत्येक प्राणी सुखमय जीवन बिताना चाहता है। किन्तु सुखमय जीवन बिताने अथवा सुखमय जीवन बनाने का उपाय नहीं जानता, अतएव प्रायः दुःख मय जीवन ही बिताता है। प्राचीन ऋषियों-आयुर्वेदाचार्यों ने जनता जनार्दन के सुखमय जीवन बिताने में प्रमुख कारण इस 'आयुर्वेद' का उपदेश दिया है। सचमुच 'आयु के ज्ञान' (आयुर्वेद) द्वारा प्रत्येक व्यक्ति इस भीषण बवंडर-ग्रस्त संसार यात्रा को सुगम व सुतर बना लेता है। अतएव प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि वह अपने देश को इतना नहीं तो अपनी समाज को और इतना भी नहीं तो अपने कुटुम्ब को कुछ न हो तो कम से कम अपने को सानन्द, सुव्यस्थित एवं नीरोग रखने के लिये आयुर्वेद का अध्ययन करे।

अब प्रश्न यह है कि आयुर्वेद क्या है? अथवा आयुर्वेद किसे कहते हैं? इस आवश्यक प्रश्न को हल करने के लिये विभिन्न आचार्यों ने नवीन-नवीन प्रणालियों और अनुभवों का अवलंबन लिया है; किन्तु फिर भी सुखमय जीवन बिताना इस उद्देश्य से कोई भी व्याख्या पथभृष्ट न हुई।

अब आपके समक्ष कतिपय उत्तमोत्तम व्याख्यायें रखी जा रही हैं, पर हम उनको अत्यन्त संक्षिप्त रूप में लिख रहे हैं। आगे चलने वाली इस 'लेख-माला' में आयुर्वेद सूत्र रहेंगे। जैसा कि आप इस लेख के शीर्षक में 'आयुर्वेदोपदेशः' नाम से देख रहे हैं। और तदनन्तर उस पर संक्षिप्त व्याख्या रहेगी। नवीनायुर्वेद-प्रेमियों तथा छात्रों एवं साधारण जनता के लिये यह उपाय सर्वोत्तम प्रमाणित होगा।

(१)–"आयुर्विद्यते विचार्यतेऽनेने त्यायुर्वेदः"–इसके द्वारा शरीर व आत्मा का योग निश्चित समय तक सानन्द बना रहे, अर्थात् प्राणी जब तक जीवित है, तब तक उसे अपने जीवन-सम्बन्धी विषयों का ज्ञान जिसके द्वारा होता है, उसे आयुर्वेद कहते हैं। 'आयु;–'जीवन का' 'वेदज्ञान' अर्थात् जीवन विज्ञान ही आयुर्वेद है। यह आयुर्वेद का शब्दार्थ मात्र है।

नोट–ऊपर कारण-साधन रूप व्युत्पत्ति की गई है। भाव साधन व कर्म साधन में भी व्युत्पत्ति की जाती है, किंतु भावार्थ सबका एक ही पड़ता है।

(२)-'आयुर्हिताहितम्' :–आयु का हित अथवा आयु का अहित जिसके द्वारा जाना जाय, उसे आयुर्वेद कहते हैं। अर्थात् इन प्रकृष्ट आहार-विहार विचारों से जीवन सुखमय व्यतीत होता है एवं इन निकृष्ट आहार-विहार-विचारों के द्वारा जीवन खतरे में पड़ जाता है। इन दोनों बातों का ज्ञान जिसके द्वारा व्यवस्थित स्पष्ट रूप में होता है, उसे 'आयुर्वेद' कहते हैं।

(३)–'व्याधेर्निदानम्':–जिसके द्वारा रोगों का निदान किया जाता है, उसे आयुर्वेद कहते हैं। अर्थात् रोगों का मूल कारण (निदान) क्या है? रोग क्यों पैदा होते हैं। इत्यादि विषयों का परिज्ञान जिसके द्वारा हो उसे 'आयुर्वेद' कहा जायगा रोगों के मूल कारणों को जान कर 'जीवधारी प्राणी'

उनसे बचकर अपनी जीवन रक्षा करता तथा सुखमय जीवन बिताता है।

(४)-'व्याधेः-शमनं तथा' जिसके द्वारा व्याधि का शमन किया जाय उसे आयुर्वेद कहते हैं। स्मरण रखिये आयुर्वेद ज्ञाता बीमारी को दबाता नहीं किन्तु उसका विनाश करने का उपाय बताता है, ताकि बीमारी फिर पैदा ही न हो सके। दूसरी चिकित्साओं से आयुर्वेदीय-चिकित्सा में जो असाधारणता है वह यही कि जहां अन्य पैथियों की दवाइयां उस रोग को तो दवा देती है, किन्तु साथ ही अन्य रोग को खड़ा कर देती हैं, तब आयुर्वेदीय चिकित्सा अपनी गौरवपूर्ण असाधारण प्रणाली द्वारा उस रोग को बिलकुल जड़मूल से निकाल देती है तथा साथ ही तन्निमित्तज-अन्य किसी दूसरे रोग को भी नहीं भड़कने देती।

नोट-आधुनिक चिकित्सक समुदाय डाक्टरों की देखा-देखी तत्काल रोगनाशक उपाय करने लगा है, आज ही बुखार आया, आज ही उतार दिया। बुखार की किस्म का ख़याल ही न किया। चट 'एन्टी फेबरिन' बुखार उतारने को दे दिया, आदि जघन्य प्रणाली का सहारा ले रहे हैं। यही कारण है कि रोगी एक रोग से छूट कर चट दूसरे के चक्कर में जा पड़ते हैं। यह एक ग़लत तरीका है जिससे बड़ी हानि हो रही है। हम यह भी समझते हैं कि यह दोष सर्वथा चिकित्सकों के मत्थे ही नहीं मढ़ा जा सकता। उसका पूरा उत्तरदायित्व अन्य पैथियों के प्रचार द्वारा रोगियों की तत्काल रोग दूर होने की भावना पर निर्भर अवश्य है। रोगी यदि २-३ रोज़ में ही ठीक नहीं होता तो वह झटपट डाक्टरों के पास चल देता है। अतएव जनता में आयुर्वेदिक भावना भरने की प्रमुख आवश्यकता है।

(५)-'अजातानामनुत्पत्तौ'-नहीं पैदा हुए रोगों को न पैदा होने का उपाय 'आयुर्वेद' है। नीरोग मनुष्य रोग के चक्कर में कदापि न पड़ सके, वह सदा सानन्द सुखमय जीवन बिताता रहे, इस प्रकार का उपाय परिज्ञान जिसके द्वारा किया जाता है उसी का नाम 'आयुर्वेद' है।

(६)-'जातानां विनिवृत्तये'-पैदा हुए रोगों को भागने का उपदेश जिसके द्वारा प्राप्त हो, वह आयुर्वेद है। अर्थात् यदि कोई रोग किसी कारण से हो जाय तो वह किस प्रकार दूर हो? उसके कारण तथा विकृतियों को किस प्रकार दूर किया जाय? इस विषय का असाधारण परिज्ञान जिसके द्वारा किया जाता है। वह ही 'आयुर्वेद' है।

नोट-५ तथा ६ को नं० ४ की ही व्याख्या माना जा सकता है। इस प्रकार आप देखेंगे कि आयुर्वेद ने किस प्रकार जीवन को सुखमय बिताने के मार्ग बताए हैं। **अतएव जो लोग सानन्द जीवन बिताना चाहते हैं उन्हें आयुर्वेद का अध्ययन अवश्यमेव करना चाहिये।**

संक्षेप में याद रखने के लिये जिस आधार पर उक्त व्याख्या की गई है उसे भी हम यहां रख देना अपना आवश्यक कर्तव्य समझते हैं, ताकि आयुर्वेद शिक्षार्थी उसके लाभ से वंचित न रहें।

(१) अयुर्हिताहितं (२) व्याधेर्निदानं (३) शमनं तथा।
उच्यते यत्रविद्भिः स 'आयुर्वेद' उच्यते ॥१॥
"अजातानामनुत्पत्तौ, जातानां विनिवृत्तये।
रोगाणां यो विधिर्दृष्टः, स आयुर्वेद उच्यते ॥२॥"

× × ×

इन दोनों श्लोकों को 'मुखाग्र' कर लेना चाहिये।

"इत्यायुर्वेदोपदेशः"

वात-रक्त

ले०-श्री पं. कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी बी.ए. आयुर्वेदाचार्य।

यह भयङ्कर रोगों में से एक ऐसा रोग है, जिसके विषय में पूर्णतया विवेचन अभी तक नहीं हुआ। इसके विषय में मत-भेद भी देखा गया है। अतः हम यहां इस निबन्ध में यथा बुद्धि इस रोग का वर्णन करेंगे।

इसे हिन्दी की प्रान्तीय भाषा में कहीं २ वायु-कोढ़, वायी कोढ़, खून-फिसाद आदि कहते हैं। इसमें हाथ पैरों का वर्ण कुछ गलित कुष्ठ जैसा ही होता है, इसीसे उसे कोढ़ संज्ञा कहीं २ प्रान्तीय भाषा में दी गई है, ऐसा जान पड़ता है। महाराष्ट्र भाषा में इसे 'सुनबहरी' सुप्त त्वचा रोग कहते हैं। बङ्गला में वातेरलोई रोग और अंग्रेजी में इसे गाउट कहते हैं।

निदान—

विशेषकर ज्यादा परिमाण में नमकीन, खट्टे, चरपरे, तीखे, जवाखार, पापड़ खारादि खारी-चिकने तथा गरम ऐसे पदार्थों के सेवन करने से; अपक्व भोजन कच्चे फलादि को खाने से, मांस मछली के खाने से और विशेषतः सड़ा हुआ या धूप में सुखाया हुआ मांस या मछली तथा गौड़ आदि पूर्व देश के जीवों का मांस खाने से; तिलों की खल को खाने से; मूली, कुलथी, उड़द, लोबिया बैंगन, कचरिया, सरसों आदि शाकों के खाने से; ईख, आरनाल, सौवीर युक्त, खट्टी छाछ, खट्टा दही, सुरा और उटपटांग आसवों के विशेष सेवन से; दूध के साथ मछली आदि विरुद्ध आहार करने से; अजीर्ण में भोजन करने से, विशेष क्रोध करते रहने से, दिन में सोने से व रात्रि में जागने से; मिथ्याहार-विहार करने वाले सुकुमार प्रकृति के अथवा कोमल कृश एवं दुर्बल शरीर वाले जो मिथ्या आहार-विहार करते हैं; तथा स्थूल शरीर वाले जो प्रायः बाजारू चाट वगैरा खाया करते हैं और गद्दी तकिया के सहारे बैठे रहते हैं और जो हाथी या घोड़ों पर विशेष चढ़ाई किया करते हैं या बहुत मार्ग का सफर किया करते हैं ऐसे मनुष्यों के वायु तथा रुधिर प्रकुपित होता है। इन सब कारणों में से किसी कारण से वायु कुपित होती है, किसी कारण से रक्त प्रकुपित होता है और किसी से दोनों कुपित होते हैं।

पाश्चात्य वैद्यक भी इस रोग के इन कारणों का अनुमोदन करते हुये कहता है कि नैट्रोजन युक्त पदार्थों का अति सेवन एवं अतीव सुरापान ही इस का मुख्य कारण है और जो व्यक्ति सीसा धातु के पदार्थों का ज्यादा व्यवहार करते हैं, जैसे प्रेस के कम्पोजीटर जिन्हें सीसा के टाइपों को ही प्रायः दिन रात जोड़ना पड़ता है, इन्हें भी यह रोग हो जाता है। यह रोग परम्परागत भी होता है, अतः किसी २ परिवार के लोगों में यह अधिकतर पाया जाता है तथा हिसाब लगाकर देखा गया है कि लगभग ६० प्रतिशत रोगी ऐसे होते हैं जिनके वंश परम्परागत यह व्याधि होती है। स्त्रियों की अपेक्षा

पुरुषों में यह अधिक पाया जाता है और यह रोग प्रायः मध्य अवस्था या उतरती अवस्था में ही अधिकतर होता है।

सम्प्राप्ति—

उपर्युक्त कारणों से रुधिर शीघ्र ही बिगड़ कर शरीर के अधोभाग का विकृत रक्त पांवों में और ऊपरी भाग का हाथों में एकत्रित हो जाता है। इस में वात की प्रबलता होती है, इसी कारण इसको वात-रक्त रोग कहते हैं। इसमें रुधिर बिगड़ कर वात नाड़ियों में वात के मार्ग को तुरंत रोक देता है, मार्ग के रुक जाने से अत्यन्त वृद्धि को प्राप्त हुये रुधिर को तत्काल दूषित कर देता है। दोषों के कारण से इसमें वात की प्राधान्यता है, इसीसे यह 'वात रक्त' कहलाता है, अन्यथा रक्त-वात कहना और उचित होता *।

पाश्चात्य वैद्यक इसकी संप्राप्ति के विषय में कोई निश्चित् मत स्थिर नहीं करता, किन्तु इतनी बात तो निश्चित है कि उपर्युक्त कारणों से रक्त में यूरिकामय या यूरिक एसिड सोडियम बाई यूरेट्स के रूप में पृथक होकर शरीर के ऐसे स्थानों पर बैठ जाता है जहां पर रक्त-सञ्चार बहुत कम होता है, जैसे संधियां विशेषतः पैर-हाथ की उंगलियों की सन्धियां इन स्थानों के कारटिलेजों अर्थात् कूर्चा में उक्त सोडियम बाई यूरेटस के बैठ जाने से नीचे की कूर्चा (कारटिलेज) गलने लगता है; तथा व्रण युक्त हो जाता है, फिर धीरे २ अस्थियां भी प्रभावित हो जाती हैं। अस्थियों के अग्र भाग मोटे एवं शोथ युक्त हो जाते हैं, शनैः २ इनमें पीव पड़ जाती है एवं फट जाती है।

पूर्व रूप—

इस रोग के होने से पूर्व पसीना अत्यन्त आता है अथवा किंचित् मात्र भी नहीं आता। शरीर में कृशता, स्पर्श ज्ञान नष्ट हो जाता है; यदि कहीं व्रण हो जाय तो उसमें अत्यन्त पीड़ा होती है, संधियों में शिथिलता, आलस्य, अङ्गों में जड़ता, फुड़ियों फुन्सियों का निकलना, जानु जंघा, उरु, कटि, हाथ-पांव व सम्पूर्ण अङ्गों की संधियों में शस्त्र छेदन जैसी पीड़ा होती है; तथा अङ्ग फड़कते हैं, मेद बढ़ जाता है, भारीपन, ग्लानि, खुजली, संधियों में व्यथा, बारम्बार दाह होकर शांत होना, त्वचा (चमड़ी) की कांति का नष्ट हो जाना; तथा अङ्ग में चकत्ते पड़ जाते हैं। पसीने का अत्यन्त होना अथवा किंचित् मात्र भी नहीं होना, यह इस व्याधि के प्रभाव से होता है। कुष्ठ के पूर्व रूप में भी प्रायः यही हाल पसीना का होता है।

यह रोग जैसा कि हम ऊपर कह आये हैं पैर या हाथों के मूल भाग से उत्पन्न होकर चूहे के विष के समान संपूर्ण देह में फैल जाता है। इसमें वात दोष के अनुसार ही पित्त तथा कफ भी पृथक पृथक सम्यक रूप से दूषित रक्त में सम्मिलित होकर अपने २ रूप प्रकट करते हैं।

रूप या लक्षण—

इस रोग के अनियमित और अवरुद्ध ऐसे दो प्रकार हैं। अनियमित प्रकार में प्रायः रात के पिछले प्रहर रोगी के पादाङ्गुष्ठ की प्रथम संधि में

---

*"शीघ्रं रक्तं दुष्टिमायाति तच्च वायोर्मार्गं संरुणद्ध्याशु वातम्। क्रुद्धोऽत्यर्थं मार्गरोधात्सवायुरत्युद्रिक्तं दूषयेद्रक्तमाशु ॥ सुश्रुत अत्र वातस्य दोषत्वेन प्राधान्यात् वातरक्तमिति व्यपदिश्यते। न तु रक्त-वात इति मधुकोषः

अकस्मात् अत्यन्त पीड़ा और जलन प्रारम्भ हो जाती है तथा इसके पूर्व में बेचैनी मानसिक अवसन्नता आदि लक्षण भी होते हैं तथापि रोगी अच्छी प्रकार से निद्रा लेता है; किन्तु फिर अधिक पीड़ा होने पर कभी २ एक दम उठ बैठता है। पांव के अंगूठे की प्रथम सन्धि में फिर शोथ होकर वह लाल हो जाती है, थोड़ा सा भी हिलने पर अत्यन्त पीड़ा करती है। कभी २ इन्द्री (मूत्रेन्द्रिय) पर भी नीले वर्ण की शोथ हो जाती है। प्रारम्भ में ज्वर का तापमान भी १०१ या १०२ तक रहता है, पीछे पसीना आकर कम हो जाता है तथा दिन की अपेक्षा रात्रि में पीड़ा अधिक होती है। कई दिनों तक थोड़ा २ दर्द कभी कम और कभी अधिक होता रहता है। रोगी को एक दौरा बाद दूसरा और दूसरे के बाद तीसरा दौरा इसी प्रकार कई दौरे होते रहते हैं। वेग या दौरे से पूर्व मूत्र में यूरिकाम्ल कम हो जाता है, वेग के समय एवं वेग के बाद अधिक हो जाता है। जब यह रोग एक वर्ष से अधिक अवस्था का हो जाय तथा इसकी उपयुक्त चिकित्सा न की जाय तो वही अवरुद्ध, चिरकारी या जीर्ण 'वात-रक्त' कहलाता है।

अवरुद्ध वात-रक्त में यूरिकाम्ल स्फटिक के अतिरिक्त और भी कई प्रकार के स्फटिक शरीर के जोड़ों (संधियों) में सञ्चित हो जाते हैं। संधियां सर्वदा के लिये विकृत हो जाती हैं, तथा शोथ युक्त एवं पीड़ा युक्त हो जाती हैं। इसी खास लक्षण के कारण अंग्रेजी में 'गाऊट' रोग कहलाता है। रोगी लंगड़ाता हुआ चलता है, कुछ समय बाद संधियां फट जाती हैं तथा व्रण होकर स्राव होने लगता है। यह हालत देखते ही अनाड़ी वैद्य इसे गलित कुष्ट रोग पुकारने लगते हैं, रोगी बहुत ही घबड़ा जाता है। कुछ समय पश्चात् एक स्थान से दूसरी संधियों में भी इसका प्रभाव पहुंच जाता है, शनैः २ सभी सन्धियां रोग ग्रस्त हो जाती हैं। साथ ही साथ इसमें उदर विकार (आमाशय, अन्त्रादि शूल, यकृत रोग), हृदय विकार (हृत्कंप, हृच्छूल, श्वास; मूर्छा आदि) वात पीड़ायें कटि, सिर आदि स्थानों में, श्वास मार्ग के रोग (कास-श्वासादि) त्वचा के रोग (पामा-कंडु आदि) भी हो जाते हैं। इन विकारों के कारण मुख्य रोग का पहिचानना बड़ा कठिन हो जाता है। ऐसी संदिग्धावस्था में रक्त परीक्षा करने से रोग का निर्णय हो जाता है। वात-रक्त की अवस्था में रक्तान्तर्गत यूरिकाम्ल स्पष्ट नज़र आता है। यदि रक्त में यूरिक एसिड न पाया जाय तब उसे स्पष्ट लक्षणानुसार अन्य रोग समझना चाहिये। ध्यान रहे यह यूरिकाम्ल वेग से प्रथम कम हो जाता है और वेग के समय या उसके पश्चात् (अपनी अवधि काल तक) बढ़ा हुआ रहता है।

चिरकारी या अवरुद्ध वात-रक्त में हस्तपादादिकों की अंगुली संधियों में विशेष असहनीय पीड़ा हुआ करती है। वे सन्धियां जकड़ जाती हैं, ग्रंथि युक्त शोथ (Tophi) उस स्थान में होती है। ये ग्रंथियुक्त शोथ उपर्युक्त सोडियम बाय यूरेट नामक क्षार संचय से होती है। कभी २ उनके ऊपर की त्वचा में दरार होकर या फटकर व्रण होता है तथा उसमें से यही क्षार बाहर निकलता है।

इन्हीं उपर्युक्त दो प्रकार या भेद के कारण उत्तान अर्थात् जो वात-रक्त केवल त्वचा और मांस के आश्रित हो और गंभीर जो अन्तराश्रित हो, ऐसे दो भेद आयुर्वेद में कहे गये हैं। यथा—

"उत्तानमथ गंभीरं द्विविधं वातशोणितम् ।
त्वङ्मांसाश्रय मुत्तानं गंभीरं त्वन्तराश्रयम् ॥

दोषाधिक्यानुसार वात रक्त के लक्षण—

वाताधिक्य वात रक्त में—

शूल की विशेषता, अङ्गों का फड़कना, व्यथा, सूजन में रूक्षता तथा कालापन और कुछ लाली लिये हुये कालापन होता है; शोथ में घटाव, बढ़ाव हुआ करता है, नाड़ियों में तथा अंगुलियों की सन्धियों में संकोच होता है, अङ्ग रह जाते हैं, अत्यन्त व्यथा होती है, शीतल पदार्थ नहीं रुचता, शरीर अकड़ जाता है, कम्प एवं स्पर्श-ज्ञान नष्ट हो जाता है। यहां जो शूल तथा फड़कना आदि कहा है वह विशेषतः पांव या हाथ में ही होता है।

रक्ताधिक्य वात-रक्त में—

अत्यन्त व्यथायुक्त तोड़ने जैसी पीड़ा सहित लाल रंग की खुजली और क्लेद संयुक्त शोथ (सूजन) होती है। इसमें चिमचिम ऐसा होता है, और स्निग्ध तथा रुक्ष पदार्थों से यह सूजन शांत नहीं होती है। इसमें जो रक्त की अधिकता होती है उस रक्त को वातरक्त को उत्पन्न करने वाले विकृत रक्त से अलग समझना चाहिये, क्योंकि रुधिर भी अन्य रुधिर को दूषित करता है। कहा है–

एतच्चारम्भक रक्तादन्यद्रक्तान्तरं बोध्यं, रक्तमपि रक्तान्तरदूषकं भवति । यदुक्तं दुष्ट रक्तं लक्षणं, "पित्तवद्रक्ते नातिकृष्णं च" (सु० सू० स्था अ० १४)

पित्ताधिक्य वात रक्त में—

अत्यन्त दाह होता है, रोगी बेहोश हो जाता है, पसीने आते हैं, मूर्च्छा, मद और तृषा से व्याकुल रहता है, स्पर्श को भी नहीं सह सकता, दोनों पैर (यदि हाथों में विकार पहुंच गया हो तो हाथों में भी) अत्यन्त दाह-युक्त, अत्यन्त गरम लाल वर्ण की मृदुता युक्त सूजन होती है।

कफाधिक्य वात-रक्त में—

अङ्ग गीले कपड़े से ढका सा मालूम होता है, भारीपन, जड़ता, शून्यता, स्निग्धता, शीतलता, खुजली तथा मन्द-मन्द पीड़ा होती है। भारीपन, जड़ता, शून्यतादि लक्षण पैरों में होते हैं, इसका कारण यह है कि रुधिर जब कफ़ से दूषित होता है तो पांवों में खुजली युक्त, श्वेत, शीतल, कठिन एवं स्तब्ध ऐसी सूजन होती है। कहा है— "कण्डूमन्तौ श्वेत शीतौ सशोथौ पीतौ स्तब्धौ श्लेष्म दुष्टे तु रक्ते" पादाविति शेषः (सुश्रुत)।

द्वन्दज में दो-दो दोषोंके लक्षण होते हैं और जब वात पित्त, कफ, तीनों दोषों से रुधिर कुपित होता है तब तीनों दोष अपने २ लक्षणों को रोग स्थान में दिखाते हैं, अर्थात् सब लक्षण पाये जाते हैं।

उपद्रव—

वात-रक्त रोग में निद्रा का नहीं आना, अरुचि, श्वास, मांस गल-गल कर गिरना, सिर में व्यथा, मूर्च्छा, कम दीखना, तृषा, ज्वर, मोह, कंप, हिचकी, पंगुता, विसर्प (चकत्तों का होना) पकना, सुई चुभोने जैसी पीड़ा, श्रम, ग्लानि, अंगुलियों का टेढ़ा हो जाना, फूटना, दाह मर्म-स्थान में पीड़ा और अर्बुद (गांठ) ये सब उपद्रव रूप से होते हैं।

पाश्चात्य वैद्यक भी इसमें मुख्यतः वृक्कविकार, हृद्विकार, अजीर्णादि विकार, त्वग्रोग, श्वास कासादि फुफ्फुस विकारों को उपद्रव रूप में मानता है।

साध्यासाध्य विचार—

उपर्युक्त सब उपद्रव यदि इस रोग में हों तो उसे असाध्य जानना अथवा केवल एक मोह (मूर्च्छा) ही होवे तो भी उसे असाध्य जानना चाहिये और यदि इन उपद्रवों में से थोड़े उपद्रव हों तो उस वात रक्त को याप्य समझना तथा कोई उपद्रव न हो तो उसको साध्य समझना चाहिये।*

जो वातरक्त एक दोष वाला और एक वर्ष का हो तो उसे साध्य जाने, दो दोष वाले को याप्य तथा तीनों दोष जिसमें प्रकुपित हों उसे असाध्य जाने।

जो वात रक्त पावों से लेकर घुटनों तक फैला हो उसे असाध्य जाने। जिस प्रकार अत्यन्त शीत से त्वचा फट जाती है; उसी प्रकार जिस वातरक्त रोग में त्वचा फट गई हो उसे भी असाध्य जाने। जो वातरक्त अत्यन्त फट गया हो अथवा बलक्षय या मांस-क्षयादि उपद्रवों से संयुक्त हो वह भी असाध्य ही होता है।

रोग परीक्षण—

कई बार वात-रक्त और आमवात (Rheumatism) में भेद करना कठिन होजाता है, तैसे ही लूता विष या भल्लातक विष और वातरक्त में भी भ्रम हो जाता है। अतः इनका परस्पर भेद नीचे दर्शाया जाता है।

वात—रक्त	आमवात
मध्य अवस्था में प्रायः पुरुषों को ही विशेष कर होता है।	१ तरुणावस्था में स्त्री और पुरुष दोनों को होता है।
छोटी सन्धियां, विशेषतः पैर और हाथों की विकार ग्रस्त होती हैं। तथा इसकी पीड़ा एक ही विशेष स्थान या सन्धि में सीमित रूप से होती है।	२ शरीर की बड़ी २ सन्धियां इससे ग्रस्त होती हैं। तथा इसकी पीड़ा एक सन्धि से दूसरी सन्धि में जाती है।
विश्रांति की अवस्था में भी रोगी को पीड़ा सताया करती है।	३ इसकी पीड़ा हिलने-चलने से या दबाने से होती है।
यूरिकाम्ल नामक क्षार-ग्रन्थियों की विशेषता होती है।	४ क्षारग्रंथि नहीं होती।
ज्वर साधारण तथा वेगावस्था में ही होता है।	५ ज्वर विशेष प्रमाण में एवं सतत रहता है।

नोट—ग्याशेड की रक्त परीक्षा विधि से यूरिक एसिड का पता शीघ्र ही वातरक्त में लग जाता है, किन्तु यह विशेष विश्वसनीय नहीं है।

---

* एतैरुपद्रवैर्वर्ज्यं मोहेनैकेन चापियत्।
अकृत्स्नोपद्रवं याप्यं साध्यं स्यान्निरुपद्रवम् ॥
चरक-निदान।

पूय मेहजन्य (सुज़ाक से उत्पन्न) सन्धिशोथ का आमवात जैसा बड़ा जोड़ों में लाल वर्ण का और गरम होता है, जत्रु संधि तथा हाथ पांव के पहुंचों की सन्धियों में होता है तथा इसमें पीप पड़ जाता है। ज्वर भी विशेष तापदायक प्रायः अविसर्गी या विसर्गी होता है और प्रायः शीत से चढ़ता है, ऐसी हालत वातरक्त में नहीं होती।

दंत पूय (पायोरिया) रोग में भी कुछ सन्धियों में शूल होती है किन्तु ज्वर नहीं होता।

फिरंग रोग (उपदंश) के कारण भी सन्धियों में शोथ हो जाती है, किन्तु कष्ट या पीड़ा विशेष नहीं होती।

लूता विष और भल्लातक विष के प्रकोप होने पर शरीर की केवल सन्धियों में ही शोथ नहीं, पीड़ा भी होती है। इसका कोई विशेष निश्चित स्थान नहीं। वातरक्त का तो निश्चित् स्थान है। लूता और भल्लातक विष का प्रकोप प्रायः वर्षा ऋतु में होता है। वातरक्त किसी भी ऋतु में प्रकुपित हो जाता है। तथा वातरक्त में प्रथम चर्म का रंग विवर्ण हो जाता है, और किसी २ का एक दम स्पर्श शून्य हो जाता है। तथा किसी २ को अल्प स्पर्श से भी बहुत पीड़ा होती है। वात रक्त उपदंश रोग के बाद भी होता है और किसी २ को बिना उपदंश के भी होता है, इसमें पीली २ फुंसियां नहीं होतीं। विसर्प रोग में पीली २ फुंसियां होती हैं। भल्लातक विष जन्य शोथादि में कंडू (खुजली) की अधिकता होती है। लूता विष जन्य में पीले रंग का स्राव होता है तथा क्लेद युक्त अधिक फुंसियां एकत्र हो जाती हैं तथा विसर्प में दाह, व्रण और मंडल की अधिकता होती है।

चिकित्सा---

हम इस रोग की अपनी खास चिकित्सा का विवरण लिखकर फिर अन्यान्य अक्सीर प्रयोगों को लिखेंगे।

एक मनुष्य उम्र ४२ वर्ष की तहसील चपरासी के काम पर था, रोज़ १० या १५ मील चलनां पड़ता था। प्रथम इसके दोनों पैर घुटने से लेकर नीचे तक सुन्न से हो गये थे और ज़मीन पर पैर रखते ही ऐसा मालूम देता था मानो सुई चुभ गई हो। लगभग २ माह तक यही हालत रही, पश्चात् पग के अंगूठे के पास की नस में वेदना शुरू हुई और फिर कुछ दिनों के बाद वहां शोथ हो आई तथा रात्रि के समय उसमें दरार सी होकर उसमें से घना काले वर्ण का रक्तस्राव होने लगा। अब उसे भारी वज़नदार मालूम देने लगा। इधर-उधर का जिसने जैसा कहा तैसा ही वह इलाज करता रहा। फिर दूसरे पग की एड़ी के नीचे के भाग में भी दरारें पड़ गईं, उनमें से भी रक्त-स्राव होने लगा तथा ऊपर एड़ी के पास गांठ (ग्रन्थि) उठ आई और पिंडली तक सूजन भी हो आई। बीच २ में ज्वर भी आने लगा, पगों के तलुवें स्पर्श ज्ञान शून्य हो गये तथा अंगूठे के पास अन्दर के भाग में अतिशय दाह होने लगा। फिर जब हमने देखा उपर्युक्त सब लक्षणों के साथ ही साथ हाथों के तलवों की त्वचा तथा उंगलियों की भी त्वचा उधड़ने लगी थी।

उसके आहार-विहार का पता लगाने पर मालूम हुआ कि वह लाल मिर्चं और नमक की चटनी बहुत खाया करता था तथा नौकरी की अवस्था में अजीर्ण भोजनादि कारणों से विकृत रक्त

वृद्धि हुई तथा लंघन, जागरण, असात्म्याहार सेवन, अकाल भोजन तथा वर्षा में मीलों कीच एवं जल में चलने से वात वृद्धि होकर उसे वातरक्त रोग का शिकार होना पड़ा। फिर इधर-उधर के मामूली वैद्यों के कथन से उष्ण लेप, सेकादि विघातक उपचार इस पर किये गये थे। वात रक्त विकार का मुख्य आश्रय रक्त धातु होने से इस पर उष्ण उपनाहादि सेंकने की क्रिया रोग को और भी बढ़ा देती है। किन्तु जिस वात-रक्त में वात और कफ का विशेष अनुबन्ध होवे, केवल उसी पर सहता हुआ उष्ण लेपादि उपयोगी होते हैं। कहा भी है—

> वातश्लेष्मोत्तरे कोष्णा लेपाद्यास्तत्र शीतलैः।
> विदाहशोफ रुक्कण्डू विवृद्धिः स्तंभनाद्भवेत ॥
>
> —अष्टांग हृदय।

यदि वात, कफ प्रधान वात-रक्त में शीतल उपचार किया जाता है तो वहां रक्त स्तंभन होकर विदाह, शोथ, पीड़ा और खुजली की विशेष वृद्धि होती है। अस्तु,

प्रथम हमने बाह्योपचार इस प्रकार प्रारम्भ किया कि रोगी के विकृत स्थानों को सुखोष्ण नीम के जल से (जल में नीम पत्र डालकर खूब पका लिया गया) पुनः धुलवा कर तथा व्रणों को स्वच्छ कर उन पर अपना खास बनाया हुआ शोधन तैल का फाया लगाकर वस्त्र से बंधवा दिया गया।

शोधन तैल प्रयोग—

१८९—नीम पत्र	१४ तोले
हल्दी	७ तोले
निसोथ	७ तोले

—तीनों को जौकुट कर ८ सेर जल और शुद्ध तिल तैल आध सेर, तिल कल्क ५ तोले, सब को एकत्र मिला, मन्दाग्नि से पकाकर, तैल मात्र शेष रहने पर छानकर शीशी में भर रखें। इस तैल के प्रयोग से व्रणान्तर्गत क्लेद, राध, (पीव) आदि शीघ्र बाहर होकर वेदना शमन होती है, जख्म बिल्कुल साफ हो जाता है तथा अन्दर की ओर से उसमें रोपण क्रिया शुरू हो जाती है। अतएव इसी तैल का प्रयोग उक्त प्रकार से किया गया है।

केवल तीन दिन के ही इस प्रयोग से (साथ ही में निम्न लिखित आभ्यन्तर प्रयोग भी शुरू था) ऊपर का सड़ा हुआ चमड़ा निकल गया। जो गांठ या ग्रन्थि उठी थी उसे शस्त्र से काट दिया गया जिसमें से सञ्चित यूरिकाम्ल रक्त के साथ बह गया। उस पर भी उक्त शोधन तैल लगाकर साफ कर दिया।

इस रोग में मुख्य विकार है विकृत रक्त सञ्चय। अतः इसमें सावधानी पूर्वक थोड़ा २ रक्त निकाल बाहर करना आवश्यक होता है। यह रक्त मोक्षण क्रिया, वात प्रकोप न होने पावे, इस प्रकार युक्ति से करने की आवश्यकता है। प्राकृत केस में दाह की विशेषता थी अतएव जोंक लगवा कर रक्त थोड़ा २ करके निकाला गया था। जोंकें प्रति ४ दिन के बाद लगाई जाती थीं तथा जोंकें लगाने के पूर्व व्यथित स्थान पर सहचर तैल की मालिश कर दी जाती थी जिसमें वात प्रकोप न होने पावे।

सहचर तैल विधि—

१९०—कटसरैया (पियावांसा) का पंचांग जौकुट कर ५६। सेर लेकर ३२ सेर जल में पकावें, ८ सेर जल शेष रहने पर छान लेवें। फिर २ सेर तिल तैल में यह ८ सेर जल और—

सोया देवदारु जटामांसी
भूरिछरीला बच श्वेत चन्दन
तगर कूठ दालचीनी
शालपर्णी —प्रत्येक का चूर्ण १।-१। तोला
खांड ४० तोले

—इनको एकत्र पीस कल्क बना उक्त तैल एवं जल के मिश्रण में मिला मंदाग्नि पर पकावें। तैल मात्र शेष रहने पर छान कर रख लेवें।

प्रस्तुत रोग में दाह एवं सुई चुभने जैसी पीड़ा की विशेषता थी, अतः यहां जोंकों के द्वारा ही रक्त-मोक्षण कराने से दाह एवं पीड़ा में शान्त हुई। शास्त्रों में भी कहा है, 'उग्राङ्ग दाह तोदेषु जलौकाभिर्विनिर्हरेत्, शृङ्गन्तु वै चिमिचिमाकण्डू रुग्वेपनान्वितम्॥ प्रच्छनेन शिराभिर्वा देशाद्देशान्तरं व्रजत्।' अर्थात् घोर दाह होता हो या सुई चुभोने जैसी पीड़ा होती हो तो जोंक लगाकर रुधिर निकलवाना चाहिये। चमचमाटी, खुजली, व्यथा या कंप हो तो सींगी लगाकर रक्त मोक्षण करे, और यदि वात रक्त शरीर के स्थान से दूसरे स्थान को जाता हो तो पछना लगाकर रक्त निकालने की क्रिया करना हितकारी होता है। *

उक्त प्रकार से रक्तमोक्षण क्रिया और शोधन तैल के पिचुबंधन से शीघ्र ही व्रण ठीक होकर शोथ तथा भारीपन दूर हुआ और स्पर्शज्ञान होने लगा।

आभ्यन्तर चिकित्सा--

इस विकार में वात विरोधी रक्त की तथा रक्त विरोधी वात की चिकित्सा करना आवश्यक होता है। यह कार्य घृत अथवा स्नेहन द्रव्य युक्त क्वाथ के प्रयोग से ही सम्पन्न होता है। किंतु रोगी को नीचे लिखे अनुसार पथ्यापथ्य का पूर्ण ध्यान रखना चाहिये।

दिन में सोना, सन्ताप, व्यायाम, मैथुन, कटुपदार्थ, गरिष्ट एवं अभिष्यन्दी पदार्थ तथा लवण और अम्ल रस का त्याग करना चाहिये। मद्य का त्याग तो सर्वथा करना ही चाहिये। भोजन में पुराना जव गेहूँ, साठी चावल, अरहर, मूंग, मसूर, मोंठ, बथुआ, पालक, घृत गाय का, दूध गाय का या बकरी का दिया जावे। बहुत गरम २ भोजन नहीं करना चाहिये।

उक्त प्रकार से पथ्य पूर्वक उस रोगी को हमने निम्नाङ्कित पटोलादि क्वाथ की योजना की थी।

पटोलकटुकाभीरुत्रिफलाऽमृत साधितम्।
क्वाथं पीत्वा जयेज्जन्तुः सदाहं वातशोणितम्॥

कड़वे परवल, कुटकी, सतावर, त्रिफला और गिलोय (हमने दुगुना भाग लिया था। कारण वातरक्त पर गिलोय का विशेष प्रभाव कारी असर होता है, इसीसे इसे संस्कृत में वातरक्तारि कहते हैं।) इनका अष्टमांश क्वाथ सिद्ध कर उसमें थोड़ा सा गोघृत लगभग आधा तोला तक मिला कर प्रातः

---

* ध्यान रहे शरीर में ग्लानि हो तो रक्त नहीं निकालना चाहिये और यदि निकालना जरूरी हो तो वायु की वृद्धि न होने पावे ऐसी रीति से निकाले; अन्यथा जकड़न कम्प, शिराओं में पीड़ा, ग्लानि एवं अन्यान्य वात सम्बन्धी विकार जोर करते हैं। रुधिर यदि योग्य रीति से न निकाला जाय तो खंजतादि वात रोगों को उत्पन्न करता है, तथा मरण को भी करता है। अतः वातरक्त रोगी को स्निग्ध करके (हम उक्त सहचर तैल से स्निग्ध करते थे) रोगी के शरीर में से उचित प्रमाणानुसार ही रक्त निकालना चाहिये। शास्त्र की भी यही आज्ञा है।

या जाता था। फिर इसी प्रकार शाम को भी ते थे।

उक्त पथ्यापथ्य के साथ रोगी को हमने यह भी चित कर दिया था कि वह उड़द, मटर, किसी कार का क्षार अंड़ज और. अनूप प्राणियों का मांस गी मांसाहारी था) विरुद्ध अन्न, दही, गन्ना, ली, ताम्बूल (पान), कांजी, तिल, लाल मिर्च, तु भी न खावे।

इस प्रकार कुल २१ दिन की चिकित्सा से रोगी के सब उग्र लक्षण दूर हो गये; मूत्र की जलन दूर ई, रात्रि में जो उसे निद्रा नहीं आती थी वह कायत भी दूर हुई, तथा उक्त आभ्यन्तर स्नेहन क्वाथ के प्रयोग से उसे स्वाभाविक मल विस- न होने लगा, पचन क्रिया भी सुधर गई, और टनों तक पहुंची हुई सूजन एवं सुन्नता क्रम से टते २ स्पर्श ज्ञान अच्छी तरह होने लगा। हाथों ं जो विकृति हो रही थी वह भी दूर हो गई।

मामूली वातरक्त रोगियों को हमने केवल ७५ न गिलोय के क्वाथ में शुद्ध रेंडी का तैल मिला र पिलाया है और वे अच्छे हो गये हैं।

कुछ रोगियों को हमने किशोर गुग्गल प्रातः यं बृहत् मंजिष्ठादि क्वाथ के साथ देकर ठीक किया है; किंतु वाह्य चिकित्सा उक्त प्रकार से ही रनी पड़ी थी।

ध्यान रहे इस रोग में औषधि प्रयोग अधिक समय तक पूर्ण पथ्य पूर्वक करते रहने से ही ठीक र लाभ होता है, अन्यथा कुछ दिनों के लिये रोग न्त होकर पुनः उभड़ उठता है।

यदि लूता विष, भल्लातक विष, विसर्प आदि का संदेह हो तो उक्त पटोलादि क्वाथ जवकुट किया हुआ १ तोला को मिट्टी के पात्र में १ पाव जल मिला भिगो देवें। प्रातः मंदाग्नि से पकावें जब ४ तोले जल शेष रह जाय तब छान कर ठंडा कर पीवें। इस प्रकार कुल ११ दिन सेवन करने से समस्त शरीर का रक्त शुद्ध होकर विषादिक दोष दूर हो जाते हैं। लगाने के लिये यशद (जस्ता) भस्म १ तोला, ताजा मक्खन ४ तोला तिल १ तोला और नारियल की गिरी १ तोला खूब महीन पीस कर लगावे। तिल और नारियल की गिरी को दूध के साथ घिसकर बाद में मक्खन और जस्त भस्म अच्छी तरह मिलाना चाहिये। इस लेप के लगाने से और और उक्त पटोलादि क्वाथ के सेवन से चाहे लूता विष हो, चाहे भल्लातक विष हो, चाहे विसर्प या वातरक्त ही क्यों न हो, अवश्य शमन हो जाता है। अस्तु

अन्त में राघवानुभव का एक प्रयोग जो कि बहुत उत्तम, बहुत सरल एवं सुसाध्य है यहां पाठकों के लाभार्थ लिख कर इस बढ़े हुए लेख को समाप्त किया जाता है।

१६१-शुद्ध मोम का तैल ३ माशा में १ माशा सोंठ का महीन चूर्ण और ६ माशा (आधा तोला) मिश्री मिला कर सेवन करे, तथा इसीका लेप भी करें।

माषत्रयं मेणतैलं शुण्ठी शर्करया पिवेत्।
तदेव लेपयेदङ्गे वातरक्तापनुत्तये॥

सतत

विधान

यौवन

लेखक—श्री० राजेन्द्रकुमार जी शास्त्री साहित्यरत्न, विजयगढ़।

यौवन वह अमूल्य रत्न है जिसका मूल्य उसके चले जाने पर विदित होता है। तारुण्य के घन-घोर अन्धकार एवं चाञ्चल्य में कुकर्म भी सुकर्म प्रतीत होते हैं किन्तु वार्द्धक्य की जीर्ण-शीर्णता में उन कुकृत्यों का स्पष्टीकरण होता है। यौवन काल में ही बुढ़ापे और मृत्यु का बीजारोपण होता है; किन्तु जागरुक बुद्धि वाले युवक जिन्हें हम असाधारण मानव कह सकते हैं, महान् कार्यों के कर्त्ता हुआ करते हैं। प्रायः बड़े २ आविष्कारक, वैज्ञानिक, ग्रन्थकार, वक्ता और कवि इसी यौवन के सुप्रभात में ही हुये हैं। यही कारण है कि यौवन का वह सुनहरा ऊषाकाल, वह यौवन की मधुर वासन्ती. वे मस्तानी तरंगे बुढ़ापे में केवल कहानियां बन जाती हैं। यह यौवन इतना चञ्चल है, इतना गतिशील है! यौवन की मधुमयी ऊषा यों ही देखते २ समाप्त हो जाती है? अपने बीतते हुये यौवनको देखकर किसी कवि ने कितने मर्माहत शब्दों में कहा है—

'Oh youth is passing like a dew,
will it never come again'?

आह! यौवन ओस की बूंदों की तरह बीतता चला जा रहा है, क्या यह फिर कभी नहीं आयेगा? ऐसा मीठा, इतना मादक है यह यौवन! तभी तो विचारे केशव जी को भी कहना पड़ा था।

'केसव केसन अस करी, जस अरिहू न कराय।
चन्द्र वदनि मृग लोचनी, बाबा कहि २ जांय॥

यह यौवन की ही लालसा तो थी जिसने ययाति को पुत्र की जवानी लेने के लिये बाधित किया था। च्यवन ऋषि की भांति प्रत्येक वृद्ध पुनर्यौवन प्राप्ति करने का अभिलाषी पाया जाता है, उसकी प्राप्ति के लिये नाना प्रकार की रसायनें, विविध प्रकार की औषधियां, तरह २ के पेय पदार्थों का अनुसन्धान किया जा रहा है। वैज्ञानिकों ने जहां अन्यान्य आविष्कार एवं अनुसन्धान किये हैं. वहां इस विज्ञान को भी अछूता नहीं छोड़ा है। योरोप में शायद ही कोई ऐसी लाइब्रेरी मिलेगी जिसमें (Rejuvination) पुनर्यौवन प्राप्ति एवं सतत यौवन पर कुछ न कुछ साहित्य न मिलता हो। उन्हें इस विषय में कहां तक सफलता मिली है यह भी तद्विषयक साहित्य के अध्ययन से विदित हो जाता है। किन्तु हम केवल इतना ही अनुमान कर सकते हैं कि अभी उन्हें पूर्ण तो नहीं आंशिक सफलता अवश्य मिली है।

किसी ज़माने में चीन में भी पुनर्यौवन प्राप्ति के विषय में अनेकों उपायों का अनुसन्धान किया गया था। लाओत्से के अनुयायी एक ऐसे पेय पदार्थ का आविष्कार करना चाहते थे जो मनुष्य को सतत

युवा बनाये रख सकता हो। किन्तु वे यह नहीं जानते थे कि वे कौन से ऐसे द्रव्य हैं जिनसे यह द्रव्य निर्मित हो सकता है। चीन का एक सम्राट जिसका नाम ची-ह्वाङ्ग-ती था, ताओ-पंथियों के प्रति विशेष आस्था रखता था। उसका विश्वास था कि वे लोग किसी ऐसी रसायन से परिचित हैं जो सतत यौवन विधायनी है। एक बार 'सूची' नाम के जादूगर ने उस सम्राट से आकर कहा कि चीन के पूर्व की ओर, 'जिन' लोगों द्वारा बसे हुये द्वीप हैं, वहां जाने से वे लोग अपने अतिथियों को एक ऐसा पेय पदार्थ देते हैं जो मनुष्य को पुनर्युवा बना देता है। जब चीन में चेंग्स वंशीय-राज्य की पुनः प्रतिष्ठा हुई तो फिर 'अमर घुटी' बनाने की चेष्टा की गई। इस द्रव्य का नाम उन्होंने 'Ton' टान या 'Kin-Ton' किनटान रखा था जिसका अर्थ है 'स्वर्ण-रसायन'। मेयर्स के कथनानुसार इस पेय का मिश्रण इस प्रकार था 'रक्त-पारद, पारद मिश्रित रक्त-गन्धक, आर्सेनिक का रक्त लवणाक्त पदार्थ, पोटेसियम तथा शुक्ति। इस अमृत मिक्सचर के प्रस्तुत करने के लिये नौ महीनों की आवश्यकता होती थी और इन नौ महीनों में योग नौ ही अवस्थाओं में रासायनिक क्रियाओं द्वारा परिवर्तित होता था।

बाइबिल के युग में इस बात पर विश्वास किया जाने लगा था कि जवान लड़कियों के कोमल देह का स्पर्श मनुष्य को सतत युवा बनाये रख सकता है। 'बादशाह दाऊद बूढ़ा हो गया और उसके शरीर का उत्ताप रक्त की कमी से बिल्कुल कम हो गया; उसे अनेकों गरम वस्त्र पहनाये पर फिर भी शरीर में ऊष्मा अनुभव न हुई। उसके कर्मचारियों ने कहा—"हुजूर एक कुमारी लड़की के लाने की आज्ञा करें, वह कभी हुजूर के सामने खड़ी रहे और कभी हुजूर की टहल करे और कभी हुजूर के वक्षस्थल पर लेटी रहे ताकि हुजूर के शरीर में गर्मी पहुंचे।" (Book of Kings Chap. 1)

ग्रीक और रोम में भी इसका खूब प्रचार हुआ था और इसका नाम Gerokomy के नाम से प्रसिद्ध था। आधुनिक युग में इस सिद्धान्त के मानने वालों की संख्या पर्याप्त है। Boerhavve बेरहाफे नामक एक डच डाक्टर ने "आर्मसटर्डम' के एक न्यायाधीश को दो कुमारी लड़कियों के बीच लेटे रहने का परामर्श दिया था। उसे विश्वास दिलाया गया था कि उसकी शिथिल इंद्रियां पुनः उद्दीप्त हो उठेंगी।

बेरहाफे के मत की पुष्टि करते हुये डा. हुफेलाण्ड ने लिखा था—'यदि इस बात पर ध्यान दिया जाय कि नव-विकसित जन्तुओं के दोष-रहित पवित्र श्वास से शरीर के जीर्ण अवयवों को स्फूर्ति प्राप्त होती है और जीवित जन्तुओं के संस्पर्श से तीक्ष्ण वेदना युक्त स्थान पर आराम का अनुभव होता है, तो इन दो लड़कियों के बीच लेटे रहने का समर्थन करना ही पड़ता है। 'कोहासेन' नाम के अन्य डा० ने 'हेर्मिपुस' नाम के एक रोमन के विषय में लिखा था :—

यह रोमन १२५ वर्ष की आयु में स्वर्ग गामी हुआ था। यह लड़कियों के किसी स्कूल में शिक्षक था; उन लड़कियों के साथ उसका जीवन व्यतीत होने से वह सतत युवा एवं दीर्घ जीवी बन कर रहा। फलतः उसने अपना यह मत प्रगट किया है कि छोटी २ लड़कियों के शरीर की वायु को प्रातः-

सायं श्वास द्वारा अपने शरीर में प्रवेश कराने से प्राण शक्ति सतत सुदृढ़ एवं उद्दीप्त रहेगी। क्योंकि नव बालाओं का श्वास नितान्त विशुद्ध होता है और उसमें प्राण तत्व वर्तमान रहता है।

अठारहवीं शताब्दी में योरोप के कुछ डाक्टरों ने ताओ-पंथियों का अनुकरण करना प्रारम्भ किया। इन सब में डा० "Cagliostro" बहुत प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका है। उसका कथन है कि मुझे एक ऐसे संजीवन रस का पता लग गया है, जिसके सेवन से मैं कई हज़ार वर्ष जी चुका हूं और अभी अनेक सहस्र वर्षों तक जीऊंगा। आज भी कुछ योरोपियन फार्मेसियों में "Elixir longam Vitam" "दीर्घ जीवन रसायन" बिकती दिखाई देती हैं। ये कुछ विरेचक (Purgative) पदार्थों के सम्मिश्रण से बनाई जाती हैं। इसी प्रकार का एक और "Elixir" है जो द्राक्षा के संयोग से बनाया जाता है। भारतवर्ष में जब पहले-पहल च्यवनप्राश का आविष्कार किया गया था तो यह दावा किया जाता था कि अब प्रत्येक वृद्ध युवा बन जायगा। आयुर्वेद में और भी ऐसी अनेकों रसायनों का उल्लेख पाया जाता है जैसे मालती बसन्त, मकरध्वज, रस सिन्दूर आदि। आधुनिक वैज्ञानिक भी इस बात को स्वीकार करते हैं कि पारे की रसायन मनुष्य के शरीर में रासायनिक परिवर्तन (Chemical change) कर पुनर्जीवन उत्पन्न कर देती है।

डा० (Brown-Sequard) ने सतत यौवन की प्राप्ति के लिये एक प्रकार के इन्जैक्शन का आविष्कार किया था। उसका कहना था कि वृद्धता का कारण अण्ड ग्रन्थियों के क्षरण की कमी ही है। इसलिये उसने कुत्तों तथा खरगोशों की अण्ड-ग्रन्थियों के रसों के मिश्रण द्वारा एक 'Emulesion' तैयार करके इन्जैक्शन की सलाह दी। उसने स्वयं भी इसका प्रयोग किया उस समय उसकी आयु ७२ वर्ष के लगभग थी। इन्जैक्शन के बाद उसने अनुभव किया कि उसके शरीर में पुनर्यौवन की तरंगें मारने लगी हैं। किन्तु डाक्टरों के विशेष परीक्षण करने पर वैसा नहीं पाया।

कुछ समय हुआ डा० "Boronoff" नाम के एक आस्ट्रियन डा० ने एक नया आविष्कार किया। उसकी सम्मति में बन्दर जाति से मनुष्य का निकटतम सम्बन्ध होने के कारण उसकी कुछ मांस-ग्रन्थियों का मनुष्य के शरीर में रोपण (Grafting) कर देने से मनुष्य के शरीर में यौवन का संचार होना अवश्यम्भावी है।"

'पोयेल' नाम का एक रशियन वैज्ञानिक भी इस सिद्धान्त पर पहुंचा है कि जानवरों की मांस-ग्रन्थियों का सत्व मनुष्य के शरीर में प्रवेश कराने से यौवन का प्रवाह उत्पन्न होता है। उसने जानवरों के अन्दर से क्षरित होने वाले कुछ विशेष रसों के भीतर एक ऐसे क्षार पदार्थ (Alkali) का आविष्कार किया है, जिसका लवण-अंश यौवन-शक्ति वर्द्धक होता है। इस तत्व का नाम उसने (Spermine) वीर्य-तत्व रखा है।

वास्तव में जो व्यक्ति निरन्तर युवा बने रहने के अभिलाषी हैं, उन्हें सबसे प्रथम संयमी होना परमावश्यक है और दूसरी वस्तु है सात्विक आहार; आहार में भी सिवाय घी* दुग्ध और फलों के और

---

*घृत क्षीराशनो निर्भी निर्व्याधि नित्यगो युवा।
संकल्प प्रवणो नित्यं नरः स्त्रीषु वृषायते ॥

कोई चीज़ उत्तम नहीं है। देखिये, जब तक बालक मां का दूध पीता है, कैसा फूल सा विकसित रहता है? चतुर्मास में हरी २ घास खाने वाले पशुओं पर कितना रूप आजाता है। यह दूध और वनस्पतियों का ही चमत्कार है। इसी प्रकार यदि मनुष्य भी दूध फल और हरी-हरी शाक-भाजियों का प्रयोग करने लगे तो तेजस्वी और युवा बना रह सकता है।

व्यायाम—

शरीर को नव चेतना प्रदान करने के लिये और मृत परमाणुओं को बाहर निकालने के लिये व्यायाम की अतीव आवश्यकता है। निरन्तर व्यायाम करने से शरीरस्थ रसादि धातुओं का परिपाक एवं विभाजन सम्यक प्रकारेण हो जाता है। शरीर के अवयव पुष्ट होते हैं, जठराग्नि प्रदीप्त होती है, शरीर में स्फूर्ति एवं चेहरे पर तेजस्विता आ जाती है। किन्तु व्यायाम भी दो प्रकार के हैं. आन्दोलित और सरल। आन्दोलित Violented जैसे डंड, बैठक इत्यादि और सरल व्यायाम में घूमना अथवा योगासन है। आन्दोलित व्यायाम से इतना लाभ नहीं जितनी हानि है; किन्तु आसनों से लाभ ही लाभ है आन्दोलित व्यायाम में क्या दोष हैं विस्तार भय से यहां लिखने में असमर्थ हैं, यदि अवकाश मिला तो फिर कभी लिखेंगे।

प्राणायाम—

शरीर और प्राणों के संयोग का नाम ही जीवन है, जब प्राणों का वियोग हो जाता है तो मृत्यु हो जाती है।

शरीर प्राणयोरेवं संयोगायुरुच्यते, कालेन तद्वियोगाच पंचत्वं कथ्यते बुधैः। चरक अ० ८ शरी० १६

अतः प्राण शक्ति के बढ़ाने का प्रयत्न अवश्य करना चाहिये और उसके लिये एक मात्र साधन है प्राणायाम। प्राणायाम शब्द का अर्थ ही प्राणों का विस्तार है। प्राणायाम के द्वारा मनुष्य जहां नाना प्रकार की शक्तियों का विकास करता है वहां निरन्तन यौवन की भी प्राप्ति होती है। इन्हीं प्राणायाम की क्रियाओं द्वारा प्राचीन कालीन ऋषियों मुनियों ने अनन्त यौवन के साथ २ लौकिक और पारलौकिक गूढ़ रहस्यों को प्रकट किया था। आज वे ही भौतिकवादी योरोप के दक्ष वैज्ञानिक इस बात के समर्थक हैं कि (Deep-Breathing) दीर्घायु एवं नव चेतना की उपलब्धि के लिये नितान्त आवश्यक है। एक दो महीने निरन्तर प्राणायाम के अभ्यास से शरीर में नव चेतना एवं नव-स्फूर्ति का अनुभव कोई भी कर सकता है। प्राणायाम और शीर्षासन के दीर्घ काल तक अभ्यास करने से मुंह और शरीर की झुर्रियां दूर हो जाती हैं सर के श्वेत बाल पुनः काले हो जाते हैं; किन्तु बाल बुढ़ापे के काले नहीं हो सकते, झुर्रियां अवश्य हट जांयगी।

स्त्री-सुधा— स्त्री-रोगों की अकसीर दवा।
इसके सेवन से प्रदर, योनिशूल, योनिदाह, मासिक-धर्म की खराबी, गर्भाशय की खराबी आदि नष्ट होते हैं।
मूल्य-१ बोतल ३) १ शीशी १।)

कुष्ठ चिकित्सा

卐

—लेखक—

श्री० कविराज हरिकृष्ण जी सहगल,
मोरीगेट, लाहौर।

कुष्ठ रोग के विषय पर रक्त रोगांक में लिख चुकने पर मैंने समझा था कि कुष्ठ सम्बन्धी लेखों से पीछा छूट गया, परन्तु स्वामी ब्रह्मानन्द जी कुष्ठ चिकित्सक, सलेमपुर भैरों पो० आ० अरंवा जिला रायबरेली के पत्र ने मुझे पुनः एक बार इस विषय पर क़लम उठाने के लिये बाधित कर दिया। स्वामी जी का पत्र इस प्रकार है।

अगर संखिया, गन्धक, हड़ताल, पारा, हिंगुल, मैनसिल यह सब शुद्ध करके एक दिन धमैरा और घृत कुमारी में खरल कर चाल मोगरा या निम्ब-तैल या घृत तैयार किया जावे, दस २ बूंद इस घी में २ रत्ती लोहा भस्म और २ रत्ती शिलाजीत मिला कर दिया जावे तो कुष्ठ के रोगी और वात रक्त रोगी को किस क़दर फायदा हो? अगर उपरोक्त वस्तुओं को शुद्ध करके सर्प गोश्त में एक दिन खरल करके मूङ्ग प्रमाण गोलियां बनाई जावें और प्रातः सायं एक वटिका मंजिष्ठादि क्वाथ के साथ दी जावे तो किस क़दर लाभ हो सकता है?

स्वामी जी का प्रश्न सराहनीय है और मैं स्वयं इस प्रकार के खोज के प्रश्नों को पसन्द करता हूँ क्योंकि मेरे विचार में इस तरह से आयुर्वेद रिसर्च हो सकती है। मैं अब यथा शक्ति अपने विचार स्वामी जी तथा अन्य पाठकों के सामने उपस्थित करता हूँ।

द्रव्य-संखिया, गन्धक आदि सब ठीक जान पड़ते हैं और घृत बनाने की बजाय चाल मोगरा में पाक होना चाहिये और मैंने जो निम्ब तैल के विषय में अनुभव प्राप्त किया है उसके आधार पर निम्ब तैल में पाक होना चाहिये। लोह भस्म का बाद में मिलाना भी अच्छा है, इसमें कोई बुराई नहीं। शिलाजीत का जो सम्मिश्रण किया है, इससे भी किसी हानि की आशङ्का नहीं और इस तैल को कैपशूलों में बन्द करके देना चाहिये। जितने दिनों तक दिया जावे खाने में चने अधिक देने चाहिये तथा लवण बन्द कर देना चाहिये या बहुत अल्प मात्रा में देना चाहिये। अगर रोगाक्रांत त्वचा पर यही तैल बाहिर से लगवाया जावे तो और अधिक लाभ की सम्भावना की जा सकती है; परन्तु अभ्यङ्ग प्रति दिन न होना चाहिये। क्योंकि संखिया की रोक थाम के लिये कोई विशेष वस्तु इसमें नहीं, इसलिये अवकाश देकर इस योग को देना चाहिये और जब पूर्णमासी के दिन हों तथा उसके निकट के दिनों में यह योग न देना चाहिये अथवा कम देना चाहिये।

अब आई स्वामी जी की बात सर्प गोश्त वाली, उसके विषय में निवेदन है कि कृष्ण सर्प का शिर और पूंछ काटकर मछली की तरह बाकी गोश्त को पकाकर कुष्ठ में देने की रीति है। ऐसे कभी २ देने

से लाभ की आशा की जा सकती है; परन्तु आपकी रीति से देने से विशेष लाभ नहीं उठाया जा सकता। सर्प समय पर कांचली उतारता रहता है, उसके मांस तथा रक्त में यह गुण है कि उसके सेवन करने से रोगाक्रांत त्वचा उतर कर नीचे की स्वच्छ त्वचा आ सकती है।

मञ्जिष्ठादि क्वाथ लोगों ने महीनों पीकर देखा है, अधिक लाभ नहीं करता; परन्तु चोबचीनी आदि कुछ यूनानी औषधियां उसमें बढ़ाकर उसकी शक्ति को भी बढ़ाया जा सकता है।

अभी कुछ दिन पूर्व मैंने एक कुष्ठ रोगी को २॥ तोला प्रति दिन प्रातः गो मूत्र पिलाना आरम्भ किया, गोमूत्र से स्नान की व्यवस्था की और त्वचा चालमोगरा तैल की मालिश करवाई उससे उस को अच्छा लाभ हुआ।

त्वचो के रोगों के लिये एक ईसाइयों की अच्छी कहानी है। कहते हैं कि जब दुनिया में पाप बढ़ गये तो ईश्वर ने प्रलय करने का निश्चय किया। सन्तान चलती रहे इसलिये एक २ जोड़ा हर प्राणी के बचाने के लिये हज़रत नूह की किश्ती तैयार करवाई। इसके बाद जब शहर वालों को मालूम हुआ कि ईश्वर हमें मार देना चाहता है और कुछ प्राणियों को नौका द्वारा बचाना चाहता है, तो उन्होंने उस नौका में शोक करना आरम्भ किया। जब वह नौका भर गई तो उस शहर में त्वचा रोग उत्पन्न होगये. जिसमें कोई चिकित्सा लाभ न करती थी। अकस्मात् एक रात को एक बुड्ढा शौच (टट्टी) करता हुआ उस नौका में गिर गया वह बाहिर निकला, नहाया, और घर चला गया। दूसरे दिन वह निरोग था। जब शहर के दूसरे लोगों को यह चिकित्सा मालूम हुई तो उन्होंने भी उसी प्रकार करना आरम्भ किया और शनैः-शनैः नौका के खाली होने तक वे सब निरोग हो गये।

स्वामी जी! निघन्टु में जो "नर मूत्रं रसायनं" लिखा है वह क्यों लिखा है? मनुष्य के मल तथा मूत्र दोनों ही त्वचा रोगों में लाभकारी हैं। मेरे एक मित्र सन्त हैं वह भगन्दर, हजीरा, बवासीर, लाहौर, सोर, मोहरी, गम्भीर रोग में नर मूत्र १॥ छटांक रोजाना प्रातः पिलाते हैं। मैंने स्वयम् उन्हें एक शीशी में अपना मूत्र डालकर निशान लगाते देखा है।

कुष्ठ बहुत घृणित रोग है इसकी चिकित्सा में घृणित से घृणित पदार्थ अधिक से अधिक लाभ करते हैं।

ज्व रा रि
मलेरिया भगाने की अचूक दवा
ज्वर जूड़ी, तिल्ली की किनीन रहित अव्यर्थ महौषधि। सर्वत्र प्रसंशित। एजेंसी लेकर अपने यहां विक्रियार्थ रखें।
मूल्य—छोटी शीशी १)

मृगी-मूर्छा रोग
उसकी
प्राकृतिक चिकित्सा

-लेखक-

डा० युगलकिशोर चौधरी एन.डी.
नीम-का-थाना।

मृगी अथवा मिरगी बड़ा ही दुःसाध्य व कष्टप्रद रोग है और इस रोग का रोगी महान् कष्ट झेल कर अकाल मृत्यु का ग्रास बनता है—मृगी का रोगी जीता हुआ मुरदे के समान है। उसका जीवन सदा खतरे में रहता है।

रोग के आक्रमण के समय सारा शरीर एक घोर आन्दोलन करता है और एंठने लगता है—बेहोशी हो जाती है और मुंह से झाग आते हैं।

यदि संसार में मृगी (Epilepsy) रोग का कोई सच्चा, स्थाई और सरल-अचूक इलाज है तो वह प्राकृतिक चिकित्सा है। रोग का मूल कारण विजातीय द्रव्य रक्त-दोष है जो मस्तिष्क में संचित होकर उसके कोमल भागों को नष्ट करता रहता है और मस्तिष्क में उसका अधिक संचय हो जाने व उसके दबाव से मूर्च्छा रोग आक्रमण करता है।

नित्य के गरिष्ठ, प्रकृति-विरुद्ध मिथ्या बिना भूख खाए हुए आहार से पेट व आंतों में अत्यधिक मल का संचय होता रहता है और इसी से रक्त विषाक्त जहरीला बन जाता है जो रोग का प्रधान कारण है; साथ ही चेचक का टीका (वैक्सीनेशन) से तथा तीव्र रोग जुकाम, बुखार, फोड़े-फुंसी आदि रोगों को इंजैक्शन औषधि आदि से दबा देने के कारण शरीर के विष बाहर न निकल कर स्थाई रूप से शरीर में रह जाते हैं जिनसे पागलपन, मूर्च्छा आदि भयानक दीर्घ रोग हो जाते हैं।

मृगी का इलाज—

इस रोग के रोगियों को मैं पक्का विश्वास दिलाता हूं कि वे दृढ़ चित्त होकर प्राकृतिक चिकित्सा रूपी तपस्या करें—राम नाम के प्रभाव से जिस प्रकार महा पापी भी भवसागर से पार हो जाते हैं उसी प्रकार मृगी के रोगी प्राकृतिक उपचारों से इस भयानक रोग से छुटकारा पा जायंगे। जिस प्रकार सांप कैंचुली को छोड़ देता है उसी प्रकार लंघन, फलाहार, नग्न रहना, एनिमा आदि अमोघ उपायों द्वारा मृगी का रोगी इस रोग को छोड़ कर स्वस्थ, सुन्दर, सुखी बन जायगा। दृढ़ चित्त होकर इस प्रकार इलाज करना चाहिये।

आरम्भ में एक सप्ताह का लंघन करना चाहिए, अधिक मोटे शरीर वाले रोगी को दो या तीन सप्ताह का उपवास करना चाहिए किन्तु दुर्बल शरीर वाले रोगी तीन दिन से अधिक उपवास न करें। उपवास

काल में केवल ताज़ा पानी, नींबू का थोड़ा रस और केवल संतरा, मौसमी, अनार या अंगूर का रस, न मिलने पर केवल हरी तरकारियां उबाल कर उनका रस पीना चाहिए।

उपवास काल में रोजाना सुबह शौच जाने के बाद तथा रात को सोते समय एनिमा (बस्ति क्रिया) लेना चाहिये।

इसके बाद एक सप्ताह से दो सप्ताह तक थोड़ा गाय अथवा बकरी का धारोष्ण फीका दूध व ताजे फल लेने चाहिए। गरीब रोगी सस्ते फल व हरे शाक उबाल कर तथा कच्चे शाक खा सकते हैं। नारियल, किशमिश, मुनक्का, खुबानी, बादाम आदि बड़े लाभप्रद हैं। मीठे के लिए शुद्ध शहद, अंजीर, खजूर व केला खाना चाहिए। इस क्रम के बाद दौरा बहुत कुछ कम हो जायगा और यदि कुछ रोग शेष रह जाय तो पुनः शरीर के मोटे या दुबलेपन को देखते हुए ३, ७, या १४ दिन का लंघन करना चाहिए। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, दो बातों का ध्यान अवश्य रखें कि दुबले-पतले रोगी उपवास न करें। मोटे चरबी वाले रोगी लम्बे उपवास करें इसीसे उन्हें लाभ होगा। उपवास काल में फलों का रस, पानी या तरकारी का रस जरूर लें। बथुआ, पालक, टमाटर, गाजर का रस उपयोगी होता है; इसके बाद लगभग दो सप्ताह पुनः बकरी या गाय के दूध पर रहें और फिर धीरे २ फल तरकारी दूध पर रहते हुए धीरे २ थोड़ा अन्न गेहूँ का दलिया, सूखी रोटी आदि पर आवें। इलाज के बाद भी मैदा की चीजें कढ़ाई की चीजें, मिठाई, अचार, मुरब्बे; चाय, नशीली चीजें, तेज मसाले आदि से परहेज रखना चाहिये। केवल प्रकृति के दिये हुये अमृत तुल्य रोग नाशक फल, शाक, मेवे व कच्चा दूध, दही तथा थोड़ा अन्न खाकर रहना चाहिये ताकि भविष्य में रोग उत्पन्न ही न होने पावे।

इलाज करने के दिनों में नीचे लिखी बातें विशेष रूप से याद रखिये। कपड़े आरोग्य व दीर्घ जीवन के लिये घातक हैं; इसलिये मृगी के रोगियों को चाहिये कि जहां तक बन पड़े अर्ध नग्न रहें, केवल लज्जा निवारण के लिये व समाज में चलने-फिरने मात्र के लिये थोड़े कपड़े पहनें, शेष समय घर पर तो जहां तक बने ठण्डी हवा शरीर को लगावें फिर उन्हें नई जिन्दगी मिलेगी। हज़ार २ दवा से जो ताज़गी, जो शांति, जो बल नहीं मिल सकते वे केवल शुद्ध ठण्डी हवा के झोंके शरीर पर सहन करने से मिलते हैं; इसके सिवाय यथा-शक्ति साफ, ताज़ी हवा, जंगल में घूमना बड़ा लाभप्रद है। दीर्घ श्वास लेना, प्राणायाम करना भी आवश्यक है। मृगी के रोगी को चाहिये कि इलाज होने तक शिर के बाल कटवा दे और रोजाना रात को सोते समय मुलतानी मिट्टी गीली करके शिर पर लेप करके सोवे, सुबह ठण्डे पानी से मिट्टी धो डाले। साथ ही स्नान करते समय शिर पर काफी देर ठण्डा पानी डालना चाहिये। जाड़े के मौसम में थोड़े गरम जल में कपड़ा डुबोकर मस्तिष्क पर रखना चाहिये और गरमी के मौसम में ठण्डे पानी में कपड़ा भिगोकर शिर पर रखना अत्यन्त लाभप्रद हैं। दौरे के समय रोगी के बदन से कपड़े उतार दें, उसे बिस्तर से हटाकर बालू पर लिटा दें, पंखे से हवा करें और ठण्डे जल की पट्टी उसके शिर पर रखनी चाहिये तथा नीबू का रस ठण्डे जल में डाल

कर पिलाने से आश्चर्यजनक लाभ होगा। रीढ़ की हड्डी की मालिश तथा रीढ़ पर गीली पट्टी रखना बड़ा अच्छा इलाज है। रोगी को खूब नींद भर सोना चाहिये, नशा तो एक दम छोड़ देना चाहिये। इस प्रकार कुछ दिनों व महीनों के लगातार लंघन, फलाहार, एनिमा, जल, मिट्टी, हवा के प्रयोगों से शरीर निर्मल, निरोग हो जायगा। रोग का मूल कारण विजातीय द्रव्य, मल, मूत्र, पसीना, कफ की राह निकल जायगा और सदा के लिये रोग अच्छा होकर शरीर सुन्दर, बलवान हो जायगा। लगातार धैर्य से इलाज कीजिये और प्राकृतिक चिकित्सा की महान रोग नाशक शक्ति की परीक्षा कीजिये। परीक्षा करने से आपको स्वयं मालूम हो जायगा। Epilepties have fasted for a month and never again suffered a returu of the Convulsions. Dr. Hay M. D. डाक्टर हे लिखते हैं कि मृगी के रोगियों ने विधि पूर्वक १ मास तक लंघन (फलों का रस लेते हुये) किया है और फिर आयु पर्यन्त कभी भी मूर्छा का दौरा नहीं हुआ।

चिकित्सा-संकेत।

कभी-कभी चिकित्सक के समक्ष चिकित्सा करते समय बड़ी विषम समस्या उपस्थित हो जाती है; किस रोग में कौनसी औषधि का व्यवहार करना चाहिये, कौनसी का न करना चाहिये। ऐसी स्थिति में वैद्य किंकर्त्तव्य-विमूढ़ से हो जाते हैं, उदाहरण के लिये विशूचिका, हृदय की धड़कन, विषम-ज्वर अथवा शीतांग ज्वर में वच्छनाग प्रधान औषधि का प्रयोग करना चाहिये या नहीं? विचार करने पर विदित होगा नहीं, क्योंकि वच्छनाग शरीर की ऊष्णता को पसीना और मूत्र द्वारा न्यून कर देता है, और हृदय में शैथिल्य उत्पन्न करता है। यदि इन रोगों में देना अभीष्ट ही हो तो यत्न-पूर्वक देना चाहिये। जिन रोगों में ताप बढ़ा हुआ हो उनमें वत्सनाभ-युक्त औषध देने से, स्वेद आकर शनैः-शनैः ताप कम हो जाता है।

एवमेव क्षय के रोगी को उसके क्षय के कीटाणुओं को नष्ट करने के लिये स्वर्ण-मिश्रित औषधि अधिक परिमाण में नहीं देनी चाहिये। क्योंकि ऐसा करने से क्षय के कीटाणु (Tuberculosis) अधिक संख्या में नष्ट होते हैं, जिससे शरीर में विष-वृद्धि होकर रोगी का ज्वर वृद्धिगत हो जाता है। इसलिये शुद्ध स्वर्ण की मात्रा १/३८ तक देना चाहिये। यदि रोगी का तापमान ६६ डिग्री से अधिक हो तो स्वर्ण-मिश्रित औषधि बिलकुल न दें अथवा अन्य किसी औषध से ताप कम करने के पश्चात् भी स्वर्ण-मिश्रित औषधि का प्रयोग नहीं करना चाहिये।

लशुन

ले.-श्री. रामेशवेदी आयुर्वेदालङ्कार, हिमालय हर्बल इंस्टिट्यूट,
बदामी बाग, लाहौर ।

जातियां—

वनस्पति शास्त्र के विद्वानों ने लशुन गण में प्रायः ढाई सौ जातियों के पौदों का पता लगाया है। इन सबके कन्द होते हैं। बहुत सी जातियों में फूलों के गिरने के बाद उनके स्थान पर छोटे २ कन्द लग जाते हैं।

खेती—

छोटी २ गांठों को अलग २ कर के क्यारियों में लगभग सात इञ्च की दूरी पर और दो या तीन इञ्च की गहराई में एक २ गांठ बोई जाती है। बोने का समय अक्टूबर है। ग्रीष्म ऋतु के आरम्भ में फसल ले ली जाती है, बीजों से भी पौदे तैयार किये जाते हैं। जब पौदे बड़े हो जाते हैं तो पत्तों को एक साथ बांध दिया जाता है। यह इस उद्देश्य से किया जाता है कि कन्द अधिक मोटे हो जांय और पुष्प नाल न निकले। फसल अच्छी हो तो सौ से डेढ़ सौ मन प्रति एकड़ के हिसाब से पैदावार हो जाती है जिसका मूल्य लगभग ढाई सौ रुपये अनुमान किया जाता है।

संग्रह

धूप में सुखाने के बाद गांठें भविष्य के उपयोग के लिये संग्रहीत करके सूखे हवादार स्थान में रख दी जाती हैं।

उपयोगी भाग—

कन्द, कन्दों और बीजों से निकाला हुआ तैल।

आयुर्वेद में किन्हीं स्थलों पर लहसुन को प्रयोग करने से पूर्व शुद्ध कर लेने के लिये आदेश दिया गया है। इसका उद्देश्य इसकी तेज गन्ध को मारना है। निम्न लिखित शास्त्रीय विधि (भा० प्र० वात०, ३४८-४९) और शा०, ख० २, अ० ५, ८-९) से इसे शुद्ध करना होता है। कन्द के ऊपर का छिलका उतार कर अन्दर की कलियों को अलग कर लें। इनके ऊपर का पतला आवरण निकाल दें और एक कली को लम्बाई के रुख चीरा देकर उस के मध्य केन्द्र में विद्यमान उत्पादक अंकुर को निकाल कर फैंक दें। अब इसे दही या लस्सी में भिगोकर रख दें और रात भर ऐसे ही पड़ा रहने दें। अगले दिन खुले पानी में खूब धोकर सुखालें, अब यह उपयोग किये जाने के लिये तैयार हो गया है।

चिकित्सा में उपयोग—

पेड़ पौदों के चिकित्सा सम्बन्धी गुणों में दिलचस्पी रखने वाले लोगों को हरेक युग में लहसुन के गुणों ने आकर्षित किया है। एलोपैथिक चिकित्सा विज्ञान इसके गुणों से बहुत देर तक अपरिचित

रहा है। फर्वरी १९१८ के प्रेक्टिशनर (पृ० १४५ १५४) में डब्ल्यू० सी० मिश्चिन एम. डी. ने अपने एक लेख 'लशुन का कृमि नाशक तथा चिकित्सा सम्बन्धी उपयोग' में बताया था कि किसी भी द्रव्य गुण शास्त्र में लशुन के क्रिया शील तैल से अधिक उपयोगी एक भी औषधि नहीं है फिर भी इसके बारे में डाक्टरों को बहुत कम ज्ञान है।

भारत के प्राचीन चिकित्सकों ने दवा के रूप में इसे बहुत ऊंचा स्थान दिया है। युनाइटेड स्टेट्स में कुछ हद तक इस को चिकित्सा में उपयोग किया जा रहा है। भारतीय वैद्य समाज में यह इतना सम्मानित रहा है कि इसका ठीक उपयोग जान लेने पर वैद्य लोग चिकित्सा में सदा सफलता की आशा रखते थे (का० सं०, ल० क०, ११३) देव, वैद्य और ब्राह्मणों को इस सिद्धि के लिये इसके प्रयोग की सिफारिश की जाती थी।

लशुन कल्प—

आयुर्वेदिक साहित्य में यह श्रेष्ठ रसायन माना गया है। सरदी, हवा, बारिश और पाले से मारे हुए शरीर वालों के लिये, टूटे हुये, टेढ़े-मेढ़े, निष्क्रिय तथा वेदना युक्त हड्डियों वालों के लिये और वायु से पीड़ित लोगों के लिये यहां हम कश्यप, वाग्भट्ट, शोढल आदि चिकित्सकों द्वारा प्रतिपादित लशुन कल्प का उल्लेख करते हैं। नाजुक तबिअत वालों को कराया जाने वाला यह लशुन प्रयोग पहले वात-रोग से आक्रान्त उद्धव को नारद ने करवाया था, ऐसी जनश्रुति है।

शीत और वसन्त ऋतु में, अत्यन्त घने बादलों से घिरी वर्षा ऋतु में और आवश्यकता होने पर ग्रीष्म ऋतु में भी या सदा ही वायु और कफ के रोगी सामर्थ्य के अनुसार लहसन का सेवन करते रह सकते हैं।

कश्यप का रसोन कल्प—

कश्यप की सम्मति में लशुन कल्प में पूरी आयु के पके हुये, सुन्दर कन्दों को बिना शुद्ध किये ही छिलके उतार कर पौष अथवा माघ महीनों में प्रयोग कराना चाहिये। कश्यप ने ताजे लस्सन की सब से छोटी मात्रा ३२ तोला बताई है, मध्यम मात्रा ४८ तोला और अधिक मात्रा ६४तोला या ८०तोला। ताजे लहसन न मिलने पर सूखे कन्दों का प्रयोग करना हो तो तुरईयों को गिनती में सौ, साठ या पचास लिया जाता था। शरीर की अग्नि समय और अनुकूलता को देखकर साधारणतया मात्रा का निश्चय किया जाता था। रोगी को खाने में उत्साह हो तो जब तक वह मूर्च्छित न हो जाय तब तक उसे खिलाते जाते थे।

तेज अग्नि वाला, शान्ति मन वाला, धैर्यवान, सुखी पुरुष प्रचण्ड वायु से रहित कमरे में रहता हुआ पुण्य दिन में लशुन प्रयोग आरम्भ करे। सरदी से बचने के लिये उसके पास हिरण या बाघ की खालों के कम्बल, कपास की रजाई और रेशमी कपड़े आवश्यकता के अनुसार काफी होने चाहिये। इन निर्मल वस्त्रों को अगर की धूनी दे देनी चाहिये। कमरे की हवा को स्वच्छ रखने के लिये धूप जलती हो, सुगन्ध वाले द्रव्यों से बनाये हुए अवधूलन (डस्टिंगपाउडर) को उसके शरीर पर मलना चाहिये। वह सदा खड़ाऊं पहन कर रहे, नंगे पैर न चले।

लस्सन लाने का काम एक नौकर के जिम्मे हो और उन्हें खाने के लिये ठीक करने का काम दूसरे

के जिम्मे। पत्तों को छोड़ दें, तुरईं और नाल लें। कुण्डी सोटे में रगड़ कर और खूब घी मिलाकर खिलायें।

चिन्ता; दिन में सोना और कठोर दांतु का परित्याग कर देने वाला पुरुष भोजन पच जाने पर सुबह सुख पूर्वक उठे, ब्राह्मणों को पूजे, कल्याणकारी मन्त्रों का पाठ करे और तब बैठ कर लशुन खाये। सदा गरम पानी पिये।

अदरक, निम्बू व अनारदाने के साथ लशुन की चटनी बनाकर रोगी को दें। मूली को छोड़कर हरितक वर्ग के सब पदार्थ उसे खाने को दिये जा सकते हैं।

भूने हुये लशुन में निम्न-लिखित चीजों के कूटे हुए मसाले को बुरकें। दालचीनी, तेजपत्र, सोंठ, काली मिरच, छोटी इलायची, जायफल और सब नमक। कश्यप बताते हैं कि आग के पास सुख से बैठा हुआ अच्छी बनी हुई शराब का घूंट पीने के बाद लशुन खाये, फिर शराब पिये। इस तरह बीच २ में शराब पीता हुआ धीरे २ लस्सन खाकर तृप्त हो जाय। अनुपान में गरम पानी, शराब या ठण्डा पानी पिये। रोग का कारण जठराग्नि का बल और अनुकूल आहार-विहार को जानने वाला रोगी कोई दूसरी चीज न खाये।

प्यास लगने पर दीपक पदार्थों से पकाये हुये गरम पानी को पियें। अत्यन्त पैत्तिक प्रकृति का आदमी भी कोसा पानी पी सकता है। मोथे और सोंठ से या सोंठ और सुगन्धवाला से या केवल सोंठ से पकाया हुआ कोसा पानी रात को पीकर आराम से सो जाय। इन्द्रियों को वश में रखता हुआ समझदार पुरुष इस विधि से पन्द्रह दिन, एक महीने, दो महीने, तीन महीने या सरदियों के चार महीने तक इसे खाये।

लशुन कल्प में पथ्य—

स्वभाव में रूक्ष पदार्थ पित्त को प्रकुपित करते हैं, इसलिये वे नहीं खाने चाहिये। अन्न थोड़ा खाना चाहिये जो पुरुष वैसे ही बहुत घी पी लेते हैं उन्हें अन्न में घी नहीं डालकर खाना चाहिए बल्कि अकेला घी पी लेना चाहिए। कम घी खाने वालों को खाद्य पदार्थों के साथ खूब घी खिलायें।

कल्प का लाभ—

कश्यप की बताई विधि द्वारा अमृत से उत्पन्न लशुनों की रसायन को सेवन करने से स्रोतों की शुद्धि होती है, मुख की निरसता हट कर मुख सुगन्धित होता है, शरीर कोमल बनता है, बाल बढ़ते हैं, आयु स्थिर होती है, दांत, मसूढ़े, नाखून तथा बाल स्वस्थ रहते हैं और रंग निखरता है। लशुन खाने वाला आयुष्मान् और बलवान् होता है।

रसायन रूप में लशुन—

रसायन का फल चाहने वालों के लिये लशुन खाने में कुछ और तरीके कश्यप ने बताये हैं। ८ सेर तुरईयों को कुचल कर ३२ सेर पानी में भिगो दें और साठ दिन में पकने वाले धानों के ढेर में दबा दें। जितने साल तक मनुष्य उसका सेवन करता है उतने ही सौ साल तक वह रोग रहित होकर अमर के समान जीवित रहता है। सांप जिस तरह केंचुली उतारता है उसी तरह वह समय समय पर अपनी पुरानी चमड़ी उतारता रहता है जिससे उसकी खाल सदा नई बनी रहती है।

आध पाव छिले हुए लशुन को रगड़ कर बारीक पीस लें, इसमें पाव भर घी मिलायें। इसमें

से थोड़ा सा लेकर शहद के साथ चाट जाया करें और ऊपर से दूध पी लिया करें, एक साल तक इसे खायें और दूध चावल की खुराक पर रहें। यह भी सब रोगों को दूर करने वाला है और सेवन करने वाले को सौ साल तक जीवित रखता है।

जो कच्चा लशुन न खा सकें वे घी में भूनकर खायें। पकौड़ों में इसे तल लें, उरदों में पकालें, अथवा यवागू के साथ या दही में डाले भल्ले पकौड़ियों में खायें।

कितनी मात्रा में लशुन खायें ?

सेवाग्राम आश्रम में (अ० ४४.) में प्रोफेसर भंसोली ने मुझे बताया था कि वे बीस तोला तक लहसन रोज खाते रहे हैं। इसका परिणाम यह हुआ कि उनके पेशाब के साथ खून आने लगा। तब कहीं उनसे लहसुन खाना छुड़वाया गया। इस उदाहरण से पता चलता है कि आजकल कश्यप शोढल, भावमिश्र आदि की मात्रा में लहसन जैसी तेज चीज़ का खाना शक्य नहीं। सारे दिन में अधिक से अधिक एक छटांक खाया जा सकता है

पाठक चाहेंगें तो मैं एक २ रोग में लशुन के व्यापक प्रयोग लिखूंगा। मेरी इच्छा है कि 'क्षयरोग में लशुन' घावों में लशुन आदि विषयों को विस्तार से एक २ अङ्क में दूं। पाठक अपने विचारों से मुझे सूचित करने की कृपा करें।

* * *

—आमातिसार पर उत्तम योग—

'भारत में अंग्रेजी राज्य' के लेखक वयोवृद्ध श्री. पं. सुन्दरलाल जी बनारस द्वारा परीक्षित।

अभी २ बाबू रतनलाल जी बंसल फिरोजाबाद निवासी के साथ श्री० पं० जी के दर्शनों का लाभ मुझे भी हुआ। श्री० बंसल जी को आम युक्त दस्तों की शिकायत अधिक दिनों से है और उसके कारण कमजोरी भी। श्री. पं. जी ने बंसल जी से कमजोरी का कारण जानकर निम्न सरल योग सेवन की सम्मति देते हुये इस चुटकुले की प्रशंसा की। धन्वन्तरि के पाठक भी व्यवहार कर लाभ उठावें।

आमातिसार नाशक चटनी—

आंवला सूखा बीज रहित तथा धनियां समभाग कुछ समय जल में भिगो दें। मुलायम होने पर निकाल थोड़ा काला नमक मिला पीसकर चटनी बनालें। इस चटनी को १-१ अंगुली ले-लेकर दिन में आते-जाते ५-७ बार चाट लें।

श्री० पं० जी ने उक्त प्रयोग को अनेक व्यक्तियों पर परीक्षित एवं उपयोगी बताया है।

जे० पी० अग्रवाल B. Sc.

निवेदन—विद्वान् वयोवृद्ध सज्जन अपने जीवन में परीक्षित सरल प्रयोग हमें लिख भेजने की कृपा करें हम उनको प्रकाशित करेंगे, जिससे उनके जीवन के अनुभव से अन्य व्यक्ति भी लाभ उठा सकेंगे।

—सम्पादक।

वृ० योगराज गूगल के

—आश्चर्यप्रद गुण—

लेखक—वैद्य देवीशरण गर्ग, प्रधान–सम्पादक 'धन्वन्तरि'।

वृ० योगराज गूगल आयुर्वेद की प्रसिद्ध महौषधि है। सम्पूर्ण वात-रोगों पर वैद्य समाज इसे व्यवहार में लाता है। इसके चमत्कारिक गुणों से प्रभावित होकर अब तो बहुत से एलोपैथ डाक्टर भी इसका व्यवहार करने लगे हैं। जनता भी इसके गुणों से मुग्ध है, ज़रा शरीर में दर्द अधिक हुआ कि उसने योगराज गूगल लाकर सेवन किया। इस प्रकार यह महौषधि वैद्य-समाज और जनता की आदर की वस्तु बन गई है।

यद्यपि वात-रोगों पर अन्य बहुत से शास्त्रीय प्रयोग हैं और अवस्था विशेष से उनका प्रभाव भी वृ० योगराज गूगल से कहीं अधिक होता है; किन्तु वृ० योगराज गूगल में यह विशेषता है कि वह सभी वात-रोगों पर सफलता के साथ व्यवहार में लाया जा सकता है। अन्य औषधियों में यह बात नहीं है, उनके व्यवहार के लिये कुछ योग्यता की भी आवश्यकता है। यही कारण है कि इस औषधि से जनता मकरध्वज और च्यवनप्राश की तरह परिचित हो गई है।

अस्तु, यह निर्विवाद है कि यह सभी वात-रोगों की उत्तम औषधि है किन्तु मुझे तो यह अनुभव हुआ है कि उन अन्य रोगों में भी जहां वात का अनुबन्ध रहता है योगगज गूगल विचित्र प्रभाव दिखाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि वातज अर्श में भी योगराज गूगल लाभ करता है और वातज शिरःशूल में, वातज कास में, वातज बहुमूत्र और यहां तक कि वातज मूत्रावरोध में वृ० योगराज गूगल का बड़ा उत्तम प्रभाव दृष्टिगोचर होता है। नीचे के दो उदाहरणों से आप इसकी सत्यता का अनुमान लगा सकेंगे।

१—लगभग ४-५ वर्ष पूर्व की बात है। मेरे एक मित्र के वहां उनके एक रिश्तेदार अपनी स्त्री को लेकर बांहर से आये, उस स्त्री को बहुमूत्र का रोग था, प्रति ५ मिनट पश्चात् उसे पेशाब के लिये जाना पड़ता था। मैं जब उसे देखने गया तो मैंने उससे यह कहा कि तुम रात्रि में जितनी बार पेशाब को जाती हो, वह आज गिन कर मुझे बतलाना। रोगिणी ने असमर्थता प्रकट करते हुये यह कहा कि वैद्य जी यह सम्भव नहीं है; मैं तो हर समय पेशाब जाती ही रहती हूँ, मुझे इतनी अधिक बार पेशाब जाना पड़ता है कि मैं उसकी शुमार नहीं कर सकती। मुझे ६ मास इसी दशा में हो गये, सैकड़ों औषधियां सेवन की हैं, बहुत से वैद्य और डाक्टरों से चिकित्सा कराई है, किन्तु कुछ लाभ नहीं होता।

दो-एक बार मूत्र रोकने वाली तीव्र औषधियों से पेशाब एक दम बन्द हो गया है और उससे पेडू में जलन, अफारा आदि अन्य कष्ट हो गये हैं। वास्तविक लाभ नहीं होता। अस्तु, रोगिणी का विवरण सुनकर मैं औषधालय आया और विचारने लगा कि इसे क्या औषधि दी जाय। कुछ समय विचारने के पश्चात् जब मैं कुछ भी निश्चय नहीं कर पाया तो मैंने रोगिणी के पति से कहा कि आप अभी कुछ धैर्य रखें मैं विचार कर प्रातः इसे औषधि दूंगा। लेकिन उसने बड़ी दीनता से उत्तर दिया कि वैद्य जी! कल तो प्रतिपदा है, अच्छा हो आज ही कोई नाम मात्र की औषधि दे दें। मैंने उसका आग्रह देखकर यह विचार किया कि इसे रात्रि के लिये चन्द्रप्रभा वटी की गोलियां दे दूं। प्रातः कुछ निश्चय करूंगा कि इसके बहुमूत्र को क्यों लाभ नहीं होता। सायंकाल का समय था, साधारण अन्धेरा था, कम्पाउडर भी उस समय नहीं था, इसलिये मैंने स्वयं जाकर औषधालय से ४ गोली चन्द्रप्रभा वटी निकाल कर दीं और उस शीशी को औषधालय की मेज़ पर ही रखा रहने दिया। रोगिणी के पति से प्रति ३-३ घण्टे पश्चात् १-१ गोली जल के साथ देने का आदेश दे दिया गया। दूसरे दिन सुबह ही रोगिणी का पति आया और बड़े आश्चर्य से कहने लगा कि रात को तो आपने कोई जादू कर दिया, उसे आज रात में पहिले की अपेक्षा आधे बार ही पेशाब को जाना पड़ा है। आपकी यह कौनसी गोली है, क्या अन्य वैद्य इसे तैयार नहीं करते? मैं भी उसकी यह बात सुनकर आश्चर्य में पड़ गया कि चन्द्रप्रभा वटी ने ऐसा अद्भुत गुण कैसे किया? अन्य वैद्यों ने भी तो बहुत सी औषधियां दी हैं, वह क्या चन्द्रप्रभा वटी के समान भी मूत्रावरोधक नहीं होंगी। अस्तु, मैंने उसे पुनः वही गोली दिलाने के लिये कम्पाउडर को पर्चा लिख दिया लेकिन जब वह पर्चा लेकर कम्पाउडर के पास गया और वह चन्द्रप्रभा वटी की गोली निकाल कर अलमारी में से देने लगा तो वह कम्पाउडर से कहने लगा कि यह रात वाली गोलियां नहीं हैं, वह शीशी तो अभी मेज़ पर ही रखी है। उसने यहीं आकर मुझ से भी कहा कि आपने तो कहा था कि रात्रि वाली गोलियां ही पुनः दे रहे हैं, वैद्य जी वह शीशी तो अभी मेज़ पर ही रखी हुई है जिसमें से आपने रात्रि को दी थीं। उसकी बात सुनकर मैंने कम्पाउडर से वह शीशी मंगाई और उसे देख कर मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ कि वह शीशी चन्द्रप्रभावटी की नहीं वरन् वृहद् योगराज गूगल की थी। वास्तव में दोनों शीशी बराबर २ रखी थीं और मेरी भूल से उसे चन्द्रप्रभा वटी के स्थान में वृ० योगराज गूगल की गोली दे दी गई थीं, जिससे कि उसे आश्चर्यप्रद लाभ हुआ था। मैंने उसे वही गोली देकर बिदा किया, उसके पश्चात् कुछ मूत्रावरोधक औषधियों के साथ वृ० योगराज गूगल १ सप्ताह तक देने से रोगिणी बिलकुल स्वस्थ होगई। पाठक ज़रा विचारें कि कहां मूत्र बाहुल्य और कहां वृ० योगराज गूगल वात रोग की औषधि। वास्तव में रोगिणी की मूत्राशय की वायु कुपित हो गई थी और उसी से उसे बहुमूत्र था जो योगराज गूगल से शान्त हो गई।

यह तो हुआ बहुमूत्र पर योगराज गूगल का प्रभाव, अब इसके ठीक विपरीत देखिये। स्थानीय १ बड़े सेठ जी की पुत्रवधू को २४ घण्टे से न पेशाब हुआ था और न दस्त ही। स्थानीय बड़े २ वैद्यों ने

मूत्र-कारक सभी उपचार किये। ढाक के फूलों का लेप, चूहे की मेंगनी का लेप और बहुत सी औषधियां की गईं किन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। उक्त सेठ जी मेरे स्नेही हैं अतः उन्होंने मुझ से कहा कि लाला! क्या आयुर्वेद में ऐसी कोई औषधि नहीं है जिससे इस बहू को मल-मूत्र विसर्जन हो? मैंने कहा कि है क्यों नहीं, आप थोड़ा धैर्य रखिये मैं अभी औषधि देता हूँ। मैंने यह विचार कर कि रोगिणी की मूत्राशय और मलाशय की वायु कुपित हो गई है उसी के कारण इसे यह कष्ट है। अब तक जितने उपचार किये गये हैं वह सब शीतल थे, और उनसे वायु का और अधिक प्रकोप हुआ इसलिए लाभ नहीं हुआ। मैंने वृ०योगराज गूगल की २ गोली रास्नादि क्वाथ से दिलाईं, फल यह हुआ कि १ घण्टे बाद ही रोगिणी को मूत्र आया और कुछ समय पश्चात् दस्त भी हुआ।

पाठक विचारें कि एक ही औषधि ने दो कैसे विपरीत प्रभाव दिखाये। वास्तव में आयुर्वेदीय चिकित्सा का रहस्य दोषों का वास्तविक ज्ञान है। वैद्यों को इसकी तरफ विशेष ध्यान देना चाहिए।

वृ० योगराज गूगल शास्त्रीय विधि से बना उत्तम हो तो निसन्देह सभी ऐसे रोगों में जिनमें वात का अनुबन्ध होता है बड़ा शीघ्र लाभ करता है। वातज शिरःशूल के रोगियों को मैंने इससे आरोग्य किया है और वातार्श में इसका बहुत बार प्रयोग करके सफलता प्राप्त की है। हां, रोग के अनुसार अनुपान, पथ्य आदि की कल्पना करनी पड़ती है।

चमत्कारिक स्व-परिक्षित प्रयोग

१-दुग्ध के जले पर मिट्टी- मेरी पूज्य माता जी खौलते हुए दुग्ध से जल गईं। फौरन ही मिट्टी पानी से पतली कर लेप की गई। जलन के कारण तमाम रात्रि विकल रहीं, वही मिट्टी का लेप दूसरे दिन सायंकाल तक जारी रहा। जलन शांत होने पर मिट्टी पानी से धो दी गई। गोला का तैल लगा दिया गया। न जलन रही और न फफोले।

२-मेरे स्वयं के एक छोटा फोड़ा हुआ। डाक्टरी की मशहूर दवा एक्रीफ्लेमिन (पीली दवा) कार्बोलिक आइल, मलहम आदि सब फेल हो जाने पर माता जी की सम्मति से निम्बपत्र धो-पीसकर थोड़ा मिर्चादि तैल डालकर उबाल कर टिकिया बना सुहाती २ फोड़ा पर बांधी गई। ४-५ दिन में फोड़ा ठीक हो गया।

३-त्रिफला जल से सिंचन एव चन्द्रोदय वर्ति का लेप अनेक नेत्र रोगों को दूर करता है। मेरी आंखों में लगभग २ माह से ८-१० दिन बाद लालामी तथा थोड़ा २ दर्द हो जाता था और पानी बहुत निकलता था। उक्त उपाय से कष्ट नष्ट हुआ।

-- जे० पी० अग्रवाल B. Sc.।

विविध-समाचार

स्वास्थ्य प्रचार समिति—

वर्तमान युग में स्वास्थ्य के प्रति उपेक्षा से रोग प्रचार को जितना बल प्राप्त हो रहा है उसको लक्ष्य में रखते हुए आवश्यक प्रतीत होता है कि स्वास्थ्य सम्बन्धी आदेशों का प्रचार किया जाय।

सुश्रुत का यह वाक्य कि—

"व्याध्युपसृष्टानां व्याधिपरिमोक्षः स्वास्थ्य रक्षणं च"

के आदर्श वाक्य को आज वैद्य समाज ने भी विस्मृत सा कर दिया है और यह सर्व विदित है कि स्वास्थ्य ही संसार की सर्वोच्च सम्पत्ति है।

अतएव सरदार शहर के समस्त आयुर्वेद प्रेमियों ने 'स्वास्थ्य प्रचार समिति, की स्थापना विजया दशमी के पवित्र पर्व पर की है जिसका निर्वाचन निम्न प्रकार से हुआ है।

सभापति—श्री वैद्यराज पं० रामप्रसाद जी दीक्षित
उपसभापति—स्वामी माधवराय जी वैद्यराज
मंत्री—वैद्य पं० सोहनलाल जी शर्मा आयुर्वेदाचार्य
उपमंत्री-वैद्य पं०भालचन्द्रजी दाधीच आयुर्वेदाचार्य
प्रचारमन्त्री—पं० भीमराज जी वैद्यराज
पं० हिमकर जी शर्मा वैद्यराज
कोषाध्यक्ष—पं० लक्ष्मीनारायण जी वैद्यराज

—मन्त्री, स्वास्थ्य प्रचार समिति।

बुलन्दशहर वैद्य सभा—

१७ अक्तूबर को जिला वैद्य सभा बुलन्दशहर का प्रथम अधिवेशन हुआ जिसमें निम्न लिखित पदाधिकारी निर्वाचित हुए।

प्रधान-पं० तुलसीराम जी शर्मा वैद्य, खुर्जा।

उपप्रधान-पं० कान्तिचन्द्र जी शर्मा, दनकौर पं० प्यारेलाल जी शर्मा खुर्जा, पं० वागीशदत्त जी बुलन्दशहर और पं० उदयवीर प्रसाद जी डिबाई।

मन्त्री-पं० प्रेमनिधि जी बुलन्दशहर।

सहकारी मन्त्री-पं० रघुवीरशरणजी शर्मा, बुलन्दशहर तथा रघुवीरशरण गुप्त खुर्जा।

कोषाध्यक्ष-पं० मोहनलाल जी बौहरे खुर्जा और निरीक्षक पं० गंगाप्रसाद जी बुलन्दशहर चुने गये। २० सदस्यों की एक कार्यकारिणी समिति भी बनाई गई।

भवदीय— रघुवीरशरण शर्मा।

आयुर्वेद आश्रम देहरादून का वार्षिक उत्सव

ता० १० अक्टूबर सन् १९४६ को नातापानी की पहाड़ी आश्रम का प्रथम उत्सव सफलता पूर्वक सम्पन्न हुआ।

प्रातः शरद् पूर्णिमासस्येष्टि यज्ञ श्री आचार्य पं० बृहस्पति जी शास्त्री ने कराया। मध्याह्न श्री स्वामी कृष्णानन्द जी की अध्यक्षता में सभा हुई। समीपवर्ती गांवों के स्त्री-पुरुष बड़ी संख्या में सम्मिलित हुये; नगर से भी कुछ सज्जन पहुंच गये, साधु सन्यासी भी पधारे। म० सुखपाल जी के भजनों के बाद आयुर्वेद पताका गान होकर श्री पं. अमरनाथ जी वैद्य शास्त्री, वानप्रस्थी ने आयुर्वेद पताका रोहण किया तथा वर्ष भर का वृतांत-विघ्नों, विपत्तियों की कष्ट कथा सुनाई।

कई उपयोगी प्रस्ताव स्वीकृत हुए। उत्पात मचाने वालों ने अपना अपराध स्वीकार कर क्षमा प्रार्थना की, अनेक सज्जनों के भाषण हुए, अन्त में

श्री पं० विश्वनाथ जी द्विवेदी, प्रधान यु० प्रा० वैद्य सम्मेलन ने अनेक लाभकारी प्रयोग तथा सुगमता से प्राप्त होने वाली जड़ी-बूटियों के गुण, उपयोग बतलाये। आपके सारगर्भित भाषण से जनता विशेष सन्तुष्ट हुई। (आशा है द्विवेदी जी उन जड़ी-बूटियों का वर्णनादि धन्वन्तरि में प्रकाशनार्थ भेजेंगे —सम्पादक)

आयुर्वेद आश्रम का वर्तमान स्थान नातापानी की पहाड़ी पर ही रहे और अमृतसर के दानवीर श्री बाबा गुरुमुखसिंह जी इस भूमि को छोड़ देवें, जिससे कि आश्रम आयोजना को व्यवस्थापक जी संगठन तथा स्वतन्त्रता पूर्वक चला सकें। यह प्रस्ताव सर्व सम्मति से स्वीकृत हुआ।

धन्यवाद, प्रसाद वितरण तथा शांतिपाठ के बाद सभा विसर्जित हुई। —देवेन्द्रनाथ विद्यार्थी।

देहरादून जिला वैद्य सम्मेलन—

(चतुर्थ-अधिवेशन)

धन्वन्तरि त्रयोदशी के दिन पं० रामरक्ष जी प्रिंसीपल गुरुकुल आयु० महा विद्यालय के सभापतित्व में हुआ। धन्वन्तरि पूजन के बाद ६ प्रस्ताव पास किये गये (जो स्थानाभाव से यहां प्रकाशित नहीं किये जा सके हैं) अन्तिम प्रस्ताव में प्रांतीय वैद्य सम्मेलन की कार्य-पद्धति के प्रति क्षोभ प्रकट किया गया है। तत्पश्चात् जिले के अधिकारियों का चुनाव हुआ। आगामी प्रान्तीय वैद्य सम्मेलन सभापति के लिये तीन नाम तथा जिले से भेजे जाने के लिये ४ प्रतिनिधि स्वीकृत हुये। –प्रधान मन्त्री।

धन्वन्तरि त्रयोदशी उत्सव–

धन्वन्तरि कार्यालय में—

२२-१०-४६ को समारोह एवं उत्साह के साथ मनाया गया। कार्यालयाध्यक्ष वैद्य देवीशरण गुप्त एवं ज्वालाप्रसाद अग्रवाल ने धन्वन्तरि-वृत करते हुए सायंकाल को धन्वन्तरि पूजन कर वृत-कथा श्रवण की तथा समस्त उपस्थित सज्जनों को प्रसाद वितरण किया। दीपावली के दिन कार्यालय के समस्त कर्मचारियों को इनाम दिया गया तथा निर्माणशाला के कर्मचारियों को इनाम व कपड़े दिये गये। सभी ने धन्वन्तरि भगवान से धन्वन्तरि कार्यालय की उत्तरोत्तर वृद्धि एवं आयुर्वेद सेवा में रत रहने की शक्ति देने की प्रार्थना की।

केकड़ी में—

सायंकाल ६॥ बजे कविराज भगवान् वल्लभ पंथ M.A. की अध्यक्षता में भगवान धन्वन्तरि प्रार्थना के पश्चात् विदेशी औषधियों के बहिष्कार, एवं वैद्यों के संगठन के विषय में प्रस्ताव पास किये गये। प्रति माह एक बार आयुर्वेद कांग्रेस कमेटी की बैठक होना निश्चित् हुआ; जिसमें आयुर्वेद विषय में अन्वेषणात्मक कार्य होगा। उत्सव के समय स्थानीय प्रतिष्ठित वैद्य समुदाय उपस्थित था।

—राजवैद्य अमरदत्त जी मिश्र प्र० मंत्री।

लश्कर में—

आयुर्वेद कालेज लश्कर में धन्वन्तरि महोत्सव मनाया गया। कविता, गायन, भाषण आदि के पश्चात् छात्रों को पारितोषिक आदि भी दिये गये। विद्यार्थियों ने मद्रास मेडिकल छात्रों की आयुर्वेद की उन्नति में अड़ङ्गा डालने वाली मांग का जोरदार

विरोध किया तथा नेहरू सरकार से आयुर्वेद को भविष्य में अधिक से अधिक सहयोग देने की मांग की गई।

दूसरे प्रस्ताव द्वारा ग्वालियर सरकार से मांग की है कि आयुर्वेद कालेज में प्रत्यक्ष कर्माभ्यास तथा सर्जरी को शीघ्रातिशीघ्र स्थान दिया जाये। तथा वैद्यों और कम्पाउडरों का वेतन का ग्रेड बढ़ाया जाये जिससे आयुर्वेद में अधिक से अधिक परिश्रम कर उसकी उन्नति में सहयोग दें।

-विश्वनाथ पाण्डेय उत्सव मन्त्री।

बस्ती में—

जिला वैद्य सभा के उद्योग से धन्वन्तरि जयंती बड़े धूम-धाम से मनाई गई।

पक्का बाज़ार, पुरानी बस्ती, उस्का बाज़ार तथा हर्रैया बाज़ार में धन्वन्तरि पूजन, हवन, व्याख्यान, मिष्टान्न पान आदि बहुत उत्तम ढङ्ग से हुआ। इस साल के जैसा गत वर्षों में वैद्य लोग इतने उत्साह से नहीं सम्मिलित होते रहे। इसी अवसर पर सालाना चुनाव भी हुआ।

—बाबूराम शर्मा मन्त्री जिला वैद्य सभा।

इटावा वैद्य संघ का दशम वार्षिकोत्सव—

धन्वन्तरि त्रयोदशी को इटावे में पं० मार्तण्डराव जी की अध्यक्षता में बड़े समारोह के साथ मनाया गया। धन्वन्तरि पूजन के बाद पं० रामनाथ जी शास्त्री ने रिपोर्ट पढ़कर सुनाई, उसके बाद सुधाकर पाण्डेय, पं० विश्वेश्वरदयालु जी बरालोकपुर तथा रत्नाकर जी शास्त्री के भाषण आयुर्वेद महत्व पर हुए। एक प्रस्ताव पास हुआ उसका आशय यह है—भोर कमेटी ने जो आयुर्वेद की उपेक्षा की है वह ठीक नहीं है; यह वैद्य संघ सरकार से अनुरोध करता है कि भोर कमेटी की सिफारिश न मान कर सस्ती, सफल चिकित्सा आयुर्वेद की उन्नति के लिये विशेष प्रयत्न करे। फिर चुनाव हुआ।

प्रधान-रत्नाकर शास्त्री इटावा।

मन्त्री-कृष्णस्वरूप आयु० शिरोमणि, इटावा।

—श्री० रामनाथ पाण्डेय शास्त्री।

कटनी में—

धन्वन्तरि भगवान का आह्वान पूजन बड़े समारोह के साथ हुआ। विद्वानों के भाषण के पश्चात् उपस्थित समुदाय का फोटो लिया गया। बाद में प्रसाद वितरण किया गया।

--श्री. प्रयागदत्त राजवैद्य, कटनी।

नकोदर (जालंधर) में—

धन्वन्तरि जन्मोत्सव के समय भोर कमेटी के प्रस्तावों का खंडन करते हुये बताया गया कि ये प्रस्ताव देशी चिकित्सा पद्धतियों के प्रति अन्याय है।

--मन्त्री, आयुर्वेद मण्डल, नकोदर।

श्री गंगानगर में—

श्रीमान् चौ० हरिश्चन्द्र M. L. A. के सभापतित्व में उत्सव धूम-धाम से मनाया गया। पं. गौरीशंकर जी आचार्य आयुर्वेद के आठों अङ्गों पर प्रकाश डालते हुये भोर कमेटी के प्रस्ताव का मुंहतोड़ उत्तर दिया। सभापति महोदय ने बताया कि यदि वैद्य समुदाय भोर कमेटी का विरोध करना चाहता है तो उसे राजनैतिक क्षेत्र में आना एवं राष्ट्रीय बनना चाहिये।

-मन्त्री, वैद्य सभा श्रीगंगानगर।

[स्वादिष्ट और गुणकारी]

शरद् ऋतु में सेवन योग्य

उत्तम पाक

निर्बल, निस्तेज और रोगी मनुष्यों को हृष्ट-पुष्ट, बलवान, स्वस्थ, कांतिमय बनाने वाली शरद-ऋतु के समान अन्य ऋतु नहीं है। इस ऋतु में ही बलबर्धक, पुष्टिकारक पाक एवं रसायन सेवन करने वाले वर्ष भर तक स्वस्थ रहते हैं। हमने नीचे लिखे पाक अत्युत्तम औषधियों से स्वच्छता-पूर्वक और बहुत स्वादिष्ट तैयार किये हैं। घृत दुग्ध आदि सभी पदार्थ शुद्ध डाले गये हैं।

कन्दर्प सुन्दर पाक-प्रमेह, नपुंसकता, निर्बलता नष्ट करता है, स्तम्भन-शक्ति बढ़ाता है। साथ ही कब्ज को नष्ट कर दस्त साफ लाता और भूख बढ़ाता है। मूल्य १४) सेर।

बल्लभ पाक-(धनिक पुरुषों के लिये) मात्रा थोड़ी लेनी होती है, गुण शीघ्र होता है, खाने में बहुत ही स्वादिष्ट है। केशर, कस्तूरी अम्बर, मोती, स्वर्ण आदि मिश्रित कर विशेष गुणवान बनाया गया है। बल-वीर्य वर्धक मन्दाग्नि और क्षय के लिये भी लाभप्रद है। मूल्य पाव भर १५)

बादाम पाक-(दिमागी ताक़त के लिये) मस्तिष्क की निर्बलता, सिर का घूमना, आंखों की रोशनी कम होना, खुश्की रहना आदि विकारों को नष्ट कर मस्तिष्क एवं शरीर पुष्ट करता है। मूल्य १ सेर १४)

गोखरूपाक- जिन्हें मूत्र सम्बन्धी किसी रोग से निर्बलता हो या निर्बलता के साथ मूत्र रोग हो उन्हें विशेष उपयोगी है। मूल्य १४) सेर

पीपल पाक-जिन्हें ज्वर के कारण निर्बलता हुई है या निर्बलता से बार २ ज्वर आता है उनको बहुत उपयोगी है; ज्वर को दूर कर भूख बढ़ाता है। मूल्य १ सेर १४)

सुपारी पाक-(स्त्रियों के लिये) प्रदर कमर का दर्द, योनि-शूल आदि को नष्ट कर कांतिवान बनाता है; प्रत्येक गृहणी को अवश्य सेवन करना चाहिये। मूल्य १ सेर १०)

सौभाग्य सुण्ठी पाक-प्रसूता स्त्रियों के लिये अमृत है गर्भाशय के समस्त विकारों को भी नष्ट करता है। जिन्हें मासिक-धर्म साफ नहीं होता उन्हें भी अवश्य सेवन करना चाहिये। मूल्य १ सेर १०)

एरण्ड पाक-(वात-रोगों के लिये शास्त्रोक्त) वात संबन्ध समस्त व्याधियों के लिये सर्वोत्तम है। जिन्हें बरसात में शरीर का दर्द गठिया आदि शिकायतें हो जाती हैं। उन्हें यह सेवन करना चाहिये। मूल्य १ सेर १०)

पैकिङ्ग-१०-१० तोले के डिब्बों व शीशियों में सुन्दर पैक किये गये हैं। शीशियों में मंगाने से ≡) प्रति पैक प्रथक चार्ज लगेगा, यह चार्ज एजेंट व सामान्य ग्राहक सभी को देना होगा।

पता-धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़).

—नवीन आयुर्वेदिक पुस्तकें—

मुख रोग विज्ञान—ऊर्ध्वांग-चिकित्सा के अन्तर्गत मुख-रोगों पर सर्वोत्तम व अपने विषय में पूर्ण, वर्णन एवं विस्तृत चिकित्सा दी गई है। मूल्य २)

कर्ण-रोग विज्ञान—कर्ण रोगों का वर्णन, निदान व विस्तृत चिकित्सा ग्रन्थ। मूल्य २)

नासा रोग विज्ञान—सम्पूर्ण नासा-रोगों का वर्णन एवं चिकित्सा दी है। मूल्य २)

शिरो-रोग विज्ञान—अपने विषय की उत्तम पुस्तक है। मूल्य ३)

नैसर्गिक आरोग्य—प्राकृतिक चिकित्सा के हिमायतियों को यह पुस्तक अवश्य मनन करनी चाहिये। मूल्य १॥)

आरोग्य विधान—अखिल भारत वर्षीय वैद्य-सम्मेलन ने इसे सर्वोत्तम माना है। उत्तम पुस्तक है। मू.४)

मूत्र परीक्षा—आधुनिक और प्राचीन दोनों पद्धतियों का विस्तृत परिचय इसमें मिलेगा। मूल्य १)

नाड़ी परीक्षा—पं० रावणकृत नाड़ी परीक्षा की भाषा-टीका सहित उत्तम पुस्तक। अनेक परीक्षाओं में प्रचलित। मूल्य ।)

पथ्यापथ्य निरूपण	।)	आयुर्वेद मीमांसा	१)
अनुपान कल्पतरु	।॥)	परिभाषा प्रबोध	१॥)
भारतीय भौतिक विज्ञान	॥)	इन्जैक्शन प्रकाश	॥=)
भारतीय रसशास्त्र	।=)		

प्राप्ति-स्थान—धन्वन्तरि कार्यालय, बिजयगढ़ (अलीगढ़)

धन्वन्तरि के नियम

१—धन्वन्तरि का वार्षिक मूल्य ५≡) है। इसी में एक विशेषांक भी दिया जाता है। इस वर्ष 'रक्त-रोगांक' विशेषांक प्रकाशित हुआ है।

२—वर्ष जून से प्रारम्भ होकर मई में समाप्त होता है। ग्राहक जून से ही बनाये जाते हैं, बीच से नहीं।

३—वार्षिक मूल्य ५≡) मनिआर्डर से भेजना चाहिये। अथवा आज्ञा मिलने पर आपका शुभ नाम ग्राहकों में लिखकर रक्त-रोगांक तथा बाद के प्रकाशित अङ्क वार्षिक मूल्य ५≡) की वी० पी० से भेज दिये जाते हैं।

दवा के सच्चे मोती

वैद्यो ! हकीमो !! तथा फार्मेसी वालो !!!

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई, खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारत के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं निहायत किफायत से मिलते हैं। धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने की कृपा करें।

पता:-नगीनदास वीरचन्द जवेरी, ४४-४६, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३।

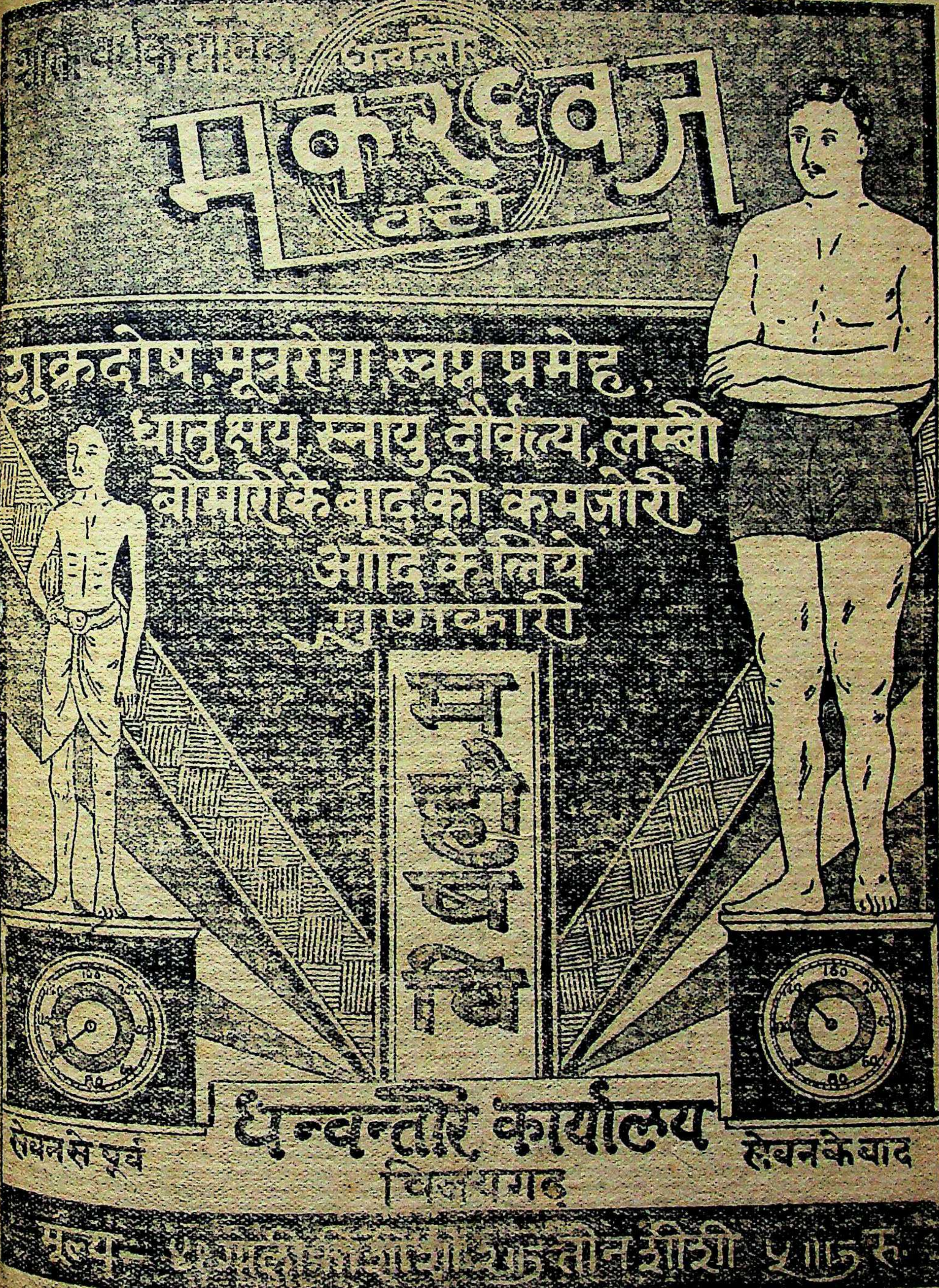

[illegible]

मकरध्वज

वटी

शुक्रदोष, मूत्ररोग, स्वप्नप्रमेह,
धातुक्षय, स्नायु दौर्बल्य, लम्बी
बीमारी के बाद की कमज़ोरी
आदि के लिये
गुणकारी

महौषधि

धन्वन्तरि कार्यालय
विजयगढ़

सेवन से पूर्व

सेवन के बाद

मूल्य — [illegible] तीन शीशी ५॥) रु.

-टाट के झोले-

हमारे एजेन्ट तथा औषधि-विक्रेता हमसे झोलों की बेहद मांग करते रहे हैं। हम अभी तक उनकी इच्छा पूर्ति नहीं कर सके थे। लेकिन आज सूचित करते प्रसन्नता है कि हम अपने एजेन्टों को झोला (थैला) सप्लाई कर सकेंगे। ये झोले मज़बूत टाट के सुन्दर तथा मज़बूत बनाये गये हैं और हम विश्वास दिलाते हैं कि ये झोले हाथों-हाथ बिकने वाले व हर प्रकार से उपयोगी हैं। मूल्य भी लागत से भी कम रखा गया है। दोनों तरफ विज्ञापन छापा गया है जिससे कार्यालय की औषधियों का शीघ्र प्रचार हो। आप जितने भी चाहें शीघ्र मंगालें। मूल्य व साइज निम्न प्रकार है--

लम्बाई	चौड़ाई	मूल्य फी दर्जन,
१२ इञ्च	१६ इञ्च	५)
१० इञ्च	१३ इञ्च	३।)

नोट-१. इन रेटों पर झोले केवल कार्यालय के एजेन्टों को ही दिये जायगे। अन्य सज्जनों को १२॥) प्रतिशत अधिक देना होगा।

२. इन रेटों पर कमीशनादि नहीं दिया जायगा।

मिलने का पता-- धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (अलीगढ़)

"धन्वन्तरि"

आयुर्वेद का सर्वोत्तम पत्र है।

आपका कर्त्तव्य है कि इसके १-२ नवीन ग्राहक बनाकर हमारी साहयता कर हमको उत्साहित करें।

क्या आप ध्यान देंगे ?

ग्राहक नम्बर ——————

श्री पुस्तकालयाध्यक्ष —
गुरुकुल विश्वविद्यालय
गुरुकुल कांगड़ी
(Haridwar)

2803

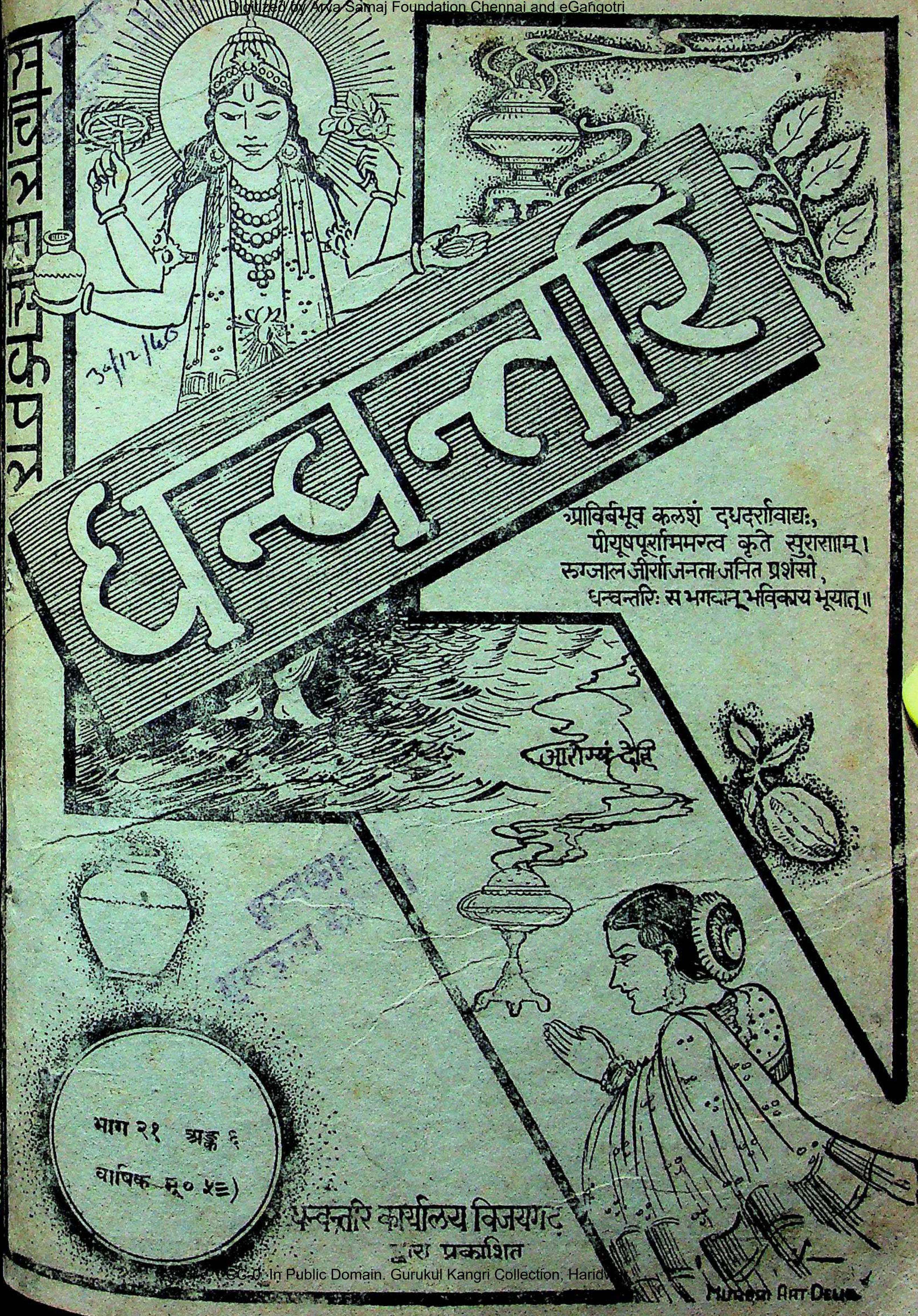
आरोग्यं देहि
Mukherji Art Deur

सचित्र मासिक पत्र

धन्वन्तरि

आविर्बभूव कलशं दधदर्णवाद्यः,
पीयूषपूर्णममरत्व कृते सुराणाम्।
रुग्जाल जीर्णजनता जनित प्रशंसो,
धन्वन्तरिः स भगवान् भविकाय भूयात्॥

30/12/46

भाग २१ अङ्क ९
वार्षिक मू० ५=)

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़
द्वारा प्रकाशित

गुरुकुल कांगड़ी (Haridwar)

-इसी अंक में-

○ **महामना मालवीय जी का निधन—**

आयुर्वेद व वैद्यों के प्रति उनकी भावना, वैद्यों के लिये संकेत रूप में आदेश।

○ **मलेरिया ज्वर पर नमक का सफल-प्रयोग—**

साधारण किन्तु परीक्षित। सस्ता व धर्मार्थ औषधि-वितरण करने वालों के लिये उत्तम प्रयोग।

○ **आयुर्वेदोपदेशः—**

आरोग्यं चास्य विज्ञानात् पुरुषार्थोद्यसिद्धिता।
तत्प्रत्यक्षानुमानाप्तोक्ति युक्तस्यः परं ज्ञताम् ॥
श्लोक की विस्तृत एवं सरल व्याख्या।

○ **मण्डल कुष्ठ—**

विवेचन, निदान, रूप, चिकित्सा, प्रयोग आदि। समझने के लिये प्रारम्भ में चित्र भी दिया है।

○ **अनार-योग-सार—**

अनार के भेद, भेदानुसार गुण, अनेकों रोगों पर व्यवहार-विधि।

—इत्यादि—

विषय—सूची

आगामी विशेषांक ३७९
महामना मालवीय जी का निधन ३८१
मलेरिया ज्वर पर नमक का प्रयोग ३८३
आयुर्वेदोपदेशः ३८४
अतिसार में पथ्य ३८७
मण्डल कुष्ठ ३८८
भाग २१ अङ्क ४ परामर्श नं. २ का उत्तर ३९४
अनार योग सार ३९५
पारदादि सेवन में अवधानता ३
लाल इन्द्रायण या केन्हर ३९९
जल नीम ४०१
प्रसूति और कम्पवात ४०३
परीक्षित-प्रयोग ४०
वैद्यों की सम्मतियां ४१
वैद्यों से परामर्श ४१
विविध समाचार ४१

-आगामी अंक के कुछ विशेष लेख-

○ **"आयुर्वेदीय तत्व विवेचन"—**

जीर्णे ज्वरे कफे क्षीणे क्षीरं स्यादमृतोपमम्।
तदेव तरुणे पीतं विषवद्धन्तिमानवम् ॥
की वैज्ञानिक विस्तृत व्याख्या।

—श्री० पं० कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी B. A. आयुर्वेदाचार्य।

○ **कुष्ठं वरिष्ठं बहुदुःखदायि"—**

—कविराज श्री० उपेन्द्रनाथदास काव्य-व्याकरण-सांख्य सागर, प्रोफेसर-तिब्बिया कालेज, देहली द्वारा लिखित विवेचनापूर्ण लेख।

○ **"काली मिरच"—**

—श्री० रामेशवेदी आयुर्वेदालंकार, बादामी बाग, लाहौर।

आदि-आदि अनेकों विद्वानों के उत्तम २ लेख पढ़िये।

Editor---Vaidya Devi Sharan Garg and J. P. Agrawal B. Sc.
Printed and Published by Vaidya D. S. Garg at the Dhanwantari Press, Bijaigarh.

मण्डल कुष्ठ रोगिणी

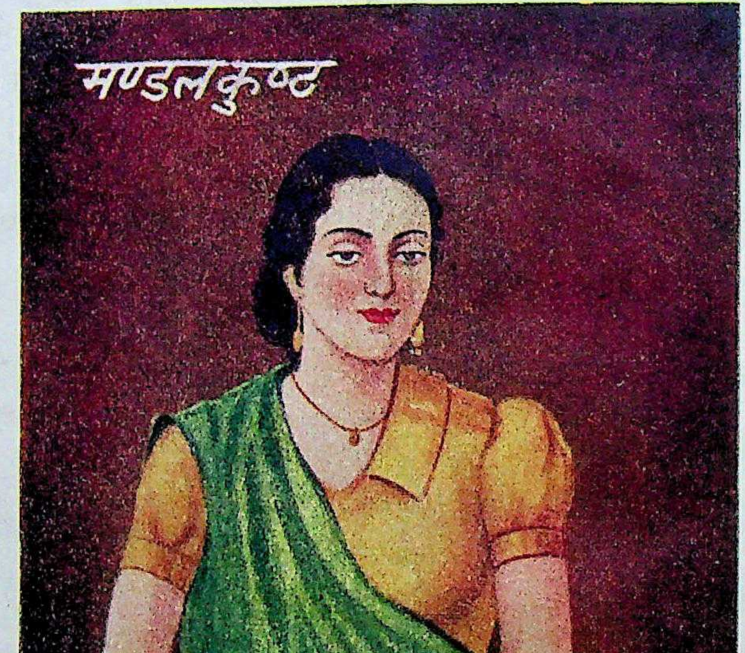

मण्डल कुष्ठ का रङ्ग ललाई लिये श्वेत होता है। चकत्ते गोल-गोल व कड़ाई लिये, चिकने, प्रस्वेद युक्त-गीले या लिबलिबे होते हैं।

[विशेष विवरण पृष्ठ ३८४ पर देखें।]

Approved by Dept. of Public Instructions of Central Provinces & Berar.

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ का मुखपत्र

MURARI ART AGRA

धन्वन्तरि

या औषधी पूर्वाजाता देवेभ्यस्त्रियुगंपुरा।
मनैनुबभ्रूणामहं शतं धामानि सप्तच॥

नवम्बर | सचित्र मासिक पत्र | १९४६

आगामी विशेषांक

धन्वन्तरि का आगामी विशेषांक क्या हो यह प्रश्न विचारणीय है। क्योंकि विशेषांक की तैयारी, लेखों के संग्रह करने और उनके छपवाने में कई माह लग जाते हैं इसलिये इस विषय में शीघ्र ही प्रयत्न करना आवश्यकीय है।

धन्वन्तरि के विशेषांकों की उत्तमता अब सर्व-विदित होगई है। आजकल के संकट-पूर्ण समय में भी धन्वन्तरि ने बड़े २ विशेषांक देकर अपनी प्रतिष्ठा को बनाये रखा है यह हमारे लिये गौरव की बात है। मेरी सदैव से ही यह इच्छा रही है कि धन्वन्तरि आयुर्वेद का सर्वोत्तम पत्र रहे। धन्वन्तरि आयुर्वेद साहित्य की स्थाई वस्तु रहे, उससे विद्वान वैद्य और नव-शिक्षित वैद्यराजों का समान रूप से उपकार हो।

धन्वन्तरि का सम्पादन कार्य मैंने सन् १९३९ में अपने हाथों में लिया था और सर्व प्रथम मैंने धन्वन्तरि का वातरोगांक प्रकाशित किया, उसे देख कर विद्वान वैद्यों ने यह स्वीकार किया कि धन्वन्तरि का यह विशेषांक पहले सभी विशेषांकों से उत्तम और सुन्दर है उसी से प्रभावित होकर उसके पश्चात् अनुभवाङ्क, नारीरोगाङ्क और ज्वराङ्क प्रकाशित किये गये। मेरे सम्पादित इन विशेषांकों को वैद्य-समाज ने बहुत ही पसन्द किया, आज भी ग्राहकों का यह कहना है कि धन्वन्तरि के अतिरिक्त आयुर्वेदिक किसी अन्य पत्र ने इतने सुन्दर और उपयोगी विशेषांक प्रकाशित नहीं किये। इन विशेषांकों के बाद ही धन्वन्तरि का सम्पादन कार्य मेरे हाथों से चला गया और मुझे खेद है कि इस के पश्चात् प्रकाशित किये विशेषांक 'नारी-रोगांक' और 'अनुभवांक' की भांति आकर्षक प्रकाशित नहीं हो सके। भगवान की कृपा से अब पुनः समय आ गया है कि मैं पाठकों की पूर्ववत् सेवा कर सकूं। मैं चाहता हूँ कि एक बार पुनः ज्वरांक और नारी-रोगांक से उत्तम आकर्षक और उपयोगी विशेषांक पाठकों को समर्पित करूं।

धन्वन्तरि का आगामी विशेषांक क्या हो ?

अब प्रश्न इस बात का है कि धन्वन्तरि का आगामी विशेषांक क्या हो ? बहुत से विद्वान् मित्रों और ग्राहकों से इस विषय पर मैंने विचार-विमर्श किया है और उसके द्वारा दो बातें मेरे सामने उपस्थित हैं। एक तो यह कि धन्वन्तरि का आगामी विशेषांक "कल्प-चिकित्साङ्क" हो। कल्प-चिकित्सा आयुर्वेद की महत्व-पूर्ण चिकित्सा है; संग्रहणी, मंदाग्नि और क्षय के, अन्य पैथियों से निराश रोगियों को भी दुग्ध, मट्ठा और आम्र-कल्प द्वारा आज भी सैकड़ों वैद्य जीवन-दान देते हैं। इन रोगों के अतिरिक्त कुष्ठ, अतिसार, जलोदर, शोथ आदि पर कल्प-चिकित्सा का बड़ा उत्तम प्रभाव होता

है। इस कल्प-चिकित्साङ्क की वास्तव में आवश्यकता है। इस विषय पर अभी तक आयुर्वेद में बहुत ही अल्प साहित्य है।

कुछ स्नेही मित्रों की सम्मति है कि कल्प-चिकित्साङ्क अभी स्थगित कर दिया जाय और आगामी विशेषांक 'गुप्त सिद्ध प्रयोगाङ्क' प्रकाशित किया जाय। धन्वन्तरि के पाठकों को ज्ञात ही है कि आज से कई वर्ष पूर्व हमने एक 'गुप्तसिद्ध प्रयोग' नाम की पुस्तक प्रकाशित करने की घोषणा की थी। इस पुस्तक के लिये २५० वैद्यों के आशुफलप्रद प्रयोग संग्रह किये थे, इसका मूल्य मय-पोस्ट व्यय ६॥) रखा गया था और केवल उन्हीं ग्राहकों को देने का वायदा किया गया था जिनका २) प्रथम एडवांस हमारे पास आ जाय। अब तक लगभग १५०० ग्राहकों का एडवांस हमारे पास आगया है। पुस्तक के लिये प्रयोगों का संग्रह होगया है। सभी लेखकों के ब्लाक बन गये हैं; किन्तु बहुत प्रयत्न करने पर भी अभी तक गवर्नमेंट से कागज की स्वीकृति नहीं मिली, इसलिये हमारे कुछ स्नेही मित्र यह सम्मति दे रहे हैं कि :—

धन्वन्तरि का आगामी विशेषांक "गुप्त सिद्ध प्रयोगांक" निकाला जाय और उसमें यह समस्त संग्रहीत साहित्य दे दिया जाय। ऐसा करने में हमें—

बहुत बड़ी हानि है :—

१५०० ग्राहकों को ३०००) हमें वापिस देना पड़ता है और इस पुस्तक का सम्पूर्ण लाभ मारा जाता है। यह पुस्तक इतनी उत्तम प्रकाशित होती कि इसके कई संस्करण हाथों-हाथ बिक जाते। इस पुस्तक में इतने उत्तम-उत्तम प्रयोग हैं कि जिन्हें देखकर पाठक चकित हो जांयगे। ऐसी पुस्तक न अभी तक प्रकाशित हुई और न ऐसी पुस्तक प्रकाशित करना साधारण बात है। इस पुस्तक के एक २ प्रयोग की परीक्षा की गई है। जो प्रयोग बेकार साबित हुआ, उसके स्थान पर पुनः नवीन प्रयोग मंगाया है। इस प्रकार इसके सभी प्रयोग उत्तम हैं। ऐसी पुस्तक को प्राप्त करने की किसकी लालसा नहीं होगी। यह सब हानि हमें संकोच में डालती है और हमें विवश करती है कि हम इसे पुस्तक रूप में ही प्रकाशित करें। अब इसके लिये कागज मिलने की आशा भी होगई है।

किन्तु इस पुस्तक के उन ग्राहकों ने, जिन्होंने इसके लिये एडवांस भेज दिया है, हमें बार २ तक़ादा करके परेशान कर दिया है। कुछ ग्राहक तो बेतरह तगादा करते हैं, हमें बुरी भली तक सुनाते हैं। उनका ऐसा करना अनुचित भी नहीं है; क्योंकि उन्हें रुपया भेजे २-३ साल हो गये; आखिर कहां तक प्रतीक्षा की जाय।

इस कारण से—

हम विवश हो जाते हैं और अपने उन मित्रों की सम्मति स्वीकार कर लेना चाहते हैं जो इस पुस्तक को विशेषांक के रूप में प्रकाशित करने का आग्रह कर रहे हैं।

धन्वन्तरि के विशेषांक निकालने से पूर्व हम सदैव ग्राहकों की सम्मति लेते रहे हैं इस बार पुनः निवेदन है कि आप भी अपनी सम्मति शीघ्रातिशीघ्र भेजने का कष्ट कीजिये कि आगामी विशेषांक-कल्प-चिकित्सांक प्रकाशित किया जाय या गुप्त सिद्ध प्रयोगाङ्क, जैसी आपकी सम्मति होगी वैसा ही किया जायगा।

—वैद्य देवीशरण गर्ग,
प्रधान-सम्पादक।

महामना मालवीय जी का निधन

गत १२ नवम्बर को परमपूज्य महामना मालवीय जी के निधन के रूप में भारतवर्ष ने एक ऐसी महान निधि खो दी, जिसकी क्षति शायद युगों तक पूरी नहीं हो सकेगी। महामना मालवीय जी क्या थे और उन्होंने हमारे देश की अपने समस्त जीवन-काल में कितनी मूल्यवान सेवाएँ की हैं, इस पर अधिक प्रकाश डालना "धन्वन्तरि" के विद्वान पाठकों की योग्यता और ज्ञान का अपमान करना होगा। वे नव भारत के पितृ तुल्य थे और आज देश के विभिन्न क्षेत्रों में हम जिस स्वतन्त्र चेतना का दर्शन कर रहे हैं, इसमें उनकी कठोर साधना और तपश्चर्या का बहुत बड़ा स्थान है। अपने युवाकाल के प्रारम्भ में ही, जब बड़े-से बड़े प्रलोभन और आकर्षण उनको व्यक्तिगत उन्नति के पथ पर खींच रहे थे, वे एक विरक्त सन्यासी की भांति उनको ठुकरा कर सेवा और देशोन्नति के कार्य में जुट गये और अपनी अन्तिम श्वांस तक उसीमें अनुरक्त रहे। राजनीति, धर्म, समाज और शिक्षा आदि कोई भी ऐसा क्षेत्र नहीं, जिसमें उन्होंने अपने कठिन परिश्रम की आहुति न दी हो।

आयुर्वेद की उन्नति और उसके प्रचार के भी मालवीय जी प्रबल समर्थक थे और पश्चिमीय चिकित्सा का अपने देश में इतना प्रचार देखकर उन्हें बड़ा दुःख होता था। अखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद महासम्मेलन के २६वें अधिवेशन केस्वागताध्यक्ष पद से उन्होंने जो भाषण दिया था, उसके निम्न स्थलों से पाठक स्वयं उनके आयुर्वेद प्रेम का अनुमान लगा सकते हैं।

× × आयुर्वेद के महत्व को बतलाना सूर्य को दीपक दिखलाने के समान है। २२०० वर्ष पहले अलक्जेण्डर यहां के वैद्यों को यूनान ले गया था, उन मरीजों को अच्छा कराने, जिनको यूनान के वैद्य अच्छा नहीं कर सकते थे। बौद्ध काल में भी आयुर्वेद का बड़ा महत्व बढ़ा। × × × ×

× × प्राचीन काल में आयुर्वेद की शिक्षा देने का बड़ा ही अच्छा प्रबन्ध था। बात यह थी कि उस समय अपना शासन था। अतः राजा महाराजाओं की ओर से भी बड़ी सहायता मिलती थी। पश्चिमी सभ्यता ने हमारे इस आयुर्वेद की शिक्षा के सुप्रबन्ध को बिगाड़ डाला। देशी राजा आयुर्वेद का महत्व देते थे। अंग्रेजों ने डाक्टरी चिकित्सा चला दी, इससे इसका क्रम बिगड़ गया। आयुर्वेद की शिक्षा के सम्बन्ध में हम लोगों ने बहुत सा कार्य किया है। मगर अब भी बहुत काम बाकी है। जो आदमी थोड़े में सन्तोष कर लेता है वह कायर समझा जाता है। अतः हम कायर नहीं कहलाना चाहते। बल्कि इस कार्य में हम लोग जितना आगे बढ़ सकें उतना ही बढ़ना चाहिये। × × × ×

× × बिहार, संयुक्तप्रान्त, मद्रास, सीलोन, आदि स्थानों में आयुर्वेदिक शिक्षा देने की संस्थायें खुल गई हैं। करीब ३००० विद्यार्थियों ने आयुर्वेद परीक्षा पास की। १९२५ से गवर्नमेंट भी कई प्रांतों की वैसी ही संस्थाओं को सहायता दे रही है। देशी राज्यों में भी ऐसी संस्थाएँ हैं। इधर औषधि बनाने का भी अच्छा प्रबन्ध हुआ है। ये सब बातें पिछले ३० वर्षों में हुई हैं। हमें तो इतने में सन्तोष नहीं है। अमेरिका, जर्मनी, स्विटजरलैंड के लोग कितने बढ़े हुए हैं; उन लोगों ने रोग न होने देने, होने पर इलाज करने और सर्जरी में बड़ी उन्नति की है, उन लोगों के मुकाबले हम लोग कहां हैं। हम लोगों को इनसे बढ़ कर इन बातों में उन्नति करनी चाहिये। × × × ×

× × केवल हिन्दी पढ़े हुए लोग भी इस आयुर्वेद को अपना लें। आयुर्वेद की पद्धति द्वारा २० से २५ सेर तक दूध पिला कर मुर्दे के समान आदमी को मोटा-ताज़ा बना सकते हैं। अतः आयुर्वेद से इतनी उन्नति करलें कि योरोप के लोग आयुर्वेद पढ़ने के लिये भारत आवें और देखें कि आयुर्वेद में क्या चमत्कार है। इनसे सर्जरी भी सीखनी चाहिये। बिना स्वराज्य हुए हम अपनी संस्कृति की रक्षा नहीं कर सकते। × × × ×

× × जिन लोगों का यह विचार है कि आयुर्वेद की दवायें अंग्रेजी दवा के बराबर फायदा नहीं करती, वे ग़लती पर हैं। रोग न हों इसका भी उपाय हमारे यहां है। मांस विषयुक्त है, इसका त्याग करना चाहिये। इसका आन्दोलन अमेरिका में बड़े जोरों से चल रहा है। मद्रास के एक सज्जन ने हर प्रान्त के भोजन को अलग-अलग चूहों को खिलाया। उसमें उन्होंने देखा कि पंजाब प्रान्त का भोजन (मोटी रोटी और उर्द की दाल) करने वाला चूहा सबसे मोटा निकला। इसके सिवाय एक प्रोफेसर ने लिखा है कि सोयाबीन मांस से भी बढ़कर पौष्टिक पदार्थ है। इसलिये वैद्यों से मेरा निवेदन है कि लोगों को भोजन के सम्बन्ध में भी उपदेश दिया करें। "जिसकी लाठी उसकी भैंस, जिसका लोहा उसका देश" इसलिये परमात्मा ने हम लोगों के खाने के लिये जो अनमोल चीज़ें घी दूध आदि दी हैं, उनका उपयोग करके शरीर पुष्ट करना चाहिये। × × × ×

× × इस ब्रिटिश राज्य के होतें हुए भी जितनी उन्नति आप कर सकते हैं करें। आयुर्वेद का खूब विस्तार करना चाहिये। इसका एक केन्द्र होना चाहिये। हर जिले में आयुर्वेद की शिक्षा देने के लिये संस्थाएँ स्थापित करनी चाहिये। वहीं हिन्दी में आयुर्वेद की शिक्षा दी जाय। हर गांव में भी ऐसी संस्था की शाखायें काम करें। × × × ×

उपरोक्त उद्धरणों के एक-एक अक्षर से यह प्रकट हो रहा है कि मालवीय जी आयुर्वेद पर असीम भक्ति रखते थे और उनकी यह भक्ति केवल शब्दों तक ही सीमित नहीं थी, बल्कि वे आयुर्वेद चिकित्सा पर इतना दृढ़ विश्वास रखते थे कि अपने अन्तिम समय तक उन्होंने आयुर्वेदिक औषधियों के अतिरिक्त किसी अन्य औषधि का व्यवहार करना स्वीकार नहीं किया। स्वर्गीय मालवीय जी के इन उद्धरणों से पश्चमीय चिकित्सा-पद्धति के भक्त एक उपयोगी पाठ सीख सकते हैं।

खेद है कि ऐसे परम-पूज्य तपस्वी देश भक्त को यह हतभागा राष्ट्र अन्तिम समय भी शान्ति न दे सका और उन्हें अपने अन्तिम क्षण नोआखाली कांड से उत्पन्न वेदना और अन्तर्दाह के साथ बिताने पड़े। हमारी भावी पीढ़ियां इसे बड़े कसक के साथ स्मरण करेंगी।

हम समस्त वैद्य-समाज की ओर से स्वर्गीय आत्मा को हार्दिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हैं और इस पुनीत अवसर पर अपने इस निश्चय को पुनः एक बार दुहराते हैं कि जिस आयुर्वेद की उन्नति और प्रचार स्वर्गीय मालवीय जी के जीवन का मुख्य ध्येय था, उसकी रक्षा और सेवा में हम कभी बड़ा-से-बड़ा त्याग करने में भी संकोच नहीं करेंगे। हमारा विश्वास है कि इस पुण्य कार्य में स्वर्गीय का आशीर्वाद सदैव हमारे साथ रहेगा।

मलेरिया ज्वर पर नमक का सफल उपयोग

मलेरिया ज्वर में सेंधानमक आश्चर्यप्रद गुण करता है—यह जानकर पाठकों को बेहद आश्चर्य होगा, किन्तु जिन्हें इस प्रयोग का पता है वह इसके गुणों पर मोहित हैं; मैंने स्वयं बहुत बार इसका उपयोग किया है। धर्मार्थ औषधालयों में, जहां मलेरिया के समय में बहुत से रोगी आते हैं, इस सस्ती वस्तु से बहुत लाभ उठाया जा सकता है। प्रयोग-विधि निम्न है—

नमक को खूब बारीक पीसकर कपड़ा में छान लेना चाहिये। इस बारीक नमक को लोहे के तवे पर डालकर मन्द २ अग्नि से गरम करना चाहिये। जब नमक का रंग बदल जाय-काला सा पड़ने लगे, इसे उतार कर नीचे रखलें और ठंडा करके शीशी में भरलें। मलेरिया के रोगी को पारी के दिन ज्वर आने से कम-से-कम ४-५ घंटे पूर्व ६ माशा नमक को पाव भर पानी में घोल कर पिला देना चाहिये। इसके सेवन के पश्चात् जब तक कि जूड़ी (मलेरिया) का समय न निकल जाय किसी प्रकार का भोजन नहीं देना चाहिये, पानी भी कम-से-कम देना चाहिये। यथासम्भव इलायची, अनार के दानों को मुंह में डलवाकर रोगी की प्यास शांत करनी चाहिये, बहुत अधिक प्यास लगने पर भी थोड़ा ही जल देना चाहिये। प्रायः एक दिन में ही लाभ होता है, किसी ही रोगी को दो बार देना पड़ता है। यदि किसी प्रकार उस दिन मलेरिया का आक्रमण हो ही जाय तो ज्वर उतरने पर हल्का पौष्टिक भोजन देना चाहिये और दूसरे दिन पुनः इसी प्रकार प्रयोग करना चाहिए।

—देवीशरण गर्ग।

'आयुर्वेदोपदेश:'

लेखक

श्री० वैद्य पं० चन्द्रशेखर जी जैन शास्त्री,
न्यायुर्वेदाचार्य, न्यायतीर्थ, आयुर्वेदोपाध्याय।

आयुर्वेद के अध्ययन से लाभ–

आरोग्यं चास्य विज्ञानात पुरुषार्थौघ-सिद्धिता।
तत्प्रत्यक्षानुमानाप्तोक्ति युक्तभ्य: परीक्षताम् ॥

भावार्थ–आयुर्वेद का अध्ययन करने से मनुष्य दीर्घायु भोक्ता तथा नीरोग रहता है। साधारण आयुर्वेद से अनभिज्ञ मानव भी जीवन बिताते हैं पर आयुर्वेद-अध्येता के जीवन बिताने और उनके जीवन बिताने में ज़मीन–आसमान का अन्तर है। एक को जीवन येन-केन-प्रकारेण बितानी पड़ता है, जब कि दूसरा (आयुर्वेद का अध्येता) सानन्द और नीरोग जीवन बिताता है। सब जानते हैं कि चारपाई पर पड़े २ सौ वर्ष की आयु भोगने की अपेक्षा सत्तर वर्ष का नीरोग जीवन बिताना कहीं अच्छा कहलाता तथा प्रतीत होता है।

'पुरुषार्थौघसिद्धिता'

धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष ये चारों पुरुषार्थ कहलाते हैं। इन चारों ही पुरुषार्थों की सिद्धि आयुर्वेदानभिज्ञ नहीं कर सकते। आयुर्वेदानभिज्ञ धर्म साधन नहीं कर पाता। धर्म उसे कहते हैं जो कि इष्ट स्थान (उत्तम स्थान--मुक्ति) में पहुंचा दे। वह प्रवृत्ति रूप एवं निवृत्ति रूप इस प्रकार दो तरह का होता है। आयुर्वेदानभिज्ञ नीरोग न रहने के कारण प्रवृत्ति रूप धर्म 'यज्ञ-पूजा प्रभृति कार्य' नहीं कर सकता क्योंकि उसका शरीर सामर्थ्य इस प्रकार का नहीं है कि वह कुछ भी बाह्य प्रवृत्ति कर सके। इसी प्रकार यह निवृत्ति रूप धर्म भी पालन नहीं कर सकता, पाप क्रियाओं (द्यूतादि दुर्व्यसनों मद्य-मांसादि सेवन) का त्याग करना निवृत्ति रूप धर्म है। आयुर्वेदानभिज्ञ रुग्ण होने के कारण अथवा अज्ञानता के कारण दुर्व्यसन सेवन करता तथा रुग्ण हो जाने पर काडलिवर आइल, जुन्दबेदस्तर, ब्रांडी आदि का सेवन प्रारंभ कर देता है। अतएव प्रत्येक धर्म प्रेमी को आयुर्वेद का ज्ञान अवश्य करना चाहिये।

आयुर्वेद—विज्ञान द्वारा ही **अर्थ**-पुरुषार्थ की सिद्धि होती है। अपने धन-संपति, धन-धान्य, दासी-दास, वस्त्र, बर्तन, खेत, मकान, इत्यादि को संग्रह करना और बढ़ाना 'अर्थ' कहलाता है। किस चीज़ का संग्रह लाभदायक है और किसका लाभदायक नहीं इसका निर्णय आयुर्वेद ज्ञाता ही कर सकता है। दृष्टांत ले लीजिये धन संग्रह का मुख्य ध्येय है मनः प्रसत्ति (मन की प्रसन्नता)। आयुर्वेदानभिज्ञ धनादि का संग्रह करके भी प्रसन्न नहीं रह पाता, जब कि आयुर्वेदज्ञ कीर्ति-अर्जन को मनः प्रसत्ति का प्रमुख कारण समझता है और अपना सर्वस्व लुटा देने पर भी अपने को और अधिक

प्रफुल्लित प्रसन्न एवं नीरोग बना देता है। आयुर्वेद में 'अर्थ' का क्या स्थान है, इसका समाधान आयुर्वेदानभिज्ञ कदापि नहीं कर सकता।

शरीर, जीभ, नाक, आंख, कान 'स्पर्शन-रसन घ्राण-चक्षु-श्रोत्राणि' इन पांच इन्द्रियों का मनोऽनुकूल विषयों में प्रवृत्त होना 'काम' है। शरीर गर्मी के दिनों में शिमले की सैर चाहता है, जाड़ों में नर्म मुलायम गद्दे और 'हंसती मनोरमा'; यह 'स्पर्शन-काम' है। जीभ उत्तमोत्तम मोदक, गुलाब-जामुन, शिखरन, मलाई हलवा आदि चाहती और आस्वाद लेती यह 'रसना काम' है। नाक उत्तमोत्तम कन्नौज के इत्र, विलायती एसेंस, प्राकृतिक मनोरम पुष्पों की गंध लेती है, यह 'घ्राण काम' है। आंखें जल प्रपात, पार्वतीय दृश्य, हिमालय का सूर्योदय, सिनेमा-थियेटर, नाँच आदि देखतीं यह सब 'चक्षुरिन्द्रिय काम' है। उत्तमोत्तम गीत, नृत्य, वादित्र प्रभृति की मधुर ध्वनि, कोकिला, मैना प्रभृति का कलालाप (सुन्दर मोहक आवाज़) सुनना आदि 'कर्ण काम' कहलाता है। मन के द्वारा इन सबका उपयोग किया जाता है; किन्तु प्रयोग इन्द्रियों के द्वारा ही होता है। 'मनस' शब्द संस्कृत में नपुंसक लिंग है और सच पूछो तो वास्तव में यह है भी नपुंसक ही। नपुंसक का चिह्न है 'जिसमें स्वयं शक्ति न हो, पर जो दूसरों की वैसी क्रिया (काम-भोगादि क्रिया) देख कर तृप्ति माने।' यानी जो स्वयं कुछ न कर सके। ऐसे ही ये नपुंसक 'मन' बाबा हैं। स्वयं न तो स्पर्श कर सकते, न कुछ स्वाद ही ले सकते, न कुछ देख ही सकते और न कुछ सुनते ही हैं, मात्र नपुंसक की भांति कल्पना की उड़ाने भरते हैं। इसलिए वैयाकरणों ने इन्हें ठीक नपुंसक कहा है।

इस नपुंसक मन पर किस प्रकार कंट्रोल करना चाहिये? इसे एक आयुर्वेदज्ञ ही समझ सकता है। सर्व साधारण इस बात को नहीं समझते। वे काम पुरुषार्थ का अनर्थ कर डालते तथा असत्प्रयोग करते हैं? ज़रा मिलान करिये कि क्या सन्निपात की दाह में, या मलेरिया की ठण्ड ढीली पड़ने के बाद में जो गर्मी होती है, उसमें शिमले की सैर करा के 'स्पर्शन काम' वाला पुरुषार्थ कर डालना चाहिये। अथवा जो दौड़ कर हांपता हुआ पसीने में तर आ रहा है साथ ही प्यास भी है तो क्या उसे 'रसनाकाम' रूप उत्तमोत्तम ठण्डे शर्बत तत्काल पिला देने चाहिये? एक बार ही प्रसंग करने से जिसे नकसीर चलने लगती अथवा हाथ-पांव ढीले पड़ जाते अथवा लम्बी बीमारी के बाद (सन्निपात, मोती झरा आदि के शिकार को) स्त्री-प्रसंग कराके 'काम पुरुषार्थ' कर डालना चाहिये? क्या १२-१३ वर्ष की किशोर वय में 'काम-पुरुषार्थ' हो सकता है? इत्यादि असख्य प्रश्नों का समाधान बिना आयुर्वेद अध्ययन के हो नहीं सकता। अतएव आयुर्वेद का अध्ययन अवश्य करना चाहिये।

दुःखों की सर्वथा आन्त्यतिक निवृत्ति एवं परमोत्तम अक्षय सौख्य की प्राप्ति 'मोक्ष' है। इसे एक आयुर्वेदज्ञ ही जानता, जानने का प्रयत्न करता तथा प्राप्त करता है। अजर, अरुज, अक्षय, अव्यावधि, शोक भय शंकादि रहित काष्ठागत सुश्क, विद्या एवं विभव वाले स्थान को 'मुक्ति' या मोक्ष कहते हैं। उसे नी-रोग शरीर व मन वाला ही प्राप्त कर सकता है।

इस प्रकार आयुर्वेद के परिज्ञान का फल चारों पुरुषार्थों की सिद्धि भी है। उनका सदुपयोग करना

प्राप्त करना, निभाना आदि आयुर्वेद-विज्ञान से ही सम्भव है।

आजकल का जमाना 'परीक्षा-प्रधान' है, एक दम 'आज्ञा प्रधान' नहीं। सम्भवतः प्राचीन समय में भी ऐसा वातावरण रहा होगा, चाहे वह आज जैसा विस्तृत न हो। किन्तु बहुज्ञानी ऋषियों ने जो लिखा उसे प्रमाणित करने के लिए उन्होंने सिंह गर्जन करते हुए लिखा—

'तत्प्रत्यक्षानुमानाप्तोक्तियुक्तिभ्यः परीक्षताम्'— इस स्वास्थ्य शास्त्र को खूब अच्छी तरह देखो, समझो, प्रत्यक्ष, अनुमान, आप्तोक्ति, युक्ति प्रभृति से परीक्षा कर लो।

आजकल के कतिपय पण्डितम्मन्य आयुर्वेद को अवैज्ञानिक, अतर्क संगत कहने का शान से दुस्साहस करते हैं। यदि सचमुच पूछा जाय तो उन्होंने अभी तक आयुर्वेद का विज्ञान और उसके साथ परीक्षण भी नहीं कर पाया है। कतिपय महाशय परीक्षा के लिए प्रस्तुत भी हुए, किन्तु परीक्षा करना न जाना। परीक्षा करना अलग बात है और उस विषय को तोड़-फोड़ कर बरबाद कर देना और; फिर खिल्लियां उड़ाना बिलकुल अलग बात है। हमारे आयुर्वेद के नवीन-परीक्षक दूसरी श्रेणि के लोगों में से हैं। दूसरी श्रेणि परीक्षण के सर्वथा अयोग्य है।

परीक्षण के विषय में एक दृष्टान्त देना समयानुकूल ही होगा।

एक कुम्हार के यहां कतिपय महानुभाव घड़े खरीदने गये। अंगुलियों के टोलों से प्रत्येक व्यक्ति घड़े का परीक्षण कर रहा था—कुम्हार यह सब शांति से देख रहा था, उसने परीक्षा के समय आनन्द से कहा कि खूब बजा कर देख लो। लोगों ने बजा-बजा कर परख कर घड़े ले लिये। एक ओर से एक परीक्षण से अनभिज्ञ व्यक्ति भी परीक्षार्थ आया। उसके हाथ में डण्डा था। उसने घड़ा उठाया व डण्डे से बजा कर परखना चाहा। अभी वह तैयार ही हुआ था कि कुम्हार बोला—'हैं, हैं यह क्या करते हो? घड़े की जांच करते हो या फोड़ते हो? चुपचाप घड़ा रखदो और सवारी बढ़ाओ।' ठीक यही व्यवहार इन परीक्षकों के साथ हमें भी करना चाहिये जो कि भारतीय होते हुए भी विदेशियों की तरह आयुर्वेद को अवैज्ञानिक और मनमाना कहते हैं।

परीक्षा के सर्वोत्तम उपाय हैं—(१) प्रत्यक्ष, (२) अनुमान, (३) आगमोक्ति (४) युक्ति। इन चार प्रामाणिक तरीकों से प्रत्येक वस्तु या पदार्थ का निर्णय करना चाहिये।

(१) निश्चयात्मक, व्यभिचार रहित, आत्मा-इन्द्रिय मन का विषय जो विशद-निर्मल ज्ञान होता है उसे 'प्रत्यक्ष' कहते हैं। 'विशदं प्रत्यक्षम्'। यह प्रत्यक्ष दो प्रकार का है—

(A) साधारण-प्रत्यक्ष, (B) योगि प्रत्यक्ष।

(A) इन्द्रिय और मन की सहायता सर्व-साधारण को जो विशद्-निर्मल ज्ञान होता है, वह साधारण-प्रत्यक्ष है।

(B) मन एवं इन्द्रिय की सहायता बिना जो मात्र आत्मा से ही विशद्-ज्ञान होता है, वह योगि प्रत्यक्ष है। इसके द्वारा तीन लोक व तीनों काल की बातें स्पष्ट जानी जाती हैं। पूर्व महर्षियों ने इसी दिव्य-दृष्टि से प्रत्यक्ष करके आयुर्वेद को अवतरित किया था।

(२) साधन से साध्य का ज्ञान होना 'अनुमान' है—जैसे धूम्र (धुआं) देखकर अग्नि का ज्ञान करना। अस्वस्थ देखकर दोष-वैषम्य का ज्ञान करना। इत्यादि !

(३) युक्ति का मतलब है 'उपमान'। इसके होने पर ही यह होता है, इसके अभाव में यह नहीं होता ऐसी दलीलों के द्वारा विषय सिद्ध करने को युक्ति कहते हैं। युक्ति का अर्थ उपाय भी है, अर्थात् इस कार्य की सिद्धि के लिये, इतने साधन जुटाना चाहिये। जैसे रोगी को ठीक करने के लिये चिकित्सा के 'चतुष्पाद' (रोगी, वैद्य, औषध, परिचारक) व्यवस्थित होने चाहिये।

(४) चौथा उपाय है 'आप्तोपदेश'। आप्तोपदेश का अभिप्राय है त्रिकालदर्शी पूर्व महर्षियों ने ज्ञान-तपोबल से अर्जित, योगिप्रत्यक्ष के द्वारा जाना हुआ तथा जनता के दुःख निवारणार्थ प्रयुक्त किया गया (प्रदर्शित किया गया) उपदेश। उनके उपदेश को बिना ननु-नच किये निःशंक होकर मानना चाहिये।

इस प्रकार इन चारों प्रमाणों से आरोग्य तत्व निश्चय करके, सानन्द जीवन बिताना प्रत्येक मानव का परम पवित्र कर्तव्य है।

सारांश—आरोग्य की प्राप्ति आयुर्विज्ञान से ही होती है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष इन चारों पुरुषार्थ-समूहों की सिद्धि भी आयुर्विज्ञान से ही होती है। आयुर्विज्ञान के तत्वों का निश्चय (१) प्रत्यक्ष, (२) अनुमान, (३) आप्तोपदेश, (४) युक्ति के द्वारा करना चाहिये।

अतिसार में पथ्य।

जिस मनुष्य का आहार-विहार ठीक है, उसे कोई रोग नहीं होता और जिसे कोई रोग नहीं होता, वही दीर्घायु होता है। कुपथ्य से आमाशय में नाना प्रकार के विकार उत्पन्न हो जाते हैं, और वे ही विविध रोगों के कारण बन जाते हैं। अतिसार भी आमाशय की विकृति से उत्पन्न होता है। यहां हम अतिसार के लक्षण और प्रकार न बतलाकर केवल पथ्य पर ही संकेत करते हैं—

अतिसार के रोगी को कच्चा दूध एवं तरल द्रव्य सेवन नहीं करने चाहिये, किन्तु चावलों का मांड तरल होते हुये भी (लाह्या) हानिकारक नहीं है, यदि कच्चा आम आता हो तो अफीम आदि स्तम्भक औषधि कभी नहीं देनी चाहिये। सबसे अच्छा तो यह है कि अतिसार का रोगी उपवास ही करे, इससे आमाशय के दोष पच जाते हैं और मेदा शुद्ध हो जाता है। यदि किसी औषधि का सेवन करना अभीष्ट ही हो तो दिन में ३-४ बार थोड़ी२ मात्रा में करनी चाहिये। एक ही काल में अधिक मात्रा में कभी औषधि नहीं देनी चाहिये; इस से लाभ की अपेक्षा हानि ही होती है। अतिसार बन्द हो जाने के पश्चात् भी गरिष्ठ एवं अधिक भोजन से बचना चाहिये, अन्यथा आमाशय पुनः बिगड़ जायगा।

—देवीशरण गर्ग।

मंडल कुष्ठ

—लेखक—
श्री० कृष्णप्रसाद जी त्रिवेदी
बी० ए०, आयुर्वेदाचार्य,
ब्रह्मांड घाट, महावन, मथुरा।

यह 'मण्डल-कुष्ठ' नामक व्याधी सप्त महाकुष्ठों में से एक कष्टदायक व्याधि है। सुश्रुत जी ने सप्त-महाकुष्ठों की गणना में 'मण्डल कुष्ठ' के स्थान पर 'अरुण कुष्ठ' की गणना की है। किन्तु इससे यह समझ लेना केवल भ्रम मात्र है कि 'मण्डल कुष्ठ' और है तथा 'अरुण कुष्ठ' और कोई बला है। हमारे मत से तो 'मण्डल कुष्ठ' और 'अरुण कुष्ठ' ये दोनों नाम एक ही व्याधि के पर्यायवाची हैं, जिस का कि वर्णन हम यहां कर रहे हैं। मालूम होता है 'अरुण' यह नामकरण 'मण्डल कुष्ठ' के वर्ण को देखकर ही कर लिया गया है। दोनों के निदान तथा दोष दूष्य में कोई भेद नहीं है।

हम तो 'मण्डल-कुष्ठ' या 'अरुण कुष्ठ' को श्वित्र का ही एक भेद नते हैं और यद्यपि शास्त्रकारों ने श्वित्र कुष्ठ की गणना सप्त महा कुष्ठों में नहीं की है तथापि यह उनसे भिन्न नहीं है, इस विषय का विवेचन हमने "कुष्ठ-रोग की विवरण पूर्वक सफल चिकित्सा" शीर्षक अपने लेख में की है (देखिये रक्त-रोगाङ्क पृष्ठ १८६)

कुष्ठ बीजाणु युक्त सप्त महाकुष्ठ चाहे एक २ दोष की उल्वणता वाले हों अथवा दो-दो दोषों की उल्वणता वाले हों सब ही महा कुष्ठ हैं तथा इन्हीं में 'श्वित्र' का समावेश होता है जैसे और महाकुष्ठ धातुओं के आश्रित होते हैं वैसे ही यह भी रक्त मांस और मेद धातु के आश्रित होता है। यद्यपि इसमें स्राव नहीं होता तथापि यह धातुओं को कुष्णित अवश्य ही करता है (कुष्णित देहमिति कुष्ठम्, कुष् निष्कर्षे इस धातु से यह शब्द बना है) और इसमें भी कुष्ठ कीटाणु होते हैं, तभी तो इसी श्वित्र को रुधिराश्रित होने पर 'किलास' कहा जाता है तथा यही जब मांस के आश्रित हो जाता है तब 'मण्डल' या 'अरुण' कुष्ठ कहाता है। तथा इसी 'अरुण' को सुश्रुत जी ने सप्त महा कुष्ठों के अन्तर्गत माना है जो कि हमारे उपर्युक्त विवेचनानुसार 'मण्डल कुष्ठ' का ही पर्याय मात्र है।

मण्डल, अरुण, किलासादि श्वित्र के ही अवस्था-विशेष के नाम हैं। प्रारंभिक अवस्था में यह केवल 'श्वित्र' कहलाता है जब कि केवल त्वचा का ही रङ्ग श्वेत होता है और तब ही तक इसकी गणना महाकुष्ठ में नहीं की जा सकती। इसमें भी 'परज श्वित्र' की ही गणना महाकुष्ठ में नहीं होती, कारण वह त्वचा को केवल श्वेत कर देता है, किंतु 'व्रणज श्वित्र' जो कि व्रण के मिथ्या उपचार से होता है, शीघ्र ही महाकुष्ठ में परिणत होकर मंडल कुष्ठादि का रूप धारण कर लेता है। अथवा वही श्वित्र दोषानुरूप बलवान होकर जब शरीर की

वचा को कुपिणत करता है अर्थात् शारीरिक वग् मांसादि को सड़ाने लगता है या यों कहो कि प्रपने कुष्ठ नाम को सार्थक करने को प्रवृत्त होता है ब धातुओं को दूषित करता हुआ मण्डल (अरुण) केलासादि के लक्षणों में परिणत हो जाता है।

पाश्चात्यों ने सर्व प्रकार के कुष्ठों को केवल ो ही प्रमुख भेदों में समाविष्ट कर लिया है। 1) Lepra Aneasthetic अर्थात् स्पर्श ज्ञान लुप्त ुष्ठ और (Lepra Tuberculosa अर्थात् गलित ुष्ठ। Lepra Moculosa (वर्णमय कुष्ठ), lixed Type (मिश्रित कुष्ठ) इत्यादि कुछ उपद मान लिये गये हैं। तथा जो कुष्ठ उपदंश, ज़ाक या दूषित जलवायु के कारण अथवा अत्यधिक ज़हरीली दवाइयों के सेवन से हो जाय जैसे ारद, आयोडाइड, संखिया, हरताल, अरसेनोबेंजाल, तूरा, जैपाल (जमालगोटा) इत्यादि विषैली ोषधियों के मिथ्या उपचार से जो कुष्ठ हो जाता वह प्रायः कष्ट-साध्य ही माना गया है। मण्डल ुष्ठ भी इसी प्रकार का कष्ट-साध्य ही होता है। सका विशेष निदान इस प्रकार है—

िदान—

हमने जहां तक देखा है यह मण्डल कुष्ठ प्रायः नकों ही होता है जो कफ प्रकृति के हैं और मूली, ड़ या दूध में गुड़ मिलाकर प्रायः अधिक खाया रते हैं या जो तिल का विशेष सेवन करते हैं और जनोपरांत सूर्य में या गरमी में परिश्रम करते हैं, ाय, काफी, तम्बाखू, शराबादि का जो विशेष वन करते हैं। अधिकतर यह कुष्ठ आलू खाकर र दुग्ध-पान करने से, मूली या गुड़ के साथ ध पान करने से, बरसाती सड़े जल का व्यवहार करने से या छोटी मछली (खाडियों की) खाने से या दूध मछली आदि विरुद्ध आहार करने से (जैसे बङ्गाली लोग किया करते हैं) मंडल कुष्ठादि होते हैं।

पूर्व रूप—

इसमें प्रथम लसिका दूषित होती है, अतः शरीर के स्थान विशेषों में विशेष खुजली और ददोरे से पड़ जाते हैं। फिर रक्त और तदनन्तर मांस के दूषित होने पर यह अपने पूर्व रूप को धारण कर लेता है।

रूप—

"श्वेतं रक्तं स्थिरं स्त्यानं स्निग्धमुत्सन्न मण्डलम्।
कृच्छ्रमन्योन्य संयुक्तं कुष्ठं मण्डलमुच्यते ॥"

(मा० नि०)

अर्थात् इसका वर्ण कुछ ललाई लिये हुए श्वेत होता है (यह वर्ण श्वित्र का द्योतक है), इसके मंडल या चकत्ते गोल २ कड़ाई लिये हुए, चिकने प्रस्वेद युक्त या गीले या लिबलिबे होते हैं। ये मंडल कुछ उठावदार तथा ऐसे कई चिकने या मण्डल परस्पर मिले हुए होते हैं।

इसमें उक्त कारणवश रक्त दूषित होकर प्रथम चकत्ते उठना प्रारम्भ होता है। ये चकत्ते प्रथम देखने से उदर्द या पित्ती के सदृश होते हैं, पश्चात् ये पतले फैले हुए गोलाकार हो जाते हैं फिर उपेक्षा करने पर अधिक समय हो जाने से इसमें दूषित कीटाणुओं की वृद्धि होकर यह जब मांस गत हो जाता है, तब कष्ट-साध्य हो जाता है। बहुत खुजली राध और कृमियों से युक्त चिकने और पीले घेरों से घिरे हुए होते हैं तथा उन मण्डलों या चकत्तों में से रक्त झरने लग जाता है, वर्ण भी लाल २

व्रण युक्त हो जाता है (देखिये चित्र में, इसीको एक महिला की हथेलियों पर दर्शाया गया है)

दिन में यह विशेष कष्ट नहीं देता, किन्तु रात्रि के समय बहुत बढ़ जाता है, स्राव, पीड़ा, चींटी सी चलने की या टोंचने जैसी पीड़ा होने लगती है, श्वेत, गाढ़ा या रक्त मिश्रित लिबलिबा स्राव होता है।

चिकित्सा—

इस मण्डल कुष्ठ में प्रायः कफ की प्रधानता होती है। प्रायः इसलिए कहा गया है कि इसमें कभी २ पित्त की भी प्रधानता देखी जाती है। जब तक यह रस एवं रक्त गत रहता है तब तक शीघ्र ही उपचार द्वारा अच्छा हो जाता है, मांसगत होने पर कष्टसाध्य हो जाता है।

रोगी को रेचन और वमन कराकर प्रथम शुद्ध कर लेवे।

वमनार्थ—

जव, अडूसा पत्र, कटु पटोलपत्र, नीम छाल और गूलर की छाल समभाग लेकर अष्टमांस क्वाथ सिद्ध कर मदन फल का चूर्ण और शहद मिला पिलाना चाहिये। प्रति पक्ष या पन्द्रह दिन के बाद इसी प्रकार रोगी को प्रातःकाल में वमन करावे। और प्रति एक मास के बाद निम्न प्रयोग से विरेचन करावे।

विरेचनार्थ प्रयोग—

निसोथ, दन्ती मूल और त्रिफला का महीन चूर्ण गरम जल के साथ सेवन करावें।

यदि कुष्ठ का चट्टा विशेष मोटा उठा हुआ एवं कड़ा हो तो प्रस्तर स्वेद उस स्थान पर देवे, अथवा जल के किनारे रहने वाले जीवों के मांस की पोटली से सेंक कर पसीना निकालें; इस प्रकार स्वेदन क्रिया करने से चट्टे जब फूल जावें तब ऊपरी त्वचा को खुरच कर बड़ी सींगी या तूमड़ी लगाकर दूषित रक्त निकाल डाले। फिर उस प लेपार्थ निम्न प्रयोगों में से एक काम लावें।

१९२–मैनसिल हरताल गृहधूम
कसीस लोध अर्जुन छाल
राल मोथा

—प्रत्येक समभाग गोमूत्र में पीस शहद और गोरोचन मिला प्रलेप करें।

१९३–गृहधूम (घर का धुआं) पांचों नमक
यवक्षार सज्जी खार बावची
पवांड के बीज सोंठ मिर्च
पीपल मीठा तेलिया चीनी
कटेली हल्दी दारु हल्दी
कूठ कबीला बच
मनसिल हरताल
पारा सिंदूर सरसों
कसीस नीला थोथा

—समभाग लेकर गोमूत्र में खूब घोटकर थूहर और आक के दूध में भी घोट लेवें, फिर बड़ी २ गोलि बना सुखा कर रख लेवें। इसी गोमूत्र में घि कर लेप किया करें। यह गृह धूम्रादि लेप गदनिग्रह ग्रन्थ का बहुत ही अक्सीर है।

१९४–चीता इलायची बड़ी कन्दुरी
अडूसा निशोथ
सोंठ आक की जड़ की छाल

—को महीन पीस लेवें, फिर ढाक की राख को चा गुने गोमूत्र में मिला, मोटे कपड़े में २१ बा क्षार निर्माण विधि से चुआकर उसमें उ

समस्त वस्तुओं का चूर्ण मिला ८ दिन तक खूब घोटिये। इसे भी उक्त विधि से लेप करने से शीघ्र लाभ होता है। अथवा—

१९५-पवांड़ के बीज   कूठ   सैंधा नमक
सौंवीरांजन   सरसों   वायविडङ्ग
—का चूर्ण समभाग गोमूत्र के साथ पीसकर लेप करें। अथवा—

१९६-हल्दी   धतूरामूल
लाल अपामार्ग की मूल   कलिहारी
श्वेत कन्नेर की मूल   सज्जी खार
-समभाग लेकर सबको आठ गुने गोमूत्र में पकावें। गाढ़ा हो जाने पर ठंडा कर सुरक्षित रक्खें और प्रातः सायं लेप करें। अथवा—

१९७-हिंगुल   गन्धक   पारा
पीपल   मीठा तेलिया (बछनाग)
वायविडङ्ग   हल्दी   चीना
काली मिर्च   हरड़   सोंठ
नागरमोथा   समुद्रफेन   बावची
कपूर   अमलतास के पत्ते   पंबाड के बीज
—सम भाग लेकर प्रथम पारे गन्धक की कज्जली बनावें, पश्चात् अन्य औषधियों का महीन चूर्ण मिलाकर घोटें। इसे नीम के रस में मिलाकर लेप करने से शीघ्र ही लाभ होता है।

नोट-उक्त लेपों को लगाने से मंडल कुष्ठ के स्थान पर भयंकर विस्फोट (फफोले) उत्पन्न हो जाते हैं, किंतु घबड़ाना नहीं चाहिये। प्रथम तो वे फफोले लाल होते हैं, फिर काले हो जाते हैं, लेप लगातार दिन में दो बार लगाते रहें, पश्चात् थोड़े दिनों में त्वचा का रङ्ग पूर्ववत् स्वस्थ हो जावेगा।

तैल—

१९८-मजीठ   चीना   भंगरा (भंगराज)
आक   कूट
कुड़े की छाल   सैंधा नमक
—समान भाग लेकर यदि इनका १ सेर कल्क होवे तो १६ सेर गोमूत्र के साथ ४ सेर तिल तेल मिला पका लेवें। तैल मात्र शेष रहने पर छान कर रख लीजिये। इस तैल का फाया लगाया करें। दिन में दो बार। अथवा—

१९९-मनसिल   आक का दुध
सेंहुड का दूध   नील के पौदे का स्वरस
गन्धक   हरताल   कसीस
कन्नेर की जड़ की छाल   चीना
नीला थोथा   मोथा   काली मिर्च
हल्दी   दारुहल्दी   त्रिफला
भंगरा   वायविडङ्ग   नीलोफर
कमल कंद   लोद्ध का चूर्ण   बावची
काले संभालू के बीज   मीठा तेलिया,
सुहागा   यवक्षार   सज्जी क्षार
मोगरे का फूल   देवदाली
—समभाग का चूर्ण एकत्र कर उसमें कलिहारी का स्वरस ४ भाग, पवांड का स्वरस ४ भाग तथा सरसों का तैल सबके समभाग मिला, धूप में रख देवें जब उपर्युक्त दूध, रसादि सूख जाय, तैल मात्र रहे तब छान कर सुरक्षित रख लेवें।

नोट-इन तैलों को कुष्ठ के स्थान पर मल कर दो-पहर तक धूप में बैठना चाहिये, इस प्रकार तेज धूप में बैठने से (शेष शरीर को धूप से बचावे) धीरे-धीरे कुष्ठ स्थान प्रथम बहुत ही

सुर्ख हो जावेगा, फिर स्याह होकर पूर्व वर्ण पर आजावेगा, मण्डल कुष्ठ की वेदना आदि सब दूर होगी। ये तैल श्वित्र (श्वेत कुष्ठ) सिध्म, भयङ्कर विसर्पादि में भी शीघ्र लाभ-प्रद होते हैं।

रोगी को पूर्ण पथ्य-पूर्वक निम्नोक्त औषधियों का भी सेवन साथ ही साथ कराना चाहिये—

त्रिजात्यादि चूर्ण—

२००-इलायची (छोटी) दालचीनी
तेजपात सोंठ हरड़
बहेड़ा आंवला वायविडङ्ग
मुनक्का हल्दी दारु हल्दी
नीम के पत्ते (छाया शुष्क) पीपल
गिलोय सौंफ मेढ़ासिंगी
पुराने साठी चावल

—सब समभाग तथा मिश्री इन सबके बराबर लेकर चूर्ण बना लेवें।

मात्रा-२ से ६ माशे तक, उष्णोदक के साथ, प्रातः-सायं सेवन करावें। शीतल पदार्थों से परहेज़ करावें। पित्त प्रकृति वाले रोगी को यह प्रयोग बहुत ही हित-कारक है।

चित्रक गुटिका—

२०१-चित्रक (चीता) ४ तोले निसोत २ तोले
पीपल १ तोले गुड़ ३२ तोले
हरड़ २० तोले

—सबको लेकर महीन चूर्ण कर गुड़ में मिला सबकी १०० गोलियां बना लेवें, प्रति दसवें दिन एक गोली गर्म जल के साथ सेवन करने से मंडल कुष्ठ तो दूर होता ही है, साथ साथ खुजली, बवासीर और ग्रहणी भी नष्ट होती है।

नोट—रोगी को यदि साथ ही साथ भोजन के पश्चात् दोनों समय शास्त्रोक्त 'कनक बिन्द्वरिष्ट' अथवा 'खदिरारिष्ट' या 'खदिरासव' (देखो हमारा बनाया हुआ बृहदासवारिष्ट संग्रह) का सेवन उचित मात्रा में कराया जाय तो और भी तुरन्त लाभ होता है।

रोग की प्रबल दशा में निम्नाङ्कित रसों में से किसी भी एक रस का प्रकृति अनुकूल सेवन कराने से परम लाभ होता है।

तालकेश्वर रस नं० १

हरताल (वर्की) को १६ गुने गोमूत्र में पात्र का मुख बन्द कर मूत्र जल जाने तक पकावें। फिर यह गोमूत्र पाचित हरताल दो भाग, रस सिंदूर १ भाग और सीसा भस्म एक भाग एकत्र खरल करे, जब घोटते २ कज्जली जैसी हो जाय तब उसमें जंभीरी नीबू का रस डाल कर ३ दिन तक खरल करे, फिर ग्वारपाठा (घृत कुमारी) के रस में तीन दिन खरल करे पश्चात् २-२ दिन भंगरे तथा बन-सूरण के रस में घोटकर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

प्रति दिन १-१ गोली या २-२ गोली प्रातः-सायं अद्रक के रस के साथ सेवन करावें। इसके पथ्य पूर्वक सेवन करने से मंडल कुष्ठ तो शीघ्र ही छूमंतर हो जाता है, साथ ही साथ सुप्त बहरी, मन्यास्तम्भ और शाखागत पका हुआ कुष्ठ भी दूर हो जाता है। इसे भिन्न २ अनुपानों द्वारा अन्यान्य कुष्टों पर भी सफलता पूर्वक दिया जा सकता है। ध्यान रहे प्रति दिन इस रस के सेवन के पश्चात् ५ तोले आंवले को पीसकर मिश्री मिला रोगी को खिला देना चाहिये तथा पथ्य में मूङ्ग की दाल, चावल

और घृत देना चाहिये और एक मास तक तक (छाछ) नहीं पीना चाहिये। अथवा—

तालकेश्वर रस नं० २—

वर्की हरताल को शुद्ध कर ७–७ बार पांवाड़ और सरफोंके के रस में खूब अच्छी तरह खरल कर छोटी २ टिकिया बना और सुखाकर कपड़ मिट्टी की हुई मजबूत मटकी में ढाक की राख के ीच में रख देवें। पात्र के मुख को शराब से ढक र और उस पर कपड़-मिट्टी कर सुखा कर चूल्हे र चढ़ा २४ घंटे की आंच देवे। फिर स्वांग शीतल ने पर हरताल भस्म को धीरे से निकाल लेवे, सका रङ्ग श्वेत होना चाहिये और इसे अग्नि पर ुलने से धुआं न निकले तो जानना चाहिये कि त्तम सेवनीय भस्म हो गई है, कहा है—

> “शुक्लवर्णं यदा च स्यादग्नौ दत्ते न धूम्रकम्।
> तदा ज्ञानं मृतं तालं सर्व कुष्ठ विनाशनम् ॥
>
> (भै० र०)

यदि ठीक २ भस्म न हुई हो तो पुनः उसी कार आंच देना चाहिये।

मात्रा–१ या २ चावल भर, शहद के साथ चटाकर ऊपर से सत्यानासी का स्वरस घृत युक्त पिलावे, अथवा इन्द्रायन या नीम का स्वरस पिलावे। मंडल कुष्ठ का स्थान लाल सिंदूर जैसा चमकीला होगया हो और उसमें पीव या राध हो गई हो तो ये तालकेश्वर रस के प्रयोग शीघ्र ही लाभ पहुंचाते हैं।

ोलमंत्रेश्वर रस—

शुद्ध वर्की हरताल को १-१ दिन मिश्री के शर्बत , फिर शहद में, फिर गाय के घी में और फिर ाय के दूध में घोट कर गोला सा बना लेवें, पश्चात् उसे शुष्क कर, चार तह किये हुये कपड़े में बांध कर १ दिन कांजी में दौलायन्त्र विधि से पकावें। तदनन्तर सेहुण्ड, थोहर के दूध में उसे इतना खरल करें कि उसकी चमक जाती रहे, फिर शुष्क कर और भी घोटा जाय, जिसमें घोटते-घोटते काला हो जाय। अब उसमें सोंठ, मिर्च, पीपल और कन्नेर की जड़ का महीन चूर्ण, प्रत्येक उक्त हरताल से दशमांश मिला कर तथा थोड़ा बावची का तैल मिला कर २४ घन्टे खरल कर १-१ रत्ती की गोलियां बना लेवें।

मात्रा–आधी गोली या १ गोली खाकर ऊपर से बांवची, देवदारु, पाताल गरुडी (इसके अभाव में कंद ले सकते हैं) अगर और सुहागे की खील का समभाग मिश्रित चूर्ण २ से ६ माशे तक शुद्ध रेंडी के तैल में मिला कर चटावे। यदि पातालगरुडी या नाकुली कंद न मिले तो कोई हर्ज नहीं, शेष चार द्रव्यों का चूर्ण ही रेंडी के तैल के साथ सेवन करे। मंडल कुष्ठ नाशक यह अद्वितीय प्रयोग है। किन्तु पथ्यापथ्य का पूर्ण पालन होना चाहिये।

लङ्केश्वर रस—

२०२-पारद भस्म (अभाव में उत्तम रससिन्दूर)
ताम्रभस्म लोह भस्म पीपल का चूर्ण
शुद्ध गंधक सुहागे की खील
कुठ का चूर्ण शुद्ध नीलाथोथा (तूतिया)

—समभाग लेकर सबको एक दिन धतूरे के रस में खरल कर १ या २ रत्ती की गोलियां बना लेवें। एक गोली खाकर ऊपर से शुद्ध गन्धक, त्रिफला चूर्ण. निर्विसी और शुद्ध गूगल समभाग एकत्र खरल कर २ से ६ माशे तक, शुद्ध

रेंडी तैल में मिला चाटना चाहिये।

महासिद्धेश्वर रस—

२०३-रससिन्दूर शुद्ध मनसिल
सुवर्ण माक्षिक भस्म अभ्रक भस्म
चारों १-१ भाग।
जायफल लौंग छोटी इलायची
असगंध का चूर्ण २-२ भाग
—लेकर सबको एकत्र खरल करें।

मात्रा-१ रत्ती शहद के साथ खाकर ऊपर से पटोलादि घृत (इस प्रकार बनाया हुआ—पटोल, हल्दी, दारुहल्दी, नीम की छाल, कडुवी तोरई, बच, हरड़ और मुलैठी ४-४ तोले लेकर चूर्ण कर, ४ सेर जल में पकावें, १ सेर जल शेष रहने पर छान कर २० तोले गौ-घृत मिला, घृत सिद्ध कर लेवे) २ तोले सेवन करें। तथा मंडल कुष्ठ पर इसी घृत के साथ इस रस को थोड़ा खरल कर लेप भी करे, बहुत शीघ्र लाभ होता है।

नोट—ये सब हमारे अनुभूत प्रयोग हैं। तथा शास्त्रोक्त हैं।

मोमिया संखिया का यह प्रयोग भी लाजवाब है—

२०४-शुद्ध संखिया १ तोला को तवे पर रक्खें, ऊपर से छोटी लोनिया घास की लाल रङ्ग की पत्ती (यह घास वर्षा काल में, खेतों में होती है, ज़मीन पर इसका चकत्ता सा छा जाता है, छोटे २ लाल पत्ते होते है, स्वाद में कुछ नमकीन सी होती है, इसका शाक भी बनाते हैं) का रस निकाल कर बून्द २ टपकाते जावें, और तवे के नीचे दीपक की अग्नि देवें, जब लगभग २० तोले रस जल जाय और संखिया मुलायम मोम सा हो जाय तब उतार लेवें।

मात्रा—१ से ४ चावल तक, गौ घृत २ तोले में मिला प्रातः काल सेवन करावें। ७ दिन में ही पूर्ण लाभ होता है, किन्तु पित्त प्रकृति वाले को यह प्रयोग सेवन नहीं करना चाहिये।

गंधक प्रयोग—

२०५-यदि उपर्युक्त रसों का सेवन न किया जा सके तो केवल शुद्ध गंधक मात्रा २ से ४ रत्ती तक शक्कर के साथ खाकर ऊपर से गिलोय का स्वरस या नीम का स्वरस अथवा त्रिफला क्वाथ पीवें। उत्तम लाभकारी है।

पथ्यापथ्य—

चावल, गेहूँ, मूङ्ग, अरहर, घृत, जौ की पूरी या लपसी, ब्रह्मचर्य, ईश भक्ति, दया, धर्म, आदि पथ्य हैं। नमक (सैंधा नमक थोड़े प्रमाण में ले सकते है), मांस, मछली, शराब, चरबी, दूध, दही, तैल, उड़द, प्याज, लहसुन, गुड़, खटाई, विरुद्ध भोजन, अजीर्ण होने पर भोजन, विदाही अभिष्यंदी पदार्थ, मैथुन, अधिक धूप का सेवन अग्नि सेवन, चाय, तम्बाखू, काफी आदि अपथ्य हैं।

उत्तर नं० २—

भाग २१ अङ्क ४ परामर्श नं० २ का उत्तर—

रोगी के बग़ल की दुर्गन्धि दूर करने के लिये हरताल को दूध में पीस कर लेप करना चाहिये। इससे उसके बग़ल की दुर्गंधि अवश्य दूर हो जायगी।

—रामनारायण वैद्य,
मुकीमगंज, बनारस।

अनार-योग-सार

(लेखक-श्री० राव० गणपतिसिंह जी यादव)

सर्वत्र एवं सुलभ प्राप्त अनार के अनेकों उत्तम गुण इस लेख में पढ़ियेगा। अन्य अनुभवी महानुभावों से प्रार्थना है कि वे अनार अथवा अन्य कोई भी सामान्य सुलभता से प्राप्त होने वाली बनस्पति पर अपने अनुभव लिख भेजें। इनसे सर्व-साधारण एवं चिकित्सक सभी लाभ उठा सकेंगे।

—सम्पादक।

अनार एक सर्व-प्रिय प्रसिद्ध फल है। इसके पेड़ सर्वत्र उद्यानों में लगाये जाते हैं। इसके फल और पेड़ से प्रायः सर्वसाधारण भली-प्रकार परिचित होते हैं अतः यहां इसके आकार प्रकार की विशेष व्याख्या की कोई आवश्यकता प्रतीत नहीं होती। यद्यपि अनार अत्यन्त मधुर फल होता है तथापि कंधारी अनार अपने विशेष गुणों के लिये प्रसिद्ध है यह रक्त वर्धक होता है। अनार के दाने इतने सुन्दर होते हैं कि कवि अक्सर दंत-पंक्ति की अनार के दानों से समता किया करते हैं।

बाल वृद्ध सभी अनार और अनार के वृक्ष से परिचित होते हैं, लेकिन विधाता ने इसमें क्या २ अनूठे गुणों की पुट लगादी है, इस बात को बहुत थोड़े बंधु जानते हैं इसमें ऐसे २ दिव्य गुण हैं कि यदि हम उनको जान जायें और फिर उन पर अमल करें तो हम आये दिन डाक्टरों के बिलों से सहज में छुटकारा पा सकते हैं।

अनार में वह औषधि तत्व है जो बड़ी से बड़ी बीमारियों को मार भगाने में अव्यर्थ सिद्ध हो चुके हैं। यदि अनार के गुणों से स्त्रियों को जानकार करा दिया जाये तो घर में वेही छोटी-मोटी बीमारियों की चिकित्सा कौड़ियों में कर सकती हैं।

यद्यपि अनार शब्द को सभी भली प्रकार जानते पहचानते हैं तथापि हम भिन्न २ भाषा के नाम देकर उससे होने वाली चिकित्सा का वर्णन् करेंगे :—

अनार के भिन्न २ भाषा के नाम

संस्कृत	दाड़िम	हिन्दी	अनार
मराठी	डालिंब	गुजराती	दाड़िम
करनाटकी	दारलिब	तेलंगी	डानिबंचेडु
तामील	मादलेई चेहेडिं	फारसी	अनार
अर्बी			रूमान हामिज
लेटिन	प्युनिका ग्रेनेटम (Punica Granatum)		
अंग्रेज़ी	पामग्रैनेट (Pomegranate)		

अनार के गुण-अवगुण और प्रभाव—

भावप्रकाश के लेखक के मतानुसार अनार तीन प्रकार का होता है। एक मधुर, दूसरा खट-मीठा और तीसरा केवल खट्टा।

१-मीठा अनार—

वात, पित्त और कफ तीनों दोषों को हरने वाला

तृप्ति कारक, वीर्य वर्द्धक, सुपाच्य, किंचित कसैला मल-रोधक, स्निग्ध, मेधा-जनक और बल-वर्धक होता है।

२-खट-मीठा अनार—

दीपन, रुचि-कारक, किंचित पित्त-कारक और हलका होता है।

३-खट्टा अनार—

पित्त कारक, खट्टा, वात और कफ नाशक होता है। वाग्भट्ट के मतानुसार—

उद्रिक्त पित्तान् ज्यति त्रीन् दोषान् स्वादु दाडिमम् ।
पित्ताविरोधि नात्युष्ण मम्लम वातकफापहम् ॥
सर्वं हृद्यं लघु स्निग्धम् ग्राही रोचन दीपनम् ।

अर्थात् मीठा अनार तीनों दोषों को हरने में परम हितकारी होता है। खट्टा अनार पित्तकारक, शीतल और वात कफ को शान्त करने वाला होता है। हृदय को बल देने वाला, सुपाच्य, स्निग्ध, कब्ज करने वाला और जठराग्नि को तेज करने वाला होता है।

वायु नलियों के प्रदाह को शान्त करने में अक्सीर, अतिसार को रोकने में रामबाण और कृमियों का नाश करने में अव्यर्थ दवा है। इसके पुष्प नक्सीर रोकने में अत्यन्त उपयोगी सिद्ध हुए है।

इसका अपरिपक्व फल पौष्टिक, ग्राहक, क्षुधा-वर्द्धक, पित्तकारक और वमन अवरोधक होता है। इसका पका फल पौष्टिक, आंतों को सिकोड़ने वाला, कामोद्दीपक, पित्त नाशक और त्रिदोष शामक होता है। प्यास, देह का जलन, ज्वर, हृदय रोग, गले की बीमारियों और मुख की सूजन के लिये उपयोगी है। इसका छिलका (नासपाल) कृमि-नाशक रक्तातिसार और कास के लिये लाभदायक है।

यूनानी मत—

यूनानी हकीमों के मतानुसार मधुर अनार पहले दर्जे में सर्द और रूक्ष है। खट्टा-मीठा अनार पहले दर्ज़े में सर्द और तर है। अनार के बीज पहले दर्ज़े में सर्द और तर हैं।

मीठा अनार—रक्त वर्धक, रस क्रिया को ठीक करने वाला, मूत्र निस्सारक, पेट को नरम करने वाला, यकृत को शांति देने वाला, कामोद्दीपक तथा कामेन्द्रिय को बल प्रदान करने वाला है।

खट्टा अनार—छाती की जलन तथा आमाशय और यकृत की गरमी को शांत करने वाला तथा खून के प्रकोप, ज्वर जन्य अतिसार और वमन में लाभदायक है।

खट्टा-मीठा अनार—पित्त जन्य वमन, अतिसार और खुजली में लाभ पहुंचाने वाला, आमाशय को बल प्रदान करने वाला व हिचकी को नष्ट करने वाला है।

सब तरह के अनार—मूर्च्छा (Fainting) में लाभ पहुंचाने वाले, हृदय को बल देने वाले और कासहर होते हैं। बेदाना अनार सब अनारों में उत्तम होता है।

गंजहर लेप—

२०६–कई व्यक्तियों के शिर के बाल झड़ जाते हैं और चांद सफाचट हो जाती है। इससे शिर बड़ा असुन्दर लगता है। अनार के पत्तों को पानी में पीसकर दिन में दो बार खूब मालिश कर दिया करें और अन्त में लेप कर दें। १२

घण्टे के बाद साफ करके नया लेप कर दिया करें। इस लेप से गंज दूर हो जाती है।

घुंघराले बाल काले करने का लेप—

०७-अनार के ताजे फूल ४ तोला, मैंथी हरी १० तोला दोनों को पानी की सहायता से बारीक पीस लें और दूसरे पानी में डालकर पकावें। जब लेही सी तैयार हो जावे तब पात्र को नीचे उतार कर शीतल करलें। इसका बालों पर लेप कर दें और २ घण्टे बाद स्नान करलें। इसके १ मास सेवन से बाल घुंघराले और महीन हो जाते हैं।

त्र हितकारी सुरमा—

२०८-अनार की हरी पत्ती का रस ४० तोला
काला सुरमा शुद्ध २ तोला

दोनों को खूब खरल करें, सूख जाने पर इसे दोनों समय सलाई से आंखों में लगाया करें। इससे आंखों का दुखना, खुजली, लाली, गंदापन, पलकों की खराबी, पानी बहना, दृष्टि की निर्बलता और कुकरों को दूर करता है।

शिरशूलान्तक नस्य—

०९-अनार की कली २ तोला और चीनी (Sugar) १ तोला लेकर दोनों को सूक्ष्म पीसकर रखें। इसकी नस्य लेने से शिरशूल शीघ्र ही नष्ट हो जाता है।

नकसीर हर योग—

१०-अ-अनार के फूलों का रस, स्त्री के दूध, आम के बौर के रस और दूर्वा घास के रस में से किसी एक में मिला कर नस्य लेने से नकसीर रुक जाती है।

ब—अनार के फूलों का रस या दूब घास अथवा आम की गुठली या प्याज का रस नाक में डालने से नकसीर बन्द हो जाती है।

स—अनार के फूलों का रस, दूब घास का रस, लाख का रस समान भाग लेकर एकत्र मिलाकर इसकी नस्य लेने से त्रिदोष जन्य नकसीर भी तुरन्त मिट जाती है।

डाक्टर नॉडकरनी का कथन है कि दाड़िम के फूल का रस और दूब का रस समान भाग लेकर सुंघाने से नाक के अन्दर से गिरने वाला खून बन्द हो जाता है।

बंगाल के सिविल सर्जन डाक्टर वसु लिखते हैं कि नकसीर के कई एक केसों में अनार के फूलों का रस सुंघाने से बहुत लाभ होता हुआ देखा गया है।

बधिरता नाशक योग—

२११-अनार के पत्तों का रस १ सेर, बिल्व पत्रों का रस १ सेर, गाय का घी १ सेर तीनों चीज़ों को परस्पर मिलाकर हलकी आंच पर पकावें। जब घृत मात्र शेष रह जाये तब पात्र नीचे उतार कर शीतल करें। इसमें से २ तोला घी, पाव भर गाय के दूध के साथ मिश्री(Sugar-candy) मिलाकर पीने से बहिरापन दूर हो जाता है। बालकों को ३ माशा से ६ माशा तक घृत दिलाना चाहिये।

कंठमाला हर तैल—

२१२-अनार के पत्तों का रस १ सेर, सत्यानाशी का रस १ सेर, गौमूत्र १ सेर, काले तिलों का तैल २ सेर, अनार के पत्तों की लुगदी आध सेर सबको मिलाकर आग पर चढ़ा दें। जब सब द्रव्य जल कर तैल मात्र शेष रह जाय तब उतार

कर ठण्डा करलें। इस तैल के लगाने से कंठमाला, भगंदर, कोढ़ के जख्म, दाद, चेहरे के काले धब्बे, कील, झांई इत्यादि रोग दूर हो जाते हैं। इसको दिन में ३ बार लगाने से हाथी पांव (श्लीपद) में लाभ होता है।

कास हर योग—

२१३-अनार के फल के छिलके (नासपाल) को मुख में रखकर चूसने से खांसी में लाभ होता है।

कास हर चूर्ण—

२१४-अनारदाना १० तोला खांड ४० तोला
सोंठ मिर्च पीपल
दालचीनी तेजपात इलायची
— प्रत्येक ५-५ तोला।

—लेकर चूर्ण बनायें। यह चूर्ण दीपन, पाचन और रोचक है। हृदय रोग, पीनस, खांसी तथा दमा आदि रोग दूर हो जाते है।

मात्रा-२-३ माशा चूर्ण दिन में दो बार मधु से दें।

कास श्वास हर चूर्ण—

२१५-अनारदाना सोंठ हींग
राल सैंधा नमक
पोहकर मूल रास्ना

—सब चीजें समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। इसमें से प्रति दिन १। तोला चूर्ण घी में मिला कर सेवन करें। खांसी और श्वास नष्ट हो जाते हैं।

श्वास हर वटी—

२१६-अनारदाना १० तोला गुड ४० तोला
सोंठ मिर्च पीपल
-तीनों ५-५ तोला

—लेकर सबको चूर्ण करके एकत्र मिलाकर चणक परिमाण की वटी तैयार करें। दिन में तीन बार एक २ वटी मुख में रखकर चूसें। ये वटियां, दीपन, पाचन, स्वर को सुधारने वाली और पीनस, खांसी तथा श्वास नाशक है।

* * *

पारदादि सेवन में अवधानता—

कुछ औषधियां तो ऐसी होती हैं, जिनका सेवन नित्य करने पर भी किसी प्रकार की हानि की सम्भावना नहीं होती, और कुछ ऐसी होती हैं, जो नित्य सेवन करने पर हानि करती हैं, जैसे पारा, कुचिला, संखिया आदि से निर्मित औषधियां।

इन औषधियों का प्रभाव कभी २ अकस्मत् होजाता है क्योंकि ये वस्तुयें प्राकृतिक रूप से संग्राहक—क्रिया शील (Cumulative) होती हैं इस लिये इनके सेवन काल में किंवा चिरकाल तक यदि इनका सेवन करना अभीष्ट हो तो बीच-बीच में २-४ दिन का अन्तर अवश्य ही डालना चाहिये; अन्यथा बहुत सम्भव है, ये अपना प्रकोप कर बैठें और हानि उठानी पड़े।

—वैद्य देवीशरण गर्ग।

लाल इन्द्रायण —या— केन्हर (कहीरा)

ले०—वैद्यभूषण श्री. पं. कालीचरण जी भट्ट,
भुआविछिया।

मार्च सन् १९४६ की धन्वन्तरि पत्रिका में पं० सभाकान्त जी झा का एक लेख इन्द्रायण पर छपा था; आपने केन्हर फल को लाल इन्द्रायण लिखा है, प्रमाण के लिये आपने राजनिघण्टु और निघण्टु रत्नाकर, भावप्रकाश निघण्टु आदि पुस्तकों के १-१ १-२ श्लोक उद्धृत कर साबित किया है कि केन्हर (कहीरा) लाल इन्द्रायण है। मैं लेखक महोदय का ध्यान भावप्रकाश पूर्व खण्ड गुडुच्यादि वर्ग के इन्द्रायण (फरफेंदुआ) विवरण की ओर आकृष्ट करता हूँ मैं किसी प्रतिवाद के लक्ष से यह लेख नहीं लिखता हूँ केवल सत्य बातों का उल्लेख करूंगा जिससे वैद्य महानुभाव और धन्वन्तरि के प्रिय पाठक केन्हर की सत्यता जान सकेंगे और भ्रम निवारण हो जायगा।

भावप्रकाश निघण्टु में इन्द्रायण का विवरण—

छोटी इन्द्रायण और बड़ी इन्द्रायण की बेल अधिकतर केरों और खारी भूमि में उत्पन्न होती है, पत्ते लम्बे और बीच में कटे से होते हैं, फल सूक्ष्म कांटे युक्त लाल रंग का छोटी नारंगी के समान अति सुन्दर होता है।

दूसरी इन्द्रायण रेतीली भूमि में उत्पन्न होती हैं उसका फल पीले रंग का होता है। (भावप्रकाश)

ऊपर के उद्धरण से लाल इन्द्रायण कांटे युक्त प्रमाणित होती है जो सर्वथा ठीक है, लाल इन्द्रायण में मृदु कांटे भी होते हैं इसके विपरीत केन्हर में कांटे होते ही नहीं।

आपने अपने लेख में यह लिखा है कि लाल इन्द्रायण के बीज वमन कारक और विरेचक हैं, पर केन्हर में वामक गुण है ही नहीं और न पेट में किसी प्रकार की मरोड़ी ही पैदा करता है।

इसका गुण पूर्णांश में विरेचक भी नहीं है और काबिज भी नहीं है समान गुण धर्म हैं; इन्द्रायण में वामक और रेचक दोनों गुण पूर्णांश में विद्यमान हैं और उसके बीज पेट में मरोड़ी पैदा करते हैं। केन्हर इससे भिन्न एक वस्तु है। आर्ष ग्रन्थों (निघण्टुओं) में शायद इसका दूसरे नाम से वर्णन होगा, अनुसन्धान की ज़रूरत है। पूज्यवर आप इसका स्पष्ट परीक्षण करें। मेरे केन्हर प्रयोग को आप किसी मनुष्य पर प्रयुक्त करें और इसकी सत्यता जान लें। इस औषधि में अलावे रोग नाशक के धातु-शोधक गुण हैं और वृष्य भी है, रही बात इसकी विशेषता; सो यह मेरा अपना और जन-सत्य अनुभव है कि कामला और धातु-विकार पर समर्थ उत्तम बूटी है आपने लिखा है कि इसके बीज ग्रहण नहीं करना चाहिये क्योंकि ये अत्यन्त मरोड़ी पैदा कर मृत्यु के कारण होते हैं। हां सत्य है—इन्द्रायण में ये गुण होते हैं पर केन्हर में नहीं उसके तो बीज ही प्रयोग में लाये जाते हैं।

केन्हर (कहीरा) की लता के किसी भी अंश में भी कांटे नहीं होते। इन्द्रायण और केन्हर (कहीरा) के पत्तों में अन्तर है । केन्हर के पत्ते खूब गहरा हरा रङ्ग लिये हुये होते हैं और ५-६ भागों में विभक्त रहते हैं, पांचों छहों भाग आधे २ पत्ते तक कटे हुये होते हैं, जब कि इन्द्रायण के पत्ते इस से बहुत कम कटे भागों में होते हैं और इन्द्रायण के पत्तों में और डण्ठलों में खूब गहरा हरा रंग भी नहीं होता। केन्हर के डण्ठल रोम-हीन होते हैं और इन्द्रायण के डण्ठल रोम कांटे युक्त होते हैं। केन्हर की जड़ का प्रयोग नहीं करते।

लाल इन्द्रायण के बारे में आपने आयुर्वेदिक और यूनानी मतों को भी दर्शाया है, जो अक्षरशः नीचे देता हूँ जिसमें कामला पाण्डु पर दोनों मतों में कहीं नाम भी नहीं आया। इससे तो महेन्द्र वारुणी कांटेदार लाल इन्द्रायण ही है।

इसके विपरीत केन्हर (कहीरा) में पाण्डु विनाशक शक्ति है जो इसके बीजों की विशेषता है। निम्न प्रकार आपके दोनों मतों का विवरण है, जिसमें कामला पांडु रोग का नाम नहीं।

"आयुर्वेदिक मत—

आयुर्वेद के मत से इसका फल श्वास, कर्ण-रोग और पीनस में उपयोगी है। यह कंठ रोग अपच श्वास कास प्लीहा उदर रोग और मूढ़ गर्भ को निवारण करने वाली है और कुष्ठ तथा कुष्ठ व्रण को जीतने वाली है।"

"यूनानी मत—

इसका फल कड़वा पेट के अफारे को दूर करने वाला, विरेचक गर्भ-स्रावक है, आधाशीशी मस्तष्क की गर्मी, नेत्र-रोग, कुष्ठ रोग, मृगी और आमवात में भी मुफीद है। इसके कुल्ले करने से दांत की पीड़ा में लाभ होता है। इसके बीज वमन-कारक और विरेचक हैं।"

ये दोनों मतों का उद्धरण आपके लेख का है। इसका निर्णय तो इनके स्वाद-गुण से ही हो चुका। केन्हर के बीज बिल्कुल कड़वे नहीं होते, प्रत्युत स्वादिष्ट प्रतीत होते हैं।

जब आपको लाल रंग के फल में कामला पांडु विनाशक शक्ति है ही नहीं तो वह केन्हर (कहीरा) नहीं। अब आखिरी बात रह जाती है आप अपने लेख के आदि में कहते हैं। यथा—

"शास्त्रों का अध्ययन कर हम अपने अनुभव एवं प्रांतीय भाषाओं के नाम पर ही उसे निर्णय करने के लिये तैयार हो जाते हैं, जिसका परिणाम कभी २ बड़ा भयावह हो जाता है।"

ठीक है—मैं शास्त्र-उल्लंघन नहीं करता, दुराग्रह की कोई बात नहीं है। ग्रामीण भाषा में जो नाम प्रचलित हैं उसे अपनाया गया है। हां, रंग रूप से कल्पित मेरा अपना रखा नाम "बन्य लता अनार" जो दिया था वह नाम मैं अवश्य वापिस लेता हूँ। और निघण्टुओं के निर्णय को भी मानता हूँ।

लिखने का मेरा मतलब यह है कि संदिग्ध बूटियों का अनुसन्धान होता रहे जिससे मैं अन्य नई बूटियां परीक्षा के लिये रख सकूं और मुझे पूरी उम्मीद है कि पं० जी मेरा मार्ग प्रदर्शन करेंगे।

पर पहिले केन्हर फल और इन्द्रायण का अनुसन्धान करलें, क्योंकि दोनों में बहुत अन्तर है।

'जल नीम'—रक्त शोधक अमूल्य रत्न।

ले०—श्री० पं० भारतीनन्दन जी वैद्यराज "प्रतिभा भवन"
चन्दभान (नाभा)

कई वर्ष व्यतीत हुये जब मैंने १९३५ ई० में शास्त्री परीक्षा दी तो घर आने पर संसर्ग वश मुझे "पामा" रोग हो गया, कण्डू का वेग अधिक था तो मुझे मेरे पिता जी पं० ब्रह्मानन्द दैवज्ञ चूड़ामणि ने नीम पीने की आज्ञा दी और मैंने दो दिन ही पिया कि मेरे सभी साथिओं ने रोका और कहा नीम पीने से दृष्टि मन्द हो जायेगी, घी अधिक खाना पड़ेगा। मैंने बन्द कर दिया। मेरे भाग्य से उसी दिन एक महात्मा संस्कृत भाषा से ज्ञान रखने वाले मुझे मिले। आपस में प्रश्नोत्तर के बाद उन्होंने मुझे बाहर ले जाकर एक बूटी दिखलाई जो खेतों में पानी ले जाने वाले छोटे नालों पर थी और उसका नाम "जल नीम" बताया। पीने का आग्रह किया और विधि यह बताई कि "प्रथम दिन इस बूटी को ६ माशे और ११ काली मिर्च डालकर ठण्डाई की तरह घोटकर पीलें; दूसरे दिन १ तोला बूटी ११ काली मिर्च घोट कर पीयें; तीसरे दिन ६ माशे और बूटी अधिक कर लेना। काली मिर्चों की संख्या ११ ही रखना। हमेशा नये दिन ६ माशे बूटी बढ़ाना। जब पांचवें रोज २॥ तोले हो जाये तो तीन दिन २॥-२॥ तोले ही पीना फिर नवमें दिन ६ माशे कम करके २ तोले पीना। फिर ६-६ माशे नित्य ही कम कर बारहवें दिन ६ माशे बूटी ११ काली मिर्चों से सेवन कर १३ वें दिन उपवास करना रोग शांत हो जायेगा।" मैंने इसी प्रकार किया और रोग से मुक्ति प्राप्त की। उसके बाद मुझे स्वयं आयुर्वेद विद्या प्राप्त करने के लिये पिता जी ने राय दी और मैंने ऐसा ही किया। आयुर्वेद निघण्टु यथा १. हरीतक्यादि भाव प्रकाश, २. मदनपाल निघण्टु, ३. कैयदेव निघण्टु, ४. शालिग्राम निघण्टु रत्नाकर तथा तिब्ब की "मरवजिन अलम फरदात" को देखने से मुझे इसका नाम नहीं मिला। धन्वन्तरि-शोढल आदि निघण्टु मैंने नहीं देखें, शायद उनमें भी न हो। प्रथम मैंने इस बूटी पर खूब खोज की; क्योंकि इसी ने मुझे रोग से छुटकारा दिलाया था। अब मैं इस पर अपना अनुभव लिखूंगा जिससे मेरे वैद्य भाई लाभ उठावेंगे।

यह बूटी चलने (बहने) वाले जल के किनारों पर मिलती है, बायें किनारे की अपेक्षा दायें किनारे पर अधिक होती है इसके पत्ते छोटे कुलफा के पत्तों के साथ अच्छी तरह समता रखते हैं; इसके अग्रिम भाग पर श्वेत फूल भी आता है जो गोरखपान (मत्स्याक्षी) के फूल से कुछ ही बड़ा होता है। एक बूटी जल के किनारों पर और भी होती है जिसके पत्ते अनीदार होते हैं, इसका नाम 'जल-मघ' बतलाया गया है। इसका विवरण फिर कभी आपके

सामने रक्खूंगा । जल नीमके पत्तों में कोई अनी नहीं होती और खाने में कड़वे होते हैं । अबतक मैं इस बूटी को पामा, कण्डू, उपदंश, मूत्रकृच्छ्र, विस्फोट, वृश्चिकदंश, और कर्ण-स्राव पर प्रयोग में ला चमत्कार देख चुका हूं ।

१-पामा और कण्डू—

इन रोगों में बूटी सेवन करते दिनों में दूध सेवन नहीं करें और सैन्धव नमक भी त्याग दें तो अच्छा होगा । इसे पूर्व विधि से घोटकर या क्वाथ बनाकर ऋतु के अनुसार सेवन में ला सकते हैं, गाय का घी, बेसनी रोटी खा सकते हैं ।

२-उपदंश—

रोग पर इसके कल्क को घी में भूनकर खायें और त्रिफला की भस्म व्रणों पर बुरकें ।

३-मूत्र कृच्छ्र—

पर इसका स्वरस मात्र पिलाया गया । मूत्र निरोध में फिटकरी और कलमी शोरे के साथ इसका स्वरस दिया गया और प्रभाव देखा ।

४-विस्फोटक—

पर इसके पत्ते पीसकर बंधवाये गये और काली मिर्चों के साथ घोट कर पिलाये भी गये, ४-६ दिनों में आराम हो गया ।

५-वृश्चिकदंश—

पर कल्क बंधवाया गया, आशु शान्ति प्राप्ति हुई ।

६-कर्णस्राव—

पर गोमूत्र में काढ़ाकर उसकी पिचकारी की गई; ५-७ बार करने पर कान के व्रण ठीक हो गये ।

गर्मी के दिनों में यदि इस बूटी के १ तोला पत्तों को धमाशा के १ तोला चूर्ण के साथ महीन पीसकर पिलाया जाय तो ज्वर शांत हो जाता है । यदि इस प्रयोग में वनमुग्द का १ तोला चूर्ण मिला दिया जाये तो ज्वर के बाद भूख (क्षुधा) अच्छी लगती है और पाचन शक्ति ठीक रहती है । वनमुग्द को पंजाब प्रान्त में लाटिया कहते हैं जो प्रसारिणी के समान ही होती है । इसके छोटी २ फलीयें भी लगती हैं । कई इसे 'फरीद मूली' के नाम से पुकारते हैं क्योंकि इसके पत्तों का स्वाद मूली से मिलता जुलता है । बीकानेर के बरसाती भाग में इसे ऊंटों को खिलाया जाता है । यदि कभी जल नीम मेरे पास न भी था तो ग्रीष्म के ज्वर पीड़ित रोगियों को उपरोक्त धन्वयास (धमासा) और लाटिया (वनमुग्द) का चूर्ण मात्र कूटकर पिलाने को कहा और ज्वर से शान्ति प्राप्त करते देखा । अतः मेरी वैद्य भाइयों से प्रार्थना है कि उक्त औषधियों का प्रयोग कर स्वयं भी इसका फल देखें और सूचित करें ।

—आपके काम की अनेक पुस्तकें—

सूची इसी अङ्क के अन्त में देखें । शीघ्र आर्डर दें, क्योंकि जो पुस्तक समाप्त हो जाती है वह कागज के इस भीषण अकाल में पुनः प्रकाशित नहीं होती ।

सूति और कम्प वात

लेखक–वैद्य विशारद श्री० पं० प्रहलादराय जी शर्मा प्रधानाध्यापक,
सालासर (बीकानेर)

* * *

नाम रोगिणी नर्मदा देवी, आयु १८ वर्ष, जाति ह्मणी, स्थान सालासर स्टेट बीकानेर। गत वर्ष श्विन की बात है कि नर्मदा आसन्न प्रसवा थी अर्थात् जल्दी ही बच्चा पैदा होने वाला था)। उन अविभावकों ने ५–७ दिन पूर्व मेरे यहां से निम्न षधियें ले जाकर रख दी थीं जिनसे समय पड़ने पर भ उठाया जा सके:–ब्राह्मी वटी, दशमूलादि क्वाथ था २ मात्रा कस्तूरी की भी ले गये थे।

यथा समय जब प्रसव का दर्द शुरू हुआ तब रीब २–३ घण्टे तो कोई उपचार नहीं किया, किंतु व विशेष कष्ट का अनुभव हुआ तो ब्राह्मी वटी ४ शमूलादि क्वाथ से दी गईं और आध घण्टे बाद त मिश्रित गर्म दुग्ध पिलाया गया। २ घण्टे तक ही हाल रहा। इसके बाद कस्तूरी की एक मात्रा ठ के गर्म जल द्वारा दी गई, उक्त औषधोपचार कुछ समय बाद जोर से दर्द आकर बच्चेदानी एक झिल्लीदार थैली निकलकर फटी, उससे सदार पानी निकला। यह प्रायः जरायुजों में बच्चा ने का पूर्व नोटिस है, इसके बाद बच्चे का मस्तक जाता है। पशुओं में नवजात शिशु के पैर खुर) दिखाई देते हैं, यह प्रायः प्राकृतिक नियम । किन्तु इसके लिये तो ईश्वरेच्छा और ही हुई। सके बाद बच्चे का दबाव नीचे की तरफ होने की नाय वात कुपित होकर हृदय की तरफ बच्चे का उर्ध्वगमन हो गया, रोगिणी जैसे बिना पानी के मछली तड़पती है उसी तरह तड़पने लगी। चित्त में घबराहट विशेष पैदा हो गई, इसी घबराहट में रक्त और पूय मिश्रित एक वमन हुई जो कि बच्चा पैदा होने के बाद दूषित रक्त वगैरह निकलते हैं, प्रत्यक्ष उसी के सदृश एवं दुर्गन्धित थी। इस प्रकार की वमन होना आश्चर्य की बात है क्योंकि ऐसी वमन प्रसव के समय न तो देखी और न सुनी है, वमन होने से बच्चे का और भी उर्ध्व गमन होकर रोगिणी संज्ञा शून्य होगई। यह देख उसका श्वशुर पं०-हनुमान प्रसाद मुझे लिवा लेगये। मैंने देखा रोगिणी को एक पाटे पर बैठाये और २ स्त्रियें पकड़े हुये हैं, उस समय वह संज्ञा शून्य दशा में थी। ग्रीवा को हाथ से हटाने पर एक तरफ लुढ़क जाती थी। कुछ देर पहले जो वमन हुई थी वह वहीं पड़ी थी उसको देख विचार किया कि यह वमन तो बड़ी भयावह है, बाद में नाड़ी देखी तो बहुत ही क्षीण दशा में थी और ठहर-ठहर कर खटकों का अनुभव होता था। मैंने रोगिणी को वापिस पलंग पर लिटवाया। हाथ पैर ठंडे हो गये थे, अतः २ स्त्रियों को शूंठ की मालिस के लिए तैनात की किया और निम्न उपचार शुरू किया।

दशमूलादि क्वाथ के साथ २ रत्ती ‘कस्तूर्यादि [illegible] की गई; संज्ञाशून्य होनेसे उसे

औषधि लेने का ज्ञान नहीं था, अतः एक छोटी चमची द्वारा थोड़ी २ दवा कंठ तक पहुंचाई गई. किन्तु १ घंटे—तक यही हालत रही। नाड़ी उसी तरह क्षीण चाल से चालू थी, मूर्च्छा दूर करने के लिये नस्य इत्यादि का प्रयोग किया किन्तु सफलता नहीं मिली। बाद में चन्द्रोदय १ रत्ती मुक्ता-पिष्ठी १ रत्ती वातकुलान्तक रस १ रत्ती की मात्रा दशमूलादि क्वाथ द्वारा पहले की तरह थोड़ी २ करके पेट में पहुंचाई गई, यह मात्रा देने के बाद १५ मिनट में ही गर्मी पाकर वायु का अनुलोमन हुआ। हृदय के पास जहां कठोरपन था यानें बच्चा अटक रहा था वहां से नीचे की तरफ हुआ। तब बच्चे का शिर बच्चे दानी के पास आकर अटक गया,इस समय स्त्री को होश होना जरूरी था। इस वक्त किछने की सख्त जरूरत थी किछने से ही बच्चा बाहर सुगमता से आता है, किन्तु रोगिणी को होश न आ सका। हमारे पास जो साधन थे किये जा चुके थे।

मैंने सोचा कि बिना हाथ किये बच्चा इस हालत में बाहर नहीं निकाल सकता, इस विषय की कुछ जानकार यहां के पुजारियों में मदन की दादी थी; जिनको पहले से ही बुला लिया था,मैंने उनसे कहा कि अगर यही हालत थोड़ी देर और रहेगी तो बच्चे के प्राण नाश की सम्भावना है। उनके नाख़ून अच्छी तरह साफ कराके घृत लगाया और बच्चा दानी के आसपास भी घृत लगाया, फिर उन्हें कहा कि तुम धैर्य्य-पूर्वक दोनों हाथों की तर्जनी अंगुलियों को बच्चादानी में डालकर बच्चे को दोनों पोरवों में अटकाकर धीरे २ नीचे की तरफ थोड़ा २ ज़ोर दो। इस तरह करने से बचा बाहर निकल जायेगा। उपरोक्त उपचार किया और रोगिणी के पेट को अच्छी तरह सम्हाल कर रक्खा और थोड़ा २ ज़ोर भी नीचे की ओर दिया. बच्चा जिन्दा निकला देख सभी को खुशी हुई, बच्चे को दाई के हवाले किया। उसने नाल वग़ैरह का कार्य्य संक्षेप से कर बच्चे को दूसरे पलंग पर सुला दिया।

बच्चा होने के १५ मिनट बाद ही रोगिणी को कम्प-वात के दौरे भीषण रूप धारण कर शुरू हो गये। पहले पैर की पिंडलियों से थोड़ा २ हिलना शुरू होकर सारा बदन इतना ज़ोर से हिला कि दौरे के वक्त अगर ज़ोर देकर भी रोका जाय तो नहीं रुकने वाला था। यह देख आश्चर्य्य हुआ कि जो मृतवत् पड़ी थी उसमें इस समय इतनी ताक़त? किन्तु यह सब ताक़त वायु की ही थी सूतिका-चिकित्सा में भी लिखा है कि—

"सूतिका रोग शान्त्यर्थं कुर्याद्वात हरी क्रियाम्"
तथा वात व्याधि विधानेन, सूतिका समु पाचरेत ॥

"वात रक्षण की ओर विशेष ध्यान देने का मतलब यह है कि प्रभूतावस्था में रक्तादि के अधिक निकल जाने के कारण शारीरिक क्षय हो जाने से वायु स्वयं ही कुपित हो जाता है।

करीब १० मिनट के अन्तर से दौरे आने लगे,दौरा शान्त होते ही ऐसी हालत हो जाती कि अब ५-७ मिनट में ही नाड़ी जाने वाली है। इस वक्त निम्न उपचार शुरू किया :—

२१७-तालचन्द्रोदय २ रत्ती दशमूल क्वाथ से दिया गया, दवाई थोड़ी २ डालने से कुछ टाइम लगता था, इतने में दौरा फिर आजाता १ घंटे बाद निम्न औषधि फिर दी गई।

तालचन्द्रोदय १ रत्ती प्रतापलङ्केश्वर १ रत्ती

वृहत् वातचिन्तामणि रस १ रत्ती दशमूल क्वाथ द्वारा दिया गया। उपरोक्त मात्रा तीन घंटे के अन्तर से देते रहे।

उपरोक्त २ मात्रा देने के बाद दौरे १ घंटे के अन्तर से आने लगे, किन्तु नाड़ी-गति में काफी सुधार नज़र आया।

दिन के १० बजे से दौरे शुरू होकर रात्रि के १० बजे कुछ कम पड़े। इसके बाद रात्रि में सिर्फ २ दौरे आये और दूसरे दिन सूर्योदय के बाद दौरा नहीं आया। उपरोक्त उपचार पूर्ववत् चालू रहा। इस वक्त नाड़ी की चाल में अच्छा सुधार हो गया, किन्तु संज्ञा शून्य (मूर्च्छा) पहले की तरह ही थी, आंखें खुली थीं, किन्तु किसी को पहिचानती नहीं थी और न पहिचानने का विशेष ज्ञान था।

किन्तु अपने सिर के केश मुंह पर आजाते उनको अलग करने का ज्ञान हो आया था। यह दशा ३ दिन तक रही। दौरा शान्त होने पर निम्न औषधियां चालू रक्खी गई।

ताल चन्द्रोदय ½ रत्ती मुक्ता पिष्टी १ रत्ती प्रताप लंकेश्वर रस २ रत्ती दशमूल क्वाथ द्वारा प्रातः मध्याह्न सायं-काल देते रहे। स्वतः हाथ पैर फैलाने तथा करवट भी बदलने लगी किन्तु मुहं से बोलना तथा पहिचानना स्पष्ट नहीं हुआ।

बकरी के दुग्ध में छोटी पीपल घिस कर आंखों के अन्दर लगाई, जिससे पानी कुछ देर तक बहा। कुछ देर बाद गौघृत आखों के भीतर लगा दिया, जिससे जलन भी कम होगई और स्पष्ट दिखाई देने लगा। दौरे आने से जीभ जगह २ से कुचल गई, अतः जीभ में काफी शोथ होगया और घाव भी होगये। इसके लिए दो-दो घंटे से ग्लेसरीन का फोआ लगाया गया, इससे १ दिन बाद घाव कुछ ठीक होने से कुछ बोलने का भी होश हुआ।

तीसरे दिन जब साधारण होश हुआ था उस समय उनकी ननद सामने बैठी थीं, उनको कहा कि बाई जी न मालूम यह बालक कब होगा मैं तो इतने में मर जाऊंगी, तब उसने उसके नव-जात शिशु को गोद में लेकर कहा कि देख यह बच्चा तेरे ही हुआ है, तब उसने प्रेम के आंसू बहाये और कहा कि इसको अलग ले जाओ। वह कह उसकी तरफ देखती रही और कुछ न बोली।

बाद में कमज़ोरी के कारण कभी २ ज्वर भी हो जाता था अतः निम्न योग १५दिन तक चालू रक्खा।

—प्रताप लङ्केश्वर रस १ रत्ती, मृत्युञ्जय रस १ रत्ती गिलोय सत्व १ रत्ती प्रातः शहद से तथा सायंकाल दशमूलादि क्वाथ से दिया गया।

प्रसव समय हाथ इत्यादि करने से बच्चे-दानी के आसपास घाव हो गये थे, इसके लिये बोरड़ी (झरबेरी) की जड़ की अन्तर छाल का क्वाथ बना उसमें परमेंगनेट पोटास डालकर घावों को धुलवाया गया तथा शतधौत घृत लगाया गया जिससे जल्दी ही फायदा होगया।

होश आजाने के बाद में कुछ साधारण पथ्य भी देते रहे। बच्चे को ५-७ दिन तक तो बकरी का दूध पिलाते रहे, बाद में अपनी माता का स्तन-पान करने लगा। २० रोज में रोगिणी बिलकुल तन्दुरुस्त होगई, उसके कोई विकार नहीं रहा।

परीक्षित-प्रयोग ।

किलास कुष्ठ पर अनुभूत प्रयोग—

२१८-चोक (स्वर्ण क्षीरी) की जड़ बाकुची
गन्धक (आंवलासार) पारद
पवांर के बीज चीत की जड़
अंजीर की छाल करंज की मींग
कूठ कडुवा श्वेत अपराजिता पत्र
कलौंजी मनशिल हरताल पीली (गोवरिया)
—प्रत्येक २-२ तोला।
तूतिया १ तोला

विधि–प्रथम गन्धक और पारद की कज्जली बनालें फिर अन्य औषधियों को कूट-पीस कपड़छन करके श्वेत अपराजिता पत्र स्वरस में १२ घन्टे घोट कर झरबेर प्रमाण बटी बनावें। जब वटी तैयार हो जावे तब पानी से घिस कर दिन में ३ बार लेप करें। साथ ही महा मंजिष्ठादि क्वाथ को प्रातः-सायं १-१ छटांक क्वाथ विधि से पीवें। श्वेत दाग अर्थात् किलास कुष्ठ अवश्य ठीक हो जाता है।

यदि महा मंजिष्ठादि क्वाथ रोजाना न बनाना चाहें तो अर्क विधि से अर्क बनाकर एक-एक छटांक प्रातः-सायं पीवें।

अपथ्य–लाल मिर्च, तैल कडुवा, गुड़, खटाई प्रभृति तथा बादी करने वाली वस्तुयें। यदि वमन विरेचन कर लिया जाय तो अति उत्तम है।

—कविराज विश्वनाथप्रसाद भिषगाचार्य,
मकबूलगंज, लखनऊ।

रक्त-विकार पर उत्तम औषधि—

२१९-त्रिफला ५ तोला को लेकर रात्रि को गौमूत्र में भिगो दें। प्रातः शुद्ध पानी में धोकर साफ पत्थर पर पीस पानी में भांग की तरह छान लें। जल अधिक न डालें उसमें शहद असली ५ तोला मिला कर पीलें। ७ दिन तक बराबर लें। रोटी गेहूँ की अलोनी खावें। नमक मिर्च खाना बंद करदें। रक्त-विकार शीघ्र दूर होगा।

दाद नाशक अर्क—

२२०-नवसादर सुहागा
मिश्री कपूर

—ये समान भाग लेकर शीशी में भर कर उसमें थोड़ा उष्ण जल डालकर डाट बन्द कर देवें। जब गल जावे तब लगावें तो शीघ्र दाद नष्ट हो जावेगा।

खुजली का मलहम—

२२१-कबीला हरताल आवलासार गंधक
—तीनों १-१ तोला।
कपूर मुरदासंग सिंगरफ
—तीनों ६-६ माशे।

—ये सब पीस कर कपड़-छानकर फिर ८० तोले गाय का घी लेकर उसको गरम करके ऊपर से दवा डाल दें। इसके लगाने से ३ दिन में खुजली चली जायगी।

—पं० लक्ष्मीनारायण, मोहनलाल वैद्य,
सूवाखेड़ा।

सांपों के कुछ अजीब नुसखे।

ले.--श्री. रामेशवेदी आयुर्वेदालङ्कार, हिमालय हर्बल इंस्टीट्यूट,
बादामी बाग, लाहौर।

पाश्चात्य वैज्ञानिक सांपों की उपयोगिता हाल ही में जानने लगे हैं, परन्तु रेंगने वाले इस जीव की चिकित्सा में उपयोगिता प्राचीन चिकित्सकों को भलीभांति मालूम थी। भारतीय, मिश्रनिवासी तथा चीनी वैद्य सांप और उसके विष से आश्चर्य-जनक इलाज करते थे। सांपों का सबसे महत्व-पूर्ण उपयोग भारतीय चिकित्सा में होता था। इनका मांस, रुधिर, कैंचुली, हड्डियां और विष त्वचा के रोगों के इलाज़ के लिये इस्तेमाल होने वाली अनेकों दवाओं में डाले जाते थे। आजकल भी वैद्य-हकीम लोग फनियर के विष, मांस, खाल आदि को दवाओं में बरतते हैं।

कोढ़ का इलाज—

फनियर को मार कर हांडी में बन्द करके जंगली उपलों की आग में फूंक लेते हैं। इस तरह बनी सांप की भस्म को बहेड़े के तैल में घोट कर मरहम की तरह बना लेते हैं। सुश्रुत और वाग्भट्ट बताते हैं कि सफेद कोढ़ों में इसका लेप करने से सफेद दाग जल्दी ही मिट जाते हैं। फ़रोहा के समय कोढ़ियों को सांपों की खुराक पर रखने का रिवाज़ था। रिवर्डस (लैण्ड मार्क्स औफ़ स्नेक पौयज़न लिटरेचर, पृष्ठ ६५) लिखते हैं कि गैलन ने मण्डली सांपों के मांस की कोढ़ में बहुत ज़ोर से प्रशंसा की है और इटली तथा फ्रान्स के चिकित्सक मंडली मांस का शोर्वा या जेली इसी प्रयोजन के लिए अपने मरीज़ों को दिया करते हैं। मालूम होता है कि यह इंगलैण्ड में भी दिया जाता रहा है क्योंकि मीड का ख्याल था कि बीमार को प्रायः मण्डली की जेली खानी चाहिये अथवा पुराने तरीके के अनुसार मण्डलियों को उबाल कर मछली की तरह खाना चाहिये। यदि भोजन हज़्म न हो तो शराब में सूखे मण्डलियों को छोड़ कर छः या सात दिन तक ज़रा गरम जगह पर रखने के बाद बनी शराब का प्रयोग करना चाहिये।

मीड एक प्रसिद्ध चिकित्सक हुआ है जिसने सांपों के बारे में बहुत सी खोजें और परीक्षण किये हैं। १७५४ में यह परलोक सिधारा है। यही विद्वान् लिखता है कि मण्डली की शराब लन्दन के फार्माकोपिआ में वस्तुतः एक स्वीकृत योग था।

क्षय में—

चरक के समय क्षय के रोगियों को सांप का मांस खिलाया जाता था। जिन रोगियों को इससे सहज घृणा हो उन्हें यह इस तरीके से बना कर दिया जाता था जैसे कि वर्मी मछली होती है। बंगाल में फनियर का मांस क्षीण करने वाले रोगों में दिया जाता है। पंजाब के कुछ जिलों में सांप की रीड़ की हड्डियों को एक साल तक खाद में गाड़ रखते हैं। इनकी माला बना कर उन रोगियों के गले में पहनाई जाती है जिन्हें गले की क्षयी ग्रन्थियों (हज़ीरों) की शिकायत हो। काले सांप की राख को भी तैल में मिला कर हज़ीरों पर लेप करते हैं।

खूनी दस्त के लिये उत्तम दवा—

२२२-आम के पत्तों का अर्क	१ तोला
जामुन के पत्तों का अर्क	१ तोला
आंवले के पत्तों का अर्क	१ तोला
शहद	३ तोला

—ये ३ खुराक हैं; खुराक १५-१५ मिनट के अन्तर से दें या आवश्यकतानुसार। चारों चीज़ों को मिलाकर एक कर लेना चाहिये। मैंने इस प्रयोग से अनेकों रोगियों को लाभ पहुंचाया है।

नोट—इन पत्तियों का काढ़ा कर लेने में आसानी रहती है, स्वरस देर से निकलता है।

—रामसेवक वैद्य, इटैलिया।

यक्ष्मा के लिये अनुभूत प्रयोग।

आजकल जिधर देखिये उधर ही (क्षय रोग) का बोलबाला है। ज़रा मुंह से खून आया कि डाक्टर साहब की स्टैथेसकोप ने टी० बी० फरमाया। चाहे यह खून रक्त-पित्त से आवे या घातज खांसी से, या अन्य किसी दोष से हो। जो भी हो हमें तो इस समय देशी औषधि के विषय में कहना है। अभी हाल की बात है विन्दगावां ग्राम के जमींदार बाबू रामस्वरूपसिंह आये और कहने लगे कि वैद्य जी अब हम तो दो-एक माह के मेहमान हैं। हमें तो 'टी० बी०' होगया है, अनेक औषधि खाई हैं पर कोई लाभ नहीं हुआ। अब आपके पास आया हूँ, आप कीमती से कीमती दवा मेरे लिए तजवीज कीजिये जिसमें मोह न रह जाय। मैंने उनकी परीक्षा की। उनको कभी १००सौ कभी १०१ एक सौ एक बुखार रहा करता था। कभी कुछ कम भी हो जाता था और कभी इससे भी ज़्यादा हो जाता था, हाथ पैर में जलन भी रहती। खांसी बहुत जोरों की थी जिसके वजह से न दिन को चैन न रात को नींद ही। पसली में दर्द भी रहा करता था। म० चरक के कथनानुसार क्षय का त्रिरूप लक्षण मिल रहा था। बाबू साहब धातु-क्षीण के रोगी भी बहुत पहिले से थे। दो तीन बण्डल बीड़ी पीना तो उनके लिए रोज़ की साधारण सी बात थी, साईकील और घोड़े बिना तो वे चलना ही कम जानते थे। इन सभी बातों के होते हुये भी मैंने पूर्ण रूप से यक्ष्मा तो निश्चित नहीं किया और यक्ष्मा नहीं है यह भी स्थिर नहीं किया। क्योंकि बाबू साहब उतने कमजोर नहीं थे। उनको देखते ही देखते मेरा दिमाग़ इस औषधि की तरफ दौड़ गया जो कि मेरे दरवाजे ही के नज़दीक गाड़ी दो गाड़ी था। मैं दो सालों से इनका आसव बनाकर रखता हूँ तथा हरेक धातु-क्षीण वाले की खांसी में व्यवहार करता हूँ जो उचित फल देता है। पर ऐसे रोग में व्यवहार करने का मेरा अवसर पहला ही था। मैंने एक बोतल यही औषधि “भृङ्गराजासव” दिया और कहा कि प्रातः-सायंकाल १ रत्ती मूंगा भस्म और ४ रत्ती गिलोय सत्व तथा १-१ छोटी पीपर के चूर्ण मधु के साथ लें और ऊपर से यह आसव २॥ तोला पीवें। तथा मैंने उनको आश्वासन दिया कि एक सप्ताह प्रतीक्षा कीजिये तो आगामी सप्ताह में कीमती दवा का प्रबन्ध करूंगा। दवा समाप्त होने के १ दिन

पहिले ही बाबू साहब मेरे पास आये और मेरे पूंछने से पहिले ही हंसते हुये कहने लगे--अब मुझे विश्वास हो गया है कि अवश्य वृद्ध च्यवन ऋषि देशी औषधि के प्रभाव से युवा हुये होंगे। देखिये अभी मेरी बोतल में कुछ औषधि है और हमारी खांसी बिलकुल आराम के सदृश्य होगई है। न दर्द है न बुखार है मन भी प्रसन्न है। अब मुझे दूसरी दवा की आवश्यकता नहीं; सिर्फ दो सप्ताह के लिए इसी औषधि को दे दीजिये। मैंने उन्हें वह दवा दिला दी और इसके बाद करीब दो-तीन सप्ताह के बाद वे बिलकुल चंगे होकर आये। हर वैद्यों से निवेदन करता हूं कि मैंने जिस तरह से औषधि तैयार किया है तथा मुझे जहां तक इसके विषय की जानकारी है आप सबों केसामने उपस्थित कर देता हूँ। आप लोग भी इसे व्यवहार करें और इस तरह का योग धन्वन्तरि में प्रकाशित करने की चेष्टा करें जिससे वैद्य-समाज की उन्नति हो।

औषधि बनाने की विधि—

२२३-ताजा भंगरे का स्वरस ६॥ सेर, पुराना गुड़ ५ सेर, हरड़ ३। छटांक, हरड़ को दरदरा कूट ले। मिट्टी के नवीन घड़े को लोध्र की छाल और धाय के फूल की कल्क (चटनी) बनाकर भीतर लगाकर सुखादें। इसके बाद घड़ा में कपूर, अगर आदि से धूनि दें। इन दोनों काम से पहले घी लपेट दे। इसके पश्चात् स्वरस में गुड़ को घोल दें और उसको उसी घड़ा में भर दें। घड़ा का मुंह मिट्टी के सकोरा से बन्द कर दें। जिससे हवा न जा सके। और घड़े को किसी एकान्त स्थान पे रखदें। होसके तो उसके नीचे कुछ भुसा बिछा दे और ऊपर से बोरा या कम्बल से घड़ा ढक दें। १५ दिन के बाद उस औषधि को छान ले और घड़ा को साफ कर के उसी में सब भर दे और ४ तोला लौंग, चार-चार तोला चतुर्जात की प्रत्येक औषधि को कूटकर सूक्ष्म चूर्ण कर उसमें डाल दे और फिर उसका मुंह सकोरा से ढक दें जिससे हवा न जा सके। १५ दिन बाद छान ले और बोतल में भर डाट लगा कर रख दें। उसके १५ दिन बाद बोतल में कुछ गाद बैठ जायगी अतः दूसरे बोतल में निथार लें।

यह निश्चय जान लें कि क्षय का क्षय हो जायगा और धातुक्षीण वाले की खांसी फांसी चढ़ जायगी। रोगी में बल कान्ति अवश्य बढ़ेगा।

इस भंगरा नामक जड़ी के विषय में बलदेव स्वामि नामक एक प्रसिद्ध महात्मा कहते थे कि रविवार के दिन भंगरा की जड़ी को सूत में बांधकर दाहिने कान में बांधने से राजयक्ष्मा रोग भाग जाता है। जिस तरह से सहदेई की जड़ शिखा में बांधने से विषम ज्वर भाग जाता है। महात्मा जी को देखा है कि वे इसकी चटनी पीसकर और माथे पर मलकर स्नान करते हैं। पूछने पर कहते हैं कि ऐसा करने से नेत्र की ज्योति बढ़ती है और बाल काले रहते हैं तथा रसायन है। मस्तिष्क की पीड़ा को शान्त करता है।

भृङ्गराज का फूल पीला होता है, अधिक फैलता है, पत्तियां अनीदार आहर के पत्ते से मिलती-जुलती हैं तथा लोमस होने से कर्कश होती हैं। पत्र-वृंत से ही पत्र चौड़े होते हैं और अग्रभाग नुकीला होता है। इसमें एक दीर्घ उपांग भाग निकलता है उसमें गोल घुंडी पर पीत पुष्प होता है। यह ऊपर की तरफ खड़ा रहता है।

नयन शोणांजनः—

२२४-जयपुरका श्वेत कज्जल	४० तोला
उत्तम कल्मी शोरा	५ तोला
पीपल छोटी	५ तोला

विधि-पहिले कज्जल को दो सेर जल में कलई के पात्र में २४ घंटे भिगो देना; बाद रेजा के मोटे वस्त्र में छान लें और रखदें, ऊपर नितरे हुए जल को कज्जल में से निकालते रहें। संपूर्ण जल निकाल लेने पर उसको धूप में रख देना, जिससे वह कज्जल सूख जायगा।

बाद कल्मी शोरा और पिप्पली को सूक्ष्म पीस कर उस कज्जल में मिला कर तीन घंटे घुटाई करके शीशी में भरलें और शीशी को सलाई से या अंगुली से सुबह शाम अंजन करना।

योग देखने में सरल प्रतीत होता है, परंतु गुणों में अद्वितीय है। जाला, धुन्ध, फूला, मोतियाबिंदु, आदि नेत्र-रोगों के लिये अत्युत्तम है।

पामा कंडू उपदंश रक्त-विकार के लिये:—

२२५-चोपचीनी उत्तम	१० तोला
उशवा मगरबी	१० तोला
सुरंजान शीरीं	१० तोला
उत्तम शहद	४० तोला

विधि-चोपचीनी, उशवा, सुरंजान शीरीं तीनों को कूटकर कपड़-छान चूर्ण कर लेना, पश्चात् शहद में मिलाकर माजून (अवलेह) तैयार कर लेना।

१ तोला सुबह १ तोला शाम को जल के साथ लेना।

तैल, गुड़, लाल मिर्च, खटाई आदि गर्म पदार्थ त्याज्य हैं। नमक बंद करदें, औषध सेवन से शीघ्र लाभ होता है।

माजून कुचैला:—

२२६-शोधित कुचला ६ तोला
गुले गावजुवां चिलगोजा
नारियल खोपड़ा केशर
—प्रत्येक २-२ तोला
लौंग १॥ तोला
हाउवेर इलायची अगर
—तीनों ६-६ माशा
नरकचूर शकाकुल जवा हरड़
आंवला बालछड़ कतीरा गौंद
उदविलसां काली मिर्च
काली मिर्च श्वेत दालचीनी
नागरमोथा जावित्री जायफल
पीपल सौंफ
—प्रत्येक १-१ तोला
बुरादा श्वेत चंदन ६ माशा
मकरध्वज उत्तम अभ्रक भस्म उत्तम
कस्तूरी उत्तम अंबर
—चारों ३-३ माशा
उत्तम शहद ४० तोला मिश्री २० तोला
वर्क चांदी ४२ नग वर्क सोना २५ नग

विधि-सब औषधियों को कूटकर कपड़ छान कर पश्चात् मिश्री की चासनी बनाकर उसमें शोधित कुचिला और अन्य औषधियां मिला देना, केशर गुलाब व केवड़ा जल में पीस कर मिश्री की चासनी में मिला देना।

कस्तूरी और अंबर, केशर के साथ ही मिला दें। खोपड़ा चिलगोजा के टुकड़े करके डालें और मकरध्वज को खरल में ३ घंटे खरल करके मिला देना; इसी के साथ अभ्रक भस्म मिला देना

और वर्क चांदी व वर्क सोना मिलाकर अच्छी घुटाई करना और कांच-पात्र में भर देना ।

मात्रा-१ माशा से २ माशा तक ।

पथ्य-तैल, गुड़, खटाई त्याज्य हैं ।

वातव्याधि पक्षाघात को दूर करता है, पुष्टिकारक, कमर का दर्द, रग पट्ठे का ढीलापन एवं गठिया के लिये उत्तम है । रक्तवर्धक, बलवर्धक पौष्टिक है ।

शीतपित्त हर तैल (पित्ती नाशक)—

२२७-तैल कड़वा (सरसों का)	१० तोला
तैल खोपरा	१० तोला
सोना गेरू	६ माशा
चिरौंजी	३ तोला
कपूर	१ तोला

विधि-सोना गेरू पीस कर तैल में मिला लेना, चिरौंजी और कपूर को बारीक पीस कर तैल में मिला लेना । बाद सर्वाङ्ग में मालिश करना, सुबह शाम स्नान करना हो तो मालिश के २घंटे पश्चात् गरम जल से करना ।

—यदि शीतपित्त पुराना होजाय तो, साथ में खाने की औषधियां देना चाहिये । जिससे शीघ्र लाभ होगा ।

शीतपित्त हर दूसरा योग—

२२८-त्रिफला	६ माशा
गंधक रसायन	४ रत्ती
शु० गंधक	२ रत्ती

—इन सबको मिला कर सुबह-शाम दूध के साथ देना चाहिये । यह १ मात्रा है ।

पथ्य-नमक नहीं देनां चाहिये ।

—वैद्य कविराज श्रीकृष्ण शर्मा वैद्यरत्न,
केकड़ी, अजमेर ।

देशी चाय—

वैद्य महानुभाव सरदी लग जाने पर उसके निराकरण के लिये बनप्सा आदि क्वाथ आनन्द भैरव आदि रस का उपयोग करना भली प्रकार जानते हैं । परन्तु इस महर्घता के समय में अल्पव्यय साध्य, रोचक अच्छी सफलता देने वाला गरीब से लेकर अमीर तक सरलता के साथ उपयोग में ला सके ऐसा प्रयोग होना चाहिये जो पाठकों के सामने प्रकट किया जाता है । आजकल देखा-देखी या पाश्चात्य शासकों के प्रभाव से प्रभावित होकर बहुत से भाई अंग्रेजी (लिप्टन) चाय का शीत निराकरण के लिये उपयोग करते हैं । कोई शौकिया भी काम में लाते हैं । यहां तक कि इसके दुर्गुणों को जानते हुए भी हमारा उष्ण प्रधान प्रान्त होते हुए भी ग्रीष्म-ऋतु में भी उपयोग करते रहते हैं । अंग्रेजी (लिप्टन) चाय का निरन्तर उपयोग शरीर के लागू हो जाता है, छोड़ने पर अनेक बाधाओं का अनुभव करना पड़ता है । किसी को इसके प्रयोग से नींद भी नहीं आती है, जैसे अफीमची को अफीम समय पर न मिलने पर आंखों में पानी आना, नाक से पानी टपकना, अशक्ति का अनुभव विशेष होना इत्यादि । इसके पीने वाले २-३ दिन भोजन के बिना निकाल देते हैं, अग्निमांद्य इसका विशेष गुण है, इसके परिपाक काल तक शक्ति क़ायम रहती है, बाद में वायु अधिक बढ़ जाने से जृम्भा आदि उपस्थित होजाते हैं, इतने ही नहीं और भी विशेष छानबीन करने पर अधिक अवगुण मिल सकते हैं । लिप्टन अङ्गरेजी चाय का उपयोग करने वाले इसको छोड़कर यदि देशी चाय या अलसी की चाय का उपयोग करें तो उनका बहुत

कल्याण हो सकता है। अलसी की चाय या देशी चाय का प्रत्यक्ष गुण तो उसके उपयोग करने पर ही मालूम होंगे, विशेष कथन या लेख से सत्यता प्रकट नहीं होती।

देशी चाय या अलसी की चाय—

२२९-अलसी सफेद जीरा
धनियां अडूसा शुष्क पत्र
— प्रत्येक १-१ तोला

—सर्व प्रथम अलसी और जीरे को मन्द २ आंच से तवे पर भून लेना चाहिये बाद सब द्रव्यों को जवकुट कर लिया जावे, बस प्रयोग तैयार है।

चाय बनाने की विधि—

उपरोक्त द्रव्य ६ माशा को एक पात्र पानी में डालकर उबालना चाहिये आधा शेष रहने पर एक पाव दूध डाल फिर एक उफान आने पर छान कर इच्छानुकूल शक्कर डालकर गरम २ पीवें। पीने मात्र से ही शीतापनय का अनुभव तत्काल होने लगता है। बहुत बार देखा गया है कि एक बार पीने से ही सफलता मिल जाती है ज्वर कास की शिकायत में दूध मीठा न डालकर सेंधा नमक ४ रत्ती डालने पर अच्छा लाभ होता है।

—पं० रामधन शर्मा शास्त्री, आयुर्वेदाचार्य
शाहपुरा (राज्य)

—आर्डर देते समय—

माननीय ग्राहकों से निवेदन है कि वे आर्डर देते समय निम्न बातों का ध्यान अवश्य रखा करें—

१-अधिक वजन की दवा रेल पार्सल से मंगावें।

२-पत्र में अपने पूरे पते के साथ २ अपने यहां का रेलवे स्टेशन भी स्पष्ट व अवश्य लिख दिया करें।

३-औषधियों का नं० व तोल के साथ ही उनका मूल्य भी हमारी चालू सूची के अनुसार अवश्य लिख दिया करें।

४-जो एजेंट हैं वे अपने पत्र में एजेंट नम्बर अवश्य लिख दिया करें।

५-आर्डर के साथ जो सज्जन एडवांस मनियार्डर से भेजें वे कृपया उसकी रसीद भी आर्डर-पत्र के साथ भेज दिया करें ताकि पत्र मिलते ही औषधि सप्लाई करने की व्यवस्था की जा सके। अन्यथा मनियार्डर मिलने तक आर्डर पैंडिंग में पड़ा रहता है। मनियार्डर कभी-कभी हफ्तों में मिल पाता है।

धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़

५० वर्ष से वैद्य-समाज व जनता को विशुद्ध प्रामाणिक औषधियां सप्लाई कर रहा है। आप भी आवश्यकतानुसार आर्डर दीजियेगा। सूचीपत्र पोस्ट-कार्ड डालकर मंगावें।—व्यवस्थापक।

वैद्यों की सम्मतियां

परामर्श नं० ३ का समाधान--

मैंने चरक एवं भावप्रकाश में "मेध्य" यही गुण भिलावे के विषय में देखा है न कि 'मेद्य', यदि किसी ग्रन्थ में "मेद्य" ऐसा पाठ छप गया हो तो उसे अशुद्ध समझना चाहिये, क्योंकि वैय्याकरण रीति से "मेदसे हितम् मेदस्यम्" यही रूप बन सकता है।

और मेध्य इस प्रकार है—शरीर में मात्राधिक कफ को मल एवं तमोगुण रूप ज्ञान का आवरण माना गया है यथा--

"आवरणक मेव तमः" "आवृतं ज्ञान मेतेन" धूमेनब्रियते वन्हिर्यथादर्शोमलेन, यथोल्वेनावृतो गर्भस्तथा तेनेद मावृतम्" उस आवरण भूत तमोगुणात्मक निरर्थक मल स्वरूप कफ को नष्ट करने के कारण भल्लातक मेध्य याने मेधाशक्ति वर्धक है। अलं विस्तरेण।

—श्री० पद्मनाभ शास्त्री आयुर्वेदाचार्य, बीकानेर।

× × श्री. आयुर्वेदाचार्य महोदय का यह उत्तर उचित और विचारणीय है अन्य विद्वान भी इस विषय पर अपने विचार प्रकट करें तो सहर्ष प्रकाशित किये जांयगे। --सम्पादक।

उ० नं० ४६--

सूर्यावर्त की बीमारी के लिये नीचे लिखे योग को कुछ समय तक व्यवहार करें--

दवाखाने की—

२३०-देशी हरड़ काबुली हरड़
छोटी हरड़ बहेड़ा आंवला
खरबूजा की गिरी गिरी तरबूज
गिरी ककड़ी गिरी पेठा
खशखश किशमिश
—प्रत्येक १-१ तोला
धनियां के अन्दर की मिंगी ५ तोला
असली बढ़िया बादाम का तैल १ सेर

विधि–देशी हरड़ से लेकर धनियां की मिंगी तक सब वस्तुओं को बारीक पीस या कूट कर सब चीजों को मिला सबके बराबर मिश्री तथा दूना शहद मिला कांच के बर्तन में रक्खे। फिर २-२ तोला सवेरे शाम दूध या पानी से लेवें। इससे नजला जुकाम, सिर दर्द दूर होजाता है।

सूंघने की दवा—

२३१-केशर कपूर कायफल
छोटी इलायची —चारों ६-६ माशे
बड़ी इलायची के छिलके १ तोला

—सबको कूट कपड़-छन कर सूंघें। इससे नज़ला, जुकाम, सिर दर्द दूर होता है।

उ० नं० ५४—

नीचे लिखा मंजन का स्तैमाल करावें।

२३२-दम्बुल अखवेन कत्था कायफल
हरड़ बहेड़ा आंवला
माजूफल वायविडङ्ग गेरू
मोलसिरी की छाल बबूल की छाल
फिटकरी बड़ी इलायची कपूर
अनार का छिलका समुद्रफेन
हुलास लौंग दालचीनी
--प्रत्येक ५-५ तोला

पठानी लोध	१० तोला
अकरकरा	२॥ तोला
शुद्ध नीलाथोथा	१ तोला
संगजराहत	ऽ१। सेर

—सबको कपड़-छन करके सुबह-शाम मलें और १५ मिनट बाद कुल्ला करें।

—श्री. पं. हरिबल्लभ शर्मा आयुर्वेद विशारद।

परामर्श नं० २ का उत्तर—

[बगल-गन्ध नाशक प्रयोग]

२३३-चूना को जल में पीस कर नित्य बगल में लगावें। थोड़ी देर के बाद इसे अच्छी तरह धो डाले। ऐसा करने से कुछ ही दिनों में पुरानी से भी पुरानी बगल गन्ध शीघ्र ही सदा के लिये दूर हो जायगी।

दूसरा योग—

२३४-जामुन की छाल और पत्तों को जल में पीस कर बगल में नित्य लेप लगाने से थोड़े ही दिनों में बग़ल की गन्ध दूर हो जायगी।

—नन्दकुमार शर्मा।

[पृष्ठ ३६४ पर भी देखें]

वैद्यों से परामर्श

परामर्श नं० ४—

हमारे पास चिकित्सार्थ एक रोगी है। जिसके रोग का पूरा हाल निम्न लिखित है :—

रोगी—स्त्री, आयु ३४ वर्ष है। सन्तति ७ हो चुकी हैं, सबसे बड़ी सन्तति की उम्र १६ वर्ष, सबसे छोटी सन्तति की उम्र ३ वर्ष है।

आज से ४ माह पहिले एक दिन रात्रि को रात भर नींद नहीं आई और तब से आज तक रात्रि को अथवा दिन को बिलकुल ही नींद नहीं आती है। रात्रि को कभी-कभी एक आधा घंटा नींद आती है, तो भयानक स्वप्न दिखने से नींद एक दम टूट जाया करती है। इस समय रोगी की हालत बहुत ही कमज़ोर है और सर्वाङ्ग में दर्द रहा करता है। स्वेत-प्रदर या रक्त-प्रदर आज तक न हुआ है, और न अभी है, जुकाम भी नहीं है। दस्त साफ नहीं नहीं होता है। अभी तक एलोपैथिक इलाज हुआ है। परन्तु उससे कोई फायदा नहीं हुआ है। इससे अब आयुर्वैदिक-चिकित्सा की इच्छा है। आयुर्वेद-जगत के विद्वान् वैद्य महानुभावों से प्रार्थना है कि उपरोक्त रोगी के लिए धन्वन्तरि में अनुभूत-प्रयोग लिखने की कृपा करेंगे।

—पुरुषोत्तमलाल 'वैद्य भूषण'।

परामर्श नं० ५—

धन्वन्तरि के सम्पूर्ण विद्वानों से निवेदन है कि काश्मीर या पूंछ स्टेट की तरफ मन्दुरा बूटी को अन्य भाषाओं में क्या कहते हैं और उड़ीसा की तरफ होने वाली हिंगूचा विष वनस्पति का क्या नाम है; इन दोनों का उत्तर आजाने पर मैं इसके प्रयोग प्रकाशित कराऊंगा। —ग्राहक नं० ५४०६

परामर्श नं० ६—

आयुर्वेद-प्रकाश में। 'चपल धातु' के विषय में

लिखा है। यह चपल धातु क्या है और कहां से प्राप्त होगी? विद्वान वैद्य बताने की कृपा करें।

—डा० बी० डी० सुगन्धा।

परामर्श नं० ७—

हरदिया ज़हर की क्या पहिचान है और कहां मिलता है? इस विषय पर वैद्य महानुभाव लिखें।

—वैद्य चरणदास, जयपुर।

परामर्श नं० ८—

'धन्वन्तरि' अगस्त ४६ पृष्ठ ३०८ पर दिये हुये विष-खपरा व सोंठ के लोशन को तैयार किया, इसमें दो दिन बाद ही बहुत बुरी बदबू आने लगी। वैद्यवर इसको सुरक्षित रखने की विधि स्पष्ट लिखने की कृपा करें।

परामर्श नं० ९—

इसी अङ्क के प्रयोग नं० १७४ में यशद फुल्ला (बाज़ारू) क्या चीज़ है व कहां मिलता है, इसके दूसरे नाम क्या हैं? लिखने की कृपा करें।

परामर्श नं० १०—.

आजकल खाज का रोग घर २ में फैल रहा है, घर में एक को होते ही सबको होजाता है। इसमें पीली २ फुन्सियां उठती हैं वे पीव भी देती हैं। जलन खुजली मचती है व ठण्डी चीज़ों से सेहत मालूम होती है। इसके लिये वैद्यवर कोई खाने व लगाने की परीक्षित औषधि लिखने की कृपा करें जिससे जलन बन्द हो जाय। कहते हैं कि यह रोग रक्त से सम्बन्ध रखता है।

परामर्श नं० ११—

शाकाहारी मनुष्यों के अक्सर पेशाब में एक श्वेत पदार्थ जाता है। इसको फोस्फेट(Phosphate) कहते हैं। इसका शरीर में उत्पत्ति व कार्य क्या है व इसके क्षय से क्या हानि होती है व क्षय का क्या निदान है। परीक्षित-चिकित्सा भी लिखने की कृपा करें।

—ग्राहक नं० ११५१

उत्तमोत्तम पुस्तकों की सूची इसी अङ्क के अन्त में देखिये।

दवा के सच्चे मोती

वैद्यो ! हकीमो !! तथा फार्मेसी वालो !!!

हमारे यहां सब प्रकार के शुद्ध और सच्चे मोती, जैसे कि बसराई, खाका, सीलोन खाका, आस्ट्रेलियन मोती वगैरा जो दवा के काम के लिये सर्वोत्तम हैं तथा जो भारत के प्रसिद्ध एवं प्रतिष्ठित वैद्यों द्वारा प्रमाणित हो चुके हैं निहायत किफायत से मिलते हैं। धर्मार्थ औषधालयों तथा फार्मेसियों के साथ विशेष रिआयत की जाती है। आर्डर भेजने की कृपा करें।

पता:-नगीनदास वीरचन्द जवेरी, ४४-४६, धनजी स्ट्रीट, बम्बई ३।

विविध-समाचार

श्री. पं. राजेश्वरदत्त जी शास्त्री–

बनारस, गोरखपुर, फैजाबाद डिवीजन के रजिष्टर्ड वैद्यों की ओर से युक्तप्रान्तीय इण्डियन-मैडीसन बोर्ड के लिये मेम्बर निर्विरोध होगये। बधाई। शास्त्री जी आयुर्वेद के प्राचीन विद्वान हैं और आप से वैद्य-समाज को बड़ी आशायें हैं।

--मन्त्री-काशी वैद्य सभा।

आयुर्वेद-आश्रम, देहरादून-

बाबा प्रद्युम्नसिंह ट्रस्ट की नालापानी वाली भूमि से उक्त आश्रम हटा कर वैद्य अमरनाथ जी ने इसकी योजना वैद्य मण्डल देहरादून को दे दी है, जिसने ३० नवम्बर १९४६ को इस योजना को कार्य रूप में परिणित करने का निश्चय कर लिया है। आशा है जिला वैद्य मण्डल व युक्तप्रान्तीय वैद्य मण्डल भी उचित सहयोग देंगे।

—वैद्य जगदीशप्रसाद रसायन-शास्त्री।

जयपुर-तोरावाटी (प्रान्तीय) निजामत वैद्य-सभा–

का चुनाव २१-१०-४६ को पं० देवकीनन्दन जी वैद्य के सभापतित्व में कावंट में हुआ। अन्य पदाधिकारियों के अतिरिक्त सभापति श्री० पं० रामसुन्दरलाल जी वाजपेयी आयुर्वेदाचार्य बी.ए. कावंट चुने गये।

—वैद्य मोहनलाल जी ओझा. मन्त्री।

रिसिया (बहिराइच) धर्मार्थ औषधालय–

जो पं० रामप्रिय मिश्र वै० वि० के देहावसान होने पर बन्द हो गया था, पुनः १४-११-४६ को पं० बालकराम जी शुक्ल वै० वि० की अध्यक्षता में उसका उद्घाटन किया गया है।

—श्री० ताराचन्द शिवचरनलाल

धन्वन्तरि त्रयोदशी उत्सव–

धन्वन्तरि-त्रयोदशी के दिन सभा, प्रस्ताव आदि के समाचार इतने अधिक मिले हैं कि यदि उन सबको प्रकाशित किया जाय तो एक अङ्क ही बन जायगा। यदि स्थानों के नाम भी प्रकाशित किये जांय तब भी १-१॥ पृष्ठ चाहिये। इधर कागज की कमी के कारण अधिक पृष्ठ देना असम्भव प्रतीत होता है। अतः ये समाचार नहीं दे रहे हैं। पाठक व समाचार-प्रेषक क्षमा करेंगे।

बोर्ड के उम्मीदवार—

इण्डिन मैडीसन बोर्ड के चुनाव में–इलाहाबाद झांसी डिवीजन से–पं० रघुवरदयालु भट्ट, पं० रामगोपाल शास्त्री और पं० विश्वेश्वर दयालु जी हैं आगरा-मेरठ से—आचार्य अविनाशचन्द्र बंसल, पं० उमाशंकर द्विवेदी, श्री० पन्नालाल जी वार्ष्णेय अलीगढ़, पं० बाबूराम मिश्र हापुड़, पं० दयानिधि शर्मा मेरठ, पं० मुकुन्दीलाल द्विवेदी हरद्वार हैं।

बनारस और गोरखपुर से—पं० राजेश्वरदत्त शास्त्री निर्विरोध चुन गये।

लखनऊ, रुहेलखण्ड, कमायूं डिवीजन से—पं० कन्हैयालाल मिश्र, पं० जगन्नाथप्रसाद शुक्ल, पं० विश्वनाथ द्विवेदी, पं० धर्मदत्त शर्मा, पं० बालकृष्ण मिश्र, पं० मुंशीलाल सिद्ध, पं० सोमदेव सारस्वत लाल ठाकुर लालसिंह, पं० अम्बिकाप्रसाद मिश्र हैं

—पुस्तक-सूची—

जीवन-विज्ञान (आसन-चिकित्सा) आसनों का सचित्र वर्णन, इसके अतरिक्त मानवोत्पत्ति, वीर्य, ओज, आर्तव, त्रिगुण, त्रिदोष दोष विकृति विज्ञान, चिकित्सा सूत्र आदि अनेक ज्ञातव्य बातों का वर्णन है। मूल्य २)

उपदंश-विज्ञान--उपदंश—गर्मी--चांदी रोग का पूरा वर्णन चिकित्सादि वर्णित है। मू० १)

प्रयोग पुष्पावली--(प्रथम भाग अप्राप्य) द्वितीय भाग में सुगन्धित एवं औषधियों के तैल, अर्क, शर्बत, गुटिका, मलहम, पेन वाम, चटनी, मसाले आदि ग्रहस्थोपयोगी प्रयोग हैं। मू० १)

दोष-धातु-विज्ञान--तीन दोष और सप्तधातुओं का विस्तार से सरलभाषा में वर्णन है। मू० ॥=)

सूर्यरश्मि चिकित्सा--विषय नाम से स्पष्ट है। मू० ।॥)

बालरोग चिकित्सा--बाल—रोगों पर अनमोल एवं हमारे निजी परीक्षित प्रयोग हैं। मू० ।॥=)

रसायन-संहिता--अनेक अव्यर्थ प्रयोग, धातु उपधातुओं की शोधन-मारण विधि। लेखक के दीर्घ-कालीन अनुभव का निचोड़ है। मूल्य १)

कुचमार तंत्र—इन्द्रिय-वृद्धि, स्थूलीकरण, कामोद्दीपक लेप, बाजीकरण, द्रावण, स्तम्भन, संकोचन, केश-पतन, गर्भाधान आदि अनेक सफल प्रयोग बताये हैं। मू. ।=)

दशमूल—(सचित्र) दशमूल की दस औषधियों के चित्र, वर्णन, प्रयोग आदि सविस्तार दिये हैं। मूल्य ॥)

शल्यतंत्र—इस ग्रन्थ को देखने से ज्ञात होता है कि हमारा आयुर्वेद कितना पूर्ण था। शल्य, व्रण, शोथ की सामान्य और दूषित सभी अवस्थाओं के भेद, लक्षण, उपचार, बंधन, आदि सबका वर्णन है। मूल्य २॥)

आयुर्वेदीय औषधि उपचार पद्धति—(दो भाग) प्रथम भाग में प्रचलित आयुर्वेद औषधियों का अनुपान, मात्रा, व्यवहार-विधि, गुण आदि वर्णित हैं। दूसरे भाग में—सभी रोगों की संक्षिप्त व्यवहारिक चिकित्सा दी है। मूल्य १)

मरणोन्मुखी आर्य चिकित्सा-मू० ।)

रति-रहस्य—कामकला सम्बन्धी सभी आवश्यक पहलुओं पर पूरा वर्णन है। मू० २)

दन्त विज्ञान—(सचित्र) मू० ।=)

न्यूमोनिया प्रकाश— न्यूमोनिया का निदान, चिकित्सा आदि का वर्णन, अनेक सफल प्रयोग भी हैं। मूल्य ।-)

प्लेग—तृतीय-संस्करण—मू० ।-)

चन्द्रोदय—पारद शुद्धि से लेकर चन्द्रोदय बनाने एवं व्यवहार करने तक पूर्ण वर्णन। मू० ।)

प्राकृतिक ज्वर—फसली बुखार (मलेरिया) का पूरा वर्णन, आयुर्वेदीय सफल प्रयोग। मू० ।)

दोष-विज्ञान-दोषों का संचय, प्रकोप, प्रसार, स्थान, दोषक्षय सरल भाषा में लिखे हैं। मूल्य =)॥

नारू-रोग—भेद, निदान, अनुभूत चिकित्सायें दी हैं। मू० ।)

ओज क्या है? मू० ।)

वैद्यराज की जीवनी— मू० ≡)

आयुर्वेद में दार्शनिक तत्व मू० ।)

रोग-विज्ञान—(संस्कृत) सम्पूर्ण रोगों का वर्णन है। मू० १)

अन्य प्रकाशकों की पुस्तकें

योगरत्नाकर—सुप्रसिद्ध सफल प्रयोगों का संग्रह। १५००पृष्ठ के २ सजिल्द भागों का मूल्य १५)

भैषज्यरत्नावली—नवीन संस्करण २ भाग सजिल्द मू० १०)

तिब्ब अकबर—यूनानी चिकित्सा का हिन्दी में प्रसिद्ध ग्रन्थ। पृष्ठ-संख्या ६४४, मूल्य ७)

स्त्री-रोग चिकित्सा-विषय नाम से ही स्पष्ट है। मू० ॥)

हरिधारित ग्रन्थ रत्न—समस्त-रोगों पर सुलभ प्रयोग। ।=)

व्रणोपचार पद्धति—हर प्रकार के फोड़े व घाव पर उपचार दिये हैं। मू० ।=)

सिद्धौषधि प्रकाश—(द्वितीय संस्करण) सैकड़ों शतशोनुभूत प्रयोगों का संग्रह। पृ. ११२ मू. १)

राजयक्ष्मा—क्षय-तपैदिक पर उत्तम विवेचन है। पृष्ठ-संख्या ७३ मूल्य ।) मात्र।

श्वास रोग चिकित्सा—श्वास-रोग का वर्णन एवं सविस्तार चिकित्सा वर्णित है। मू० ।)

अण्ड तथा अंत्र वृद्धि-चिकित्सा—पुस्तक का विषय नाम से ही स्पष्ट है। मू० ।)

भारतीय रसायन शास्त्र—रसायन-(कीमिया) विद्या की उत्तम पुस्तक। मूल्य ॥)

आयुर्वेद सूत्रम्—संस्कृत व्याख्या एवं हिन्दी टीका सहित। आयुर्वेद सिद्धान्त, निदान, चिकित्सा आदि विषय युक्त। मू० १)

आरोग्य सूत्रावली—आरोग्याभिलाषी स्त्री-पुरुषों के लिये पाठ करने योग्य उत्तम पुस्तक। मू. ।=)

पेटेन्ट औषधि और भारतवर्ष—४५३ पेटेन्ट एवं प्रसिद्ध प्रयोगों का भण्डा-फोड मू० प्रथम भाग ॥) द्वितीय भाग १)

अर्श-रोग चिकित्सा—बवासीर का वर्णन चिकित्सा सरल भाषा में दी है। मू० ॥)

सिद्ध प्रयोग—योग्य वैद्यों द्वारा परीक्षित एवं प्रसंशित प्रयोगों का उत्तम संग्रह मू० प्र० भाग १) द्वितीय भाग ॥)

वैद्य-जीवन (लोलिम्बराज)—आयुर्वेद की प्राचीन उत्तम काव्य पुस्तक। मू० ।॥)

आयुर्वेद-प्रकाश—भाषा—टीका सहित। आयुर्वेद का महत्वपूर्ण, श्री माधव विरचित, प्राचीन ग्रन्थ। मू० ४)

मीजान-तिब्ब—यूनानी चिकित्सा की प्रामाणिक हिन्दी पुस्तक मू० १॥)

सर्प-विष-विज्ञान—ग्रहस्थ एवं वैद्यों के मनन योग्य पुस्तक सर्प-विष की अनुभूत चिकित्सा। मूल्य १)

तपैदिक (राजयक्ष्मा)—तपैदिक जैसे भयंकर रोग का सरल भाषा में विस्तृत वर्णन, इससे बचने के लिये हर व्यक्ति को १-१ प्रति अपने पास अवश्य रखनी चाहिये। मूल्य ४)

रुग्णपरिचर्या-शिक्षा—अपने विषय की पूर्ण एवं उत्तम पुस्तक। मू० ३॥)

वैद्य-सहचर—(तृतीय परिवर्द्धित-संस्करण) यथा नाम तथा गुण। सचमुच वैद्यों के लिये सहचर रूप ही है। मू० २॥) सजिल्द ३॥)

त्रिदोषालोक—त्रिदोष सिद्धान्त का विधिवत् प्रतिपादन एवं उस पर होने वाले सभी आक्षेपों का मुंहतोड़ उत्तर दिया है। मू० २॥)

आंख का अचूक इलाज—चश्मा छोड़नेकी अनुभूतविधि बताने वाली; आपकी आंख में कोई भी रोग है यह पुस्तक आपकी सहायता करेगी। मू० २)

ज़ुकाम—इसमें ज़ुकाम, ब्रोंकाइटिस, दमा, खांसी, निमोनियां आदि का वर्णन व चिकित्सा है। मू० १॥)

मट्ठा के गुण तथा उपयोग (तृतीय संस्करण) मट्ठे से सभी तरह का बिगड़ा स्वास्थ्य कैसे बनता है इसका सविस्तार वर्णन। मू० ॥=)

वैज्ञानिक-विचारणा— मू० १॥)

रसेन्द्रसार संग्रह—प्रसिद्ध रस-संग्रह-मू० ४)

नूतन चिकित्सा—सभी रोगों के लिये पाश्चात्य पद्धति के सफल प्रयोग एवं चिकित्सा है। मूल्य २)

अनुभूत चिकित्सा संग्रह—विविध रोगों पर सरल एवं सफल चिकित्सा व प्रयोगों का संग्रह है मू० १॥)

मेघ-विनोद—सरल हिंदी भाषा में सभी रोगों का वर्णन, चिकित्सा तथा प्रयोग दिये हैं। पुस्तक हर वैद्य को अवश्य पढ़नी चाहिये। मू० ४)

तुलसी—हर घर में तुलसी का पेड़ होता है। उसके क्या गुण हैं और समय पर उसका क्या उपयोग उठाया जासकता है। इस पुस्तक

में पढ़िये। सजिल्द, आकर्षक छपाई उत्तम कागज। मू० २)

वीर्य-- ॥=)

अंजन निदानम्-- ≡)

स्वप्नदोष रक्षक- ॥)

माधवनिदानम्--(संस्कृत-गुटिका) मू० ॥।)

शार्ङ्गधर-संहिता-संस्कृत-गुटिका मू० १।)

मनुष्य का आहार—खान--पान सम्बन्धी प्रायः सभी विषयों का विस्तृत सुबोध और स्पष्ट वर्णन। मूल्य १)

हमारा भोजन— जीवन-दायक भोजन क्या है, कैसे किया जाय, रोग-निवारक शक्ति कैसे बढ़े? आदि प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक में पढ़िये। मूल्य ४)

दूध-चिकित्सा—दूध के, विषय में सभी जानकारी की बातें सरल भाषा में दी हैं। उत्तम खोज-पूर्ण पुस्तक है। मूल्य ४)

वस्त्रों का स्वास्थ्य पर भयङ्कर प्रभाव मू० ।)

नेत्ररक्षा व नेत्र रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा— ॥=)

उपवास महिमा और फलाहार चिकित्सा ॥)

जल चिकित्सा ॥)

दूध से सब रोगों का शर्तिया इलाज	॥)
मिट्टी सब रोगों की रामबाण औषधि	॥)
प्राकृतिक चिकित्सा सागर	॥)
भिन्न २ रोगों की प्राकृतिक चिकित्सा	१)
बुढ़ापा और बीमारी से बचने के सरल उपाय	।॥)
बुखार का अचूक इलाज	।≡)
मलेरिया बुखार का सबसे अच्छा इलाज	१)
नवीन चिकित्सा पद्धति—	१।)
मधु मक्खी	॥।)
स्वास्थ्य-शिक्षा	२॥)
मातृत्व (सजिल्द)	४)
चारु-चिकित्सा	१॥)
आयुर्वेदिक प्रश्नोत्तरावली दोनों भाग	४)
सन्तति विज्ञान	॥)
राजमार्तण्ड-राजा भोज के ४०३ उत्तम प्रयोग	३॥)
शरीर-विज्ञान-शरीर-विषयक उत्तम व सजिल्द पुस्तक	३)
रति रहस्य	२)
शहद के गुण तथा प्रयोग	॥।)
आयुर्वेद मीमांसा	१)
नैसर्गिक आरोग्य	१॥)
भारतीय रस-शास्त्र	।=)
इन्जेक्शन प्रकाश	॥=)
शिरोरोग विज्ञान पृष्ठ ४५१	४)
मूत्र परीक्षा	१)
अनुपान कल्पतरु	॥।)
नाड़ी-परीक्षा	।)
प्राणिज्य औषधि	≡)
मुखरोग विज्ञान	२)
परिभाषा प्रबोध	१॥)
नासारोग विज्ञान	२)
कर्णरोग विज्ञान	२)
कूपीपक्व रस निर्माण	५)
ज्वर मीमांसा	२)
क्षार निर्माण विज्ञान	।)
औषधि गुण धर्म विवेचन	।)
अनुभूतयोग चिन्तामणि प्रथम भाग	३॥-)॥
द्वितीय भाग	३॥)
सन्यासियों की गुप्त बूटियां	२॥)
दुग्ध गुण विधान	१)
नमक चिकित्सा	।)
घृत गुण विधान	।=)
एकौषधि गुण विधान	१॥।=)
फटकरी गुण विधान	।॥)
पलाण्डु चिकित्सा	।=)
आक गुण विधान	१॥)
पीपल गुण विधान	।=)
बबूल गुण विधान	।=)
शर्बत का व्यापार	१)

* * *

१-कमीशन नहीं दिया जाता है। २-अधिक पुस्तकें रेलवे द्वारा मंगानी चाहिये, रेल पार्सल के लिये एडवांस अवश्य भेजना चाहिये। हर वैद्य एवं आयुर्वेद प्रेमी को इन पुस्तकों को अपने पुस्तकालय में अवश्य रखना चाहिये। ३-कागज के इस भीषण अकाल में जो पुस्तक समाप्त हो जाती है वह पुनः प्रकाशित नहीं होपाती; अतः जो पुस्तक मंगानी हो शीघ्र ही मंगा लेनी चाहिये।

पता—धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

शरद् ऋतु में सेवन योग्य
उत्तम पाक

नीचे लिखे पाक अत्युत्तम औषधियों से स्वच्छता-पूर्वक और बहुत स्वादिष्ट तैयार किये हैं। घृत दुग्ध आदि सभी पदार्थ शुद्ध डाले गये हैं।

कन्दर्प सुन्दर पाक-प्रमेह, नपुंसकता, निर्बलता नाशक, स्तम्भन-शक्ति वर्धक अत्युत्तम पाक। मूल्य १४) सेर।

बल्लभ पाक-(धनिक पुरुषों के लिये) खाने में बहुत ही स्वादिष्ट है। केशर, कस्तूरी अम्बर, मोती, स्वर्ण आदि मिश्रित है। बल-वीर्य वर्धक, मन्दाग्नि और क्षय के लिये भी लाभप्रद है। मूल्य पाव भर १५)

बादाम पाक-दिमागी व शारीरिक ताक़त के लिये अत्युत्तम पाक। मूल्य १ सेर १४)

गोखरूपाक-मूत्र सम्बन्धी रोग के लिये उपयोगी मूल्य—१४) सेर।

पीपल पाक-ज्वर व ज्वर के कारण हुई निर्बलता को दूर कर भूख बढ़ाता है। मूल्य १ सेर १४)

सुपारी पाक-(स्त्रियों के लिये) प्रदर कमर का दर्द, योनि-शूल आदि को नष्ट कर कांतिवान बनाता है। मूल्य १ सेर १०)

सौभाग्य सुण्ठी पाक-प्रसूता स्त्रियों के लिये अमृत है, गर्भाशय के समस्त विकारों को भी नष्ट करता है। मूल्य १ सेर १०)

एरण्ड पाक—वात संबन्धी समस्त व्याधियों के लिये सर्वोत्तम है। मूल्य १ सेर १०)

पैकिङ्ग-१०-१० तोले के डिब्बों व शीशियों में सुन्दर पैक किये गये हैं। शीशियों में मंगाने से ≡) प्रति पैक प्रथक चार्ज लगेगा, यह चार्ज एजेंट व सामान्य ग्राहक सभी को देना होगा।

पता-धन्वन्तरि कार्यालय, विजयगढ़ (

उत्तम व असली

शहद

मूल्य १ सेर ४) १० सेर ३५)

केशर-काश्मीरि

१ तोला ७) ५ तोला ३२॥)

कस्तूरी-नैपाली

१ तोला ४८) १ माशे ४॥)

ये थोक भाव हैं। इन पर किसी प्रकार का कमीशन व रियायत नहीं दी जा सकती है।

पता-धन्वन्तरि कार्यालय विजयगढ़ (अलीगढ़)

ग्राहक नम्बर

3 PS 3 PS INDIA POSTAGE

2803. श्री० पुस्तकालयाध्यक्ष
गुरुकुल विश्वविद्यालय - गुरुकुल
कांगड़ी (Hardwar.)

Compiled
1999-2000